नलोपाख्यानम्

भूमिका, हिन्दी अनुवाद और शब्द-सूची सहित

लेखक

डॉ० जगदम्बा प्रसाद सिनहा

एम० ए०; एल-एल० बी०; पी-एच० डी०; साहित्याचार्य

संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

लखनऊ

Sa8Ka
Sin

अखिल भारतीय संस्कृत-परिषद्

लखनऊ

MUNSHI RAM MANOHAR LAL
Oriental & Foreign Book-Sellers,
P. B. 1165, Nai Sarak, DELHI-6

प्रकाशक
अखिल भारतीय संस्कृत-परिषद्
महात्मा गांधी मार्ग, हज़रतगंज
लखनऊ

प्रकाशक के अधीन

मूल्य १३.५०

43378
14.10.1965

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय
प्रयाग

समर्पण

अपनी दिवंगता माता जी की पुण्यस्मृति में

"वत्सेति वत्सेति समाह्वयन्तीं
परामृशन्तीं सदयं करेण।
कालेन नीताममृतत्वमम्बां
ध्यायामि सन्ध्यासु वरेण्यवृत्ताम्॥"

Received from NPS Memphis Area Manager and all [illegible] R. [illegible]

प्रकाशकीय

संस्कृत वाङ्मय की ओर यूरोपीय विद्वानों का ध्यान सर्वप्रथम आकृष्ट करने और उसके अध्ययन के प्रति उनमें अभिरुचि और उत्कण्ठा जागृत करने में जिन रचनाओं का सबसे बड़ा हाथ रहा है वे हैं महाकवि कालिदासकृत अभिज्ञान-शाकुन्तल और महाभारतान्तर्गत नलोपाख्यान। इन ग्रन्थों को वहां जिसने पढ़ा वह उनपर पूर्णतया मुग्ध हुए बिना नहीं रहा। यही कारण है कि इन दोनों ही ग्रन्थों के इंगलैंड और यूरोपीय महाद्वीप में विगत शताब्दी में अनेक संस्करण और अनुवाद प्रकाशित हुए और वहां एक समय तो ऐसा था जब संस्कृत सीखनेवाला बिरला ही विद्यार्थी ऐसा होता था जो अपनी संस्कृत-शिक्षा के आरम्भिक काल में नलोपाख्यान न पढ़े। इसके मुख्यतया तीन कारण थे। एक तो, नलोपाख्यान की भाषा इतनी सरल और बोधगम्य है कि संस्कृत का थोड़ा भी ज्ञान रखने वाले विद्यार्थी को उसके पढ़ने और समझने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। वैसे तो, सम्पूर्ण महाभारत की भाषा साधारणतः सरल ही है; किन्तु उसमें अनेक दुरूह स्थल भी हैं। ऐसे स्थलों का नलोपाख्यान में सर्वथा अभाव है। दूसरे, नलोपाख्यान की शैली इतनी सरस, सुन्दर और प्रवाहपूर्ण है कि वह पाठक को मंत्रमुग्ध किये बिना नहीं रहती। और तीसरे, नलोपाख्यान की कथा भी अत्यन्त रोचक और हृदयाकर्षक है।

इंगलैंड आदि में तो नलोपाख्यान सदा ही एक स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में पढ़ा पढ़ाया जाता रहा; किन्तु स्वयं हमारे देश में उसका इस प्रकार का प्रचलन कदाचित् ही रहा हो। यूरोप में नलोपाख्यान एक स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में सर्वप्रथम उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में प्रोफेसर बाप के प्रयास से जर्मनी में प्रकाशित हुआ था; किन्तु भारत में उसने तब तक महाभारत के बाहर पदार्पण नहीं किया था। उसके बाद भी यद्यपि यूरोप में उसके अनेक उत्तमोत्तम संस्करण और अनुवाद निकले तथापि इस देश में उसका आज के पूर्व एक भी अच्छा संस्करण नहीं निकला। और अब तो, क्या इस देश में और क्या बाहर इसका एक भी संस्करण उपलब्ध नहीं है। अतः उसका प्रस्तुत संस्करण इस अभाव की पूर्ति अवश्य ही करेगा।

अखिल भारतीय संस्कृत-परिषद्, लखनऊ का जो नलोपाख्यान का प्रस्तुत संस्करण प्रकाशित कर रही है, मुख्य उद्देश्य संस्कृत भाषा का प्रचार और प्रसार करना है। इसी उद्देश्य को दृष्टि में रखकर वह बहुत दिनों से शिक्षित प्रौढ़ों को संस्कृत पढ़ाने के लिए कक्षाएँ चला रही है तथा 'Sanskrit First Lessons' और "संस्कृत-सूक्ति-संग्रह" ऐसी पुस्तकों का प्रकाशन किया है। 'Sanskrit First Lessons' का प्रकाशन उन लोगों के लिए किया गया है जो किसी शिक्षक का सहारा लिये बिना ही अंग्रेजी के माध्यम से संस्कृत का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं और "संस्कृत-सूक्ति-संग्रह" का उनके लिए जिन्हें उक्त भाषा का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करलेने के उपरान्त एक ऐसी सरल और सुन्दर पाठ्य पुस्तक की अपेक्षा रहती है जिसके पढ़ने में उनका मन भी लगे और जिसके द्वारा भाषा-सम्बन्धी ज्ञान वृद्धि के साथ ही साथ उन्हें संस्कृत वाङमय रूपी क्षीरसागर से सुस्वादु नवनीत का थोड़ा बहुत स्वाद भी प्राप्त हो सके। नलोपाख्यान का प्रकाशन भी इसी बात को ध्यान में रखकर किया जा रहा है।

ऐसे व्यक्ति के लिए जो कोई एक भाषा भली-भांति जानता हो किसी अन्य भाषा को कम से कम समय में सीखने का सब से वैज्ञानिक और सरल ढंग यह है कि वह जो भाषा सीखना चाहता हो उसका, ऐसी भाषा के माध्यम से जो उसे बहुत अच्छी तरह आती हो, पहले एक साधारण प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करले और तदुपरान्त व्याकरण आदि के प्रपञ्च में पड़े बिना ही उक्त भाषा की कोई एक सरल और रोचक पुस्तक लेकर पढ़ना आरम्भ करदे और यथासम्भव उसे स्वयं ही कोश आदि की सहायता से समझने का प्रयत्न करे। इसमें सन्देह नहीं कि, जहाँ तक संस्कृत पठन-पाठन का सम्बन्ध है, इस प्रकार की पुस्तकों की बड़ी कमी है। हमें पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी अनुवाद और शब्दकोश से युक्त नलोपाख्यान का प्रस्तुत संस्करण इस कमी को बहुत अंशों में दूर करके परिषद् के उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति में सहायक सिद्ध होगा। यहीं पर यह भी कह देना असंगत न होगा कि यह शब्दकोश केवल एक पर्याय-कोश नहीं है; अपितु इसमें प्रत्येक शब्द का, व्याकरण आदि की दृष्टि से भी, सम्पूर्ण विवेचन किया गया है। वास्तव में इसे कोश कहना ही भूल है। यह शब्दकोश नहीं, अपितु वास्तविक अर्थों में Glossary या शब्ददीपिका है। इस शब्ददीपिका की एक विशेषता यह भी है कि इसमें जिन शब्दों के रूप या अर्थ पर प्रकाश डाला गया है वे धातु या प्रातिपदिक के रूप में न दिये जाकर बिल्कुल उन्हीं रूपों में दिये गये हैं जिनमें वे ग्रन्थ में प्रयुक्त हुए हैं। इससे ऐसे पाठकों को, जिन्हें व्याकरण का विशेष ज्ञान नहीं है, पुस्तक को समझने में बड़ी सहायता मिलेगी।

नलोपाख्यान की भाषा और कथा इतनी रससिक्त और आकर्षक है कि जहां यह ग्रन्थ शिशिक्षुओं के लिए परमोपयोगी है वहीं संस्कृत के पंडितों के लिए भी कम उपादेय नहीं है। अतः हमें आशा है कि संस्कृत के विद्वान् भी इस प्रकाशन का स्वागत ही करेंगे।

यह ग्रन्थ हिन्दुस्तानी एकैडेमी, इलाहाबाद की सहायता से और देख-रेख में प्रकाशित हो रहा है। यह निःसन्देह है कि यदि परिषद् को उक्त एकैडेमी का साहाय्य न प्राप्त हुआ होता तो यह पुस्तक इतने अच्छे ढंग से और इतने अल्प समय में प्रकाशित न हो पाती। अतः हम उक्त एकैडेमी तथा उसके मंत्री, श्री विद्याभास्कर जी, के अत्यन्त आभारी हैं।

गोपाल चन्द्र सिंह
मंत्री

प्राक्कथन

'नलोपाख्यान' के अध्ययन एवं अनुवाद की प्रेरणा मुझे महाभारत पर शोधकार्य करते समय प्राप्त हुई थी। अंग्रेजी में मोनियर विलियम्स, पील और जैरेट नामक विद्वानों ने इसपर कार्य किया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में चार भाग हैं—भूमिका, मूल, अनुवाद और शब्दसूची। भूमिका में तीन अध्याय हैं, जिनमें 'नलोपाख्यान' के सम्बन्ध में साधारण ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक पाठकों को पर्याप्त सामग्री प्राप्त हो जायगी। इसमें मैं एक अध्याय 'नलोपाख्यान—एक समीक्षा' और जोड़ना चाहता था, किन्तु परिस्थिति-वश वह इस संस्करण में सम्भव नहीं है। अगले संस्करण में उसका भी समावेश कर दिया जायगा। मूल संस्कृत का आधार भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना से प्रकाशित 'महाभारत' है। मोनियर विलियम्स द्वारा स्वीकृत पाठ भी टिप्पणी के रूप में दे दिया गया है। अनुवाद मूल के सामने के पृष्ठ पर ही दिया गया है, जिससे पाठकों को कोई असुविधा न हो। यह अनुवाद न तो शब्दानुवाद है और न भावानुवाद, अपितु इसमें इस बात का विशेष प्रयत्न किया गया है कि यह मूल के निकट रहते हुये भी रोचक बना रहे। अनुवाद को पढ़ते हुये भी पाठकों को मूल कथा की रोचकता का अनुभव होता रहेगा—ऐसी आशा है। शब्द-सूची तय्यार करने में उपर्युक्त तीनों पाश्चात्य विद्वानों की कृतियों से पर्याप्त सहायता ली गयी है, तथापि उसमें स्वतंत्र चिन्तन का अभाव नहीं है। इस शब्द-सूची की सहायता से संस्कृत का साधारण ज्ञान रखने वाला विद्यार्थी भी सरलता से 'नलोपाख्यान' का अध्ययन कर सकता है।

'नलोपाख्यान' की भूमिका लिखने में मुझे जिन ग्रन्थों से सहायता प्राप्त हुई है, उनके रचयिताओं का मैं आभार स्वीकार करता हूँ। 'नलोपाख्यान' की प्रेस कापी तय्यार करने में मुझे श्री बलवीर सहाय, सुश्री अरुणा अग्रवाल और सुश्री सरोज बाला से पर्याप्त सहायता प्राप्त हुई है।

मुझे इस बात का गर्व है कि प्रस्तुत पुस्तक अखिल भारतीय संस्कृत-परिषद, लखनऊ से प्रकाशित हो रही है। इस के लिये मैं परिषद् के अधिकारी, विशेष रूप से पूज्य गुरुवर डा० सत्यव्रत सिंह जी, अध्यक्ष, तथा श्रद्धेय श्री गोपाल चन्द्र सिंह जी, मन्त्री, का कृतज्ञ हूँ।

विजयदशमी
संवत् २०१९ वि०

—जगदम्बा प्रसाद सिनहा

विषयानुक्रमणिका

भूमिका १३–३९

अध्याय १ १३

महाभारत के उपाख्यान—संक्षिप्त परिचय

अध्याय २ २७

नलोपाख्यान—संक्षिप्त कथासार

अध्याय ३ ३४

नलोपाख्यान और परवर्ती संस्कृत साहित्य

मूल एवं अनुवाद १–२०७

शब्द-सूची २०९

संकेत-सूची

अन०	=	अनद्यतनभूत
आत्म०	=	आत्मनेपदी
उत्तम पु०	=	उत्तम पुरुष
ए० व०	=	एक वचन
कर्मधा० समास	=	कर्मधारय समास
तत्पु०	=	तत्पुरुष, तत्पुरुष समास
धा०	=	धातु
नपुं०	=	नपुंसक लिंग
पु०	=	पुल्लिग
प्र० पु०	=	प्रथम पुरुष
ब० व०	=	बहु वचन
बहु०	=	बहुव्रीहि
ब्र० वै० पु०	=	ब्रह्मवैवर्त पुराण
म० पु०	=	मध्यम पुरुष
म० भा०	=	महाभारत
व०	=	वचन
सं०	=	संख्या
स०	=	समास
स्त्री०	=	स्त्रीलिंग
M. W.	=	नलोपाख्यान (सर मोनियर विलियम्स का संस्करण)

भूमिका

अध्याय–१

महाभारत के उपाख्यान–संक्षिप्त परिचय

सम्पूर्ण 'महाभारत' को इतिहास और आख्यान की संज्ञा प्रदान की गयी है। 'आख्यान' शब्द आङ पूर्वक 'ख्या' धातु में ल्युट् प्रत्यय लगाने से बना है। 'आख्यायते इति आख्यानम्' व्युत्पत्ति के अनुसार तो जो कुछ भी कहा जाय उसे आख्यान कह सकते हैं; किन्तु यह शब्द प्रायः इतिहासादि के लिए प्रयुक्त होता रहा है। 'महाभारत' के लिए इतिहास और आख्यान दोनों शब्द प्रयुक्त होते रहे हैं—

आचख्युः कवयः केचित् सम्प्रत्याचक्षते परे।
आख्यास्यामि तथैवान्ये इतिहासमिमं भुवि[1]॥

और—

यत्तु शौनक सत्रे ते भारताख्यानमुत्तमम्।
जनमेजयस्य तत् सत्रे व्यासशिष्येण धीमता[2]॥

उपाख्यान शब्द उप और आङ पूर्वक 'ख्या' धातु में ल्युट् प्रत्यय लगाने से बनता है। मोनियर विलियम्स कृत संस्कृत-अंग्रेजी कोष में इस शब्द का अर्थ गौण कथा (a subsidiary tale or story) दिया हुआ है[3]। 'शब्दकल्पद्रुम' में उपाख्यान शब्द के अर्थों में एक अर्थ 'विशेषकथनम्' भी दिया हुआ है। यह अर्थ भी गौण अथवा अवान्तर कथा का द्योतक है। जैसे—

सर्वाख्यानं श्रुतं ब्रह्मन् अतीवपरमाद्भुतम्।
अधुना श्रोतुमिच्छामि दुर्गोपाख्यानमुत्तमम्[4]॥

'महाभारत' नामक यह आख्यान बहुत से उपाख्यानों के कारण ही इतना विशाल हो गया है। वैसे तो 'भारत' नामक मूल आख्यान में चौबीस हज़ार श्लोक

---

१. म० भा० १.१.२६।
२. म० भा० १.२.३३।
३. पृष्ठ सं० २१२।
४. ब्र० वै० पु०, प्रकृति खण्ड, अध्याय ४४

थे, किन्तु उसमें बहुत से उपाख्यानों के मिल जाने से ही 'भारत' को महाभारतत्व प्राप्त हुआ है। 'महाभारत' में कुल श्लोकों की संख्या एक लाख मानी जाती है। इसलिए 'महाभारत' को 'शतसाहस्री' भी कहते हैं—

इदं शतसहस्रं तु लोकानां पुण्यकर्मणाम्।
उपाख्यानैः सह ज्ञेयमाद्यं भारतमुत्तमम्॥
चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यते बुधैः[1]॥

'महाभारत' के कतिपय रोचक एवं महत्वपूर्ण उपाख्यानों का संक्षिप्त परिचय यहाँ पर दिया जा रहा है।

परीक्षितोपाख्यान—'महाभारत' के आदिपर्व के चालीसवें अध्याय में जरत्कारु की तपस्या और राजा परीक्षित का उपाख्यान है। इस उपाख्यान को उग्रश्रवा ने शौनक को सुनाया था। बन में मृगया करते हुये राजा परीक्षित अपने बाणों से विद्ध एक मृग को खोजते खोजते शमीक मुनि के पास पहुँचे। मुनिराज मौन व्रत धारण किये हुये थे। परीक्षित के पुनःपुनः पूछने पर भी उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। क्रुद्ध होकर राजा परीक्षित ने धनुष् की नोक से एक मरे हुए सांप को उठाकर मुनिराज के कन्धे पर रख दिया। शमीक मुनि का एक पुत्र था शृंगी—महान् तपस्वी, दुःसह तेज से सम्पन्न और महान् व्रतधारी। उसका मित्र था ऋषिकुमार कृश। कृश ने राजा परीक्षित के द्वारा महामुनि शमीक के अपमानित होने की बात उनके पुत्र शृंगी से कह दिया। कृश के द्वारा उत्तेजित शृंगी ने राजा परीक्षित को शाप दे दिया कि आज से सात रात बाद तक्षक नामक विषैला नाग महाराज परीक्षित को यमलोक पहुँचा दे। शमीक मुनि को अपने पुत्र के क्रोध पर बड़ा क्षोभ हुआ। उन्होंने पहले तो अपने पुत्र को बहुत कुछ समझाया बुझाया; तदनन्तर उन्होंने अपने गौरमुख नामक शिष्य को भेज कर महाराज परीक्षित को शाप से होने वाले अनिष्ट की सूचना दे दी। महाराज ने आत्म-रक्षा के अनेक उपाय किये किन्तु नागराज तक्षक ने यथा समय उन्हें डस ही लिया।

शाकुन्तलोपाख्यान—'महाभारत' के आदि पर्व के अढ़सठ से चौहत्तर अध्यायों में दुष्यन्त और शकुन्तला का उपाख्यान वर्णित है। एक बार दुष्यन्त वन में मृगया के लिये गये हुये थे। वन में भाग-दौड़ करके थके हुये दुष्यन्त कण्व के आश्रम में गये। वहां पर उन्हों ने शकुन्तला को देखा। शकुन्तला की सुन्दरता को

---

१. म० भा० १.१.१०१–१०३।

देखकर महाराज अपनी सुध-बुध खो बैठे। उन्होंने शकुन्तला से उसके जन्म का वृत्तान्त सुनकर उसके साथ गान्धर्व विवाह कर लिया। विवाह तो हो गया किन्तु महाराज शकुन्तला को यह आश्वासन देकर अपने नगर को लौट गये कि वह बहुत बड़ी सेना के साथ उसे अपने नगर में ले जायेंगे। कण्व ने दुष्यन्त और शकुन्तला के परिणय का अनुमोदन कर दिया। इधर मास पर मास बीतते जा रहे थे। शकुन्तला दुष्यन्त की बाट जोह रही थी। इसी बीच शकुन्तला ने एक पुत्र को जन्म दिया। अब सर्वदमन—जैसा कि महर्षि कण्व उस बालक को कहा करते थे—बड़ा होने लगा। इस लिये कण्व ने अन्य ऋषियों के साथ शकुन्तला और सर्वदमन को महाराज दुष्यन्त के पास भेज दिया। अपने भोग विलास एवं प्रजापालन के उत्तरदायित्व में फंसे हुये महाराज शकुन्तला को भूल चुके थे, किन्तु उसे और उसके पुत्र को देखते ही उन्हें सारी घटना का स्मरण हो आया। इतना होने पर भी महाराज ने शकुन्तला को पत्नी के रूप में और सर्वदमन को अपने पुत्र के रूप में स्वीकार नही किया, उलटे ही वह शकुन्तला को भला-बुरा कहने लगे। इतने में आकाशवाणी सुनाई पड़ी। देवताओं ने शकुन्तला की पवित्रता की सराहना करते हुये दुष्यन्त से उसे और उसके बालक को स्वीकार करने का आदेश दिया। दुष्यन्त मन ही मन आनन्दित हो उठे। उन्होंने सम्पूर्ण पितृस्नेह के साथ बालक सर्वदमन का स्वागत किया। उन्होंने शकुन्तला से क्षमा-याचना करते हुये बतलाया कि अभी तक वह उसे इसी लिये स्वीकार नहीं कर रहे थे जिससे प्रजाजन उन दोनों के चरित्र के विषय में किसी प्रकार की कलुषित आशंका न कर सकें। शकुन्तला राजमहिषी बनी और कुमार सर्वदमन बने युवराज।

शार्ङ्गकोपाख्यान—यह 'महाभारत' के आदि पर्व के दो सौ अट्ठाइस से दो सौ बत्तीस अध्यायों में वर्णित है। इस में मन्दपाल मुनि के द्वारा जरिता शार्ङ्गका से पुत्रों की उत्पत्ति और उनकी रक्षा के लिए मुनि के द्वारा की गयी अग्निदेव की स्तुति का वर्णन है। खाण्डव वन में चारों ओर से बढ़ती हुयी अग्नि की ज्वालाओं को देखकर माता जरिता अपने बच्चों की रक्षा के लिये चिन्तित होकर विलाप करने लगी। माता की विह्वलता को देखकर उसके बच्चों—शार्ङ्गकों—ने अग्निदेवता की स्तुति की। स्तुति से प्रसन्न होकर अग्निदेवता ने उन्हें अभयदान दे दिया। तदनन्तर मन्दपाल और उनके पुत्रों का पुनर्मिलन हुआ।

नलोपाख्यान—यह 'महाभारत' के वन पर्व के पचास से अठहत्तर अध्यायों तक वर्णित है। इसके सम्बन्ध में आगे विस्तार से लिखा जायगा।

ऋष्यशृङ्गोपाख्यान—'महाभारत' के वन पर्व में एक सौ दस से एक सौ तेरह अध्यायों में ऋष्यशृङ्गोपाख्यान है। ऋष्यशृङ्गोपाख्यान लोमश मुनि ने वन में

विचरण करने वाले धर्मराज युधिष्ठिर को सुनाया था। कश्यपगोत्रीय ब्रह्मर्षि विभाण्डक अपूर्व सुन्दर एवं तेजोमय थे। एक दिन जब वे जल में स्नान कर रहे थे, अप्सरा उर्वशी को देखकर उनका वीर्य स्खलित हो गया। उसी समय प्यास से व्याकुल एक मृगी वहाँ पर आ पहुँची। वह पूर्व जन्म में एक देवकन्या थी। लोक-स्रष्टा भगवान् ब्रह्मा ने उसे यह आशीर्वाद दे रखा था कि वह एक मुनि को जन्म देकर पशुयोनि से मुक्त हो जायगी। मृगी जल के साथ विभाण्डक मुनि के वीर्य को भी पी गयी। इस प्रकार विभाण्डक के पुत्र महर्षि ऋष्यश्रृङ्ग का जन्म मृगी के गर्भ से हुआ था। विभाण्डक मनि के पुत्र का नाम ऋष्यश्रृङ्ग इसलिये पड़ गया क्यों कि उनके सिर पर एक सींग था। इसी समय में महाराज दशरथ के मित्र लोमपाद हुये। वह अङ्गदेश के राजा थे। उनके राज्य में अनावृष्टि के कारण अकाल पड़ गया। ब्राह्मणों ने महाराज लोमपाद को बतलाया कि यदि ऋष्यश्रृङ्ग उनके राज्य में आ जाये तो वर्षा हो जायगी। लोमपाद ने ऋष्यश्रृङ्ग को बुलाने के लिए एक वेश्या को भेजा। वेश्या ने जाकर महर्षि का मन मुग्ध कर लिया। वह उसके लिए चिन्तित रहने लगे। महर्षि के पिता मुनिराज विभाण्डक ने उनकी चिन्ता का कारण पूछा। ऋष्यश्रृङ्ग ने अपने पिता को अपनी चिन्ता का कारण बतलाते हुये ब्रह्मचारीरूप में आनेवाली वेश्या के स्वरूप और आचरण का वर्णन किया। ऋष्यश्रृङ्ग ने अङ्गराज लोमपाद के राज्य में पदार्पण किया। देवराज इन्द्र प्रसन्न हुये और तत्काल वर्षा होने लगी।

परशुरामोपाख्यान—वन में भ्रमण करते करते महाराज युधिष्ठिर रात्रि बिताने के लिए महेन्द्र पर्वत पर रुक गये। वहाँ पर उन्होंने अनेक ऋषिमुनियों के दर्शन किये। उन्हीं में एक थे वीरवर अकृतव्रण। अकृतव्रण परशुराम जी के शिष्य थे, इसलिए धर्मराज युधिष्ठिर ने उनके विषय में अकृतव्रण से ही पूछा। अकृतव्रण ने परशुराम जी के विषय में युधिष्ठिर को जो कुछ बतलाया वह 'महाभारत' के वन पर्व में एक सौ पन्द्रह से एक सौ सत्रह अध्यायों में संगृहीत है। कान्यकुब्ज देश में एक महाबली राजा राज्य करते थे। उनका नाम था गाधि। वह अपना राज्य छोड़कर एक वन में निवास कर रहे थे। उसी समय उनके एक कन्या उत्पन्न हुयी। वह अप्सरा के समान सुन्दरी थी। विवाह योग्य होने पर भृगुपुत्र ऋचीक मुनि के साथ उसका विवाह हो गया। भृगुऋषि की कृपा से गाधिकन्या सत्यवती ने जमदग्नि नामक पुत्र को जन्म दिया। जमदग्नि का विवाह प्रसेनजित की कन्या रेणुका से हुआ। जमदग्नि और रेणका के पाँचवे पुत्र थे परशुराम। एक बार पर-पुरूष को देखकर रेणुका के मन में विकार उत्पन्न हो गया। इससे रुष्ट होकर जमदग्नि ने अपने पुत्रों को उनकी माता के वध कर देने की आज्ञा दी। जमदग्नि के प्रथम

चार पुत्र मोहवश अपने पिता की आज्ञा का पालन न कर सके, किन्तु परशुराम जी ने फरसे से अपनी माता का सिर अलग कर दिया। जमदग्नि का क्रोध शान्त हुआ। तदनन्तर उन्हीं के वरदान से वह पुनः जीवित हो गयीं। कार्तवीर्य के पुत्रोंने जमदग्नि का वध कर दिया। इससे क्रुद्ध होकर परशुराम ने इस पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रियों से शून्य कर डाला था।

सोमकजन्तूपाख्यान——यह उपाख्यान महर्षि लोमश ने धर्मराज युधिष्ठिर को उस समय सुनाया था जब वह वन में विचरण कर रहे थे। सोमक और जन्तु की कथा 'महाभारत' के अन्तर्गत वन पर्व के एक सौ सत्ताइस और एक सौ अट्ठाइस अध्यायों में वर्णित है। एक थे राजा सोमक। वह बड़े धर्मात्मा थे। उनके सौ रानियाँ थीं। किन्तु उनमें से पुत्रवती कोई भी न थी। कालान्तर में उनमें से एक रानी ने जन्तु नामक एक पुत्र को जन्म दिया। सोमक और उनकी सभी रानियों का वात्सल्य उसी में केन्द्रित था। सोमक के पुरोहित ने उनसे बतलाया कि एक ऐसा यज्ञ करने से जिसमें जन्तु की आहुति दी जाये सभी रानियों के पुत्र उत्पन्न हो सकते हैं। न चाहते हुये भी सोमक ने यज्ञ सम्पन्न किया। यज्ञ-धूम्र लगते ही सभी रानियाँ गर्भवती हो गयीं। निश्चित समय के उपरान्त उन सौ रानियों ने सौ पुत्रों को जन्म दिया। उन पुत्रों में जन्तु भी था जो पुनः अपनी माता के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। उसकी दाहिनी पसली में एक स्वर्णिम चिह्न था। कुछ समय के पश्चात् पुरोहित और राजा सोमक ने शरीर त्याग कर दिया। यमलोक में नरहत्या की प्रेरणा देने के कारण पुरोहित को नरक में जाना पड़ा। सोमक चाहते थे कि वह और उनके पुरोहित जी यमलोक में भी साथ साथ रहें। अत एव कुछ समय तक सोमक और उनके पुरोहित जी नरक की यातनायें भोग कर स्वर्ग लोक को चले गये।

कौशिकपतिव्रतोपाख्यान——कौशिक नामक ब्राह्मण और पतिव्रता की कथा महर्षि मार्कण्डेय ने युधिष्ठिर को उस समय सुनाई थी जब वह राज्यच्युत होकर वन-वन भटकते फिर रहे थे। यह उपाख्यान 'महाभारत' में वन पर्व के दो सौ छठे अध्याय में संगृहीत है। एक था ब्राह्मण, कौशिक—वेदों का अध्येता, तपस्या का धनी और अत्यन्त धर्मात्मा। एक समय की बात है कि ब्राह्मण कौशिक एक वृक्ष के नीचे बैठे हुये भगवद्भजन कर रहे थे। इतने में पेड़ पर बैठी हुयी एक बगुली ने ब्राह्मण देवता पर बीट कर दी। ब्रह्मदेव क्रुद्ध हो उठे। वह पक्षी की ओर देखकर उसका अनिष्टचिन्तन करने लगे। देखते ही देखते बगुली पृथ्वी पर गिर पड़ी। ब्राह्मण का मन द्रवित हो उठा। वह वहाँ से चल पड़े। भिक्षाटन करते करते वह एक गांव में पहुँचे। वहाँ वह एक गृहस्थ के द्वार पर खड़े होकर भिक्षा की याचना करने लगे। घर में गृहिणी ही थी, वह भी घर के बर्तन धो रही थी। याचक की याचना सुनकर

उसने अन्दर सेही उसे ठहरने के लिये कहा। इतने में उस गृहिणी के पतिदेव बाहर से आगये। वह अत्यन्त परिश्रान्त थे। गृहिणी पतिव्रता थी। वह अपने पति की सेवा-शुश्रूषा में लग गयी। उसे ध्यान नहीं रहा कि उसने याचक से ठहरने के लिये कहा है। स्मरण आते ही वह बाहर गयी। उसने देखा ब्राह्मण देवता के नेत्र लाल-पीले हो रहे हैं। पतिव्रता ने यह देखकर ब्राह्मण कौशिक को पातिव्रत धर्म का महत्व समझाया। उस साध्वी स्त्री से विदा लेकर द्विजश्रेष्ठ कौशिक आत्मनिन्दा करते हुये अपने घर को लौटे गये।

रामोपाख्यान—जयद्रथ के द्वारा अपहरण की गयी द्रौपदी को उससे छुड़ाकर धर्मराज युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय ऋषि से पूछा कि क्या इस संसार में उनके समान और भी कोई अभागा पुरुष है जिसको इतनी विपत्तियों का सामना करना पड़ा हो। महर्षि मार्कण्डेय ने युधिष्ठिर को धैर्य दिलाने के लिये उन्हें भगवान् राम का वृत्तान्त सुनाया था। महाभारत में यह उपाख्यान वनपर्व के दो सौ तिहत्तर से दो सौ इक्यानवे अध्याय तक संगृहीत है।

सावित्र्युपाख्यान—'महाभारत' में रामोपाख्यान के बाद ही सावित्र्युपाख्यान आता है। युधिष्ठिर ने महर्षि मार्कण्डेय से प्रश्न किया था कि क्या द्रौपदी के समान पतिव्रता एवं सौभाग्यवती स्त्री इस संसार में और भी कोई है। धर्मराज के इस प्रश्न के उत्तर में ही महर्षि मार्कण्डेय ने उन्हें सावित्री की कथा सुनाई थी। यह उपाख्यान वनपर्व के दो सौ तिरानवे से दो सौ सत्तानबे अध्याय तक संगृहीत है। मद्रदेश में एक राजा राज्य करते थे। उनका नाम था अश्वपति। सावित्री की कृपा से उन्हें एक पुत्री प्राप्त हुयी थी, इसी लिये महाराज ने उसका नाम भी सावित्री ही रखा था। महाराज ने सावित्री से अपने लिये स्वयं ही वर की खोज कर लेने को कहा। सावित्री ने सत्यवान् को अपना वर चुना। सत्यवान् अल्पायु थे तथा उनके पिता द्युमत्सेन राज्य से च्युत हो चुके थे, तथापि सवित्री ने सत्यवान् के साथ ही विवाह करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। सत्यवान् और सावित्री का विवाह सम्पन्न हो गया। धीरे धीरे करके वह दिन भी निकट आ गया जब सत्यवान् की मृत्यु होने वाली थी। सत्यवान् की मृत्यु के चार दिन पहले से ही सावित्री कठोर तपस्या करने लगी। सत्यवान् की मृत्यु का दिन आ गया। उस दिन अपने सास-ससुर और पति की आज्ञा लेकर सावित्री भी अपने पति के साथ वन को गयी। वन में लकड़ी काटते काटते सत्यवान् ने मस्तक में असह्य पीड़ा का अनुभव किया। सावित्री समझ गयी कि उसके पति की मृत्यु का समय आ गया है। थोड़ी ही समय में यमराज वहाँ पर आ गये। वह सत्यवान् को लेकर दक्षिण दिशा की ओर चल पड़े। सावित्री भी उनके पीछे पीछे चल पड़ी। यमराज ने बहुत कुछ मना किया किन्तु सावित्री उनके

पीछे चलती ही रही। सावित्री की दृढ़ निष्ठा से संतुष्ट होकर यमराज ने उसे पाँच वर प्रदान किया। ये वर थे—(१) महाराज द्युमत्सेन को नेत्रों की ज्योति एवं बल की पुनः प्राप्ति, (२) महाराज द्युमत्सेन को खोये हुये राज्य की पुनः प्राप्ति, (३) महाराज अश्वपति को एक सौ औरस पुत्रों की प्राप्ति, (४) सत्यवान् और सावित्री के संयोग से सौ औरस पुत्रों की प्राप्ति और (५) चौथे वरदान की निष्पत्ति के लिए सत्यवान् का पुनः जीवित हो जाना। इस प्रकार सावित्री ने बड़ी बुद्धिमत्ता से अपने पति को यमपाश से छुड़ा लिया।

मातल्युपाख्यान—'महाभारत' के उद्योग पर्व में कौरव और पाण्डवों के बीच सन्धि कराने के प्रयास का वर्णन है। कण्वमुनि ने भी दुर्योधन से समझाया कि युधिष्ठिर के साथ सन्धि करने में ही कल्याण है। इसी प्रसंग में मुनिराज कण्व ने दुर्योधन को मातलि का उपाख्यान सुनाया था। यह उपाख्यान उद्योग पर्व के सत्तानबे से एक सौ पाँच अध्याय तक संगृहीत है। देवराज इन्द्र का सारथी था मातलि। उसके एक कन्या थी—अनिन्द्य सुन्दरी। उसका नाम था गुणकेशी। अब गुणकेशी विवाह के योग्य हो गयी थी। मातलि ने अपनी पुत्री के लिए वर की खोज करते करते बहुत-से देवताओं, दैत्यों, गन्धर्वों, मनुष्यों तथा ऋषियों को देखा; परन्तु उन्हें कोई भी पसन्द नहीं आया। तब अपनी पत्नी सुधर्मा के साथ मन्त्रणा करके मातलि अपनी पुत्री के लिये वर की खोज में नागलोक की ओर चल पड़े। मार्ग में उनकी भेंट देवर्षि नारद से हो गयी। नारद के पूछने पर मातलि ने नागलोक में जाने का अपना उद्देश्य बतला दिया। वरुणदेवता की आज्ञा लेकर मातलि और नारद नागलोक में विचरण करने लगे। पाताल लोक में उन दोनों ने हिरण्यपुर, गरुडलोक, गोमाता सुरभि और उसकी सन्तानों का दर्शन किया। नागलोक में दोनों ने बहुत से नागों को देखा। वहाँ पर मातलि ने सुमुख नामक एक नागकुमार को देखकर उसके साथ ही अपनी पुत्री के विवाह करने का निश्चय कर लिया। नागकुमार सुमुख ऐरावत कुल में उत्पन्न हुआ था। वह आर्यक का पौत्र और वामन का दौहित्र था। उसके पिता थे नागराज चिकुर। नारद जी ने आर्यक के सम्मुख जाकर उनके पौत्र सुमुख के साथ मातलिनन्दिनी गुणकेशी के विवाह का प्रस्ताव किया। मातलि आर्यक और सुमुख को देवराज इन्द्र के पास ले गया। इन्द्र ने सुमुख को दीर्घायु प्रदान की। सुमुख और गुणकेशी का विवाह सम्पन्न हो गया। नागराज सुमुख को दीर्घायु का वर प्राप्त किया हुआ देखकर गरुड को बड़ा क्षोभ हुआ। वह जाकर इन्द्र को उपालम्भ देने लगा और भगवान् विष्णु को वहन करने का अभिमान प्रदर्शित किया। गरुड़ को क्षोभ यह था कि जब नागराज सुमुख दीर्घायु हो गये हैं तब वह खायगा किसको। गरुड़ की बातों को सुनकर भगवान् विष्णु ने अपनी एक भुजा

उसके ऊपर रख दी। गरुड मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। उनका अहंकार दूर हुआ। वह भगवान् विष्णु की स्तुति करने लगे। भगवान् ने अपने पैर के अंगूठे से सुमुख नाग को उठाकर गरुड के वक्षस्थल पर रख दिया। तभी से गरुड उस सर्प को सदा साथ लिये रहते हैं। इस प्रकार महायशस्वी बलवान् गरुड भगवान् विष्णु के बल से आक्रान्त हो कर अपना अहंकार छोड़ बैठे।

विदुलोपाख्यान—'महाभारत' के उद्योगपर्व में माता कुन्ती ने युधिष्ठिर को कौरवों के साथ युद्ध ठान देने के लिये बार बार उत्साहित किया। धर्मराज युधिष्ठिर पर माता की बातों का कुछ भी प्रभाव न हुआ। अब उन्होंने एक दूसरा उपाय सोचा। भगवान् कृष्ण को उन्होंने विदुला का उपाख्यान सुनाकर उनसे प्रार्थना की कि इस उपाख्यान में जो बात विचारणीय हो उस बात को वह युधिष्ठिर को जाकर समझा दें। विदुलोपाख्यान उद्योग पर्व के एक सौ तैंतीस से एक सौ छत्तीस अध्याय तक चलता है। विदुला नाम से प्रसिद्ध एक क्षत्रिय महिला थी। वह उत्तम कुल में उत्पन्न और बड़ी स्वाभिमानिनी थी। एक बार उसका पुत्र सिन्धुराज से पराजित होकर घर भाग गया और वहाँ जाकर दीन भाव से सो रहा। माता बिदुला ने अपने पुत्र की इस अवस्था को देखकर उसकी बड़ी भर्त्सना की। उसने बहुत प्रयत्न करके अपने पुत्र को युद्ध के लिए उत्साहित किया। उसने अपने पुत्रको वह उपाय भी बतलाया जिससे उसका पुत्र शत्रुओं को वश में करके युद्ध में विजयी हो सकता था। माता विदुला के उपदेश से उसके पुत्र संजय को उत्साह मिला और वह युद्ध के लिये उद्यत हो गया। इस उपाख्यान के पुनः पुनः श्रवण करने से गर्भवती स्त्री निश्चय ही वीर पुत्र को जन्म देती है।

अम्बोपाख्यान—भीष्म ने शिखण्डी को न मारने की प्रतिज्ञा की थी। दुर्योधन द्वारा इसका कारण पूछने पर भीष्म ने उन्हें अम्बोपाख्यान सुनाकर अपनी प्रतिज्ञा का कारण बतलाया। यह उपाख्यान 'महाभारत' के उद्योग पर्व में एक सौ तिहत्तर से एक सौ बान्नवे अध्याय तक चलता है। महाराज शान्तनु का निधन हो जाने पर भीष्म ने अपने भाई चित्रांगद का राज्याभिषेक कर दिया। कुछ समय के पश्चात् चित्रांगद की भी मृत्यु हो गयी। तब उन्होंने माता सत्यवती की सम्मति से विचित्रवीर्य को राजा बना दिया। भीष्म विचित्रवीर्य से अत्यन्त स्नेह करते थे। विचित्रवीर्य के विवाह के लिये उन्होंने काशिराज की तीन कन्याओं का अपहरण कर लिया। उनके नाम थे अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका। अम्बा ने शाल्वराज के प्रति अपना अनुराग प्रकट करके उनके पास जाने के लिए भीष्म से आज्ञा मांग ली। भीष्म की आज्ञा लेकर अम्बा शाल्व के पास पहुंची किन्तु शाल्व ने उसका परित्याग कर दिया। शाल्व से परित्यक्ता होकर अम्बा तपस्वियों के आश्रम में गयी।

वहीं पर राजर्षि होत्रवाहन और अकृतव्रण भी आये थे। अम्बा ने उनसे बातचीत की। अकृतव्रण ने अम्बा से उसके दुःख का सारा वृत्तान्त सुनकर उससे पूछा कि वह क्या चाहती है—परशुराम के द्वारा शाल्वराज को ही विवाह के लिए विवश करना अथवा उनके द्वारा भीष्म की पराजय। अम्बा अपने इस दुःख का कारण भीष्म को ही मानती थी। इसलिए वह भीष्म को परशुराम के द्वारा पराजित देखना चाहती थी। अम्बा की प्रेरणा से परशुराम ने कुरुक्षेत्र में भीष्म के साथ घमासान युद्ध किया। भीष्म तथा परशुराम दोनों ही एक दूसरे पर शक्ति और ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर रहे थे। अन्त में देवताओं तथा गंगा के आग्रह से भीष्म और परशुराम का युद्ध समाप्त हुआ। युद्ध में भीष्म को पराजित हुआ न देखकर अम्बा ने उन्हें नीचा दिखाने के लिए कठोर तप करना प्रारम्भ कर दिया। अपनी तपस्या के प्रभाव से राजकन्या अम्बा आधे शरीर से अम्बा नामक नदी हो गयी और आधे अंग से वत्स देश में ही एक कन्या के रूप में प्रकट हुई। अम्बा ने अपने दूसरे जन्म में भी घोर तपस्या करके महादेव जी से अभीष्ट वरदान प्राप्त कर लिया। वह पुनः राजा द्रुपद के घर में कन्या होकर उत्पन्न हुई, किन्तु राजा तथा रानी ने उसे पुत्र रूप में प्रसिद्ध करके उसका नाम शिखण्डी रख दिया। दशार्ण देश के राजा हिरण्यवर्मा की पुत्री के साथ शिखण्डी का विवाह सम्पन्न हो गया। कालान्तर में दशार्णराज को शिखण्डी के स्त्री होने का पता चला, जिससे वह अत्यन्त क्रुद्ध हो गये। उन्होंने द्रुपद के राज्य पर आक्रमण कर दिया। महाराज द्रुपद घबरा गये। उन्होंने अपनी रानी से हिरण्यवर्मा के आक्रमण से आत्मरक्षा का उपाय पूछा। रानी ने भी शिखण्डी के शिखण्डिनी नाम की पुत्री होने की ही पुष्टि की। महाराज द्रुपद नगररक्षा की व्यवस्था करके देवाराधना में लग गये। शिखण्डिनी ने स्थूणाकर्ण नामक यक्ष को प्रसन्न करके उससे कुछ समय के लिए पुरुष रूप में परिणत होने का वरदान प्राप्त कर लिया। स्थूणाकर्ण नामक यक्ष ने शिखण्डिनी के स्त्रीत्व को लेकर अपना पुरुषत्व उसे प्रदान कर दिया। पुरुष रूप में आकर शिखण्डी ने अपने पिता से सारा वृत्तान्त कह सुनाया। महाराज द्रुपद आनन्द विभोर हो उठे। शिखण्डी ने द्रोणाचार्य से धनुर्विद्या की शिक्षा ग्रहण करली। भीष्म ने प्रतिज्ञा की थी कि जो स्त्री हो, जो पहले स्त्री रहकर पुरुष हुआ हो, जिसका नाम स्त्री के समान हो तथा जिसका रूप एवं वेष-भूषा स्त्रियों के समान हो, इन सब पर वह कभी भी बाण नहीं छोड़ेगा।

ययात्युपाख्यान—'महाभारत' के द्रोण पर्व में तिरसठवें अध्याय में ययाति का उपाख्यान वर्णित है। यह उपाख्यान देवर्षि नारद ने सृंजय को उनके पुत्र सुवर्णष्ठीवी की मृत्यु पर सुनाया था। पुत्र शोक से विह्वल सृंजय को सान्त्वना

देने के लिए नारद ने उन्हें ययाति का वृत्तान्त सुनाया था। नहुषनन्दन राजा ययाति बड़े ही उदार और धर्मात्मा थे। वह नित्य प्रति यज्ञानुष्ठान करके ब्राह्मणों को दक्षिणा दिया करते थे। एक बार देवासुर संग्राम छिड़ गया। ययाति ने देवताओं की सहायता की । दानी तो वह ऐसे थे कि उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वी को चार भागों में विभक्त करके होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा—इन चारों ऋत्विजों को दे डाला था। उनके दो पत्नियाँ थीं—शुक्रकन्या देवयानी और दानवराज की पुत्री शर्मिष्ठा। उन्हें सन्तान का भी पूर्ण सुख प्राप्त था। नाना प्रकार के भोगोपभोगों से भी शान्ति न पा सकने के कारण महाराज ययाति वन में चले गये। उन्होंने राज्य का भार अपने पुत्र पुरु को सौंप दिया था। अन्त में उनकी इहलौकिक लीला समाप्त हो गयी।

हंसकाकोपाख्यान—कर्णपर्व के इकतालीसवें अध्याय में राजा शल्य ने कर्ण को बार बार समझाया कि वह श्रीकृष्ण और अर्जुन की शरण में जाकर ही कल्याण प्राप्त कर सकता है। इसी प्रसंग में शल्य ने कर्ण को हंस और कौए का उपाख्यान सुनाया था। यह उपाख्यान इस प्रकार है—समुद्रतट पर एक राजा रहता था। वह बड़ा ही धर्मात्मा था। उसके बहुत से छोटे किन्तु यशस्वी पुत्र थे। पुत्रों की जूठन खानेवाला एक कौआ भी उसने पाल रखा था। राजकुमारों की जूठन से पालित पोषित कौआ घमण्ड में चूर रहा करता था। वह अपने समान किसी भी पक्षी को नहीं समझता था। एक बार कौए ने सागरतट पर उड़नेवाले हंसों से आकाश में उड़ने में होड़ लगा दी। हंसों के बहुत मना करने पर भी वह न माना। अन्त में एक हंस और कौए में होड़ लग गयी। कुछ देर तक तो कौआ हंस के साथ उड़ सका, बाद में वह थककर एक जलाशय में गिर गया। हंस कुछ दूर तो उड़ता रहा फिर उसने सोचा कि लौटकर कौए को देखना चाहिए। लौटकर उसने देखा कि कौआ एक जलाशय में पड़ा हुआ अपनी रक्षा के लिए छटपटा रहा था। कौए के द्वारा बार बार प्रार्थना करने पर हंस ने कौए को जलाशय से निकालकर वहीं पहुँचा दिया जहाँ से वे दोनों उड़े थे। अब कौआ बहुत लज्जित था। उसका अभिमान नष्ट हो चुका था।

सोलह राजाओं का उपाख्यान—कौरवों को मरा हुआ देख कर महाराज युधिष्ठिर अत्यन्त उद्विग्न हो उठे। उनका मन संसार से उचट चुका था। अपने बन्धु-बान्धवों और सगे-सम्बन्धियों को मारकर धर्मराज राज्य करना नहीं चाहते थे। वह प्रतिक्षण स्वजनों के शोक में ही डूबे रहा करते थे। उनकी यह अवस्था देखकर भगवान् कृष्ण ने उन्हें समझाया कि इस संसार में बड़े से बड़ा मनुष्य भी मरेगा, फिर किसी की भी मृत्यु पर शोक कैसा ? इसी प्रसंग में उन्होंने

मरुत्त इत्यादि सोलह पराक्रमी राजाओं की मृत्यु का उपाख्यान युधिष्ठिर को सुनाया था। यह उपाख्यान शान्तिपर्व के उनतीसवें अध्याय में संगृहीत है।

नारदपर्वतोपाख्यान——एक समय धर्मराज युधिष्ठिर ने भगवान् कृष्ण से प्रश्न किया कि यदि प्राचीन काल में मनुष्य की आयु एक हज़ार वर्ष की हुआ करती थी तो सृंजयपुत्र सुवर्णष्ठीवी कुमारावस्था आने से पहले ही क्यों कालकवलित हो गया था। युधिष्ठिर की इस शंका का समाधान करने के लिए ही भगवान् कृष्ण ने उन्हें यह उपाख्यान सुनाया था। यह शान्तिपर्व के तीसवें अध्याय में इस प्रकार कहा गया है——नारद और पर्वत नामक ऋषि परस्पर मामा भाँजे थे। पृथ्वी तल पर विचरण करते करते वे दोनों महाराज सृंजय के पास पहुँचे। सृंजय ने उन्हें बड़े आदर सत्कार से अपने राजप्रासाद में रखा। सृंजय के आतिथ्य से प्रसन्न होकर देवर्षि पर्वत ने उन्हें वरदान दिया कि उनके एक पुत्र होगा जो अत्यन्त तेजस्वी और पराक्रमी होगा। उसका नाम होगा सुवर्णष्ठीवी। किन्तु वह अल्पायु होगा। पुत्र के अल्पायु होने की बात से महाराज सृंजय अत्यन्त दुःखी हो गये। सृंजय के दुःख को देखकर नारद जी ने उन्हें आश्वासन दिया कि यमराज के पाश से छुड़ाकर वह उनका पुत्र उन्हें पुनः प्राप्त करा देंगे। कुछ समय बाद सृंजय के पुत्र उत्पन्न हुआ। सृंजय ने उसका नाम रखा सुवर्णष्ठीवी। सुवर्णष्ठीवी बड़ा होने लगा। यह देखकर भगवान् इन्द्र को भय हुआ कि वह बालक बड़ा होकर उन्हें ही न मार डाले। इन्द्र ने अपने बज्र को शेर के रूप में भेजकर सुवर्णष्ठीवी का वध करवा दिया। सृंजय और उनके अन्तःपुरवासी विलाप करने लगे। नारद ने जाकर सुवर्णष्ठीवी को पुनः जीवित कर दिया।

राजा पुरूरवस् का उपाख्यान——'महाभारत' के अन्तर्गत शान्तिपर्व के तिहत्तरवें अध्याय में सदाचारी पुरोहित की आवश्यकता तथा ब्राह्मण और क्षत्रिय में मेल रहने से जो लाभ होता है उसे बतलाते हुए भीष्म ने युधिष्ठिर को यह उपाख्यान सुनाया था।

मुचुकुन्दोपाख्यान——भीष्म ने युधिष्ठिर को ब्राह्मण और क्षत्रिय के मेल से होनेवाले कल्याण को बतलाते हुये मुचुकुन्द का उपाख्यान सुनाया था। यह उपाख्यान शान्तिपर्व के चौहत्तरवें अध्याय में इस प्रकार संगृहीत है——महाराज मुचुकुन्द इस पृथ्वी को तो जीत ही चुके थे। अपने बल की परीक्षा लेने के लिये उन्होंने अलकापति कुबेर पर चढ़ाई कर दी। कुबेर की आज्ञा से राक्षसों ने जाकर मुचुकुन्द की सेना को नष्ट करना प्रारम्भ कर दिया। मुचुकुन्द इसके लिये अपने पुरोहित वसिष्ठ को उपालम्भ देने लगे। वसिष्ठ ने अपने तपोबल से राक्षसों का विनाश कर डाला। अब मुचुकुन्द की विजय का मार्ग प्रशस्त हो गया। अपनी

सेना को मरती हुई देखकर कुबेर ने मुचुकुन्द से कहा कि युद्ध ही करना है तो अपने बल से करो, ब्राह्मण के बल पर अभिमान करना ठीक नहीं है। यह सुनकर मुचुकुन्द क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने कहा कि ब्राह्मणों और क्षत्रियों को मिलकर ही प्रजा का पालन करना चाहिये। कुबेर इस उत्तर से अवाक् रह गये। मुचुकुन्द ने वसिष्ठ की सहायता से कुबेर पर विजय प्राप्त कर ली।

केकयराजराक्षसोपाख्यान––'महाभारत' के शान्तिपर्व के सतहत्तरवें अध्याय में भीष्म ने धर्मराज युधिष्ठिर को राजा के कर्तव्यों को बतलाते हुये यह उपाख्यान सुनाया था। एक समय की बात है, केकयराज वन में रहकर कठोर व्रत का पालन और स्वाध्याय किया करते थे। एक दिन उन्हें एक भयंकर राक्षस ने पकड़ लिया। यह देखकर केकयराज को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने राक्षस से कहा कि उनके राज्य में सभी लोग अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं। ब्राह्मण अग्निहोत्र किया करते हैं। चारों ओर सुख-शान्ति का साम्राज्य है। फिर क्या कारण है कि राक्षस ने उनके ऊपर अपना अधिकार जमा लिया है। केकयराज की इन बातों को सुनकर राक्षस उनको छोड़कर चला गया।

कालकवृक्षीय मुनि का उपाख्यान––मन्त्रियों की परीक्षा तथा राजा और राजकीय मनुष्यों से सतर्क रहने के लिये युधिष्ठिर को समझाते हुये भीष्म ने उन्हें कालकवृक्षीय मुनि का उपाख्यान सुनाया था। यह उपाख्यान शान्तिपर्व के बयाइसवें अध्याय में वर्णित है। कोसल के राज्य पर महाराज क्षेमदर्शी शासन कर रहे थे। उस समय उनके समीप कालकवृक्षीय नामक एक मुनि आये। वह महाराज क्षेमदर्शी के पिता के प्रिय सुहृद् थे। मुनिराज के पास एक तोता था। उन्होंने क्षेमदर्शी के मन्त्रियों के पास तोते को ले जाकर कहा कि यह तोता आप लोगों के द्वारा किये हुये सारे कुकर्मों को जानता है। यह बतला सकता है कि मन्त्रियों में से कौन राजा के धन का अपहरण करता रहता है। कालकवृक्षीय मुनि की इस बात को सुनकर सभी मन्त्री सशंकित हो उठे। उनमें से किसी ने रात में तोते का वध भी कर डाला। यह देख कर मुनिराज कोसल नरेश के पास गये और उनसे उनके मन्त्रियों के विषय में सचेत कर दिया। मुनिराज के उपदेश से महाराज क्षेमदर्शी मन्त्रियों की ओर से सजग रहकर अपना राज्य करने लगे।

मूषकबिडालोपाख्यान––'महाभारत' में शान्तिपर्व के एक सौ अड़तीसवें अध्याय में भीष्म ने युधिष्ठिर को यह उपदेश दिया है कि समय पड़ने पर शत्रु के साथ भी मित्रता कर लेना श्रेयस्कर होता है और कभी कभी परिस्थितिवश अपने मित्र पर भी विश्वास कर लेना अकल्याणकर हो सकता है। इसी प्रसंग में भीष्म ने एक चूहे और एक बिलाव का दृष्टान्त दिया है। किसी महान् वन में

एक विशाल बरगद का वृक्ष था। वह लता समूहों से आच्छादित और नाना प्रकार के पक्षियों से सुशोभित था। उसकी जड़ में सौ दरवाज़ों का बिल बनाकर पलित नामक एक परम बुद्धिमान् चूहा निवास करता था। उसी बरगद की डाली पर लोमश नामक एक बिलाव भी सुखपूर्वक रहा करता था। एक बार एक बहेलिये ने वृक्ष के नीचे जाल बिछा दिया। लोमश नामक मार्जार उस जाल में फँस गया। अपने बिल से निकल कर पलित ने जाल पर बिखरे हुये मांस को देखा। वह बड़ी मौज से मांस खाने लगा। इतने में उसने देखा कि एक ओर हरिण नामक नेवला बैठा हुआ उसे लोलुप दृष्टि से देख रहा था और दूसरी ओर चन्द्रक नामक उल्लू अपनी गोल गोल आँखों से उसे घूर रहा था। पलित को लगा कि उसकी दशा तो सांप छछुन्दर सी हो गयी है। वह किधर भी नहीं जा सकता है। उसने लोमश नामक बिलाव से यह सन्धि कर ली कि यदि वह उसे ही न खा जाये तो दोनों की रक्षा हो सकती है। लोमश भी चाण्डाल का चिन्तन करके कम्पित हो रहा था। उसने पलित को आश्वासन दिया कि यदि वह उसे बचा लेगा तो उसका कुछ भी अनिष्ट न होगा। चतुर पलित ने चाण्डाल को आता हुआ देखकर जाल को काट दिया। बेचारा लोमश अपनी जान लेकर वट वृक्ष पर चढ़ गया। लोमश के भय से हरिण और चन्द्रक भी भाग खड़े हुये। पलित भी अपने बिल में घुस गया। वृक्ष पर चढ़ जाने के बाद मार्जार ने मूषक को अपने पास बुलाने का बहुत प्रयत्न किया। वह नाना प्रकार से पलित को विश्वास दिला रहा था, किन्तु बुद्धिमान् पलित ने उसके सभी तर्कों का उत्तर देकर उसे निरुत्तर कर दिया। पलित की चतुरता से उसके प्राण बच गये।

चिरकारीगौतमोपाख्यान—शान्तिपर्व के दो सौ छासठवें अध्याय में भीष्म ने युधिष्ठिर को यह उपदेश दिया था कि किसी भी कार्य को करने के पूर्व उसके सम्बन्ध में चिरकाल तक विचार कर लेना चाहिए। इसी प्रसंग में उन्होंने महर्षि गौतम और उनके पुत्र चिरकारी का उपाख्यान सुनाया था। महर्षि गौतम के एक पुत्र था। वह प्रत्येक कार्य को बहुत देर तक सोच विचार करके ही किया करता था। इसीलिये पिता ने उसका नाम रखा था चिरकारी। एक दिन की बात है, गौतम ने अपनी स्त्री द्वारा किये गये किसी व्यभिचार पर कुपित होकर अपने और पुत्रों को छोड़कर चिरकारी को आदेश दिया कि वह अपनी माता का वध कर दे। यह आदेश देकर महर्षि वन में चले गये। चिरकारी का जैसा नाम था, वैसा ही उसमें गुण भी था। वह बहुत समय तक सोचता रहा कि वह क्या करे, क्या न करे। एक ओर पिता जी का आदेश था तो दूसरी ओर थी मातृभक्ति। बहुत समय तक वह कर्तव्याकर्तव्य का ही विचार करता रहा। उधर महर्षि गौतम

का क्रोध शान्त हुआ। वह अपने द्वारा पुत्र को दिये गये आदेश पर पश्चात्ताप कर रहे थे। वह रोते हुये घर आये। उन्हें आशंका थी कि उनके आज्ञाकारी चिरकारी ने माता का वध न कर दिया हो। उन्हें देखते ही चिरकारी शस्त्र फेंककर उनके चरणों में गिर गया। वह अभी तक पिता के आदेश का पालन न कर सकने के कारण भयभीत था। गौतम को यह देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुयी कि उनके अनुचित आदेश का पालन नहीं किया गया है। वह अपने पुत्र चिरकारी से अत्यन्त प्रसन्न हुये और उसे दीर्घायु होने का आशीर्वाद प्रदान किया।

नृगोपाख्यान---राजा नृग का यह उपाख्यान अनुशासन पर्व के सत्तरवें अध्याय में संगृहीत है। एक थे राजा नृग। वह प्रतिदिन बहुत-सी गायें दान में दिया करते थे। एक समय की बात है, एक अग्निहोत्री ब्राह्मण परदेश गया हुआ था। उसके पास एक गाय थी। वह एक दिन अपने स्थान से भाग कर महाराज नृग की गायों में मिल गयी। राजा ने अज्ञानवश उस गाय को एक ब्राह्मण को दान में दे दी। अग्निहोत्री ब्राह्मण जब स्वदेश लौटा तो उसे अपनी गाय नहीं दिखाई दी। गाय की खोज में इधर उधर घूमते हुये उसने देखा कि उसकी गाय एक दूसरे ब्राह्मण के घर बँधी हुई थी। गाय को लेकर दोनों ब्राह्मणों में कलह हो गयी। निर्णय के लिये मामला महाराज के सामने गया। उन्होंने दोनों ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया, किन्तु वे ब्राह्मण थे कि मानते ही न थे। अग्निहोत्री ब्राह्मण असन्तुष्ट होकर अपने घर को लौट गया। इसी बीच में राजा नृग की मृत्यु हो गयी। यमराज ने उनसे कहा कि 'एक तो आप अपनी प्रजा की रक्षा न कर सकने के कारण कर्तव्य-पद से च्युत हो गये हैं, दूसरे आपने ब्राह्मण के धन का अपहरण किया है। इसलिये आपको पहले या पीछे पाप का भोग करना ही पड़ेगा।' राजा ने पहले पाप को भोग लेना ही उचित समझा। यमराज ने उन्हें गिरगिट बनाकर एक कुयें में डाल दिया और कहा कि एक हज़ार वर्षों के बाद भगवान् कृष्ण का स्पर्श करके ही तुम्हारा उद्धार होगा। जिस समय भगवान् कृष्ण द्वारकापुरी में राज्य कर रहे थे, यदुवंशी बालकों ने एक कुयें में पड़े हुए विशालकाय गिरगिट को देखा। कुतूहलवश उन्होंने इसकी सूचना भगवान् कृष्ण को दी। कृष्ण ने जाकर गिरगिट को कुयें से बाहर निकाला। भगवान् श्रीकृष्ण के स्पर्श से ही महाराज नृग को अपना वास्तविक रूप प्राप्त हो गया। तदनन्तर वह स्वर्गोपभोग के लिए चले गये।

अध्याय २

नलोपाख्यान–संक्षिप्त कथासार

द्यूतक्रीड़ा के परिणामस्वरूप धर्मराज युधिष्ठिर अपना सर्वस्व खोकर द्वैतवन में निवास कर रहे थे। उनके साथ थे उनके चारों भाई और द्रौपदी। कुछ समय के पश्चात् अर्जुन के इन्द्रलोक चले जाने पर पाण्डवगण काम्यक वन में निवास करने लगे। भीम ने पुनः युधिष्ठिर से कौरवों के साथ युद्ध छेड़ देने के लिए आग्रह करना प्रारम्भ कर दिया। युधिष्ठिर अत्यन्त दुःखी थे, उनकी समझ में ही न आता था कि किया क्या जाये। इसी बीच महर्षि वृहदश्व आ पहुँचे। धर्मराज युधिष्ठिर ने अपनी समस्या को उनके सामने प्रस्तुत किया। धर्मराजको सान्त्वना देने के लिए ही महर्षि ने उन्हें नलोपाख्यान सुनाया था। नलोपाख्यान का सारांश इस प्रकार है:—

पहला सर्ग

निषध देश में एक राजा थे नल, वीरसेन के पुत्र। वह अत्यन्त रूपवान् और पराक्रमी थे। विदर्भ देश में भी एक राजा थे। उनका नाम था भीम। वह निस्सन्तान थे। दमनक नामक ब्रह्मर्षि के आशीर्वाद से उन्होंने एक कन्या प्राप्त की। उसका नाम था दमयन्ती। इसके अतिरिक्त उसके तीन पुत्र भी हुये—दम, दान्त और दमन। दमयन्ती अद्वितीय सुन्दरी थी और नल भी थे अतुल सौन्दर्य-सम्पन्न। नल और दमयन्ती द्वारा एक दूसरे के गुणों का श्रवण। नल और दमयन्ती का परस्पर अनुरक्त होना। नल का एकान्त वन में जाना, वहाँ उनके द्वारा एक हंस को पकड़ लिया जाना। दमयन्ती के सम्मुख नल का वर्णन करने का लोभ देकर हंस का मुक्त हो जाना। हंसों का विदर्भ नगरी में जाकर दमयन्ती तथा उसकी सखियों के पास गिर जाना। प्रमद वन में हंस के मुख से दमयन्ती के द्वारा नल का गुणश्रवण। विदर्भ देश से लौट कर हंस का नल के पास पुनः जाना।

दूसरा सर्ग

हंस के मुख से नल के विषय में सुनकर दमयन्ती का खोयी खोयी सी रहना। सखियों के द्वारा दमयन्ती के विषय में विदर्भराज को सब कुछ बतलाना। महाराज

भीम के द्वारा दमयन्ती के स्वयम्वर की योजना। देवर्षि नारद और पर्वत से इन्द्रादि देवताओं का दमयन्ती के स्वयम्वर का समाचार जानना। सब देवताओं का दमयन्ती के स्वयम्वर के लिये चल पड़ना। मार्ग में नल का दर्शन और उनसे अपने अभीष्ट की सिद्धि के लिये सहायता की याचना।

तीसरा सर्ग

नल के द्वारा देवताओं की सहायता करने की प्रतिज्ञा। इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम को दमयन्ती के लिये इच्छुक देखकर नल के द्वारा देवताओं की सहायता करने में असमर्थता व्यक्त करना। देवताओं की प्रेरणा से नल का दमयन्ती के समीप जाना। नल-दमयन्ती-संवाद। नल के द्वारा आत्म-परिचय देना और देवताओं के कार्य की सिद्धि के लिये ही वहाँ पर जाने की बात कहना।

चौथा सर्ग

दमयन्ती द्वारा नल के प्रति अपने अनुराग की अभिव्यक्ति और उनसे तिरस्कृत होने पर आत्महत्या कर लेने की धमकी। नल के द्वारा देवताओं की महिमा का बार बार वर्णन करने पर भी दमयन्ती नल को पति रूप में वरण करने के लिये दृढ़-प्रतिज्ञ। नल का देवताओं के पास लौट कर आना और अपने प्रति दमयन्ती की दृढ़निष्ठा का वर्णन करना।

पाँचवाँ सर्ग

दमयन्ती के स्वयम्वर के लिए विभिन्न देशों के राजाओं का आमन्त्रण। स्वयम्वर में समान आकृति वाले पाँच व्यक्तियों को देखकर दमयन्ती की भ्रान्ति। दमयन्ती के द्वारा सभी लोकपालों की स्तुति और नल को पहचानना। दमयन्ती के द्वारा नल का पति रूप में वरण। लोकपालों के द्वारा दमयन्ती को आठ वरों का प्रदान करना। दमयन्ती को प्राप्त करके यज्ञादि करते हुये महाराज नल का प्रजा-पालन करना।

छठा सर्ग

स्वयम्वर से लौटते हुये देवताओं का द्वापर के साथ आते हुये कलि का मिलन। देवताओं से कलि को दमयन्ती के द्वारा नल को वरण करने की सूचना। कलि का क्रुद्ध हो उठना। उसे समझा बुझाकर देवताओं का स्वर्ग लोक को प्रस्थान। कलि का द्वापर के साथ समझौता करके नल के मन में प्रवेश करने का संकल्प।

सातवाँ सर्ग

उपयुक्त अवसर पाकर कलि का महाराज नल के मन में प्रवेश। कलि की प्रेरणा से पुष्कर और नल की द्यूतक्रीड़ा। नल का प्रत्येक दाँव हारना। दमयन्ती का नल को द्यूतक्रीड़ा से रोकना। महीनों तक द्यूतक्रीड़ा के उपरान्त महाराज नल की पराजय।

आठवाँ सर्ग

दमयन्ती की आज्ञा से वृहत्सेना का मन्त्रियों का बुलाकर लाना। मन्त्रियों और प्रजाओं के मना करने पर भी महाराज नल की द्यूतक्रीड़ा में प्रवृत्ति। नल के सारथी वार्ष्णेय को बुलाकर दमयन्ती द्वारा अपने दोनों बच्चों को कुण्डिनपुर में भेज देना। सारथी वार्ष्णेय का महाराज भीम के पास से लौटकर अयोध्या नरेश ऋतुपर्ण के यहाँ नौकरी कर लेना।

नवाँ सर्ग

नल का सर्वस्व हारकर एक वस्त्र में लिपटी हुई दमयन्ती को साथ लेकर राज्य से निकल पड़ना। पुष्कर के भय से प्रजा के द्वारा भी नल-दमयन्ती की उपेक्षा। भूख से पीड़ित नल के द्वारा पक्षिसमूह को देखकर प्रसन्न होना। पक्षियों को पकड़ने के लिये नल का उन पर अपना वस्त्र फेंकना। वस्त्र को लेकर भागते हुये पक्षियों के द्वारा पांसों के रूप में अपना परिचय देना। दुःखी नल का दमयन्ती को विभिन्न नगरों का मार्ग बतलाकर लौट जाने का संकेत करना। दमयन्ती का शोक। उसका नल के साथ-साथ रहने का आग्रह। दमयन्ती द्वारा नल से अपने पिता के नगर में जाने का प्रस्ताव।

दसवाँ सर्ग

नल के द्वारा दमयन्ती के प्रस्ताव का अस्वीकृत होना। एक सभा के समीप पहुँचकर दमयन्ती का सो जाना। नल के द्वारा दमयन्ती के परित्याग का निश्चय। दमयन्ती के आधे वस्त्र को काटकर नल का वहाँ से भागना। पुनः लौकटर दमयन्ती को देखकर नल का विलाप। अन्ततः दमयन्ती को वन में अकेली छोड़कर नल का वहाँ से चल पड़ना।

ग्यारहवाँ सर्ग

दमयन्ती की नींद टूटना। नल को वहाँ न देखकर दमयन्ती का विलाप।

एक बहेलिये के द्वारा अजगर से घिरी हुयी दमयन्ती को देखना और अजगर का वध करके दमयन्ती को भय से छुड़ाना। दमयन्ती के प्रति व्याध के मन में विकार और दमयन्ती के शाप से व्याध का भस्म होना।

बारहवाँ सर्ग

वहाँ से चलकर दमयन्ती का हिंसक पशुओं से भरे हुये वनों और पर्वतों में घूमना। दमयन्ती का विलाप। उद्विग्न दमयन्ती द्वारा एक सिंह को देखकर अपने भक्षण के लिये ही उसका आमन्त्रण। वन में भटकती हुयी दमयन्ती का वृक्षादि जड़ पदार्थों से भी नल के विषय में पूछना। तपोवन में दमयन्ती का तपस्वियों के आश्रम में जाना। दमयन्ती द्वारा तपस्वियों को अपना परिचय देना। दमयन्ती को सान्त्वना देकर तपस्वियों का अन्तर्धान हो जाना। दमयन्ती का आश्चर्य। पुनः रोती हुयी दमयन्ती का आगे बढ़ना। अशोक वृक्ष से नल के विषय में पूछना। दमयन्ती का नदी में स्नान करते हुए एक सैन्यदल से मिलना। दमयन्ती को देखकर सैन्यदल का आश्चर्य। दमयन्ती द्वारा सेनापति को अपना परिचय देना।

तेरहवाँ सर्ग

दमयन्ती का सैन्यदल के साथ चेदिराज के राज्य की ओर गमन। सैन्यदल द्वारा एक मनोहर तालाब का दर्शन। हस्तिसमूह द्वारा रात में सोते हुये सैन्यदल का पद-दलित होना। अवशिष्ट मनुष्यों के साथ दमयन्ती का चेदिराज में प्रवेश। अटारी पर से राजमाता के द्वारा दमयन्ती का दर्शन करके उसे अपने पास बुला लेना। राजमाता के पूछने पर रो रोकर दमयन्ती द्वारा अपना परिचय देना। करुणा से अभिभूत राजमाता के आग्रह से दमयन्ती का राज-प्रासाद में निवास।

चौदहवाँ सर्ग

दमयन्ती को छोड़कर जाते हुये नल को वन में कर्कोटक नामक सर्प से मिलना नल का कर्कोटक को लेकर चल पड़ना। दसवें पग पर कर्कोटक के द्वारा नल का डसा जाना। नल की रूपविकृति। नल का आश्चर्य। कर्कोटक का अपने वास्तविक रूप में आना और नल को अयोध्यानरेश ऋतुपर्ण के यहाँ जाने की सलाह देना। कर्कोटक के द्वारा नल को एक वस्त्र प्रदान करना। अपने स्मरण से नल को पुनः वास्तविक रूप में कर देने का वचन देकर सर्पराज का अन्तर्धान हो जाना।

पन्द्रहवाँ सर्ग

बाहुक के रूप में नल का ऋतुपर्ण के नगर में निवास। बाहुक द्वारा निरन्तर दमयन्ती का चिन्तन।

सोलहवाँ सर्ग

महाराज भीम के द्वारा नल और दमयन्ती की खोज करने के लिये दूतों का भेजना। सुदेव नामक ब्राह्मण के द्वारा चेदिराज के राजप्रासाद में सुनन्दा के साथ दमयन्ती को देखना। सुदेव द्वारा दमयन्ती को अपना परिचय देना। सुदेव और दमयन्ती का वार्तालाप। दमयन्ती के विषय में जानने के लिये राजमाता का सुदेव से आग्रह।

सत्रहवाँ सर्ग

दमयन्ती के विषय में सुदेव से सब कुछ सुनकर राजमाता का रो पड़ना। राजमाता को अपनी बहन की पुत्री दमयन्ती को पहचानना और उसे विदर्भ को भेज देना। विदर्भ नगरी में दमयन्ती के सगे-सम्बन्धियों के द्वारा उसका स्वागत-सत्कार।

अठारहवाँ सर्ग

नल को खोज करने के लिये दमयन्ती की अपनी माता जी से प्रार्थना। अपनी पत्नी की प्रेरणा से महाराज भीम द्वारा नल की खोज में ब्राह्मणों का भेजना। ब्राह्मणों के द्वारा दमयन्ती के संवाद को इधर उधर सुनाना।

उन्नीसवाँ सर्ग

पर्णाद नामक ब्राह्मण का विदर्भ में लौटकर जाना और दमयन्ती को बाहुक के विषय में बतलाना। दमयन्ती के द्वारा पर्णाद का आदर-सत्कार, तदनन्तर सुदेव को यह सन्देश देकर भेजना कि दमयन्ती दूसरे पति का वरण करना चाहती है।

बीसवाँ सर्ग

सुदेव के मुख से दमयन्ती के पुनः स्वयम्वर की बात को सुनकर महाराज ऋतुपर्ण की उसमें सम्मिलित होने की उत्सुकता। दमयन्ती के स्वयम्वर की बात को सुनकर नल का दुःख। दमयन्ती को देखने की लालसा से बाहुक का ऋतुपर्ण को रथ में बिठाकर बड़े वेग से विदर्भ की ओर प्रस्थान। ऋतुपर्ण को बाहुक में नल की शंका।

इक्कीसवाँ सर्ग

रास्ते में जाते हुये ऋतुपर्ण के दुपट्टे का उड़कर गिरना। ऋतुपर्ण द्वारा बिभीतक के फलों को गिनकर अपनी गणनाशक्ति का परिचय देना। ऋतुपर्ण से नल को

द्यूत-विद्या की प्राप्ति। नल के शरीर से कलि एवं कर्कोटक के विष का निर्गमन। नल की विपत्ति की समाप्ति।

बाईसवाँ सर्ग

ऋतुपर्ण का विदर्भ देश में पहुँचना। उसके रथ के निर्घोष से नल के घोड़ों की प्रसन्नता। दमयन्ती द्वारा भी उस रथ-निर्घोष का सुनना। दमयन्ती का विलाप। अटारी पर चढ़कर दमयन्ती के द्वारा बाहुक और वार्ष्णेय के साथ ऋतुपर्ण का दर्शन। ऋतुपर्ण को अकस्मात् आया हुआ देखकर भीम का आश्चर्य। भीम के द्वारा महाराज ऋतुपर्ण का आदर-सत्कार। अश्वशाला में बैठे हुये बाहुक की परीक्षा के लिये दमयन्ती के द्वारा दूती को भेजना।

तेईसवाँ सर्ग

अश्वशाला में बाहुक और दूती केशिनी का वार्तालाप। केशिनी के द्वारा नल के सम्बन्ध में प्रश्न। बाहुक का शोक। केशिनी के द्वारा दमयन्ती से बाहुक के सम्बन्ध में बतलाना।

चौबीसवाँ सर्ग

दमयन्ती के कहने से केशिनी का पुनः बाहुक की परीक्षा करने के लिए जाना। केशिनी के द्वारा लौटकर दमयन्ती से अश्वपालक बाहुक के सभी दैवी तथा मानुषी लक्षणों का वर्णन। दमयन्ती की आज्ञा से केशिनी का नल के द्वारा पकाये गये मांस को लाकर दमयन्ती को देना। मांस के चखने से दमयन्ती की बाहुक में नल की आशंका की पुष्टि। दमयन्ती के द्वारा केशिनी के साथ अपने दोनों बच्चों को नल के पास भेजना। बालकों को देखकर बाहुक के हृदय में पुत्र-स्नेह का उमड़ना। बाहुक द्वारा केशिनी को विदा करना।

पच्चीसवाँ सर्ग

केशिनी का बाहुक के विषय में दमयन्ती को बताना। दमयन्ती के द्वारा केशिनी को पुनः बाहुक के पास भेजना। अपनी माता की आज्ञा से दमयन्ती के द्वारा नल को अपने भवन में बुलाना। दमयन्ती और बाहुक का संवाद। बाहुक का शोक। उसके द्वारा अपने वहाँ आने का प्रयोजन बतलाना।

छब्बीसवाँ सर्ग

दमयन्ती द्वारा अपने को निर्दोष बतलाना। वायु के द्वारा दमयन्ती के कथन की पुष्टि। आकाश से पुष्पवृष्टि। कर्कोटक के ध्यान और उसके द्वारा दिये गये

वस्त्र को धारण करने से नल का अपने वास्तविक रूप में आ जाना। नल-दमयन्ती-संयोग। भीम को भी इस समाचार की प्राप्ति।

सत्ताईसवाँ सर्ग

महाराज भीम के द्वारा नल-दमयन्ती का स्वागत। विदर्भ में उत्सव। ऋतुपर्ण को भी नल-दमयन्ती के संयोग की सूचना। ऋतुपर्ण द्वारा नल से उन्हें सारथी के रूप में रखने के लिए क्षमा-याचना। नल से महाराज ऋतुपर्ण की अश्वज्ञान प्राप्ति। कुछ समय तक नल दमयन्ती का कुण्डिनपुर में निवास।

अट्ठाईसवाँ सर्ग

एक मास तक कुण्डिनपुर में रहने के पश्चात् बहुत सी सेना को लेकर महाराज नल का निषध देश में प्रवेश। नल और पुष्कर की द्यूत-क्रीड़ा। पुष्कर की पराजय। नल के द्वारा पुष्कर को क्षमादान। निषध देश में आनन्दोत्सव। यज्ञादि शुभ कर्मों को करते हुये महाराज नल का अपने राज्य पर शासन करना।

अध्याय ३

नलोपाख्यान और परवर्ती संस्कृत-साहित्य

नल और दमयन्ती की कथा अत्यन्त प्राचीन है। निषधराज नल का नाम वैदिक साहित्य में भी उपलब्ध होता है।[१] नल और दमयन्ती की सम्पूर्ण कथा सर्वप्रथम 'महाभारत' में ही उपलब्ध होती है। यह कथा कितनी रोचक और लोकप्रिय है इसका अनुमान तो इसी से किया जा सकता है कि परवर्ती संस्कृत साहित्य में इस कथा के आधार पर बहुत सी रचनायें की गयी हैं। प्रस्तुत अध्याय में ऐसी ही रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है—

१. **अर्द्धनलचरित**—यह एक महानाटक है, जिसकी रचना सुदर्शनाचार्य द्वारा की गयी थी।[२]

२. **अबोधाकर**—यह एक काव्यग्रन्थ है। इसके रचयिता घनश्याम नामक एक कवि माने जाते हैं।[३]

३. **उत्तरनैषध**—यह सोलह सर्गों में लिखा हुआ एक काव्य-ग्रन्थ है। इसके रचियता का नाम वन्दारूभट्ट है। इस में नल के उत्तरकालीन जीवन का चित्रण किया गया है। वन्दारुभट्ट या वन्दारद्विज माधव का जीवन काल सन् १८२५ ई० के आसपास माना जा सकता है।[४]

४. **कलिविडम्बन**—यह एक काव्य-ग्रन्थ है। इसके रचयिता नीलकण्ठ नामक कवि हैं। नीलकण्ठ के पिता का नाम नारायण और माता का नाम भूमिदेवी था। यह अप्पयदीक्षित के वंशज थे। यह ग्रन्थ काव्यमाला में प्रकाशित हो चुका है।[५]

५. **कल्याणनैषध**—यह एक काव्य-ग्रन्थ है। इसमें सात सर्गों में नल और

---

१. Weber : Indian Literature **पृष्ठ १३२**

२. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. **पृष्ठ १८६।**

३. Jani : A Critical Study in Sriharsa's Naisadhiya-caritam **पृष्ठ ८ (तृतीय परिशिष्ट)।**

४. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. **पृष्ठ १८४–८५।**

५. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. **पृष्ठ २३७।**

दमयन्ती के विवाह का वर्णन है। इसकी रचना महाराज रविवर्मा के मनोविनोद के लिये की गयी थी। इसका रचयिता अज्ञात है।[१]

६. **दमयन्तीकल्याण**—यह एक नाटक ग्रन्थ है। इसमें सम्भवतः पाँच अङ्क थे। इसके रचयिता रङ्गनाथ माने जाते हैं। इस समय इस नाटक की एक जीर्णशीर्ण प्रतिलिपि ही उपलब्ध होती है। ट्रैवङ्कोर में ताम्रपर्णी नदी के तट पर बसे हुये सुचिन्द्रम नामक नगर में श्री परमेश्वर के उत्सव के अवसर पर यह नाटक रङ्ग-मंञ्च पर खेला गया था। इसी नामका एक और नाटक भी है। इसके रचयिता नल्लन चक्रवर्ती शठगोपाचार्य थे। यह नाटक श्रीरङ्गम में पद्मासहाय के उत्सव में खेला गया था।[२]

७. **दमयन्ती-परिणय**—इस नाम से तीन काव्य-ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। इन में से एक के रचयिता चक्रकवि, दूसरे के मृत्युञ्जय स्वामी और तीसरे के रचयिता कोई अज्ञात कवि थे। इसी नाम से एक चम्पू ग्रन्थ भी है, किन्तु इसके रचयिता के विषय में भी कुछ ज्ञात नहीं है।[३]

८. **दमयन्तीप्रबन्ध**—इस नाम के दो ग्रन्थ हैं, जिनमें से एक गद्य में है और दूसरा छन्दोबद्ध।[४]

९. **नलकथार्णव**—यह एक काव्यग्रन्थ है, किन्तु अभी तक इसके रचयिता के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं हुआ है।[५]

१०. **नलकीर्तिकौमुदी**—यह एक काव्य ग्रन्थ है, किन्तु इसके केवल दो सर्ग ही उपलब्ध हो सके हैं। इसके रचयिता अगस्त्य नामक एक कवि थे। वह वरङ्गल के महाराज प्रतापरुद्र देव के राजकवि थे। उन्हें महाराज सङ्गम और विजयनगराधि-पति बुक्क प्रथम का भी आश्रय प्राप्त था। 'नलकीर्तिकौमुदी' की रचना ईसवी सन् १२९४ से १३२५ के मध्य की है।[६]

११. **नलचम्पू**—इसके रचयिता त्रिविक्रम हैं। इनका दूसरा नाम सिंहादित्य

---

१. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. **पृष्ठ १८५।**

२. **वही, पृष्ठ १८६।**

३. Jani : A Critical Study in Sriharsa's Naisadhiya-caritam. **पृष्ठ ९ (तृतीय परिशिष्ट)।**

४. **वही।**

५. Krishnamachariar : Hist. of Sans. Lit. **पृष्ठ ३०८।**

६. **वही, पृष्ठ २१४।**

भी था। इनके पिता नेमादित्य और पितामह श्रीधर थे। यह राष्ट्रकूट के महाराज इन्द्र तृतीय के राजकवि थे। इनका समय ईसवी सन् ९१४ के पास माना जाता है। नलचम्पू में छः उच्छ्वास हैं। इसका दूसरा नाम 'दमयन्तीकथा' भी है।[१]

१२. **नलचरित**—इस नाम से कई ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। इनमें से कुछ काव्य हैं, कुछ नाटक और कुछ गद्य काव्य। इनमें नीलकण्ठरचित 'नलचरितनाट्कम्' और काशी के पण्डित देवी प्रसाद शुक्लकृत 'नलचरित' काव्य ग्रन्थ विशेष महत्त्वपूर्ण हैं।[२]

१३. **नलदमयन्तीय**—यह एक नाटक है। इसके रचयिता कालिपाद तर्काचार्य हैं। इसका प्रकाशन भी संस्कृत साहित्य परिषद्, कलकत्ता से हो चुका है।[३]

१४. **नलभूमिपालरूपक**—इसके रचयिता का पता नहीं है।[४]

१५. **नल-यादव-पाण्डव-राघवीय**—इसका रचयिता अज्ञात है।[५]

१६. **नलरामायण**—यह एक काव्यग्रन्थ है, जिसके रचयिता राजशेखर कहे जाते हैं।[६]

१७. **नलवर्णन**—इसके रचयिता लक्ष्मीधर नामक कवि हैं।[७]

१८. **नलविक्रम**—इसका रचयिता अज्ञात है।[८]

१९. **नलविलास**—यह एक नाटक है। इसके रचयिता रामचन्द्र हैं। यह हेमचन्द्र के शिष्य थे। इनका समय ईसा की बारहवीं शताब्दी माना जाता है।[९]

२०. **नलस्तोत्र**—इसका रचयिता अज्ञात है।[१०]

---

१. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. पृष्ठ ४९७।

२. वही।

३. वही।

४. वही।

५. Jani : A Critical Study in Sriharsa's Naisadhiyacaritam पृष्ठ १२ (तृतीय परिशिष्ट)।

६. वही, पृष्ठ ११ (तृतीय परिशिष्ठ)

७. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. पृष्ठ ४९८।

८. वही।

९. वही, पृष्ठ ६४४।

१०. Jani : A Critical Study in Sriharsa's Naisadhiya caritam पृष्ठ १२ (तृतीय परिशिष्ट)।

२१. **नलहरिश्चन्द्रीय**—यह एक द्व्याश्रय काव्य है। इसके रचयिता का पता नहीं है। इसको सीधी ओर से पढ़ने पर नल की कथा का वर्णन उपलब्ध होता है और उलट कर पढ़ने से हरिश्चन्द्र की कथा का। उदाहरण के लिये निम्नलिखित श्लोक देखा जा सकता है—

निजमोऽतिप्रजानारीनलोऽच्छस्सदमोऽजनि।
यः श्रियश्चन्द्र इन्द्रश्च गोप्तागोस्सर्वपूरिह॥

इस का अन्तिम श्लोक तो और भी रोचक है, क्योंकि दोनों ओर से पढ़ने पर भी इसका प्रत्येक पाद वैसा का वैसा ही रहता है। श्लोक इस प्रकार से है—

लीलाकलोमध्यमलोकलाली
त्यागी सुखी मुग्धमुखी सुगीत्या।
सभाप्रयानङ्गनयाप्रभास
सहासया तत्र तया सहास॥[1]

२२. **नलानन्द**—यह जीवबुधरचित एक नाटक है। इसमें सात अङ्क हैं। जीवबुध के पिता का नाम कोनेरी था। जाति से ब्राह्मण होते हुये भी वह एक शासक थे। इनका समय ईसा की सत्रहवीं शताब्दी माना जाता है।[2]

२३. **नलाभ्युदय**—इस नाम की दो रचनायें उपलब्ध हैं—एक काव्य और दूसरी नाटक। नलाभ्युदय नामक काव्य-ग्रन्थ के रचयिता वामनभट्ट बाण हैं। यह विद्यारण्य के शिष्य थे। इनका समय ईसा की पन्द्रहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है। 'नलाभ्युदय' में आठ सर्ग हैं। यह ग्रन्थ टी० गणपतिशास्त्री द्वारा प्रकाशित हो चुका है।[3] नलाभ्युदय नाटक के रचयिता रघुनाथ हैं। वह तञ्जौर के शासक थे। इनका समय ईसा की सत्रहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध है।[4]

२४. **नलायन**—इसके रचयिता माणिक्यचन्द्र हैं। नलायन एक सौ सर्गों का एक विशालकाय काव्यग्रन्थ है। इसी लिये कवि ने इसे 'कुबेरपुराण' के नाम से भी सूचित किया है। माणिक्यचन्द्र के अनुसार नल कुबेर के ही अवतार थे।[5]

२५. **नलायनीचरित**—इसके रचयिता नारायण भट्टपाद हैं। यह एक

---

१. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. **पृष्ठ १९४।**
२. **वही, पृष्ठ १८६।**
३. **वही, पृष्ठ २१५।**
४. **वही, पृष्ठ २३०।**
५. **वही, पृष्ठ ७५६।**

नम्बूदरी ब्राह्मण थे। इनका समय १५६० से १६४६ ईसवी माना जाता है।[1]

२६. **नलोदय**—यह चार सर्गों का एक लघुकाव्य है। इसमें कुल मिलाकर २१७ श्लोक हैं। इसके रचयिता केरल के एक कवि वासुदेव हैं। इसमें कवि ने छन्दों के प्रयोग में अपनी कुशलता का परिचय दिया है।[2]

२७. **नैषधपारिजात**—इसके रचयिता कृष्ण दीक्षित नामक एक कवि हैं। इसमें नल एवं पारिजात हरण की कथाओं का एक साथ वर्णन किया गया है।[3]

२८. **नैषधानन्द**—इस नाम के दो ग्रन्थ हैं। इनमें से एक के रचयिता हैं श्री निवास दीक्षित[4] और दूसरे के क्षेमीश्वर।[5]

२९. **नैषधीयचरित**—संस्कृत के पाँच प्रसिद्ध महाकाव्यों में एक है 'नैषधीयनचरितम्'। यह महाकवि श्रीहर्ष की रचना है। इसमें बाइस सर्ग हैं। इसका रचना काल ११७५ ई० माना जा सकता है।

३०. **पुण्यश्लोकोदयम्**—यह एक नाटक है। इसके रचयिता हैं देवीशरण कविचक्रवर्ती।[6]

३१. **प्रतिनैषध**—यह एक काव्य ग्रन्थ है, जिसके रचयिता विद्याधर और लक्ष्मण नामक कवि हैं। इसकी रचना मुगल शासक शाहजहाँ के शासन काल में संवत् १७०८ वि० में हुई थी।[7]

३२. **भैमीपरिणय**—इस नाम की कई रचनायें उपलब्ध होती हैं। ये सभी नाटक हैं। ये विभिन्न नाटककारों की कृतियाँ हैं। इनके नाम हैं—रामशास्त्री,[8] श्रीनिवास दीक्षित (रत्नखेत)[9] शठगोपाचार्य[10] और वेङ्कटाचार्य।[11]

---

१. वही, पृष्ठ २५६।
२. वही, पृष्ठ ३७०।
३. वही, पृष्ठ २३६।
४. वही, पृष्ठ ४९८।
५. वही, पृष्ठ ६४२।
६. Jani : A Critical Study in Sriharsa's Naisadhiyacaritam पृष्ठ १२ (तृतीय परिशिष्ट)।
७. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. पृष्ठ १८५।
८. वही।
९. वही, पृष्ठ २३५।
१०. वही, पृष्ठ ६९२।
११. वही।

३३. **ममैंजुलनैषध**—यह वेङ्कट रङ्गनाथ द्वारा लिखा गया एक नाटक है। इसमें सात सर्ग हैं। इसका रचना काल सन् १८२२ से १९०० ई० के बीच में हो सकता है।[1]

३४. **राघवनैषधीय**—यह एक द्वयाश्रय काव्य है। इसके रचयिता हरदत्त गार्ग्य गोत्र में उत्पन्न जयशङ्कर के पुत्र थे। इसका रचनाकाल ईसा की अठारहवीं शताब्दी का प्रारम्भ माना जा सकता है।[2]

३५. **विधिविलसित**—यह एक नाटक ग्रन्थ है, किन्तु इसका रचयिता अज्ञात है।[3]

३६. **सहृदयानन्द**—यह पन्द्रह सर्गों का एक काव्य ग्रन्थ है। इसके रचयिता कवि कृष्णानन्द हैं। इसका रचना-काल तेरहवीं शताब्दी ईसवी के आस पास है।[4]

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत-साहित्य 'नलोपाख्यान' का कितना ऋणी है।

---

१. Jani : A Critical Study in Sriharsa's Naisadhiyacaritam पृष्ठ १० (तृतीय परिशिष्ट)।

२. Krishnamachariar : History of Sans. Lit. पृष्ठ १९४–९५।

३. वही, पृष्ठ ४९८।

४. वही, पृष्ठ १८४।

मूल एवं अनुवाद

नलोपाख्यानम्

प्रथमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

आसीद्राजा नलो नाम वीरसेनसुतो बली।
उपपन्नो गुणैरिष्टै रूपवानश्वकोविदः ॥१॥
अतिष्ठन्मनुजेन्द्राणां मूर्ध्नि देवपतिर्यथा।
उपर्युपरि सर्वेषामादित्य इव तेजसा ॥२॥
ब्रह्मण्यो वेदविच्छूरो निषधेषु महीपतिः।
अक्षप्रियः सत्यवादी महानक्षौहिणीपतिः ॥३॥
ईप्सितो वरनारीणामुदारः संयतेन्द्रियः।
रक्षिता धन्विनां श्रेष्ठः साक्षादिव मनुः स्वयम् ॥४॥
तथैवासीद्विदर्भेषु भीमो भीमपराक्रमः।
शूरः सर्वगुणैर्युक्तः प्रजाकामः स चाप्रजः ॥५॥
स प्रजार्थं परं यत्नमकरोत्सुसमाहितः।
तमभ्यगच्छद्ब्रह्मर्षिर्दमनो नाम भारत ॥६॥
तं स भीमः प्रजाकामस्तोषयामास धर्मवित्।
महिष्या सह राजेन्द्र सत्कारेण सुवर्चसम् ॥७॥
तस्मै प्रसन्नो दमनः सभार्याय वरं ददौ।
कन्यारत्नं कुमारांश्च त्रीनुदारान्महायशाः ॥८॥
दमयन्तीं दमं दान्तं दमनञ्च सुवर्चसम्।
उपपन्नान्गुणैः सर्वैर्भीमान्भीमपराक्रमान् ॥९॥
दमयन्ती तु रूपेण तेजसा यशसा श्रिया।
सौभाग्येन च लोकेषु यशः प्राप सुमध्यमा ॥१०॥

नलोपाख्यान

सर्ग १

बृहदश्व

एक थे राजा नल, वीरसेन के पुत्र। वह बहुत बलवान् थे और थे (दया दाक्षिण्यादि) अभीष्ट गुणों से युक्त, रूपवान् और अश्वों का ज्ञान रखनेवाले भी ॥१॥

वह राजाओं के शिरोमणि थे जैसे कि भगवान् इन्द्र (देवताओं के)। अपने तेज के कारण वह सदैव तेजस्वी सूर्य के समान सर्वोच्च पद के अधिकारी रहा करते थे ॥२॥

निषध देश के महाराज नल ब्राह्मणों से प्रीति करने वाले, वेदविद्, जुआड़ी और सत्यवादी थे। वह एक अक्षौहिणी सेना के स्वामी थे ॥३॥

वह सुन्दरियों के प्रिय, उदार, जितेन्द्रिय, धनुर्धारियों के रक्षक और स्वयं मनु के समान ही श्रेष्ठ थे ॥४॥

(उधर) विदर्भ देश में भी एक राजा थे—भीम। वह अत्यन्त पराक्रमी, शूर सर्वगुणसम्पन्न और प्रजा के हितैषी थे, किन्तु उनके कोई सन्तान न थी ॥५॥

महाराज भीम अत्यन्त निष्ठापूर्वक सन्तान-प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील थे। उसी समय उनके पास दमनक नामक ब्रह्मर्षि गये ॥६॥

धर्मज्ञ एवं सन्तान की कामना करने वाले महाराज भीम ने, महारानी के साथ, ब्रह्मर्षि दमनक का आदर-सत्कार करके उन्हें सन्तुष्ट कर दिया ॥७॥

ब्रह्मर्षि ने प्रसन्न होकर महाराज और महारानी को यह वर प्रदान किया कि वे एक सुन्दरी कन्या और तीन उदार एवं यशस्वी पुत्रों को प्राप्त करें ॥८॥

उनके नाम होंगे दमयन्ती, दम, दान्त और दमन। वे सभी सर्वगुणसम्पन्न एवं अत्यन्त पराक्रमी होंगे ॥९॥

अपने रूप, तेज, यश, ऐश्वर्य और सौभाग्य के कारण सुन्दरी दमयन्ती की कीर्ति तीनों लोकों में फैल गयी ॥१०॥

अथ तां वयसि प्राप्ते दासीनां समलंकृतम्।
शतं शतं सखीनाञ्च **तथा पर्युपास्ते शचीमिव**[1] ॥११॥

तत्र स्म **भ्राजते**[2] भैमी सर्वाभरणभूषिता।
सखीमध्येऽनवद्याङ्गी विद्युत्सौदामिनी यथा।
अतीव रूपसंपन्ना श्रीरिवायतलोचना ॥१२॥

न देवेषु न यक्षेषु तादृग्रूपवती क्वचित्।
मानुषेष्वपि चान्येषु **दृष्टपूर्वा न च**[3] श्रुता।
चित्तप्रमाथिनी बाला देवानामपि सुन्दरी ॥१३॥

नलश्च नरशार्दूलो **रूपेणाप्रतिमो**[4] भुवि।
कन्दर्प इव रूपेण मूर्तिमानभवत्स्वयम् ॥१४॥

तस्याः समीपे तु नलं प्रशशंसुः कुतूहलात्।
नैषधस्य समीपे तु दमयन्तीं पुनः पुनः ॥१५॥

तयोरदृष्टकामोऽभूच्छृण्वतोः सततं गुणान्।
अन्योन्यं प्रति कौन्तेय स व्यवर्धत हृच्छयः ॥१६॥

अशक्नुवन्नलः कामं तदा धारयितुं हृदा।
अन्तःपुरसमीपस्थे वन आस्ते रहोगतः ॥१७॥

स ददर्श **तदा**[5] हंसाञ्जातरूपपरिच्छदान्[6]।
वने विचरतां तेषामेकं जग्राह पक्षिणम् ॥१८॥

ततोऽन्तरिक्षगो[7] वाचं व्याजहार **तदा नलम्**[8]।
न हन्तव्योऽस्मि[9] ते राजन्करिष्यामि **हि ते**[10] प्रियम् ॥१९॥

---

१. M. W. **पर्युपासच्छचीमिव**
२. M. W. **राजते**
३. M. W. **दृष्टपूर्वाथवा**
४. M. W. **लोकेष्वप्रतिमो**
५. M. W. **ततो**
६. M. W. **परिष्कृतान्**
७. M. W. **ततोऽन्तरीक्षगो**
८. M. W. **नलं तदा**
९. M. W. **हन्तव्योऽस्मि न**
१०. M. W. **तव**

अब दमयन्ती बड़ी हो गयी। सैकड़ों सखियाँ तथा दासियाँ उसकी सेवा-शुश्रूषा उसी प्रकार करने लगीं जिस प्रकार इन्द्राणी की सेवा-शुश्रूषा उसकी दासियाँ किया करती हैं॥११॥

सभी प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित दमयन्ती अपनी सखियों के बीच में मेघमाला की विद्युच्छटा की भाँति शोभित हुआ करती थी। दमयन्ती अत्यन्त रूपवती थी और उसके नेत्र बड़े-बड़े थे। इससे वह (साक्षात्) लक्ष्मी के समान (सुन्दरी) प्रतीत हुआ करती थी॥१२॥

उसके समान सुन्दरी स्त्री न तो देवताओं में ही थी और न यक्षों में ही। दमयन्ती के समान सुन्दरी स्त्री इससे पूर्व न तो मानव-समाज में और न मानवेतर समाज में ही देखी-सुनी गयी थी, (मनुष्यों का तो कहना ही क्या?)। वह देवताओं के मन को भी चञ्चल कर दिया करती थी॥१३॥

नर-केशरी नल भी इस पृथ्वी पर एवं अन्य लोकों में बेजोड़ ही थे। वह अपने सौन्दर्य के कारण साक्षात् कामदेव के समान ही प्रतीत होते थे॥१४॥

कुतूहलवश लोग दमयन्ती के सम्मुख नल की और नल के सम्मुख दमयन्ती की भूरि-भूरि प्रशंसा किया करते थे॥१५॥

इस प्रकार एक-दूसरे के गुणों को सुनते-सुनते नल और दमयन्ती में, एक दूसरे को न देखने पर भी, परस्पर अनुराग बढ़ने लगा॥१६॥

इस (पूर्वानुराग से उत्पन्न दमयन्ती को प्राप्त करने की) इच्छा को अपने मन में ही रोक सकने में असमर्थ होकर नल अन्तःपुर के निकट ही एक एकान्त वन में रम गये॥१७॥

वन में (विचरण करते-करते) उन्होंने बहुत से हंसों को देखा, जिनके पंख स्वर्णिम आभा लिये हुए थे। नल ने इस प्रकार वन-विहार करने वाले उन हंसों में से एक को पकड़ लिया॥१८॥

(अपने आप को नल के हाथों में पड़ा हुआ पाकर) उस (बेचारे) पक्षी ने नल से कहा—"अये राजन्! आप मेरा वध न कीजिए, मैं आपका बड़ा उपकार करूँगा"॥१९॥

दमयन्तीसकाशे त्वां कथयिष्यामि नैषध।
यथा त्वदन्यं पुरुषं न सा मंस्यति कर्हिचित् ॥२०॥
एवमुक्तस्ततो हंसमुत्ससर्ज महीपतिः।
ते तु हंसाः समुत्पत्य विदर्भानगमंस्ततः ॥२१॥
विदर्भनगरीं गत्वा दमयन्त्यास्तदान्तिके।
निपेतुस्ते गरुत्मन्तः सा **ददर्शाथ तान्खगान्**[1] ॥२२॥
सा तानद्भुतरूपान्वै दृष्ट्वा **सखि**[2]गणावृता।
हृष्टा ग्रहीतुं खगमांस्त्वरमाणोपचक्रमे ॥२३॥
अथ हंसा विससृपुः सर्वतः प्रमदावने।
एकैकशस्ततः कन्यास्तान्हंसान्समुपाद्रवन् ॥२४॥
दमयन्ती तु यं हंसं समुपाधावदन्तिके।
स मानुषीं गिरं कृत्वा दमयन्तीमथाब्रवीत् ॥२५॥
दमयन्ति नलो नाम निषधेषु महीपतिः।
अश्विनोः सदृशो रूपे न समास्तस्य मानुषाः ॥२६॥
तस्य वै यदि भार्या त्वं भवेथा वरवर्णिनि।
सफलं ते भवेज्जन्म रूपं चेदं सुमध्यमे ॥२७॥
वयं हि देवगन्धर्वमानुषोरगराक्षसान्।
दृष्टवन्तो न चास्माभिर्दृष्टपूर्वस्तथाविधः ॥२८॥
त्वञ्चापि रत्नं नारीणां नरेषु च नलो वरः।
विशिष्टाया विशिष्टेन सङ्गमो गुणवान्भवेत् ॥२९॥
एवमुक्ता तु हंसेन दमयन्ती विशाम्पते।
अब्रवीत्तत्र तं हंसं तमप्येवं **नलं**[3] वद ॥३०॥
तथेत्युक्त्वाण्डजः कन्यां **वैदर्भस्य**[4] विशाम्पते।
पुनरागम्य निषधान्नले सर्वं न्यवेदयत् ॥३१॥

इति नलोपाख्याने प्रथमः सर्गः ॥१॥

---

१. M. W. **ददर्श च तान् गणान्**
२. M. W. **सखी**
३. M. W. **नले**
४. M. W. **विदर्भस्य**

"अये निषधाधिपते ! मैं दमयन्ती के सम्मुख आपका वर्णन करूँगा। इससे वह सुन्दरी आपके अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष का चिन्तन ही न करेगी" ॥२०॥

(हंस के मुख से) इस बात को सुनकर महाराज नल ने उस हंस को छोड़ दिया। (उसके साथ) सभी हंस उड़कर विदर्भ देश में पहुँच गये ॥२१॥

विदर्भ नगरी में जाकर वे पक्षी दमयन्ती के समीप गिर गये और दमयन्ती ने पक्षियों के उस समूह को देखा ॥२२॥

सखियों से घिरी हुई दमयन्ती ने अद्भुत सुन्दरता वाले उन पक्षियों को देखा। प्रसन्न मन होकर वह शीघ्र ही उनको पकड़ने के लिए दौड़ पड़ी ॥२३॥

सभी हंस उस प्रमद वन में इधर-उधर भागने लगे और वे कन्यायें भी एक-एक करके एक-एक हंस के पीछे दौड़ पड़ीं ॥२४॥

उस वन में जिस हंस का पीछा दमयन्ती कर रही थी वह मनुष्यों की वाणी में उससे कहने लगा, "अयि दमयन्ति ! निषध देश में एक हैं राजा नल। उनकी सुन्दरता अश्विनीकुमारों के समान है। मनुष्यों में तो कोई उनके समान है ही नहीं" ॥२५-२६॥

"अयि सुन्दरि ! यदि कहीं तुम उनकी पत्नी बन जाओ तब तो तुम्हारा जन्म और रूप दोनों ही सफल हो जायें" ॥२७॥

"हमने तो देवता, गन्धर्व, मनुष्य, नाग और राक्षस सभी को देखा है, किन्तु इसके पूर्व हमें उनके समान कोई भी देखने को नहीं मिला है" ॥२८॥

"तुम हो एक स्त्रीरत्न और नल हैं पुरुषों में श्रेष्ठ, श्रेष्ठ स्त्री और श्रेष्ठ पुरुष का समागम निश्चय ही श्रेयस्कर हुआ करता है" ॥२९॥

हंस की इस प्रकार की बातों को सुनकर दमयन्ती ने उससे कहा—"तुम नल से भी यही कहना" ॥३०॥

"ऐसा ही होगा"—इस प्रकार विदर्भराजकुमारी से कहकर वह हंस फिर निषध देश को लौट गया। वहाँ उसने सारा वृत्तान्त नल से कह सुनाया ॥३१॥

॥ नलोपाख्यान का पहला सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

द्वितीयः सर्गः

बृहदश्व उवाच

दमयन्ती तु तच्छ्रुत्वा वचो हंसस्य भारत।
तदा प्रभृति न स्वस्था नलं प्रति बभूव सा ॥१॥
ततश्चिन्तापरा दीना विवर्णवदना कृशा।
बभूव दमयन्ती तु निःश्वासपरमा तदा ॥२॥
ऊर्ध्वदृष्टिर्ध्यानपरा बभूवोन्मत्तदर्शना[1]।
न शय्यासनभोगेषु रतिं विन्दति कर्हिचित् ॥३॥
न नक्तं न दिवा शेते हा हेति **वदती**[2] **मुहुः**।
तामस्वस्थां तदाकारां सख्यस्ता जज्ञुरिङ्गितैः ॥४॥
ततो विदर्भपतये दमयन्त्याः **सखीगणः**[3]।
न्यवेदयत्तामस्वस्थां दमयन्तीं नरेश्वरः ॥५॥
तच्छ्रुत्वा नृपतिर्भीमो दमयन्तीसखीगणात्।
चिन्तयामास तत्कार्यं सुमहत्स्वां सुतां प्रति[4] ॥६॥
स समीक्ष्य महीपालः स्वां सुतां प्राप्तयौवनाम्।
अपश्यदात्मनः[5] कार्यं दमयन्त्याः स्वयंवरम् ॥७॥
स **संनिपातयामास**[6] महीपाल**न्विशां पते**[7]।
अनुभूयतामयं वीराः स्वयंवर इति प्रभो ॥८॥

---

१. M. W. **पाण्डुवर्णा क्षणेनाथ हृच्छयाविष्टचेतना**
२. M. W. **रुदती पुनः**
३. M. W. **सखीजनः**
४. M. W. **किमियं दुहिता मेऽद्य नातिस्वस्थेव लक्ष्यते**
५. M. W. **अपश्यदात्मना**
६. M. W. **सन्निमन्त्रयामास**
७. M. W. **विशाम्पतिः**

नलोपाख्यान

सर्ग २

बृहदश्व

दमयन्ती ने जब से हंस के मुख से यह बात सुनी तभी से वह खोयी-खोयी रहने लगी। अब तो उसका मन निरन्तर नल में ही लगा रहता था ॥१॥

तब से दमयन्ती चिन्तित-सी रहने लगी, उसके मुख का रंग पीला पड़ गया और वह दुबली होती गयी। वह (अपने दुख में पड़ी-पड़ी) आहें भरती रहती थी ॥२॥

दमयन्ती ध्यानमग्न होकर ऊपर की ओर देखती रहती थी। वह अत्यन्त उन्मत्त-सी दिखाई पड़ती थी। दमयन्ती को न तो अपनी सेज में रुचि रह गयी थी, न अपने भोजन में और न नाना प्रकार के भोगविलासों में ॥३॥

हाय-हाय करके रोती हुयी दमयन्ती रात-दिन कभी सोती ही न थी। दमयन्ती की सखियाँ उसकी चेष्टाओं से ही उसकी अवस्था को ताड़ गयीं ॥४॥

उन्होंने (दमयन्ती के पिता) विदर्भराज को दमयन्ती के विषय में सब कुछ बतला दिया ॥५॥

दमयन्ती की सखियों से इस वृत्तान्त को सुनकर महाराज भीम अत्यन्त चिन्तित हो उठे। वह यह विचार करने लगे कि उनकी कन्या के लिए सर्वोत्तम क्या होगा ॥६॥

महाराज भीम ने देखा कि उनकी सुपुत्री ने यौवन प्राप्त कर लिया है और उन्होंने निश्चय किया कि अब उन्हें दमयन्ती का स्वयम्वर कर देना चाहिए ॥७॥

उन्होंने सभी राजाओं को आमन्त्रित करके कहा—'अये वीरो, आप लोग इस (दमयन्ती के) स्वयम्वर को देखिये' ॥८॥

श्रुत्वा तु पार्थिवाः सर्वे दमयन्त्याः स्वयंवरम्।
अभिजग्मुस्तदा[1] भीमं राजानो भीमशासनात्॥ ९॥
हस्त्यश्वरथघोषेण नादयन्तो[2] वसुंधराम्।
विचित्रमाल्याभरणैर्बलैर्दृश्यैः स्वलंकृतैः[3]॥१०॥
एतस्मिन्नेव काले तु पुराणामृषिसत्तमौ।
अटमानौ महात्मानाविन्द्रलोकमितो गतौ॥११॥
नारदः पर्वतश्चैव महात्मानौ[4] महाव्रतौ।
देवराजस्य भवनं विविशाते सुपूजितौ॥१२॥
तावर्चयित्वा सहस्राक्षस्ततः कुशलमव्ययम्।
पप्रच्छानामयं चापि तयोः सर्वगतं विभुः॥१३॥

नारद उवाच

आवयोः कुशलं देव सर्वत्रगतमीश्वर।
लोके च मघवन्कृत्स्ने नृपाः कुशलिनो विभो॥१४॥

बृहदश्व उवाच

नारदस्य वचः श्रुत्वा पप्रच्छ बलवृत्रहा।
धर्मज्ञाः पृथिवीपालास्त्यक्तजीवितयोधिनः॥१५॥
शस्त्रेण निधनं काले ये गच्छन्त्यपराङ्मुखाः।
अयं लोकोऽक्षयस्तेषां यथैव मम कामधुक्॥१६॥
क्व नु ते क्षत्रियाः शूरा न हि पश्यामि तानहम्।
आगच्छतो महीपालानतिथीन्दयितान्मम॥१७॥
एवमुक्तस्तु शक्रेण नारदः प्रत्यभाषत[6]।
श्रृणु मे भगवन्येन न दृश्यन्ते महीक्षितः॥१८॥

---

१. M. W. ततो
२. M. W. पूरयन्तो
३. M. W. तेषां भीमो महाबाहुः पार्थिवानां महात्मनां।
यथार्हमकरोत्पूजां तेऽवसंस्तत्र पूजिताः॥
४. M. W. महाप्रज्ञौ
५. M. W. मघवा
६. M. W. 'नारद उवाच'

दमयन्ती के स्वयम्वर की बात सुनकर सभी राजा लोग महाराज भीम की आज्ञा का पालन करने के लिए उनके यहाँ जा पहुँचे ॥९॥

वे लोग विचित्र-विचित्र मालाओं और आभूषणों से सुसज्जित होकर समस्त भूमण्डल को हाथियों, घोड़ों और रथों के निर्घोष से गुञ्जित कर रहे थे ॥१०॥

इसी समय देवताओं में श्रेष्ठ ऋषि नारद और पर्वत भ्रमण करते-करते भूलोक से इन्द्र-लोक में पहुँच गये। वे दोनों ही देवर्षि महान् बुद्धिमान् और व्रती थे। भलीभांति सम्मानित होकर उन्होंने इन्द्र के भवन में प्रवेश किया ॥११-१२॥

इन्द्र ने नारद और पर्वत, दोनों देवर्षियों का आदर-सत्कार करके उनके अविच्छिन्न कुशल-क्षेम के विषय में पूछा ॥१३॥

नारद

"महाराज ! हम दोनों के लिए तो सर्वत्र कुशल है ही, (मर्त्य) लोक में भी सभी राजा लोग सकुशल हैं" ॥१४॥

बृहदश्व

नारद के वचनों को सुनकर इन्द्र ने पुनः पूछा, "क्या ये सब राजा लोग अत्यन्त धर्मज्ञ तो हैं और हैं अपने प्राणों को छोड़कर युद्ध करने वाले भी ॥१५॥

वे लोग समय पड़ने पर वाणों के प्रहार से भी मुख नहीं मोड़ते हैं। उनके लिए यह लोक उसी प्रकार से अक्षय है जिस प्रकार से मेरे लिए मेरी कामधेनु" ॥१६॥

"कहाँ हैं वे क्षत्रिय वीर ? मुझे तो वे दिखाई ही नहीं देते हैं। वे सभी राजा लोग मेरे प्रिय अतिथि हैं।" इस प्रकार इन्द्र की बातों को सुनकर नारद ने उत्तर दिया कि "अये महाराज इन्द्र ! यह बात आप मुझसे सुनिये कि ये राजा लोग दिखलाई क्यों नहीं पड़ रहे हैं" ॥१८॥

विदर्भराज[1]दुहिता दमयन्तीति विश्रुता।
रूपेण समतिक्रान्ता पृथिव्यां सर्वयोषितः ॥१९॥
तस्याः स्वयंवरः शक्र भविता नचिरादिव।
तत्र गच्छन्ति राजानो राजपुत्राश्च सर्वशः ॥२०॥
तां रत्नभूतां लोकस्य प्रार्थयन्तो महीक्षितः।
काङ्क्षन्तिस्म विशेषेण बलवृत्रनिषूदन ॥२१॥
एतस्मिन्कथ्यमाने तु लोकपालाश्च साग्निकाः॥
आजग्मुर्देवराजस्य समीपममरोत्तमाः ॥२२॥
ततस्तच्छुश्रुवुः सर्वे नारदस्य वचो महत्।
श्रुत्वा[2] चैवाब्रुवन्हृष्टा गच्छामो वयमप्युत ॥२३॥
ततः सर्वे महाराज सगणाः सहवाहनाः।
विदर्भानभितो[3] जग्मुर्यत्र सर्वे महीक्षितः ॥२४॥
नलोऽपि राजा कौन्तेय श्रुत्वा राज्ञां समागमम्।
अभ्यगच्छददीनात्मा दमयन्तीमनुव्रतः ॥२५॥
अथ देवाः पृथि नलं ददृशुर्भूतले स्थितम्।
साक्षादिव स्थितं मूर्त्या मन्मथं रूपसंपदा ॥२६॥
तं दृष्ट्वा लोकपालास्ते भ्राजमानं यथा रविम्।
तस्थुर्विगतसंकल्पा विस्मिता रूपसंपदा ॥२७॥
ततोऽन्तरिक्षे विष्टभ्य विमानानि दिवौकसः।
अब्रुवन्नैषधं राजन्नवतीर्य नभस्तलात् ॥२८॥
भो भो नैषध राजेन्द्र नल सत्यव्रतो भवान्।
अस्माकं कुरु साहाय्यं दूतो भव नरोत्तम ॥२९॥

॥ इति नलोपाख्याने द्वितीयः सर्गः ॥२॥

---

१. M. W. राज्ञो २. M. W. श्रुत्वैव चाब्रुवन्
३. M. W. विदर्भानभिजग्मुस्ते यतः सर्वे महीक्षितः।

"विदर्भराज की एक कन्या है जो दमयन्ती के नाम से प्रसिद्ध है। वह अपने सौन्दर्य में पृथ्वी पर की सभी स्त्रियों से बढ़ी चढ़ी है" ॥१९॥

"अये इन्द्र ! शीघ्र ही उसका स्वयम्वर होने व ला है। चारों ओर से राजा और राजकुमार वहीं भागे चले जा रहे हैं" ॥२०॥

"ये सभी राजा लोग संसार में रत्नभूत उस दमयन्ती की इच्छा करते हुए उसी के लिए प्रार्थना करते हैं" ॥२१॥

नारद ऐसा कह ही रहे थे कि सभी लोकपाल और अग्नि के साथ देवगण देवराज इन्द्र के समीप आ पहुँचे ॥२२॥

नारद की इस बात को सभी देवताओं ने सुना और यह सुनते ही वह प्रसन्न होकर कह उठे "हम भी जायेंगे, हम भी जायेंगे" ॥२३॥

इतना कहकर सभी देवता अपने-अपने गणों और वाहनों को साथ लेकर विदर्भ देश की ओर चल पड़े जहाँ कि और सब राजा लोग गये थे ॥२४॥

राजाओं का आगमन सुनकर नल भी चल पड़े। दमयन्ती का चिन्तन करके उनका मन प्रफुल्लित हो रहा था ॥२५॥

भूलोक में आये हुए देवताओं ने मार्ग में नल को देखा। राजा नल उस समय अपने सौन्दर्य के कारण कामदेव के समान प्रतीत हो रहे थे ॥२६॥

लोकपालों ने सूर्य की भाँति तेजवान् नल को देखा। नल के सौन्दर्य से आश्चर्य-चकित होकर सभी लोकपाल स्तब्ध रह गये और उन्होंने अपना संकल्प छोड़ दिया ॥२७॥

देवताओं ने अपने-अपने रथों को अन्तरिक्ष में ही रोक दिया। (पैदल ही) आकाश मार्ग से उतर कर उन्होंने महाराज नल से कहा ॥२८॥

"अये निषधाधिपते ! महाराज नल !! आप तो बड़े सत्यवादी हैं। आप दूत बनकर हम लोगों की सहायता कीजिये" ॥२९॥

॥ नलोपाख्यान का दूसरा सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

तृतीयः सर्गः

बृहदश्व उवाच

तेभ्यः प्रतिज्ञाय नलः करिष्य इति भारत।
अथैना[1]न्परिपप्रच्छ कृताञ्जलिरवस्थितः[2] ॥१॥
के वै भवन्तः कश्चासौ यस्याहं दूत ईप्सितः।
किं च तत्र मया कार्यं कथयध्वं यथातथम् ॥२॥
एवमुक्ते नैषधेन मघवान्प्रत्यभाषत[3]।
अमरान्वै निबोधास्मान्दमयन्त्यर्थमागतान् ॥३॥
अहमिन्द्रोऽयमग्निश्च तथैवायमपांपतिः॥
शरीरान्तकरो नॄणां यमोऽयमपि पार्थिव ॥४॥
स वै त्वमागतानस्मान्दमयन्त्यै निवेदय।
लोकपालाः महेन्द्रास्त्वां समायान्ति[4] दिदृक्षवः ॥५॥
प्राप्तुमिच्छन्ति देवास्त्वां शक्रोऽग्निर्वरुणो यमः।
तेषामन्यतमं देवं पतित्वे वरयस्व ह ॥६॥
एवमुक्तः स शक्रेण नलः प्राञ्जलिरब्रवीत्।
एकार्थसमवेतं[5] मां न प्रेषयितुमर्हथ[6] ॥७॥

---

१. M. W. ता
२. M. W. रुवस्थितः
३. M. W. अभ्यभाषत
४. M. W. सहेन्द्रास्त्वां समायान्ति
५. M. W. समुपेतम्
६. M. W. कथं तु जातसंकल्पः स्त्रियमुत्सहते पुमान्।
परार्थमीदृशं वक्तुं तत् क्षमयन्तु महेश्वराः॥

नलोपाख्यान

सर्ग ३

बृहदश्व

"मैं (आपकी सहायता) करूँगा" यह प्रतिज्ञा करके नल ने उन देवताओं से हाथ जोड़कर पूछा ॥१॥

"आप लोग कौन हैं? वह कौन है जिसके पास आप मुझे दूतरूप में भेजना चाहते हैं? आप मुझसे ठीक ठीक बतलाइये कि मुझे करना क्या है?" ॥२॥

महाराज नल के ऐसा कहने पर भगवान् इन्द्र ने कहा—"हम लोगों का परिचय यह है कि हम लोग देवता हैं और यहाँ पर दमयन्ती के लिए आये हुए हैं" ॥३॥

"मैं इन्द्र हूँ, यह अग्नि है, यह वरुण हैं ौर यह हैं यमराज—मनुष्यों के शरीर का अन्त करनेवाले" ॥४॥

"आप जाकर दमयन्ती से हम लोगों के आगमन की सूचना दीजिए और उससे यह कहिए कि उसको देखने के लिए महेन्द्र इत्यादि लोकपाल सभा में आ रहे हैं" ॥५॥

"इन्द्र, अग्नि, वरुण और यमराज तुम्हें प्राप्त करने के इच्छुक हैं। तुम इनमें से किसी एक को पति-रूप में वरण कर लो" ॥६॥

इन्द्र के द्वारा ऐसा कहने पर महाराज नल ने हाथ जोड़कर कहा—"आप मुझे (दमयन्ती के पास) न भेजिये क्योंकि मैं भी तो उसी उद्देश्य से आया हूँ" ॥७॥

देवा ऊचुः

करिष्य इति संश्रुत्य पूर्वमस्मासु नैषध।
न करिष्यसि कस्मात्त्वं व्रज नैषध मा चिरम् ॥८॥

बृहदश्व उवाच

एवमुक्तः स देवैस्तैर्नैषधः पुनरब्रवीत्।
सुरक्षितानि वेश्मानि प्रवेष्टुं कथमुत्सहे ॥९॥
प्रवेक्ष्यसीति तं शक्रः पुनरेवाभ्यभाषत।
जगाम स तथेत्युक्त्वा दमयन्त्या निवेशनम् ॥१०॥
ददर्श तत्र वैदर्भीं सखीगणसमावृताम्।
देदीप्यमानां वपुषा श्रिया च वरवर्णिनीम् ॥११॥
अतीव सुकुमाराङ्गीं तनुमध्यां सुलोचनाम्।
आक्षिपन्तीमिव **च भाः**[1] शशिनः स्वेन तेजसा ॥१२॥
तस्य दृष्ट्वैव ववृधे कामस्तां चारुहासिनीम्।
सत्यं चिकीर्षमाणस्तु धारयामास हृच्छयम् ॥१३॥
ततस्ता नैषधं दृष्ट्वा संभ्रान्ताः परमाङ्गनाः।
आसनेभ्यः समुत्पेतुस्तेजसा तस्य धर्षिताः ॥१४॥
प्रशशंसुश्च सुप्रीता नलं ता विस्मयान्विताः।
न चैनमभ्यभाषन्त मनोभिस्त्वभ्य**चिन्तयन्**[2] ॥१५॥
अहो रूपमहो कान्तिरहो धैर्यं महात्मनः।
कोऽयं देवो **नु यक्षो**[3] नु गन्धर्वो **नु**[4] भविष्यति ॥१६॥
न त्वेनं[5] शक्नुवन्तिस्म व्याहर्तुमपि किञ्चन।
तेजसा धर्षिताः **सर्वा**[6] लज्जावत्यो वराङ्गनाः ॥१७॥
अथैनं **स्मयमानेव**[7] स्मितपूर्वाभिभाषिणी।
दमयन्ती नलं वीरमभ्यभाषत विस्मिता ॥१८॥

---

१. M. W. **प्रभां**
२. M. W. **पूजयन्**
३. M. W. **ऽथवा**
४. M. W. **वा**
५. M. W. **तास्तम्**
६. M. W. **तस्य**
७. M. W. **स्मयमानं तु**

देवता

"निषधाधिपते ! पहले तो "मैं करूँगा" इस प्रकार से प्रतिज्ञा करके अब "मैं नहीं करूँगा" यह कहना ठीक नहीं है। जाइये, अब विलम्ब न कीजिये" ॥८॥

बृहदश्व

उन देवताओं के ऐसा कहने पर महाराज नल ने फिर कहा—"(दमयन्ती के) राजभवन तो भलीभांति सुरक्षित हैं, मैं उनमें किस प्रकार से प्रवेश कर सकूँगा" ॥९॥

इन्द्र ने पुनः कहा—"आप प्रवेश कर सकेंगे।" "ऐसा ही सही" कहकर नल दमयन्ती के निवासस्थान की ओर चल पड़े ॥१०॥

(वहाँ पहुँचकर) उन्होंने विदर्भराज की पुत्री को देखा। वह सखियों से घिरी हुई बैठी थी। उसका शरीर अत्यन्त शोभायमान् था और उसका वर्ण भी अत्यन्त मनोहर था ॥११॥

उसके अंग अत्यन्त कोमल थे, उसकी कटि क्षीण एवं नेत्र बहुत सुन्दर थे। वह अपनी कान्ति से चन्द्रमा की कान्ति को भी फीका कर रही थी ॥१२॥

उस चारुहासिनी को देखते ही नल में काम-भावना बढ़ने लगी, किन्तु अपने सत्य की रक्षा के लिए उन्होंने धैर्य धारण कर लिया ॥१३॥

उधर महाराज नल को देखकर सभी सुन्दरियाँ आश्चर्यचकित हो उठीं और उनके तेज से प्रभावित होकर वे अपने-अपने आसनों से उठ खड़ी हुईं ॥१४॥

विस्मित और (नल के) प्रेम में पगी हुई वे सुन्दरियाँ महाराज नल की प्रशंसा करने लगीं। वे सभी सुन्दरियाँ मन से तो उनका आदर-सत्कार कर ही रही थीं, किन्तु उनसे बोलती न थीं ॥१५॥

क्या रूप है ! क्या कान्ति है ! और इस महामना का धैर्य भी क्या है ! यह हो कौन सकते हैं ? देवता, यक्ष अथवा कोई गन्धर्व ॥१६॥

लज्जाशीला सुन्दरियाँ नल के तेज से इतना प्रभावित हुईं कि वे उनसे कुछ भी बोल न सकीं ॥१७॥

कामातुरा दमयन्ती कुछ-कुछ मुस्कराती हुई शूरवीर नल से कहने लगी ॥१८॥

कस्त्वं सर्वानवद्याङ्ग मम हृच्छयवर्धन।
प्राप्तोऽस्यमरवद्वीर ज्ञातुमिच्छामि तेऽनघ ॥१९॥
कथमागमनं चेह कथं चासि न लक्षितः।
सुरक्षितं हि मे वेश्म राजा चैवोग्रशासनः ॥२०॥
एवमुक्तस्तु वैदर्भ्या नलस्तां प्रत्युवाच ह[1]।
नलं मां विद्धि कल्याणि देवदूतमिहागतम् ॥२१॥
देवास्त्वां प्राप्तुमिच्छन्ति शक्रोऽग्निर्वरुणो यमः।
तेषामन्यतमं देवं पतिं वरय शोभने ॥२२॥
तेषामेव प्रभावेन प्रविष्टोऽहमलक्षितः।
प्रविशन्तं हि[2] मां कश्चिन्नापश्यन्नाप्यवारयत् ॥२३॥
एतदर्थमहं भद्रे प्रेषितः सुरसत्तमैः।
एतच्छ्रुत्वा शुभे बुद्धिं प्रकुरुष्व यथेच्छसि ॥२४॥

॥ इति नलोपाख्याने तृतीयः सर्गः ॥३॥

---

१. M. W. नल उवाच २. M. W. न

"अये अनिन्द्य सुन्दर! आप कौन हैं जो मेरे हृदयावेग को इस प्रकार बढ़ाये चले जा रहे हैं? आप तो यहाँ पर एक देवता के समान आये हैं, इसलिए मैं आपके विषय में जानना चाहती हूँ" ॥१९॥

"आप यहाँ पर कैसे आये हैं और इस प्रकार छिपे-छिपे क्यों हैं? मेरा भवन भली-भांति सुरक्षित है और यहाँ के महाराज (मेरे पिता जी) का शासन भी अत्यन्त उग्र है" ॥२०॥

दमयन्ती के द्वारा इस प्रकार कहने पर नल ने उत्तर दिया—"अयि सुन्दरि! मेरा परिचय यह है कि मैं नल हूँ और यहाँ पर देवदूत के रूप में आया हूँ ॥२१॥

"इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम—ये सभी देवता तुम्हें प्राप्त करने के लिए इच्छुक हैं। इसलिए अयि सुन्दरि! तुम इनमें से किसी एक देवता को (पतिरूप में) वरण कर लो" ॥२२॥

"उनके ही प्रभाव से मैं यहाँ पर अदृष्ट होकर आ सका हूँ। यहाँ पर प्रवेश करते हुये मुझे न तो किसी ने देखा ही और न मना ही किया" ॥२३॥

"अयि कल्याणि! मैं तो श्रेष्ठदेवताओं के द्वारा इसीलिए भेजा गया हूँ। इसे सुनकर तुम्हारी जैसी इच्छा हो वैसा काम करो" ॥२४॥

॥ नलोपाख्यान का तीसरा सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

चतुर्थः सर्गः

बृहदश्व उवाच

सा नमस्कृत्य देवेभ्यः प्रहस्य नलमब्रवीत्।
प्रणयस्व यथाश्रद्धं राजन्किं करवाणि ते ॥१॥
अहं चैव हि यच्चान्यन्ममास्ति वसु किंचन।
सर्वं तत्तव[1] विश्रब्धं कुरु प्रणयमीश्वर ॥२॥
हंसानां वचनं यत्तु तन्मां दहति पार्थिव।
त्वत्कृते हि मया वीर राजानः संनिपातिताः ॥३॥
यदि चेद्भजमानां[2] मां प्रत्याख्यास्यसि मानद।
विषमग्निं जलं रज्जुमास्थास्ये तव कारणात् ॥४॥
एवमुक्तस्तु वैदर्भ्या नलस्तां प्रत्युवाच ह।
तिष्ठत्सु लोकपालेषु कथं मानुषमिच्छसि ॥५॥
येषामहं लोककृतामीश्वराणां महात्मनाम्।
न पादरजसा तुल्यो मनस्ते तेषु वर्तताम् ॥६॥
विप्रियं ह्याचरन्मर्त्यो देवानां मृत्युमृच्छति।
त्राहि मामनवद्याङ्गि वरयस्व सुरोत्तमान्[3] ॥७॥

---

१. M. W. तत्सर्वम् २. M. W. त्वं भजमानां

३. M. W. विरजांसि च वासांसि दिव्याश्चित्रास्त्रजस्तथा।
भूषणानि च मुख्यानि देवान् प्राप्यतु भुंक्ष्व वै ॥
य इमां पृथिवीं कृत्स्नां संक्षिप्य ग्रसते पुनः।
हुताशमीशं देवानां का तं न वरयेत्पतिम् ॥
धर्मात्मानं महात्मानं दैत्यदानवमर्दनम्।
महेन्द्रं सर्वदेवानां का तं न वरयेत्पतिम् ॥

नलोपाख्यान

सर्ग ४

बृहदश्व

दमयन्ती ने पहले तो (उन सभी) देवताओं को नमस्कार किया और (तत्पश्चात्) वह हँस कर नल से कहने लगी "महाराज! आप अपनी इच्छानुसार मुझे प्यार कीजिये। बताइये मैं आपका क्या करूँ? ॥१॥

"स्वयं मैं और मेरी सारी सम्पत्ति यह सब कुछ आपका ही है। राजन्! आप मुझे प्यार तो कीजिये ॥२॥

"अये राजन्! हंसों की बातचीत मुझे और भी जला रही है। अये वीर! आपके लिए ही मैंने इन राजाओं को (यहाँ पर) जमाकर रखा है ॥३॥

अरे मानिन्! मैं तो आपका ही चिन्तन करती रहती हूँ, इसलिए यदि आपने मेरा तिरस्कार कर दिया तो मैं विष, अग्नि, जल अथवा (फन्दा लगाने के लिए) रस्सी की शरण ले लूँगी और यह सब कुछ होगा केवल आपके ही लिए" ॥४॥

दमयन्ती के ऐसा कहने पर नल ने उत्तर दिया—"अरे! इन लोकपालों के रहते हुए तुम मुझ जैसे मनुष्य की इच्छा क्यों कर रही हो" ॥५॥

मैं तो लोकों के स्रष्टा, सर्वशक्तिमान् और मनस्वी देवताओं की चरण-रज के तुल्य हूँ; इसलिए तुम्हें अपने मन को उन्हीं में लगाना चाहिये ॥६॥

जो मनुष्य देवताओं का अप्रिय करता है वह (शीघ्र ही) मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसलिए अयि सुन्दरि! तुम मेरी रक्षा करो और इन श्रेष्ठ देवताओं (में से ही किसी) को (पतिरूप में) वरण कर लो" ॥७॥

क्रियतामविशङ्केन मनसा यदि मन्यसे।
वरुणं लोकपालानां सुहृद्वाक्यमिदं शृणु॥
नैषधेनैव मुक्ता सा दमयन्ती वचोऽब्रवीत्।
समाप्लुताभ्यां नेत्राभ्यां शोकजेनाथ वारिणा॥
देवेभ्योऽहं नमस्कृत्य सर्वेभ्यः पृथिवीपते।
वृणे त्वामेव भर्तारं सत्यमेतद् ब्रवीमि ते॥

ततो वाष्पकलां वाचं दमयन्ती शुचिस्मिता।
प्रव्याहरन्ती शनकैर्नलं राजानमब्रवीत् ॥८॥
अस्त्युपायो[1] मया दृष्टो निरपायो नरेश्वर।
येन दोषो न भविता तव राजन्कथञ्चन ॥९॥
त्वं चैव हि नरश्रेष्ठ देवाश्**चाग्नि**[2]पुरोगमाः।
आयान्तु सहिताः सर्वे मम यत्र स्वयंवरः ॥१०॥
ततोऽहं लोकपालानां संनिधौ त्वां नरेश्वर।
वरयिष्ये नरव्याघ्र नैवं दोषो भविष्यति ॥११॥
एवमुक्तस्तु वैदर्भ्या नलो राजा विशां पते।
आजगाम पुनस्तत्र यत्र देवाः समागताः ॥१२॥
तमपश्यंस्तथायान्तं लोकपालाः महेश्वराः।
दृष्ट्वा चैनं ततोऽपृच्छन्वृत्तान्तं सर्वमेव **तत्**[3] ॥१३॥

देवा ऊचुः

कच्चिद्दृष्टा त्वया राजन्दमयन्ती शुचिस्मिता।
किमब्रवीच्च नः सर्वान्विद भूमिपतेऽनघ ॥१४॥

नल उवाच

भवद्भिरहमादिष्टो दमयन्त्या निवेशनम्।
प्रविष्टः सुमहा**कक्ष्यं**[4] दण्डिभिः स्थविरैर्वृतम् ॥१५॥
प्रविशन्तं च मां तत्र न कश्चिद्दृष्टवान्नरः।
ऋते तां पार्थिवसुतां भवतामेव तेजसा ॥१६॥

तामुवाच ततो राजा वेपमानां कृताञ्जलिम्।
दौत्येनागत्य कल्याणि कथं स्वार्थमिहोत्सहे ॥
कथं ह्यहं प्रतिश्रुत्य देवतानां विशेषतः।
परार्थे यत्नमारभ्य कथं स्वार्थमिहोत्सहे ॥
एष धर्मो यदि स्वार्थो ममापि भविता ततः।
एवं स्वार्थं करिष्यामि तथा भद्रे विधीयताम् ॥

१. M. W. उपायोऽयम् २. M. W. चेन्द्र
३. M. W. तम् ४. M. W. कक्षम्

दमयन्ती मुस्करा उठी, उसकी वाणी गद्गद हो गयी और वह धीरे-धीरे राजा नल से कहने लगी ॥८॥

"महाराज ! संयोग से मुझे एक उपाय सूझ गया है। इससे आपको कोई दोष नहीं लगेगा ॥९॥

अये राजन् ! जहाँ मेरा स्वयम्वर हो वहाँ आप और इन्द्र आदि सभी देवता एक ही साथ आइयेगा ॥१०॥

उस समय सभी लोकपालों के सामने मैं आपको (पतिरूप में) वरण कर लूँगी। इस प्रकार तो आपको कोई दोष नहीं लगेगा" ॥११॥

दमयन्ती के ऐसा कहने पर महाराज नल पुनः वहाँ पर आगये जहाँ पर सभी देवता एकत्र थे ॥१२॥

सभी लोकपालों ने इस प्रकार से आते हुए राजा नल को देखा। उन्हें देखकर वे लोग (दमयन्ती का) सम्पूर्ण वृत्तान्त पूछने लगे ॥१३॥

देवता

"अये निष्पाप राजन् ! क्या तुमने दमयन्ती को देखा था, मुस्कराती हुई दमयन्ती को ? उसने हम लोगों के विषय में क्या कहा था" ॥१४॥

नल

"आप लोगों की आज्ञा से मैं दमयन्ती के भवन में गया। वहाँ मैंने एक बहुत बड़े कक्ष में प्रवेश किया जो बहुत से रक्षकों से घिरा हुआ था ॥१५॥

उस भवन में प्रवेश करते हुए मुझे किसी ने देखा ही नहीं। हाँ, देखा भी तो केवल दमयन्ती ने ही और यह सब कुछ हुआ तो आप लोगों के प्रताप से ही ॥१६॥

सख्यश्चास्या मया दृष्टास्ताभिश्चाप्युपलक्षितः।
विस्मिताश्चाभवन्**दृष्ट्वा सर्वा**[1] मां विबुधेश्वराः ॥१७॥
वर्ण्यमानेषु च मया भवत्सु रुचिराननाः।
मामेव गतसंकल्पा वृणीते **सुरसत्तमाः**[2] ॥१८॥
अब्रवीच्चैव मां बाला आयान्तु सहिताः सुराः।
त्वया सह **नरश्रेष्ठ**[3] मम यत्र स्वयंवरः ॥१९॥
तेषामहं संनिधौ त्वां **वरयिष्ये नरोत्तम**[4]।
एवं तव महाबाहो दोषो न भवितेति ह ॥२०॥
एतावदेव विबुधा यथावृत्तमुदाहृतम्।
मयाशेषं प्रमाणं तु भवन्तस्त्रिदशेश्वराः ॥२१॥

॥ इति नलोपाख्याने चतुर्थः सर्गः ॥४॥

---

१. M. W. सर्वा दृष्ट्वा
२. M. W. सा सुरोत्तमाः
३. M. W. नरव्याघ्र
४. M. W. वरयिष्यामि नैषध

मैंने दमयन्ती की सखियों को देख लिया और उन्होंने भी मुझे देख लिया। मुझे देखकर वे सभी सखियाँ आश्चर्यचकित हो उठी थीं॥१७॥

अये देवताओ! मैंने तो आप लोगों के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा, किन्तु उस सुन्दरी ने वरण मुझे ही किया। वास्तव में वह अत्यन्त विवेकहीन है॥१८॥

उस सीधी-सादी दमयन्ती ने मुझसे कहा—"जहाँ मेरा स्वयम्वर हो वहाँ पर सभी देवता तुम्हारे साथ चले आयें॥१९॥

उन देवताओं के सामने ही मैं आपका (पतिरूप में) वरण कर लूँगी। अये वीर-वर! इससे तो आपको कोई दोष ही न लगेगा"॥२०॥

अये देवताओ! मैंने तो आपसे अक्षरशः सब कुछ वैसे का वैसा ही बतला दिया है। शेष आप स्वयं ही समझ सकते हैं"॥२१॥

॥ नलोपाख्यान का चौथा सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

पञ्चमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

अथ काले शुभे प्राप्ते तिथौ पुण्ये क्षणे तथा।
आजुहाव महीपालान्भीमो राजा स्वयंवरे ॥१॥
तच्छ्रुत्वा पृथिवीपालाः सर्वे हृच्छयपीडिताः ॥
त्वरिताः समुपाजग्मुर्दमयन्तीमभीप्सवः ॥२॥
कनकस्तम्भरुचिरं तोरणेन विराजितम्।
विविशुस्ते **महारङ्गं**[1] **नृपाः सिंह**[2] इवाचलम् ॥३॥
तत्रासनेषु विविधेष्वासीनाः पृथिवीक्षितः।
सुरभिस्रग्धराः सर्वे **सुमृष्टमणिकुण्डलाः**[3] ॥४॥
तां राजसमितिं पूर्णां नागैर्भोगवतीमिव।
संपूर्णां पुरुषव्याघ्रैर्व्याघ्रैर्गिरिगुहामिव[4] ॥५॥
तत्र स्म पीना दृश्यन्ते बाहवः परिघोपमाः।
आकारवन्तः[5] सुश्लक्ष्णाः पंचशीर्षा इवोरगाः[6] ॥६॥
सुकेशान्तानि चारूणि **सुनासानि शुभानि च**[7]।
मुखानि राज्ञां शोभन्ते नक्षत्राणि यथा दिवि[8] ॥७॥
दमयन्ती ततो रङ्गं प्रविवेश शुभानना।
मुष्णन्ती प्रभया राज्ञां चक्षूंषि च मनांसि च ॥८॥

---

१. M. W. नृपा रङ्गम् २. M. W. महासिंहा
३. M. W. प्रमृष्ट
४. M. W. gives it as verse no. 7 after the verse सुकेशान्तानि etc.
५. M. W. आकारवर्ण
६. M. W. तत्रासनेषु इत्यादि के बाद इसकी संख्या ५ है।
७. M. W. सुनासाक्षिभ्रुवाणि च
८. M. W. में 'तत्र स्म पीना' इत्यादि के बाद इसकी संख्या ६ है।

नलोपाख्यान

सर्ग ५

बृहदश्व

तदनन्तर शुभ मुहूर्त आने पर पुण्य तिथि एवं घड़ी में महाराज भीम ने (दमयन्ती के) स्वयम्वर के लिए (देश देश के) राजाओं को आमन्त्रित किया॥१॥

इस (दमयन्ती के स्वयम्वर की बात) को सुनकर दमयन्ती को प्राप्त करने के इच्छुक सभी राजा लोग वहाँ पर आ पहुँचे। वे सब के सब काम से पीडित थे॥२॥

इन राजाओं ने स्वर्णस्तम्भों से जगमगाती हुई एवं तोरणों से युक्त रंगशाला में उसी प्रकार से प्रवेश किया जिस प्रकार से बड़े बड़े मृगराज पर्वत में प्रवेश करते हैं॥३॥

वे राजा लोग विविध प्रकार के आसनों पर बैठे हुए थे। और वे सभी सुगन्धित मालाओं और मणिनिर्मित कुण्डलों को धारण किए हुये थे॥४॥

वह राजसभा बड़े बड़े वीर पुरुषों से वैसे ही भरी हुई थी जैसे सर्पों से पृथ्वी और सिंहों से पर्वत कन्दरा भरी रहती है॥५॥

(उन वीर राजाओं की) अत्यन्त मांसल भुजाएं अर्गलाओं के समान दिखाई पड़ती थीं। अपने आकार, वर्ण एवं चिक्कणता के कारण वे (भुजायें) पाँच सिरों वाले बड़े बड़े सर्पों के समान प्रतीत हो रही थीं॥६॥

उन राजाओं के केश, उनकी नासिका और भौंहें अत्यन्त सुन्दर थीं। उन के मुख तो ऐसे शोभित हो रहे थे जैसे कि आकाश में सुन्दर सुन्दर तारे॥७॥

उसी रंगशाला में सुन्दरी दमयन्ती ने प्रवेश किया। वह अपनी कान्ति से राजाओं के नेत्रों और उनके मनों को चुरा रही थी॥८॥

तस्या गात्रेषु पतिता तेषां दृष्टिर्महात्मनाम्।
तत्र तत्रैव सक्ताभून्न चचाल च पश्यताम् ॥९॥
ततः संकीर्त्यमानेषु राज्ञां नामसु भारत।
ददर्श भैमी पुरुषान्पञ्च तुल्याकृतीनिव[1] ॥१०॥
तान्समीक्ष्य ततः सर्वान्निर्विशेषाकृतीन्स्थितान्।
संदेहादथ वैदर्भी नाभ्यजानान्नलं नृपम्[2]।
यं यं हि ददृशे तेषां तं तं मेने नलं नृपम्[3] ॥११॥
सा चिन्तयन्ती बुद्ध्याथ तर्कयामास **भामिनी**[4]।
कथं नु[5] देवाञ्जानीयां कथं विद्यां नलं नृपम् ॥१२॥
एवं संचिन्तयन्ती सा वैदर्भी भृशदुःखिता।
श्रुतानि देवलिङ्गानि **चिन्तयामास**[6] भारत ॥१३॥
देवानां यानि लिङ्गानि स्थविरेभ्यः श्रुतानि मे।
तानीह तिष्ठतां भूमावेकस्यापि न लक्षये ॥१४॥
सा विनिश्चित्य बहुधा विचार्य च पुनः पुनः।
शरणं प्रति देवानां प्राप्तकालममन्यत ॥१५॥
वाचा च मनसा चैव नमस्कारं प्रयुज्य सा।
देवेभ्यः प्राञ्जलिर्भूत्वा वेपमानेदमब्रवीत् ॥१६॥
हंसानां वचनं श्रुत्वा यथा मे नैषधो वृतः।
पतित्वे तेन सत्येन देवास्तं प्रदिशन्तु मे ॥१७॥
वाचा च मनसा[7] चैव यथा नाभिचराम्यहम्।
तेन सत्येन विबुधास्तमेव प्रदिशन्तु मे ॥१८॥
यथा देवैः स मे भर्ता विहितो निषधाधिपः।
तेन सत्येन मे देवास्तमेव प्रदिशन्तु मे[8] ॥१९॥

---

१. M. W. अथ
२. M. W. में इसकी संख्या ११ है
३. M. W. में यह श्लोक सं० १२ के साथ है
४. M. W. भाविनी
५. M. W. हि
६. M. W. तर्कयामास
७. M. W. मनसा वचसा
८. M. W. यथेदं व्रतमारब्धं नलस्याराधने मया।
तेन सत्येन मे देवास्तमेव प्रदिशन्तु मे ॥२०॥

उन बड़े बड़े राजाओं की दृष्टि दमयन्ती के जिन जिन अंगों पर पड़ती थी वहीं पर अटक कर रह जाती थी, वहां से हटती ही न थी और वे लोग उसे देखते ही रह जाते थे ॥९॥

जिस समय (देश-विदेश से आये हुये) राजाओं के नाम पुकारे जा रहे थे उस समय दमयन्ती ने पाँच ऐसे व्यक्तियों को देखा जिनकी आकृति समान थी ॥१०॥

वे सभी राजा लोग समान ही थे, इसलिए दमयन्ती को सन्देह होने लगा। वह जान ही न सकी कि इनमें राजा नल कौन हैं। वह तो जिस किसी को देखती थी उसे ही नल समझने लगती थी ॥११॥

इस प्रकार अपनी बुद्धि से तर्क करती हुई वह सोचने लगी कि "मैं कैसे समझूँ कि इनमें कौन से देवता हैं और कौन महाराज नल हैं"? ॥१२॥

इस प्रकार चिन्तामग्न दमयन्ती अत्यन्त दुःखित हो रही थी। अब वह देवताओं के उन चिह्नों को देखने में लगी हुई थी जिनके विषय में उसने (पहले से ही) सुन रखा था ॥१३॥

"बड़े-बूढ़ों से देवताओं के जिन चिह्नों के विषय में सुन चुकी हूँ वे चिह्न पृथ्वी पर आये हुये इन देवताओं में तो किसी एक में भी नहीं दिखाई पड़ रहे हैं" ॥१४॥

पुनः पुनः विचार करके उसने यह निश्चय किया कि इस समय ये देवता ही एक मात्र शरण हैं ॥१५॥

मन और वाणी से देवताओं को नमस्कार करती हुयी दमयन्ती हाथ जोड़कर कहने लगीं। उस समय वह काँप रही थी ॥१६॥

"हंसों के वचनों को सुनकर ही मैंने निषधराज को अपने पतिरूप में वरण कर लिया था। हे देवताओ! आप लोग मुझे उस सत्य के पालन करने का आदेश दें? ॥१७॥

मन और वाणी से मैं (अपने सन्मार्ग से) विचलित नहीं होती हूँ, इसलिये हे देवताओ! आप लोग मुझे उस सत्य के पालन करने का आदेश दें ॥१८॥

देवताओं ने ही तो निषधराज (नल) को मेरा पति बना दिया है, इसलिये हे देवताओ! आप लोग मुझे उस सत्य के पालन करने का आदेश दें ॥१९॥

स्वं चैव रूपं पुष्यन्तु लोकपालाः सहेश्वराः।
यथाहमभिजानीयां पुण्यश्लोकं नराधिपम् ॥२०॥
निशम्य दमयन्त्यास्तत्करुणं परिदेवितम्।
निश्चयं परमं तथ्यमनुरागञ्च नैषधे ॥२१॥
मनोविशुद्धिं बुद्धिं च भक्तिं रागं च **भारत**[1]।
यथोक्तं चक्रिरे देवाः सामर्थ्यं लिङ्गधारणे ॥२२॥
सापश्यद्विबुधान्सर्वानिस्वेदान्स्तब्धलोचनान् ।
हृषितस्रग्रजो हीनान्स्थितानस्पृशतः क्षितिम् ॥२३॥
छायाद्वितीयो म्लानस्रग्रजःस्वेदसमन्वितः।
भूमिष्ठो नैषधश्चैव निमेषेण च सूचितः ॥२४॥
सा समीक्ष्य **ततो**[2] देवान्पुण्यश्लोकं च भारत।
नैषधं वरयामास भैमी धर्मेण **भारत**[3] ॥२५॥
विलज्जमाना वस्त्रान्ते जग्राहायतलोचना।
स्कन्धदेशेऽसृजच्**चास्य**[4] स्रजं परमशोभनाम्।
वरयामास चैवैनं पतित्वे वरवर्णिनी ॥२६॥
ततो हा हेति सहसा **शब्दो मुक्तो**[5] नराधिपैः।
देवैर्महर्षिभिश्**चैव**[6] साधु साध्विति भारत।
विस्मितैरीरितः शब्दः प्रशंसद्भिर्नलं नृपम्[7] ॥२७॥
वृते तु नैषधे भैम्या लोकपाला महौजसः।
पृहृष्टमनसः सर्वे नलायाष्टौ वरान्ददुः ॥२८॥
प्रत्यक्षदर्शनं यक्षे गतिं चानुत्तमां शुभाम्।
नैषधाय ददौ शक्रः प्रीयमाणः शचीपतिः ॥२९॥

---

१. M. W. **नैषधे** २. M. W. **तु तान्**
३. M. W. **पाण्डव** ४. M. W. **तस्य**
५. M. W. **मुक्तः शब्दो** ६. M. W **तत्र**
७. M. W. **दमयन्तीं तु कौरव्य वीरसेनसुतो नृपः।**
आश्वासयद् वरारोहां प्रहृष्टेनान्तरात्मना ॥

हे देवाधिदेव लोकपालो! आप लोग अपने अपने रूप में आजाइये, जिससे मैं पुण्यश्लोक महाराज नल को जान सकूँ" ॥२०॥

जब देवताओं ने दमयन्ती के इस करुण विलाप को सुना और उन्होंने यह भी सुना कि दमयन्ती का निश्चय क्या है, वह नल में कितनी अनुरक्त है, और अपने मन और अपनी बुद्धि से वह नल की कितनी भक्त है तब वे देवता यथोक्त रीति से अपने अपने रूप को धारण करने का प्रयत्न करने लगे ॥२१-२२॥

दमयन्ती ने सभी देवताओं को देखा। उनके पसीना नहीं निकल रहा था, उनके नेत्र स्तब्ध थे, उनके ऊपर लटकने वाली मालाएँ धूलिहीन थी और वे लोग पृथ्वी का स्पर्श नहीं कर रहे थे ॥२३॥

(अब तो) निषधराज नल बिल्कुल ही स्पष्ट हो गये। उनके साथ साथ उनकी छाया थी, उनकी माला मलिन हो चुकी थी, वह धूलि एवं पसीने से युक्त थे, पृथ्वी पर चलते थे और पलकें भी लगाते थे ॥२४॥

दमयन्ती ने उन देवताओं तथा पुण्यश्लोक महाराज नल को देखा। तत्पश्चात् अपना धर्म समझ कर उसने नल का वरण कर लिया ॥२५॥

लज्जाशीला और दीर्घनेत्रों वाली दमयन्ती ने नल के अञ्चल को उठाकर अत्यन्त शोभा से युक्त माला को उनके कन्धे पर डाल दिया। इस प्रकार सुन्दरी दमयन्ती ने पतिरूप में नल का वरण कर लिया ॥२६॥

उस समय राजाओं में हाहाकार मच गया। देवता और महर्षि आश्चर्यचकित होकर धन्य, धन्य कह उठे। वे नल की प्रशंसा ही किये जा रहे थे ॥२७॥

दमयन्ती के द्वारा नल का वरण कर लेने पर महापराक्रमी लोकपाल गद्गद हो उठे। सभी (लोकपालों) ने नल को आठ वर प्रदान किया ॥२८॥

शचीपति इन्द्र ने प्रसन्न होकर नल को यह वरदान दिया कि वह यज्ञ में (देवताओं का) प्रत्यक्ष दर्शन कर सकें और श्रेष्ठ गति को प्राप्त करें ॥२९॥

यत्त्वं भजसि कल्याणि पुमांसं देवसन्निधौ।
तस्मान्मां विद्धि भर्तारं एवं ते वचने रतम् ॥
यावच्च मे धरिष्यन्ति प्राणा देहे शुचिस्मिते।
तावत् त्वयि भविष्यामि सत्यमेतद् ब्रवीमि ते ॥
दमयन्तीं तथा वाग्भिरभिनन्द्य कृताञ्जलिः।
तौ परस्परतः प्रीतौ दृष्ट्वा त्वग्निपुरोगमान्।
तानेव शरणं देवाञ्जग्मतुर्मनसा तदा ॥

अग्निरात्मभवं प्रादाद्यत्र वाञ्छति नैषधः।
लोकानात्मप्रभांश्चैव ददौ तस्मै हुताशनः ॥३०॥
यमस्त्वन्नरसं प्रादाद्धर्मे च परमां स्थितिम्।
अपांपतिरपां भावं यत्र वाञ्छति नैषधः ॥३१॥
स्रजश्चोत्तमगन्धाढ्यां[1] सर्वे च मिथुनं ददुः।
वरानेवं प्रदायास्य देवास्ते त्रिदिवं गताः ॥३२॥
पार्थिवाश्चानुभूयास्या विवाहं विस्मयान्विताः।
दमयन्त्याः प्रमुदिताः[2] प्रतिजग्मुर्यथागतम् ॥३३॥
अवाप्य नारीरत्नं तत्पुण्यश्लोकोऽपि[3] पार्थिवः।
रेमे सह तया राजा[4] शच्येव बलवृत्रहा ॥३४॥
अतीव मुदितो राजा भ्राजमानोंऽशुमानिव।
अरञ्जयत्प्रजा वीरो धर्मेण परिपालयन् ॥३५॥
ईजे चाप्यश्वमेधेन ययातिरिव नाहुषः।
अन्यैश्च क्रतुभिर्धीमान्बहुभिश्चाप्तदक्षिणैः ॥३६॥
पुनश्च रमणीयेषु वनेषूपवनेषु च।
दमयन्त्या सह नलो विजहारामरोपमः[5] ॥३७॥
एवं स यजमानश्च विहरंश्च नराधिपः।
ररक्ष वसुसंपूर्णां वसुधां वसुधाधिपः ॥३८॥

॥ इति नलोपाख्याने पञ्चमः सर्गः ॥५॥

---

१. M. W. स्रजश्चोत्तमगन्धाढ्याः
२. M. W. दमयन्त्याश्च मुदिता
३. M. W. तु
४. M. W. राजन्
५. M. W. जनयामास च नलो दमयन्त्या महामनाः।
इन्द्रसेनं सुतञ्चापि इन्द्रसेनाञ्च कन्यकाम् ॥

अग्नि ने नल को अपना ही तेज दे डाला जिसके लिये वह इच्छा किया करते थे। (यही नहीं,) भगवान् हुताशन ने अपनी प्रभा से युक्त लोकों को भी नल को प्रदान कर दिया ॥३०॥

यम ने नल को अन्न का स्वाद और धर्म के प्रति आस्था प्रदान की और जल के स्वामी वरुण ने उनकी इच्छा के अनुसार जल को उपस्थित रहने का वर प्रदान किया ॥३१॥

सभी देवताओं ने दम्पति को उत्तमोत्तम सुगन्धि से पूर्ण मालाओं को प्रदान किया। इस प्रकार सभी देवता नल को वरदान देकर स्वर्ग लोक को चले गये ॥३२॥

वहाँ पर आए हुये राजाओं ने आश्चर्यचकित होकर दमयन्ती के साथ नल के विवाह को देखा। तत्पश्चात् प्रसन्न होकर वह जहां जहां से आए थे वहाँ वहाँ चल गये ॥३३॥

पुण्यश्लोक महाराज नल सुन्दरी दमयन्ती को पाकर उसके साथ उसी प्रकार रमण करने लगे जिस प्रकार भगवान् इन्द्र शची के साथ रमण किया करते हैं ॥३४॥

सूर्य के समान तेजस्वी एवं वीर महाराज नल अत्यन्त प्रसन्न होकर धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करते हुये उसे आनन्दित किया करते थे ॥३५॥

महाराज नल ने नहुष पुत्र ययाति की भांति अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान तो किया ही, साथ ही उन्होंने अन्य बहुत से यज्ञों का भी अनुष्ठान किया जिनमें बहुत सी दक्षिणा दी गयी थी ॥३६॥

तत्पश्चात् देवतुल्य महाराज नल दमयन्ती के साथ सुन्दर सुन्दर वनों और उपवनों में विहार करते रहे ॥३७॥

इस प्रकार यज्ञ और विहार करते हुये महाराज नल धनधान्य से युक्त पृथ्वी की रक्षा करते रहे ॥३८॥

॥ नलोपाख्यान का पाँचवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

षष्ठः सर्गः

बृहदश्व उवाच

वृते तु नैषधे भैम्या लोकपाला महौजसः।
यान्तो ददृशुरायान्तं द्वापरं कलिना सह ॥१॥
अथाब्रवीत्कलिं शक्रः संप्रेक्ष्य बलवृत्रहा।
द्वापरेण सहायेन कले ब्रूहि क्व यास्यसि ॥२॥
ततोऽब्रवीत्कलिः शक्रं दमयन्त्याः स्वयंवरम्।
गत्वाहं वरयिष्ये तां मनो हि मम तद्गतम्[1] ॥३॥
तमब्रवीत्प्रहस्येन्द्रो निर्वृत्तः स स्वयंवरः।
वृतस्तया नलो राजा पतिरस्मत्समीपतः ॥४॥
एवमुक्तस्तु शक्रेण कलिः कोपसमन्वितः।
देवानामन्त्र्य तान्सर्वानुवाचेदं वचस्तदा ॥५॥
देवानां मानुषं मध्ये यत्सा पतिमविन्दत।
ननु तस्या भवेन्न्याय्यं विपुलं दण्डधारणम् ॥६॥
एवमुक्ते तु कलिना प्रत्यूचुस्ते दिवौकसः।
अस्माभिः समनुज्ञातो दमयन्त्या नलो वृतः ॥७॥
कश्च[2] सर्वगुणोपेतं नाश्रयेत नलं नृपम्।
यो वेद धर्मानखिलान्यथावच्चरितव्रतः[3] ॥८॥

---

१. M. W. ताम् २. M. W. का च

३. M. W. योऽधीते चतुरो वेदान् सर्वानाख्यानपञ्चमान्।
नित्यं तृप्ता गृहे यस्य देवा यज्ञेषु धर्मतः॥
अहिंसानिरतो यश्च सत्यवादी दृढ़व्रतः।

नलोपाख्यान

सर्ग ६

बृहदश्व

दमयन्ती के द्वारा नल का वरण हो जाने पर जब महान् पराक्रमी लोकपाल (अपने अपने स्थानों को) चलने लगे तब उन्होंने कलि के साथ आते हुए द्वापर को देखा ॥१॥

कलि को देखते ही बल और वृत्र नामक दैत्यों का संहार करने वाले इन्द्र ने कहा—'अये कले ! बताओ तो सही कि तुम द्वापर के साथ कहाँ जा रहे हो' ॥२॥

कलि ने इन्द्र को उत्तर दिया 'मैं दमयन्ती के स्वयम्वर में जाकर उसका वरण करूँगा क्योंकि मेरा मन उसी में लगा हुआ है' ॥३॥

इन्द्र ने हँसकर कलि से कहा 'वह स्वयम्वर समाप्त हो चुका है। हम लोगों के सामने उस दमयन्ती ने नल को अपना पति चुन लिया है' ॥४॥

इन्द्र के ऐसा कहते ही कलि क्रोध से लाल हो उठा। उसने सभी देवताओं को बुलाकर उनसे कहा ॥५॥

"उस (दमयन्ती) ने देवताओं के रहते हुये भी एक मनुष्य को अपना पति बनाया है, इसलिये न्यायतः वह महान् दण्ड की भागिनी है" ॥६॥

कलि के ऐसा कहने पर देवताओं ने उत्तर दिया—'हमलोगों की आज्ञा से ही दमयन्ती ने नल को अपना पति चुना है ॥७॥

वह कौन सी स्त्री है जो महाराज नल का वरण न करेगी, क्योंकि वह सम्पूर्ण धर्मों के ज्ञाता और चरित्रवान् हैं ॥८॥

यस्मिन्सत्यं धृतिर्दानं तपः शौचं दमः शमः।
ध्रुवाणि पुरुषव्याघ्रे लोकपालसमे नृपे[1] ॥९॥
आत्मानं स शपेन्मूढो हन्याच्चात्मानमात्मना।
एवंगुणं नलं यो वै कामयेच्छपितुं कले ॥१०॥
कृच्छ्रे स नरके मज्जेदगाधे विपुले **प्लवे**[2]।
एवमुक्त्वा कलिं देवा द्वापरं च दिवं ययुः ॥११॥
ततो गतेषु देवेषु कलिर्द्वापरमब्रवीत्।
संहर्तुं नोत्सहे कोपं नले वत्स्यामि द्वापर ॥१२॥
भ्रंशयिष्यामि तं राज्यान्न भैम्या सह रंस्यते।
त्वमप्यक्षान्समाविश्य **कर्तुं साहाय्यमर्हसि**[3] ॥१३॥

॥ इति नलोपाख्याने षष्ठः सर्गः ॥६॥

---

१. M. W. एवं रूपं नलं यो वै कामयेच्छपितुं कले।
२. M. W. ह्रदे
३. M. W. साहाय्यं कर्तुमर्हसि।

नल में सत्य, धैर्य, दान, तप, शौच, दम और शम गुण हैं। वह वास्तव में पुरुषों में सिंह के समान बलवान् और लोकपालों के समान हैं॥९॥

अये कले! जो भी व्यक्ति इस प्रकार के नल को शाप देने की कामना करता है, वह मूर्ख अपने आप को ही शाप देता है और आत्महनन करता है॥१०॥

जो भी व्यक्ति इस प्रकार के गुणों से युक्त नल को शाप देने की इच्छा करता है, वह दुःखदायी नरक में और अगाध तालाब में गिरता है'—कलि और द्वापर से ऐसा कहकर देवता स्वर्ग लोक को चले गये॥११॥

तत्पश्चात् देवताओं के चले जाने पर कलि ने द्वापर से कहा—'अये द्वापर! मैं अपने क्रोध को रोक नहीं सकता हूँ, इसलिए मैं नल में निवास करूँगा॥१२॥

मैं उसे राज्य-भ्रष्ट कर दूँगा जिससे वह दमयन्ती के साथ रमण नहीं कर सकेगा। अये द्वापर! तुम्हें भी अक्ष में प्रवेश करके मेरी सहायता करनी चाहिये'॥१३॥

॥ नलोपाख्यान का छठा सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

सप्तमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

एवं स समयं कृत्वा द्वापरेण कलिः सह।
आजगाम ततस्तत्र यत्र राजा स नैषधः ॥१॥
स नित्यमन्तरप्रेक्षी निषधेष्ववसच्चिरम्।
अथास्य द्वादशे वर्षे ददर्श कलिरन्तरम् ॥२॥
कृत्वा मूत्रमुपस्पृश्य संध्यामास्ते स्म नैषधः।
अकृत्वा पादयोः शौचं तत्रैनं कलिराविशत् ॥३॥
स समाविश्य तु नलं समीपं पुष्करस्य ह।
गत्वा पुष्करमाहेदमेहि दीव्य नलेन वै ॥४॥
अक्षद्यूते नलं जेता भवान् हि सहितो मया।
निषधान्प्रतिपद्यस्व जित्वा राजन्नलं नृपम् ॥५॥
एवमुक्तस्तु कलिना पुष्करो नलमभ्ययात्।
कलिश्चैव वृषो भूत्वा गवां पुष्करमभ्ययात् ॥६॥
आसाद्य तु नलं वीरं पुष्करः परवीरहा।
दीव्यावेत्यब्रवीद्भ्राता वृषेणेति मुहुर्मुहुः ॥७॥
न चक्षमे ततो राजा समाह्वानं महामनाः।
वैदर्भ्याः प्रेक्षमाणायाः पणकालममन्यत ॥८॥
हिरण्यस्य सुवर्णस्य यानयुग्मस्य वाससाम्।
आविष्टः कलिना द्यूते जीयते स्म नरस्तदा ॥९॥
तमक्षमदसंमत्तं सुहृदां न तु कश्चन।
निवारणेऽभवच्छक्तो दीव्यमानमचेतसम् ॥१०॥

नलोपाख्यान

सर्ग ७

बृहदश्व

द्वापर के साथ इस प्रकार समझौता करके कलि वहाँ आ पहुँचा जहाँ महाराज नल थे ॥१॥

वह कलि नित्य ही अवसर की प्रतीक्षा करता हुआ वहाँ बहुत समय तक निवास करता रहा। तत्पश्चात् बारहवें वर्ष में कलि को अवसर मिल ही गया ॥२॥

महाराज नल ने मूत्रविसर्जन करके आचमन तो कर लिया किन्तु उन्होंने पाद-प्रक्षालन नहीं किया। इसी समय कलि ने उनके अन्दर प्रवेश कर लिया ॥३॥

नल में प्रवेश करने के बाद कलि ने पुष्कर के पास जाकर उससे कहा—'आइये, और नल के साथ जुआ खेलिये ॥४॥

'मेरी सहायता से आप जुए में नल को जीत लेंगे और उन्हें जीतकर उनका राज-पाट भी प्राप्त कर लेंगे' ॥५॥

कलि के द्वारा इस प्रकार प्रेरित किया हुआ पुष्कर नल के समीप आया। कलि भी पाँसे के रूप में चुपचाप जुएं में पैठ गया ॥६॥

पराक्रमी नल के समीप आकर शत्रुओं का संहारक पुष्कर पुनः पुनः कहने लगा—'अरे भाई, आइये जुआ खेला जाय' ॥७॥

मनस्वी राजा नल ने पहले तो उस (जुए के) आमन्त्रण को स्वीकार नहीं किया, किन्तु विदर्भराजनन्दिनी की उपस्थिति में उसे जुए के उपयुक्त अवसर जान पड़ा ॥८॥

कलि के प्रभाव से महाराज नल जुए में सब कुछ हार गये—सोना, धन-दौलत, रथ और वस्त्र ॥९॥

राजा नल जुए में बिलकुल मदान्ध हो रहे थे। वह बराबर जुआ खेलते ही जा रहे थे किन्तु उनके मित्रों में से कोई भी उन्हें (ऐसा करने से) रोकने में समर्थ न था ॥१०॥

ततः पौरजनः सर्वा मन्त्रिभिः सह भारत।
राजानं द्रष्टुमागच्छन्निवारयितुमातुरम् ॥११॥
ततः सूत उपागम्य दमयन्त्ये न्यवेदयत्।
एष पौरजनः देवि द्वारि तिष्ठति कार्यवान् ॥१२॥
निवेद्यतां नैषधाय सर्वा प्रकृतयः स्थिताः।
अमृष्यमाणा व्यसनं राज्ञो धर्मार्थदर्शिनः ॥१३॥
ततः सा बाष्पकलया वाचा दुःखेन कर्शिता।
उवाच नैषधं भैमी शोकोपहतचेतना ॥१४॥
राजन्पौरजना द्वारि त्वां दिदृक्षुरवस्थितः।
मन्त्रिभिः सहितः सर्वे राजभक्तिपुरस्कृतः।
तं द्रष्टुमर्हसीत्येवं पुनः पुनरभाषत ॥१५॥
तां तथा रुचिरापाङ्गीं विलपन्तीं सुमध्यमाम्।
आविष्टः कलिना राजा नाभ्यभाषत किंचन ॥१६॥
ततस्ते मन्त्रिणः सर्वे ते चैव पुरवासिनः।
नायमस्तीति दुःखार्ता व्रीडिता जग्मुरालयान् ॥१७॥
तथा तदभवद् द्यूतं पुष्करस्य नलस्य च।
युधिष्ठिर बहून्मासान्पुण्यश्लोकस्त्वजीयत ॥१८॥

॥ इति नलोपाख्याने सप्तमः सर्गः ॥७॥

उस समय मन्त्रियों के साथ सारे पुरजन ही महाराज को देखने के लिए आ पहुँचे, वे सभी उनके द्यूत-मद को रोकना चाहते थे ॥११॥

तत्पश्चात् सारथी ने जाकर दमयन्ती से निवेदन किया—'अयि देवि ! सभी पौरजन एक कार्य विशेष से द्वार पर आकर खड़े हुए हैं ॥१२॥

आप ही महाराज जी से निवेदन कीजिए—'आपकी सभी प्रजायें आकर (द्वार पर) खड़ी हुई हैं। उन्हें अपने धनार्थिविलम्बी महाराज का यह द्यूत-व्यसन असह्य हो रहा है ॥१३॥

(यह सुनकर) दमयन्ती दुखित हो उठी, अश्रुओं से उसकी वाणी गद्गद हो उठी और शोक के कारण मूर्च्छित होती हुई उसने निषधाधिपति नल से कहा ॥१४॥

'अये राजन् ! आपको देखने की इच्छा से राजभक्त पुरजन द्वार पर खड़े हुए हैं और उनके साथ मन्त्रिगण भी हैं। आपको उनसे अवश्य मिलना चाहिए'—इस प्रकार वह पुनः पुनः कह रही थी ॥१५॥

महाराज नल तो कलि के प्रभाव में थे इसलिए वह इस प्रकार से विलाप करती हुई सुनयना दमयन्ती से कुछ भी न बोले ॥१६॥

(यह देखकर) सभी मन्त्रियों तथा पुरजनों ने कहा कि 'इस समय यह महाराज आपे में नहीं हैं' और ऐसा कहकर दुखित और लज्जित होते हुए वे सब अपने अपने घरों को चले गये ॥१७॥

पुष्कर और नल की यह द्यूतक्रीडा बहुत महीनों तक चलती रही और अंत में पराजय हुई पुण्यश्लोक महाराज नल की ॥१८॥

॥ नलोपाख्यान का सातवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

अष्टमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

दमयन्ती ततो दृष्ट्वा पुण्यश्लोकं नराधिपम्।
उन्मत्तवदनुन्मत्ता देवने गतचेतसम् ॥१॥
भयशोकसमाविष्टा राजन्भीमसुता ततः।
चिन्तयामास तत्कार्यं सुमहत्पार्थिवं प्रति ॥२॥
सा शङ्कमाना तत्पापं चिकीर्षन्ती च तत्प्रियम्।
नलं च हृतसर्वस्वमुपलभ्येदमब्रवीत्[1] ॥३॥
बृहत्सेने व्रजामात्यानानाय्य नलशासनात्।
आचक्ष्व यद्धृतं द्रव्यमवशिष्टं च यद्वसु ॥४॥
ततस्ते मन्त्रिणः सर्वे विज्ञाय नलशासनम्।
अपि नो भागधेयं स्यादित्युक्त्वा **पुनराव्रजन्**[2] ॥५॥
तास्तु सर्वाः प्रकृतयो द्वितीयं समुपस्थिताः।
न्यवेदयद्भीमसुता न च तत्प्रयत्यनन्दत ॥६॥
वाक्यमप्रतिनन्दन्तं भर्तारमभिवीक्ष्य सा।
दमयन्ती पुनर्वेश्म व्रीडिता प्रविवेश ह ॥७॥
निशम्य सततं चाक्षान्पुण्यश्लोकपराङ्मुखान्।
नलं च हृतसर्वस्वं धात्रीं पुनरुवाच ह ॥८॥
बृहत्सेने पुनर्गच्छ वार्ष्णेयं नलशासनात्।
सूतमानय कल्याणि महत्कार्यमुपस्थितम् ॥९॥

---

१. M. W. **बृहत्सेनामतियशां तां धात्रीं परिचारिकाम्।**
हितां सर्वार्थकुशलामनुरक्तां सुभाषिताम् ॥

२. M. W. **नलमाव्रजन्**

नलोपाख्यान

सर्ग ८

बृहदश्व

स्वयं उन्मत्त न होती हुई दमयन्ती ने देखा कि पुण्यश्लोक महाराज नल एक पागल की भांति द्यूतक्रीडा में रमे हुये हैं।।१।।

तत्पश्चात् भीमपुत्री दमयन्ती भय और शोक से विह्वल हो उठी। वह महाराज नल के महान् कार्य के विषय में चिन्तित थी।।२।।

पाप से सशंकित होती हुयी भी वह नल की भलाई ही करना चाहती थी। इसलिए वह नल के समीप जाकर कहने लगी। उस समय वह सब कुछ खो चुके थे।।३।।

"अयि बृहत्सेने! जाओ। महाराज नल की आज्ञा से मन्त्रियों को बुलाकर उन्हें यह बतलाओ कि कितने धन का अपहरण कर लिया जा चुका है और कितना धन शेष रह गया है"।।४।।

महाराज नल के शासन को सुनकर सभी मन्त्रियों ने कहा कि 'अब देखो हमारा भाग्य क्या हो' और ऐसा कहते हुये वे लोग पुनः नल के पास गये।।५।।

(नल की) सभी प्रजाएं दूसरी बार वहाँ पर आकर उपस्थित हो गयीं। दमयन्ती ने इसकी सूचना नल को दी, किन्तु उन्होंने उधर कुछ ध्यान ही नहीं दिया।।६।।

जब दमयन्ती ने देखा कि उसके स्वामी ने उसके वचन को अनसुना कर दिया है तब वह पुनः लज्जित होकर राजभवन में चली गयी।।७।।

जब उसने सुना कि पाँसे नल के विरुद्ध ही पड़ रहे हैं और नल अपना सर्वस्व हारते चले जा रहे हैं तब उसने धाय से पुनः कहा।।८।।

"अयि बृहत्सेने! नल की आज्ञा से तुम पुनः सारथी वार्ष्णेय के पास जाओ। उसे शीघ्र ही यहाँ पर ले आओ क्योंकि अब एक महान् कार्य आ पड़ा है"।।९।।

बृहत्सेना तु तच्छ्रुत्वा **दमयन्त्याः**[1] प्रभाषितम् ।
वार्ष्णेयमानयामास पुरुषैराप्तकारिभिः ॥१०॥
वार्ष्णेयं तु ततो भैमी सान्त्वयन् श्लक्ष्णया गिरा ।
उवाच देशकालज्ञा प्राप्तकालमनिन्दिता ॥११॥
जानीषे त्वं यथा राजा सम्यग्वृत्तः सदा त्वयि ।
तस्य त्वं विषमस्थस्य साहाय्यं कर्तुमर्हसि ॥१२॥
यथा यथा हि नृपतिः **पुष्करेणेह**[2] जीयते ।
तथा तथास्य **द्यूते वै**[3] रागो भूयोऽभिवर्धते ॥१३॥
यथा च पुष्करस्याक्षा **वर्तन्ते**[4] वशवर्तिनः ।
तथा विपर्ययश्चापि नलस्याक्षेषु दृश्यते ॥१४॥
सुहृत्स्वजनवाक्यानि यथावन्न श्रृणोति च ।
नूनं मन्ये न शेषोऽस्ति नैषधस्य महात्मनः ॥१५॥
यत्र[5] मे वचनं राजा नाभिनन्दति मोहितः ।
शरणं त्वां प्रपन्नास्मि सारथे कुरु मद्वचः ।
न हि मे शुध्यते भावः कदाचिद्विनशे**दिति**[6] ॥१६॥
नलस्य दयितानश्वान्योजयित्वा **महा**[7]जवान् ।
इदमारोप्य मिथुनं कुण्डिनं यातुमर्हसि ॥१७॥
मम ज्ञातिषु निक्षिप्य दारकौ स्यन्दनं तथा ।
अश्वांश्चै**तान्य**[8]थाकामं वस वान्यत्र गच्छ वा ॥१८॥
दमयन्त्यास्तु तद्वाक्यं वार्ष्णेयो नलसारथिः ।
न्यवेदयदशेषेण नलामात्येषु मुख्यशः ॥१९॥
तैः समेत्य विनिश्चित्य सोऽनुज्ञातो महीपते ।
ययौ मिथुनमारोप्य विदर्भांस्तेन वाहिना ॥२०॥

---

१. M. W. **दमयन्त्या**
२. M. W. **पुष्करेणैव**
३. M. W. **वै द्यूते**
४. M. W. **पतन्ति**
५. M. W. **यत्तु**
६. M. W. **दपि**
७. M. W. **मनो**
८. M. W. **चेमान**

दमयन्ती की बात को सुनकर बृहत्सेना ने विश्वासपात्र पुरुषों के द्वारा वार्ष्णेय को बुलवाया ॥१०॥

सुन्दरी किंवा देश और काल को जाननेवाली दमयन्ती अपनी मधुर वाणी से वार्ष्णेय को समझाती हुयी उस समय के विषय में कहने लगी ॥११॥

"तुम तो जानते ही हो कि महाराज किस प्रकार तुम पर सदैव भरोसा रखते हैं। इसलिए विपत्ति में पड़े हुए उनकी सहायता तुम्हीं कर सकते हो ॥१२॥

यह महाराज तो जितना जितना जुए में पुष्कर के हाथों पराजित होते जा रहे हैं उतना उतना ही वह जुए में और भी अनुरक्त होते जा रहे हैं ॥१३॥

पुष्कर के पाँसे जैसे जैसे उसके पक्ष में पड़ते जाते हैं वैसे वैसे ही महाराज नल के पाँसे उनके विरुद्ध होते जाते हैं ॥१४॥

महाराज अपने मित्रों और स्वजनों की बात सुन ही नहीं रहे हैं। मैं तो समझती हूँ कि उनके पास कुछ शेष ही नहीं रह गया है ॥१५॥

मोह में पड़े हुये महाराज मेरी बात नहीं मान रहे हैं। अये सारथे! मैं तुम्हारी शरण में आई हूँ; तुम मेरा कहना मान लो। यदि मेरा विचार भी शुद्ध न हो तब तो महाराज का सर्वनाश ही हो जाय ॥१६॥

मन के समान वेगगामी नल के प्रिय घोड़ों को रथ में जोतकर और उस पर इन दोनों बच्चों को बिठलाकर तुम कुण्डिनपुर को चले जाओ ॥१७॥

इनको, रथ को और इन घोड़ों को हमारे परिजनों के पास छोड़कर तुम चाहे वहीं रहना अथवा अपनी इच्छा से अन्यत्र चले जाना" ॥१८॥

नल के सारथी वार्ष्णेय ने दमयन्ती की सारी बातों को मुख्य रूप से नल के मन्त्रियों को बतलाया ॥१९॥

एक साथ मिलकर निश्चय कर लेने पर मन्त्रियों की अनुज्ञा से सारथी दोनों बालकों को रथ में बिठलाकर विदर्भदेश को चला गया ॥२०॥

हयांस्तत्र विनिक्षिप्य सूतो रथवरं च तम्।
इन्द्रसेनाञ्च तां कन्यामिन्द्रसेनं च बालकम् ॥२१॥
आमन्त्र्य भीमं राजानमार्तः शोचन्नलं नृपम्।
अटमानस्ततोऽयोध्यां जगाम नगरीं तदा ॥२२॥
ऋतुपर्णं स राजानमुपतस्थे सुदुःखितः।
भृतिञ्चोपययौ तस्य सारथ्येन महीपतेः ॥२३॥

॥ इति नलोपाख्याने अष्टमः सर्गः ॥८॥

सारथी ने घोड़ों को, रथ को और इन्द्रसेना नामक कन्या तथा इन्द्रसेन नामक बालक को वहीं पर छोड़ दिया। नल के विषय में शोक करते हुये दुःखित होकर उसने महाराज भीम का अभिवादन किया और तत्पश्चात् इधर-उधर भटकते हुए वह अयोध्या नगरी में पहुँच गया॥२१-२२॥

दुःखी सारथी ने वहाँ पर राजा ऋतुपर्ण के पास जाकर उनके सारथी के रूप में नौकरी कर ली॥२३॥

॥ नलोपाख्यान का आठवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

नवमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

ततस्तु याते वार्ष्णेये पुण्यश्लोकस्य दीव्यतः।
पुष्करेण हृतं राज्यं यच्चान्यद्वसु किंचन् ॥१॥
हृतराज्यं नलं राजन्प्रहसन्पुष्करोऽब्रवीत्।
द्यूतं प्रवर्ततां भूयः प्रतिपाणोऽस्ति कस्तव ॥२॥
शिष्टा ते दमयन्त्येका सर्वमन्यद्धृतं मया।
दमयन्त्याः पणः साधु वर्ततां यदि मन्यसे ॥३॥
पुष्करेणैवमुक्तस्य पुण्यश्लोकस्य मन्युना।
व्यदीर्यतेव हृदयं न चैनं किंचिदब्रवीत् ॥४॥
ततः पुष्करमालोक्य नलः परममन्युमान्।
उत्सृज्यसर्वगात्रेभ्यो भूषणानि महायशाः ॥५॥
एकवासा अ[1]संवीतः सुहृच्छोकविवर्धनः।
निश्चक्राम **तदा**[2] राजा त्यक्त्वा सुविपुलां श्रियम् ॥६॥
दमयन्त्येकवस्त्रा **तं**[3] गच्छन्तं पृष्ठतोऽ**न्वियात्**[4]।
स तया वाह्यतः सार्धं त्रिरात्रं नैषधोऽवसत् ॥७॥
पुष्करस्तु महाराज घोषयामास वै पुरे।
नले यः सम्यगातिष्ठेत्स गच्छेद्वध्यतां मम ॥८॥
पुष्करस्य तु वाक्येन तस्य विद्वेषणेन च।
पौरा न तस्मिन्सत्कारं कृतवन्तो युधिष्ठिर ॥९॥

---

१. M. W. **ह्य**
२. M. W. **ततो**
३. M. W. **ऽथ**
४. M. W. **ऽन्वगात्**

नलोपाख्यान

सर्ग ९

बृहदश्व

वार्ष्णेय चला गया। महाराज नल जुआ खेलते ही गये और पुष्कर ने उनका राज्य और सर्वस्व जीत लिया ॥१॥

महाराज नल का राज्य अपहृत हो चुका था फिर भी पुष्कर ने हँसकर उनसे कहा—'और भी जुए का खेल चलता रहे। आप के पास दाँव लगाने के लिए क्या है? ॥२॥

मैंने आपका और सब कुछ तो जीत लिया है, केवल दमयन्ती ही शेष है। यदि ठीक समझिये तो दमयन्ती को ही दाँव पर लगा दीजिये' ॥३॥

पुष्कर के ऐसा कहने पर क्रोध से पुण्यश्लोक महाराज नल का हृदय विदीर्ण सा हो गया, किन्तु वह बोले कुछ भी नहीं ॥४॥

अत्यन्त क्रोध से भरे हुये यशस्वी महाराज नल ने पुष्कर की ओर देखकर अपने सभी अंगों से आभूषणों को उतार दिया ॥५॥

एक ही वस्त्र होने के कारण उसका शरीर पूर्णरूप से ढका हुआ नहीं था, उनके कारण उनके सुहृद्गण दुखी थे। इस अवस्था में वह अपनी विपुल सम्पत्ति छोड़कर वहाँ से चले गये ॥६॥

नल चल पड़े। उनके पीछे पीछे दमयन्ती भी चल पड़ी। उसके शरीर पर एक ही वस्त्र था। निषधराज दमयन्ती के साथ तीन रातों तक बाहर ही पड़े रहे ॥७॥

पुष्कर ने नगर में यह घोषणा करवा दी कि जो भी व्यक्ति नल के प्रति आस्थावान् होगा उसे मार डालूँगा ॥८॥

पुष्कर के इन विद्वेषपूर्ण वाक्यों को सुनकर (भयभीत) नगरवासी महाराज नल का सत्कार न कर सके ॥९॥

स तथा नगराभ्यासे सत्कारार्हो न सत्कृतः।
त्रिरात्रमुषितो राजा जलमात्रेण वर्तयन्[1] ॥१०॥
क्षु[2]धासंपीड्यमानस्तु नलो बहुतिथेऽहनि।
अपश्यच्छकुनान्कांश्चिद्धिरण्यसदृशच्छदान् ॥११॥
स चिन्तयामास तदा निषधाधिपतिर्बली।
अस्ति भक्ष्यो ममाद्यायं वसु चेदं भविष्यति ॥१२॥
ततस्तानन्तरीयेण[3] वाससा समवास्तृणीत्[4]।
तस्योत्तरीय[5]मादाय जग्मुः[6] सर्वे विहायसा ॥१३॥
उत्पतन्तः खगास्ते तु वाक्यमाहुस्तदा[7] नलम्।
दृष्ट्वा दिग्वाससं भूमौ स्थितं दीनमधोमुखम् ॥१४॥
वयमक्षाः सुदुर्बुद्धे तव वासो जिहीर्षवः।
आगता न हि नः प्रीतिः सवाससि गते त्वयि ॥१५॥
तान्समीक्ष्य गतानक्षानात्मानं च विवाससम्।
पुण्यश्लोकस्ततो राजा[8] दमयन्तीमथाब्रवीत् ॥१६॥
येषां प्रकोपादैश्वर्यात्प्रच्युतोऽहमनिन्दिते।
प्राणयात्रां न विन्दे च दुःखितं क्षुधयार्दितः[9] ॥१७॥
येषां कृते न सत्कारमकुर्वन्मयि नैषधाः।
त इमे शकुना भूत्वा वासोऽप्यपहरन्ति मे ॥१८॥
वैषम्यं परमं प्राप्तो दुःखितो गतचेतनः।
भर्ता तेऽहं निबोधेदं वचनं हितमात्मनः ॥१९॥
एते गच्छन्ति बहवः पन्थानो दक्षिणापथम्।
अवन्तीमृक्षवन्तञ्च समतिक्रम्य पर्वतम् ॥२०॥

---

१. M. W. पीड्यमानः क्षुधा तत्र फलमूलानि कर्षयन्।
प्रातिष्ठत ततो राजा दमयन्ती तमन्वगात् ॥
२. M. W. क्षुधया
३. M. W. परिधानेन
४. M. W. स समावृणोत्
५. M. W. तस्य तद्वस्त्रम्
६. M. W. सर्वे जग्मुः
७. M. W. वाक्यमेतदाहुस्ततो
८. M. W. तदा राजन्
९. W. W. क्षुधयान्वितः

सब प्रकार से आदर का पात्र होते हुये भी महाराज नल तीन रातों तक नगर की सीमा के बाहर ही पड़े रहे। उस समय वह केवल जल पर ही जीवन-निर्वाह करते थे ॥१०॥

बहुत दिनों तक भूख से पीड़ित होते हुये महाराज नल ने कुछ पक्षियों को देखा, जिनके पंख सुनहले थे ॥११॥

(यह देखकर) बलशाली महाराज नल ने सोचा कि आज (इन पक्षियों से) मेरा आहार होगा और यही मेरा ऐश्वर्य होगा ॥१२॥

यह सोचकर उन्होंने उन पक्षियों को अपने वस्त्र से ढक दिया, किन्तु वे सभी पक्षी नल के उस एक मात्र वस्त्र को लेकर आकाश में उड़ गये ॥१३॥

उड़ते हुये पक्षियों ने नंगे, दीन और नीचे की ओर मुख करके पृथ्वी पर खड़े हुये नल को देखकर कहा— ॥१४॥

'अये दुर्बुद्धे! हम लोग तुम्हारे वस्त्र का अपहरण करने वाले पाँसे हैं और जब तुम एक वस्त्र पहिनकर (राज्य से) चले थे तब हमें प्रसन्नता नहीं थी' ॥१५॥

पाँसों को इस प्रकार गया हुआ और अपने आपको वस्त्रहीन देखकर पुण्यश्लोक महाराज नल ने दमयन्ती से कहा ॥१६॥

'अयि सुन्दरि! ये वही पाँसे हैं जिनके प्रकोप से मेरी सम्पत्ति छिन गयी, जिनके कारण भूख से पीड़ित मैं जीवन निर्वाह नहीं कर पा रहा हूँ और जिनके कारण निषध देश के निवासियों ने मेरा आदर तक नहीं किया था। वही पाँसे अब पक्षियों के रूप में मेरे एकमात्र वस्त्र को भी छीने लिये जा रहे हैं ॥१७-१८॥

मैं अत्यन्त विपत्ति में पड़ा हुआ हूँ, दुःख से मेरी चेतना नष्ट हो चुकी है, तथापि मैं तुम्हारा भरण-पोषण करनेवाला (पति) हूँ। इसलिए तुम मुझसे अपने हित की बात सुनो ॥१९॥

देखो, ये बहुत से मार्ग अवन्ती और ऋक्षवान् पर्वत को पार करके दक्षिण की ओर जा रहे हैं ॥२०॥

एष विन्ध्यो महाशैलः पयोष्णी च समुद्रगा।
आश्रमाश्च महर्षीणाममी पुष्पफलान्विताः[1] ॥२१॥
एष पन्था विदर्भाणामयं गच्छति कोसलाम्।
अतः परञ्च देशोऽयं दक्षिणे दक्षिणापथः[2] ॥२२॥
ततः सा वाष्पकलया वाचा दुःखेन कर्शिता[3]।
उवाच दमयन्ती तं नैषधं करुणं वचः ॥२३॥
उद्वेजते मे हृदयं सीदन्त्यङ्गानि सर्वशः।
तव पार्थिव संकल्पं चिन्तयन्त्याः पुनः पुनः ॥२४॥
हृतराज्यं हृतधनं[4] विवस्त्रं क्षुच्छ्रमान्वितम्[5]।
कथमुत्सृज्य गच्छेयमहं त्वां विजने[6] वने ॥२५॥
श्रान्तस्य ते क्षुधार्तस्य चिन्तयानस्य तत्सुखम्।
वने घोरे महाराज नाशयिष्यामि ते क्लमम् ॥२६॥
न च भार्यासमं किंचिद्विद्यते भिषजां मतम्।
औषधं सर्वदुःखेषु सत्यमेतद्ब्रवीमि ते ॥२७॥

नल उवाच

एवमेतद्यथात्थ त्वं दमयन्ति सुमध्यमे।
नास्ति भार्यासमं मित्रं नरस्यार्तस्य भेषजम् ॥२८॥
न चाहं त्यक्तुकामस्त्वां किमर्थं भीरु शङ्कसे।
त्यजेयमहमात्मानं न त्वेव[7] त्वामनिन्दिते ॥२९॥

दमयन्त्युवाच

यदि मां त्वं महाराज न विहातुमिहेच्छसि।
तत्किमर्थं विदर्भाणां पन्थाः समुपदिश्यते ॥३०॥

---

१. M. W. बहुमूल
२. M. W. एतद्वाक्यं नलो राजा दमयन्तीं समाहितः।
उवाचासकृदार्तो हि भैमीमुद्दिश्य भारत॥
३. M. W. कर्षिता
४. M. W. हृतद्रव्यम्
५. M. W. तृषान्वितम्
६. M. W. निर्जने
७. M. W. चैवं

यह देखो विशालकाय बिन्ध्य पर्वत है, यह है समुद्र की ओर जानेवाली नदी पयोष्णी और ये हैं महर्षियों के आश्रम जिनमें बहुत से फलमूल लगे हुये हैं ॥२१॥

यह विदर्भ का मार्ग है, यह मार्ग कोशल को जाता है। इसके आगे दक्षिण की ओर दक्षिणापथ देश है' ॥२२॥

तत्पश्चात् दुःख से पीड़ित दमयन्ती भरे हुए कण्ठ से इन करुण वचनों को कहने लगी— ॥२३॥

'मेरा हृदय फटा जा रहा है, मेरे सभी अंग शिथिल हो रहे हैं और हे राजन्! यह सब कुछ होता है बार बार आपके निश्चय को सोंचकर ॥२४॥

आपका राज्य छिन गया है, आपका धन छिन गया है, आप वस्त्रहीन तथा भूख और प्यास से पीड़ित हैं। (इस स्थिति में) मैं आपको इस निर्जन वन में छोड़कर कैसे चली जाऊँ ॥२५॥

अये महाराज! आप जब थके हुये होंगे, जब आप भूख से पीड़ित होंगे और जब आप अपने बीते हुये सुख को सोंच रहे होंगे तब इस घोर बन में मैं आप की थकावट को दूर किया करूँगी ॥२६॥

मैं आपसे सच सच कह रही हूँ कि सभी वैद्यों का यह मत है कि सभी दुःखों में स्त्री के समान अन्य कोई औषध है ही नहीं' ॥२७॥

नल

'अयि सुन्दरि दमयन्ति! तुम जो कुछ कह रही हो वह तो बिलकुल सत्य ही है कि दुःखी मनुष्य के लिए स्त्री के समान और कोई औषध है ही नहीं ॥२८॥

अयि भीरु! तुम शंका किस लिए कर रही हो, मैं तो तुम्हें छोड़ने की इच्छा कर ही नहीं रहा हूँ। अयि सुन्दरि! मैं अपने आपको भले ही छोड़ दूँ, तुम्हें नहीं छोड़ सकता हूँ' ॥२९॥

दमयन्ती

'अये महाराज! यदि आप मुझे यहाँ नहीं छोड़ना चाहते हैं तो आप मुझे विदर्भ देश का मार्ग क्यों दिखला रहे हैं? ॥३०॥

अवैमि चाहं नृपते न त्वं मां त्यक्तुमर्हसि।
चेतसा त्वपकृष्टेन मां त्यजेथा महीपते ॥३१॥
पन्थानं हि ममाभीक्षणमाख्यासि **नरसत्तम्**[1]।
अतोनिमित्तं शोकं मे वर्धयस्यमरप्रभु[2] ॥३२॥
यदि चायमभिप्रायस्तव राजन्व्रजेदिति।
सहितावेव गच्छावो विदर्भान्यदि मन्यसे ॥३३॥
विदर्भराजस्तत्र त्वां पूजयिष्यति मानद।
तेन त्वं पूजितो राजन्सुखं वत्स्यसि नो गृहे ॥३४॥

॥ इति नलोपाख्याने नवमः सर्गः ॥९॥

---

१. M. W. च नरोत्तम २. M. W. अमरोपम

अये राजन् ! मैं तो जानती हूँ कि आप (स्वस्थ मन होने पर) मुझे छोड़ नहीं सकते हैं किन्तु अपकृष्ट मन से आप मुझे अवश्य छोड़ देंगे ॥३१॥

अये देवतुल्य पुरुष शिरोमणे ! आप मुझे यह मार्ग बतला रहे हैं, इसीलिए आप मेरे शोक को बढ़ाते जा रहे हैं ॥३२॥

यदि आपका अभिप्राय यह हो कि "यह (दमयन्ती) अपने परिजनों के पास चली जाय" तब तो यदि आपकी इच्छा हो तो, हम दोनों साथ साथ ही विदर्भदेश को चलें ॥३३॥

अयि मानिन् ! वहाँ पर विदर्भराज आपका आदर-सत्कार करेंगे और उनके द्वारा सम्मानित होकर आप सुखपूर्वक हमारे घर में रहेंगे' ॥३४॥

॥ नलोपाख्यान का नौवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

दशमः सर्गः

नल उवाच

यथा राज्यं **पितुस्ते तत्तथा**[1] मम न संशयः।
न तु तत्र गमिष्यामि विषमस्थः कथंचन ॥१॥
कथं समृद्धो गत्वाहं तव हर्षविवर्धनः।
परि**द्यूनो**[2] गमिष्यामि तव शोकविवर्धनः ॥२॥

बृहदश्व उवाच

इति ब्रुवन्नलो राजा दमयन्तीं पुनः पुनः।
सान्त्वयामास कल्याणीं वाससोऽर्धेन संवृताम् ॥३॥
तावेकवस्त्रसंवीतावटमानावितस्ततः ।
क्षुत्पिपासापरिश्रान्तौ सभां कांचिदुपेयतुः ॥४॥
तां सभामुपसंप्राप्य तदा स निषधाधिपः।
वैदर्भ्या सहितो राजा निषसाद महीतले ॥५॥
स वै विवस्त्रो मलिनो विकचः पांसुगुण्ठितः।
दमयन्त्या सह श्रान्तः सुष्वाप धरणीतले ॥६॥
दमयन्त्यपि कल्याणी निद्रयापहृता ततः।
सहसा दुःखमासाद्य सुकुमारी तपस्विनी ॥७॥
सुप्तायां दमयन्त्यां तु नलो राजा विशां पते।
शोकोन्मथितचित्तात्मा न स्म शेते यथा पुरा ॥८॥
स तद्राज्यापहरणं सुहृत्त्यागञ्च सर्वशः।
वने च तं परिध्वंसं प्रेक्ष्य चिन्तामुपेयिवान् ॥९॥

---

१. M. W. **तव पितुस्तथा** २. M. W. **परिच्युतो**

नलोपाख्यान

सर्ग १०

नल

'इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुम्हारे पिता का राज्य मेरे ही राज्य के समान है किन्तु अब मैं इस विपत्ति में पड़ा हुआ वहाँ नहीं जाऊँगा ॥१॥

अपनी समृद्धि में (तुम्हारे पिता जी के नगर में) जाकर मैंने तुम्हारे हर्ष को बढ़ाया था। अब (अपनी समृद्धि से) पतित होकर तुम्हारे शोक की वृद्धि करता हुआ मैं वहाँ कैसे जाऊँ' ॥२॥

बृहदश्व

ऐसा कहते हुए महाराज नल ने सुन्दरी और अर्द्धवस्त्र को धारण करनेवाली दमयन्ती को बार बार सान्त्वना दी ॥३॥

एक ही वस्त्र को धारण किये हुये, इधर उधर भटकते हुये और भूख-प्यास से पीड़ित वे दोनों (नल और दमयन्ती) एक सभा के निकट पहुँचे ॥४॥

तब उस सभा के निकट पहुँचकर दमयन्ती के साथ राजा नल पृथ्वी पर बैठ गये ॥५॥

राजा नल दमयन्ती के साथ भूमि पर ही सो रहे। वह बहुत थके हुये थे, उनके पास न तो कोई वस्त्र था और न चटाई, वह मलिन एवं धूल-धूसरित थे ॥६॥

सुकुमारी एवं सुन्दरी बेचारी दमयन्ती भी दुःख के वशीभूत होकर सहसा निद्रा में मग्न हो गयी ॥७॥

दमयन्ती के सो जाने पर महाराज नल पूर्ववत् नहीं सो सके क्योंकि उनका मन शोक से विक्षुब्ध हो रहा था ॥८॥

महाराज अपने राज्यापहरण, मित्रवियोग और वन में सर्वनाश को सोच-सोचकर चिन्तित हो रहे थे ॥९॥

किं नु मे स्यादिदं कृत्वा किं नु मे स्यादकुर्वतः।
किं नु मे मरणं श्रेयः परित्यागो जनस्य वा ॥१०॥
मामियं ह्यनुरक्तेदं दुःखमाप्नोति मत्कृते।
मद्विहीना त्वियं गच्छेत्कदाचित्स्वजनं प्रति ॥११॥
मया निःसंशयं दुःखमियं प्राप्स्यत्यनुत्तमा।
उत्सर्गे संशयः स्यात्तु विन्देतापि सुखं क्वचित् ॥१२॥
स विनिश्चित्य बहुधा विचार्य च पुनः पुनः।
उत्सर्गे मन्यते श्रेयो दमयन्त्या नराधिपः[1] ॥१३॥
सोऽवस्त्रतामात्मनश्च तस्याश्चाप्येकवस्त्रताम्।
चिन्तयित्वाध्यगाद्राजा वस्त्रार्धस्यावकर्तनम् ॥१४॥
कथं वासो विकर्तेयं न च बुध्येत मे प्रिया।
चिन्त्यैवं नैषधो[2] राजा सभां पर्यचरत्तदा ॥१५॥
परिधावन्नथ नल इतश्चेतश्च भारत।
आससाद सभोद्देशे विकोशं खड्गमुत्तमम् ॥१६॥
तेनार्धं वाससश्छित्वा निवस्य च परंतपः ॥
सुप्तामुत्सृज्य वैदर्भीं प्राद्रवद्गतचेतनः ॥१७॥
ततो निबद्धहृदयः पुनरागम्य तां सभाम्।
दमयन्तीं तथा दृष्ट्वा रुरोद निषधाधिपः ॥१८॥
यां न वायुर्न चादित्यः पुरा पश्यति मे प्रियाम्।
सेयमद्य सभामध्ये शेते भूमावनाथवत् ॥१९॥
इयं वस्त्रावकर्तेन संवीता चारुहासिनी ॥
उन्मत्तेव वरारोहा कथं बुद्ध्वा भविष्यति ॥२०॥

---

१. M. W. न चैषा तेजसा शक्या कैश्चिद् धर्षयितुं पथि।
यशस्विनी महाभागा मद्भक्तेयं पतिव्रता ॥
एवं तस्य तदा बुद्धिर्दमयन्त्यां न्यवर्तत।
कलिना दुष्टभावेन दमयन्त्या विसर्जने ॥

२. M. W. विचिन्त्यैवं नलो

'इसे करने से मेरा क्या होगा, अथवा इसे न करने से ही मेरा क्या होगा ? क्या मेरे लिए मरण श्रेयस्कर है अथवा अपनी इस प्रिया (दमयन्ती) का परित्याग ?॥१०॥

यह दमयन्ती तो मुझमें अनुरक्त है और यह मेरे लिए ही दुःख भोग रही है। मुझसे वियुक्त होने पर कदाचित् यह अपने स्वजनों के पास चली जाय॥११॥

निस्सन्देह मेरी अनुगामिनी होकर यह दुःख प्राप्त करेगी, किन्तु मुझसे परित्यक्त होकर सम्भव है वह सुख भी प्राप्त कर सके'॥१२॥

बार बार यह विचार करते हुये महाराज नल ने निश्चय किया कि दमयन्ती का परित्याग ही श्रेयस्कर है॥१३॥

अपने को वस्त्रहीन और दमयन्ती को एक वस्त्र से युक्त देखकर महाराज नल उसके आधे वस्त्र को काटने के लिए उसके पास गये॥१४॥

'मैं किस प्रकार से आधा वस्त्र काटूँ कि मेरी प्रियतमा जगने न पाये'—ऐसा सोचकर वह सभा के चारों ओर घूमने लगे॥१५॥

इस प्रकार उस सभा के चारों ओर इधर उधर दौड़ते हुए महाराज नल ने एक उत्तम और नंगी तलवार को उठा लिया॥१६॥

शत्रुओं का संहार करनेवाले राजा नल ने उस तलवार से वस्त्र के आधे भाग को काटकर उसे पहन लिया। तत्पश्चात् वह चेतनाहीन होकर सोती हुई दमयन्ती को छोड़कर वहाँ से भाग गये॥१७॥

तत्पश्चात् निश्चिन्तमन होकर निषधाधिपति पुनः उस सभा के पास आगये। दमयन्ती को देखते ही वह रो पड़े॥१८॥

'मेरी जिस प्रियतमा को पहले वायु और सूर्य भी नहीं देखने पाते थे, वही आज अनाथवत् इस सभा में पृथ्वी पर पड़ी हुई सो रही है॥१९॥

(आधे) कटे हुये वस्त्र से आच्छादित चारुहासिनी सुन्दरी दमयन्ती पगली की भांति जाग कर कैसी हो जायगी ॥२०॥

कथमेका सती भैमी मया विरहिता शुभा।
चरिष्यति वने घोरे मृगव्यालनिषेविते[1] ॥२१॥
गत्वा गत्वा नलो राजा पुनरेति सभां मुहुः।
आकृष्णमाणः कलिना सौहृदेनापकृष्यते ॥२२॥
द्विधेव हृदयं तस्य दुःखितस्याभवत्तदा।
दोलेव मुहुरायाति याति चैव सभां **मुहुः**[2] ॥२३॥
सोऽपकृष्टस्तु[3] कलिना मोहितः प्राद्रवन्नलः।
सुप्तामुत्सृज्य तां भार्यां विलप्य करुणं बहु ॥२४॥
नष्टात्मा कलिना स्पृष्टस्तत्तद्विगणयन्नृपः।
जगा**मैवं**[4] वने शून्ये भार्यामुत्सृज्य दुःखितः ॥२५॥

॥ इति नलोपाख्याने दशमः सर्गः ॥१०॥

---

१. M. W. आदित्या वसवो रुद्रा अश्विनौ समरुद्गणौ।
रक्षन्तु त्वां महाभागे धर्मेणासि समावृता॥
एवमुक्त्वा प्रियां भार्यां रूपेणाप्रतिमां भुवि।
कलिनापहृतज्ञानो नलः प्रातिष्ठदुद्यतः॥

२. M. W. प्रति

३. M. W. अवकृष्टस्तु

४. M. W. एकां

मेरे बिना अकेली ही यह दमयन्ती मृग और सर्प आदि से भरे हुये वन में किस प्रकार विचरण कर सकेगी' ॥२१॥

(वहाँ से) जा जाकर महाराज नल बार बार सभा में लौट आते थे। कलि के द्वारा घसीटे जाते हुये वह अपने प्रियपात्र से अलग हो रहे थे ॥२२॥

उन दुःखी महाराज नल का मन द्विविधा में पड़ा हुआ था। एक झूले के समान कभी वह सभा की ओर आता था और कभी उससे अलग चला जाता था ॥२३॥

कलि के द्वारा घसीटे हुये महाराज नल मोहवश इधर उधर भागते थे। अपनी उस सोयी हुयी स्त्री को छोड़कर, वह अत्यन्त करुण विलाप कर रहे थे। ॥२४॥

कलि के प्रभाव से उनकी चेतना नष्ट हो चुकी थी। निर्जन वन में अपनी स्त्री को एकाकी छोड़कर, उसकी चिंता करते हुए महाराज नल दुःखित होकर वहाँ से चले गये ॥२५॥

॥ नलोपाख्यान का दशवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

एकादशः सर्गः

बृहदश्व उवाच

अपक्रान्ते नले राजन्दमयन्ती गतक्लमा।
अबुध्यत बरारोहा संत्रस्ता विजने वने ॥१॥
सापश्यमाना भर्तारं **दुःखशोक**[1] समन्विता ॥
प्राक्रोशदुच्चैः संत्रस्ता महाराजेति नैषधम् ॥२॥
हा नाथ हा महाराज हा स्वामिन्किं जहासि माम्।
हा हतास्मि विनष्टास्मि भीतास्मि विजने वने ॥३॥
ननु नाम महाराज धर्मज्ञः सत्यवागसि।
कथमुक्त्वा तथासत्यं सुप्तामुत्सृज्य मां गतः ॥४॥
कथमुत्सृज्य गन्तासि **दश्यां**[2] भार्यामनुव्रताम्।
विशेषतोऽनपकृते परेणापकृते सति ॥५॥
शक्ष्यसे ता गिरः सत्याः कर्तुं मयि नरेश्वर[3]।
यास्त्वया[4] लोकपालानां संनिधौ कथिताः पुरा[5] ॥६॥
पर्याप्तः परिहासोऽयमेतावान्पुरुषर्षभ।
भीताहमस्मि दुर्धर्ष दर्शयात्मानमीश्वर ॥७॥

---

१. M. W. शोकदुःख
२. M. W. दक्षां
३. M. W. शक्यसे ता गिरः सम्यक्कर्तुं मयि नरेश्वर
४. M. W. तेषां
५. M. W. नाकाले विहितो मृत्युर्मर्त्यानां पुरुषर्षभ।
यत्र कान्ता त्वयोत्सृष्टा मुहूर्तमपि जीवति ॥

नलोपाख्यान

सर्ग ११

बृहदश्व

इधर राजा नल के चले जाने पर दमयन्ती की थकावट नष्ट हुयी। सुन्दरी दमयन्ती जग पड़ी और वह उस निर्जन वन में भयभीत होने लगी ॥१॥

अपने पति को वहाँ पर न देखकर दमयन्ती शोक और दुःख से व्याकुल हो गयी। भयभीत होती हुयी वह ज़ोर ज़ोर से चिल्ला चिल्ला कर 'महाराज, महाराज" कह कर नल को पुकारने लगी ॥२॥

(वह कह रही थी) 'हा नाथ, हा महाराज, हा स्वामिन्, आप मुझे क्यों छोड़ रहे हैं? हाय, मैं मर गयी, मेरा सर्वनाश हो गया, इस निर्जन वन में मैं भयभीत हो रही हूँ ॥३॥

अरे महाराज! आप तो धर्मज्ञ और सत्यवादी हैं। तब इस प्रकार झूठ बोल कर मुझे सोती हुई छोड़ कर आप कैसे चले गए? ॥४॥

आप मुझ जैसी वश में रहनेवाली एवं अनुगामिनी स्त्री को छोड़कर क्यों चले गये हैं? विशेष रूप से जब कि मैंने आप का अपकार नहीं किया था, किसी अन्य ने भले ही किया हो ॥५॥

अरे महाराज! क्या आप उन वचनों को सत्य कर सकते हैं जिनको आपने पहले लोकपालों के सामने मुझसे कहा था? ॥६॥

अये महाराज! इतना परिहास तो पर्याप्त हो चुका है। अये वीर! मैं अत्यन्त भयभीत हो रही हूँ, अब तो आप मुझे दर्शन दीजिए ॥७॥

दृश्यसे दृश्यसे राजन्नेष **तिष्ठसि**[1] नैषध।
आवार्य गुल्मैरात्मानं किं मां न प्रतिभाषसे ॥८॥
नृशंसव्रत[2] राजेन्द्र यन्मामेवंगतामिह।
विलपन्तीं **समालिङ्ग्य**[3] नाश्वासयसि पार्थिव ॥९॥
न शोचाम्यहमात्मानं न चान्यदपि किंचन।
कथं नु भवितास्येक इति त्वां नृप **शोचिमि**[4] ॥१०॥
कथं नु राजस्तृषितः क्षुधितः श्रमकर्शितः।
सायाह्ने वृक्षमूलेषु मामपश्यन्भविष्यसि ॥११॥
ततः सा तीव्रशोकार्ता प्रदीप्तेव च मन्युना।
इतश्चेतश्च रुदती पर्यधावत दुःखिता ॥१२॥
मुहुरुत्पतते बाला मुहुः पतति विह्वला।
मुहुरालीयते भीता मुहुः क्रोशति रोदिति ॥१३॥
सा तीव्रशोकसंतप्ता[5] मुहुर्निःश्वस्य **विह्वला**[6]।
उवाच भैमी **निष्क्रम्य**[7] **रोदमाना**[8] पतिव्रता ॥१४॥
यस्याभिशापाद्दुःखार्तो दुःखं विन्दति नैषधः।
तस्य भूतस्य तद्दुःखाद् दुःखमभ्यधिकं भवेत् ॥१५॥
अपापचेतसं पापो य एवं कृतवान्नलम्।
तस्माद्दुःखतरं प्राप्य जीवत्वसुखजीविकाम् ॥१६॥
एवं तु विलपन्ती सा राज्ञो भार्या महात्मनः।
अन्वेषति स्म भर्तारं वने श्वापदसेविते ॥१७॥
उन्मत्तवद्भीमसुता विलपन्ती इतस्ततः।
हा हा राजन्निति मुहुरितश्चेतश्च धावति ॥१८॥
तां **शुष्यमा**[9]**णामत्यर्थं** कुररीमिव वाशतीम्।
करुणं बहु शोचन्तीं विलपन्तीं मुहुर्मुहुः ॥१९॥

---

१. M. W. **दृष्टोऽसि**
२. M. W. **नृशंसवत**
३. M. W. **समागत्य**
४. M. W. **रोदिमि**
५. M. W. **अतीव शोकसन्तप्ता**
६. M. W. **दुःखिता**
७. M. W. **निश्वस्य**
८. M. W. **रुदत्यथ**
९. M. W. **क्रन्दमानाम्**

अये महाराज नल ! आप दिखाई दे रहे हैं। देखिये, मैंने आप को देख लिया है। आप इन झाड़ियों में क्यों छिप रहे हैं, आप मुझे प्रत्युत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं ? ॥८॥

अये महाराज ! अये निष्ठुर ! राजन् ! कितना आश्चर्य है कि आप आकर इस अवस्था में पड़ी हुयी और विलाप करती हुयी मुझे सान्त्वना नहीं दे रहे हैं ॥९॥

मुझे न तो अपने लिये शोक है और न किसी अन्य के लिये। अये राजन् ! मैं तो इसलिए रो रही हूँ कि आप अकेले कैसे होंगे ? ॥१०॥

राजन् ! सायंकाल वृक्षों के बीच में मुझे न देखकर भूखे-प्यासे और थके हुए आप पर क्या बीतेगी ?" ॥११॥

तत्पश्चात् अत्यन्त शोकाकुल और क्रोध से जलती हुयी दुःखी दमयन्ती रोती हुयी इधर उधर दौड़ने लगी ॥१२॥

भोली दमयन्ती बार बार उठती थी, बार बार विह्वल हो कर गिरती थी, बार बार भय के कारण चुप हो रहती थी और बार बार चिल्ला कर रोने लगती थी ॥१३॥

अत्यन्त शोकसन्तप्त एवं दुःखी पतिव्रता दमयन्ती आहें भरती और रोती हुयी बोली ॥१४॥

'जिसके अभिशाप से दुःखी निषधराज नल दुःख भोग रहे हैं, उसे नल के दुःख से भी अधिक दुःख भोगना पड़े ॥१५॥

जिस पापी ने निष्पाप नल की यह दशा कर दी है, वह इससे भी अधिक दुःख को पाकर दुःख पूर्ण जीवन व्यतीत करें' ॥१६॥

महामना राजा नल की स्त्री इस प्रकार बिलखती हुयी हिंसक जन्तुओं से भरे हुये वन में अपने स्वामी की खोज कर रही थी ॥१७॥

पगली की भांति बिलखती हुई भीमनन्दिनी बार बार 'हा राजन् ! हा राजन्' ! कहती हुयी इधर उधर दौड़ रही थी ॥१८॥

दमयन्ती क्रन्दन कर रही थी, वह कुररी की भांति चिल्ला रही थी, करुणापूर्वक शोक कर रही थी और बार बार बिलख रही थी ॥१९॥

सहसाभ्यागतां भैमीमभ्यासपरिवर्तिनीम् ।
जग्राहाजगरो ग्राहो महाकायः क्षुधान्वितः ॥२०॥
सा ग्रस्यमाना ग्राहेण शोकेन च **पराजिता**[1] ।
नात्मानं शोचति तथा यथा शोचति नैषधम् ॥२१॥
हा नाथ मामिह वने ग्रस्यमानामनाथवत् ।
ग्राहेणानेन विपिने कमर्थं नाभि[2]धावसि ॥२२॥
कथं भविष्यसि पुनर्मामनुस्मृत्य नैषध ।
पा[3]पान्मुक्तः पुनर्लब्ध्वा बुद्धिं चेतो धनानि च ॥२३॥
श्रान्तस्य ते क्षुधार्तस्य परिम्लानस्य नैषध ।
कः श्रमं राजशार्दूल नाशयिष्यति **मानद**[4] ॥२४॥
ताम[5]**कस्मान्मृ**गव्याधो विचरन्गहने वने ।
आक्रदन्तीमुपश्रुत्य[6] जवेनाभिससार ह ॥२५॥
तां **स**[7] दृष्ट्वा तथा ग्रस्तामुरगेणायतेक्षणाम् ।
त्वरमाणो मृगव्याधः समभिक्रम्य वेगितः ॥२६॥
मुखतः पाटयामास शस्त्रेण निशितेन ह ।
निर्विचेष्टं भुजंगं तं विशस्य मृगजीवनः ॥२७॥
मोक्षयित्वा च तां व्याधः प्रक्षाल्य सलिलेन च ।
समाश्वास्य कृताहारामथ पप्रच्छ भारत ॥२८॥
कस्य त्वं मृगशावाक्षि कथं चाभ्यागता वनम् ।
कथं चेदं महत्कृच्छ्रं प्राप्तवत्यसि **भामिनि**[8] ॥२९॥
दमयन्ती तथा तेन पृच्छ्यमाना विशांपते ।
सर्वमेतद्यथावृत्तमाचचक्षेऽस्य भारत ॥३०॥
तामर्धवस्त्रसंवीतां पीनश्रोणिपयोधराम् ।
सुकुमारानवद्याङ्गीं पूर्णचन्द्रनिभाननाम् ॥३१॥

---

१. M. W. परिप्लुता
२. M. W. नु
३. M. W. शापान्
४. M. W. तेऽनघ
५. M. W. ततः कश्चिन्
६. M. W. आक्रन्दमानां संश्रुत्य
७. M. W. तु
८. M. W. भाविनि

दमयन्ती इधर उधर घूमती हुयी सहसा एक अजगर के समीप आ गयी जहाँ भूखे एवं विशालकाय अजगर ने उसे पकड़ लिया ॥२०॥

अजगर के वश में पड़ी हुयी और शोक से व्याकुल होती हुयी भी वह अपने लिए इतनी दुःखी नहीं थी जितनी नल के लिए ॥२१॥

'हाय नाथ ! मैं तो अनाथ की भाँति इस विजन वन में अजगर के द्वारा पकड़ ली गयी हूँ। आप दौड़ क्यों नहीं रहे हैं ॥२२॥

अये राजन् ! तब आप पर क्या बीतेगी जब आप शाप मुक्त हो जायेंगे, अपनी बुद्धि, चेतनता और सम्पत्ति को पुनः प्राप्त कर लेंगे और जब आप को मेरा स्मरण हो आयेगा ॥२३॥

अये पुरुषसिंह ! अये महाराज ! जब आप थके हुये, भूख से पीड़ित और खिन्न होंगे उस समय आप की थकावट कौन दूर करेगा ?' ॥२४॥

तत्पचात् उस सघन वन में विचरण करते हुये किसी बहेलिये ने दमयन्ती को रोती हुयी सुना। उसे सुनते ही वह बड़े वेग से उसके समीप जा पहुँचा ॥२५॥

व्याध ने देखा कि बड़े बड़े नेत्रों वाली दमयन्ती को सर्प ने ग्रसित कर रखा है। उसे देखते ही वह झपट कर उसके समीप पहुँच गया ॥२६॥

व्याध ने निश्चेष्ट सर्प का वध करके तीक्ष्ण वाणों से उसका मुख भर दिया ॥२७॥

व्याध ने दमयन्ती को छुड़ाकर उसे जल से स्नान करवाया। तत्पचात् उसे भोजन कराकर सान्त्वना दिलाते हुये उससे कहा--॥२८॥

'अयि मृगनयने ! अयि सुन्दरि ! तुम किसकी स्त्री हो, यहाँ इस वन में कैसे आ गयी हो और तुम इस महान् कष्ट में कैसे आ पड़ी हो ?' ॥२९॥

इस प्रकार व्याध के द्वारा पूँछने पर दमयन्ती ने अपना सारा वृत्तान्त उससे कह सुनाया ॥३०॥

दमयन्ती को देखकर व्याध कामातुर हो उठा। उस समय दमयन्ती का शरीर आधे वस्त्र से ढका हुआ था ॥३१॥

अरालपक्ष्मनयनां तथा मधुरभाषिणीम्।
लक्षयित्वा मृगव्याधः कामस्य वशमेयिवान् ॥३२॥
तामथ[1] श्लक्ष्णया वाचा लुब्धको मृदुपूर्वया।
सान्त्वयामास कामार्तस्तदबुध्यत **भामिनी**[2] ॥३३॥
दमयन्ती तु[3] तं दुष्टमुपलभ्य पतिव्रता।
तीव्ररोषसमाविष्टा प्रजज्वालेव मन्युना ॥३४॥
स तु पापमतिः क्षुद्रः प्रधर्षयितुमातुरः।
दुर्धर्षां तर्कयामास दीप्तामग्निशिखामिव ॥३५॥
दमयन्ती तु दुःखार्ता पतिराज्यविनाकृता।
अतीतवाक्पथे काले शशापैनं **रुषा किल**[4] ॥३६॥
यथाहं नैषधादन्यं मनसापि न चिन्तये।
तथायं पततां क्षुद्रः परासुर्मृगजीवनः ॥३७॥
उक्तमात्रे तु वचने तया स मृगजीवनः।
व्यसुः पपात मेदिन्यामग्निदग्ध इव द्रुमः ॥३८॥

॥ इति नलोपाख्याने एकादशः सर्गः ॥११॥

---

१. M. W. एवम्
२. M. W. भाविनी
३. M. W. दमयन्त्यपि
४. M. W. रुषान्विता

उसके स्तन और नितम्ब स्थूल थे, वह सुकुमार और अनिन्द्य सुन्दरी थी, उसका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान था, उसके नेत्र लम्बी लम्बी पलकों से युक्त थे और वह सुमधुरभाषिणी थी ॥३२॥

कामातुर व्याध मीठी-मीठी वाणी से दमयन्ती को सान्त्वना देने लगा। इससे वह उसकी पापवृत्ति को ताड़ गयी ॥३३॥

(यह देखकर) पतिव्रता दमयन्ती प्रचण्ड क्रोधावेश से अग्नि के समान भड़क उठी। वह दुष्ट व्याध को बुरा भला कहने लगी ॥३४॥

वह पापी, क्षुद्र एवं कामातुर व्याध दुर्धर्ष दमयन्ती को वश में करने के लिए देख रहा था। उस समय दमयन्ती उसे (क्रोध से) जलती हुयी अग्नि ज्वाला के समान प्रतीत हो रही थी ॥३५॥

पति और राज्य से वियुक्त होने के कारण दमयन्ती अत्यन्त दुःखित थी। जब दमयन्ती ने देखा कि बातचीत का समय नहीं रह गया है तब उसने अत्यन्त क्रुद्ध होकर व्याध को शाप दे दिया ॥३६॥

(उसने कहा) 'यदि मैं अपने मन में भी नल के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति का चिन्तन न करती हूँ, तो यह व्याध यहीं पर मर कर गिर जाय' ॥३७॥

दमयन्ती के ऐसा कहते ही व्याध अग्नि से जले हुये वृक्ष की भांति निर्जीव होकर भूमि पर गिर पड़ा ॥३८॥

॥ नलोपाख्यान का ग्यारहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

द्वादशः सर्गः

बृहदश्व उवाच

सा निहत्य मृगव्याधं प्रतस्थे कमलेक्षणा।
वनं प्रतिभयं शून्यं झिल्लिकागणनादितम् ॥१॥
सिंहव्याघ्रवराहर्क्षरुरुद्वीपिनिषेवितम्[1]
नानापक्षिगणाकीर्णं म्लेच्छतस्करसेवितम् ॥२॥
शालवेणुधवाश्वत्थतिन्दुकेङ्गुदकिंशुकैः ।
अर्जुनारिष्टसंछन्नं चन्दनैश्च सशाल्मलैः ॥३॥
जम्ब्वाम्रलोध्रखदिरशाकवेत्रसमाकुलम् ।
काश्मर्याम[2]लकप्लक्षकदम्बोदुम्बरावृतम् ॥४॥
बदरीविल्वसंछन्नं न्यग्रोधैश्च समाकुलम्।
प्रियालतालखर्जूरहरीतकविभीतकैः ॥५॥
नानाधातुशतैर्नद्धान्विविधानपि चाचलान्।
निकुंजान्पक्षि[3]संघुष्टान्दरीश्चाद्भुतदर्शनाः ।
नदी सरांसि वापीश्च विविधाश्च मृगद्विजान् ॥६॥
सा बहून्भीमरूपांश्च पिशाचोरगराक्षसान्।
पल्वलानि तड़ागानि गिरिकूटानि सर्वशः।
सरितः सागरांश्चैव[4] ददर्शाद्भुतदर्शनान् ॥७॥

---

१. M. W. सिंहद्वीपिरूरूव्याघ्रमहिषर्क्षगणैर्युतम्।
२. M. W. पद्मका
३. M. W. परि
४. M. W. सरितो निर्झरांश्चैव

नलोपाख्यान

सर्ग १२

बृहदश्व

व्याध के मर जाने पर कमलनयनी दमयन्ती ने उस वन की ओर प्रस्थान किया, जो अत्यन्त भयानक, निर्जन और झिल्ली आदि (जन्तुओं) के शब्दों से गुञ्जरित हो रहा था ॥१॥

वह वन सिंहों, गेंडों, रुरु नामक मृगों, व्याघ्रों, भैंसों और रीछों से भरा हुआ था। उसमें नाना प्रकार के पक्षी, म्लेच्छ और चोर भी थे ॥२॥

वह वन शाल, बांस, धव, पीपल, तिन्दुक, इंगुद, किंशुक, अर्जुन, चन्दन और शाल्मली के वृक्षों से ढका हुआ था ॥३॥

वह चारों ओर से जामुन, आम, लोध्र, खदिर, साल, वेत्र, पद्मकाष्ठ, आँवला, प्लक्ष, कदम्ब और गूलर के वृक्षों से घिरा हुआ था ॥४॥

वह बेर, बेल, वरगद, प्रियाल, ताड़, खजूर, हरीतक और विभीतक वृक्षों से भी भरा हुआ था ॥५॥

वहाँ पर दमयन्ती ने बहुत से पर्वतों को देखा जो कि नाना प्रकार की धातुओं से युक्त थे। उसने दूर दूर तक फैले हुये निकुञ्जों को देखा, बड़ी बड़ी अनोखी गुफाओं को देखा। यही नहीं, उसने अपने चारों ओर देखा नदियों को, तालाबों को, बावलियों को, विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षियों को, भीमकाय पिशाचों, सर्पों और राक्षसों को, छोटे-बड़े तालाबों को, पर्वतशृंगों को, नदियों को और अद्भुत निर्झरों को ॥६-७॥

यूथशो ददृशे चात्र विदर्भाधिपनन्दिनी।
महिषान्वराहान्गोमायूनृक्षवानरपन्नगान्[1] ॥८॥
तेजसा यशसा **स्थित्या श्रिया**[2] च परया युता।
वैदर्भी विचरत्येका नलमन्वेषती तदा। ९॥
नाविभ्यत्सा नृपसुता भैमी तत्राथ कस्यचित्।
दारुणामटवीं प्राप्य भर्तृव्यसन**कर्शिता**[3] ॥१०॥
विदर्भतनया राजन्विललाप सुदुःखिता।
भर्तृशोकपरीताङ्गी शिलातल**समाश्रिता**[4] ॥११॥

दमयन्त्युवाच

सिंहोरस्क[5] महाबाहो **निषधानां**[6] जनाधिप।
क्व नु राजन्गतोऽसीह त्यक्त्वा मां **निर्जने**[7] वने ॥१२॥
अश्वमेधादिभिर्वीर क्रतुभिः **स्वाप्तदक्षिणैः**।
कथमिष्ट्वा नरव्याघ्र मयि मिथ्या प्रवर्तसे ॥१३॥
यत्त्वयोक्तं नर**व्याघ्र**[8] मत्समक्षं महाद्युते।
कर्तुमर्हसि कल्याण **तदृतं**[10] पार्थिवर्षभ ॥१४॥
यथोक्तं विहगैर्हंसैः समीपे तव भूमिप।
मत्सकाशे च तैरुक्तं[11] तदवेक्षितुमर्हसि ॥१५॥
चत्वार एकतो वेदाः साङ्गोपाङ्गा सविस्तराः।
स्वधीता **मानवश्रेष्ठ**[12] सत्यमेकं किलैकतः ॥१६॥
तस्मादर्हसि शत्रुघ्न सत्यं कर्तुं नरेश्वर।
उक्तवानसि यद्वीर मत्सकाशे पुरा वचः। १७॥

---

१. M. W. **महिषांश्च वराहांश्च ऋक्षांश्च वनपन्नगान्**
२. M. W. **लक्ष्म्या स्थित्या**
३. M. W. **पीडिता**
४. M. W. **मथा**
५. M. W. **व्यूढोरस्क**
६. M. W. **नैषधानाम्**
७. M. W. **विजने**
८. M. W. **भूरि**
९. M. W. **श्रेष्ठ**
१०. M. W. **वचनम्**
११. M. W. **मत्समक्षं यदुक्तञ्च**
१२. M. W. **मनुजव्याघ्र**

विदर्भराजनन्दिनी ने वहाँ पर भैंसों, सुअरों, रीछों और वन्य सर्पों के झुण्ड के झुण्ड को भी देखा ॥८॥

(ऐसे में भी) एकाकिनी दमयन्ती नल को खोजती हुई विचरण कर रही थी क्योंकि उसके साथ था तेज, यश, ऐश्वर्य और दृढ़ निश्चय ॥९॥

अपने स्वामी के दुःख से दुःखित दमयन्ती घनघोर वन में भी किसी से भयभीत नहीं हो रही थी ॥१०॥

(इस प्रकार विचरण करती हुयी) अपने पति के शोक से कृश दमयन्ती दुःखित होकर एक चट्टान पर बैठकर विलाप करने लगी ॥११॥

दमयंती

अये निषधाधिपति ! विशाल वक्षस्थल से युक्त महावीर !! महाराज !!! आप मुझे इस निर्जन वन में छोड़ कर कहाँ चले गये हैं ॥१२॥

अये वीर ! बहुत सी दक्षिणा से युक्त अश्वमेधादि यज्ञों का अनुष्ठान करके भी आप मुझसे यह असत्य व्यवहार कैसे कर रहे हैं ॥१३॥

अये नरपुंगव ! तेजोमय ! कल्याणकारिन् ! नृपतिशिरोमणे ! आपने मेरे सामने कुछ कहा था। उसे अब सत्य कर दीजिये ॥१४॥

अये महाराज ! जिन बातों को हंस आदि पक्षियों ने आपके सामने कहा था और जिन बातों को आपने मेरे सामने कहा था, उन्हें भी तो याद कर लीजिये ॥१५॥

आपने तो चारों वेदों का सांगोपांग सविस्तार अध्ययन कर रखा है। सत्य उन सबसे श्रेष्ठ है ॥१६॥

इसलिये अये राजन् ! आपने पहले मुझसे जिन बातों को कहा था, उन्हें सत्य कर दीजिये ॥१७॥

हा वीर ननु नामाहमिष्टा किल तवानघ।
अस्यामटव्यां घोरायां किं मां न प्रतिभाषसे ॥१८॥
भर्त्सयत्येष[1] मां रौद्रो व्यात्तास्यो दारुणाकृतिः।
अरण्यराट् क्षुधाविष्टः किं मां न त्रातुमर्हसि ॥१९॥
न मे त्वदन्या **सुभगे प्रिया इत्यब्रवीस्तदा**[2]।
तामृतां कुरु कल्याण पुरोक्तां भारतीं नृप ॥२०॥
उन्मत्तां विलपन्तीं मां भार्यामिष्टां नराधिप।
ईप्सितामीप्सितो नाथ किं मां न प्रतिभाषसे ॥२१॥
कृशां दीनां विवर्णां च मलिनां वसुधाधिप।
वस्त्रार्धप्रावृतामेकां विलपन्तीमनाथवत् ॥२२॥
यूथभ्रष्टामिवैकां मां हरिणीं पृथुलोचन।
न मानयसि **मानार्हे**[3] रुदतीमरिकर्मणा ॥२३॥
महाराज महारण्ये **मामिहैकाकिनीं सतीम्**[4]।
आभाषमाणां स्वां पत्नीं[5] किं मां न प्रतिभाषसे ॥२४॥
कुलशीलोपसं**पन्नं**[6] चारुसर्वाङ्ग**शोभनम्**[7]।
नाद्य **त्वामनुपश्यामि**[8] गिरावस्मिन्नरोत्तम ॥२५॥
वने चास्मिन्महाघोरे सिंहव्याघ्रनिषेविते।
शयानमुपविष्टं वा स्थितं वा निषधाधिप।
प्रस्थितं वा नरश्रेष्ठ मम शोकविवर्धन ॥२६॥
कं नु पृच्छामि दुःखार्ता त्वदर्थे शोककर्षिता ॥
कच्चिद्दृष्टस्त्वयारण्ये संगत्येह नलो नृपः ॥२७॥
को नु मे **कथयेदद्य**[9] वनेऽस्मि**न्विष्ठितं**[10] नलम्।
अभिरूपं महात्मानं परव्यूहविनाशनम् ॥२८॥

---

१. M. W. भक्षयत्येष
२. M. W. काचिद्धि प्रियाऽस्तीत्यब्रवीः सदा
३. M. W. मामार्य
४. M. W. अहमेकाकिनी सती
५. M. W. दमयन्त्यभिभाषे त्वां
६. M. W. सम्पन्न
७. M. W. शोभन
८. M. W. त्वां प्रतिपश्यामि
९. M. W. वाऽथ प्रष्टव्यो
१०. M. W. प्रस्थितम्

अये वीर ! अये निष्पाप ! ! क्या मैं आपकी प्यारी नहीं हूँ कि आप इस घोर वन में मेरी बातों का उत्तर नहीं दे रहे हैं ॥१८॥

यह भीमकाय, भूखा वनराज मुझे खाने को मुँह फैला रहा है। क्या आप मेरी रक्षा करने में समर्थ नहीं हैं ॥१९॥

अये महाराज ! आप तो कहा करते थे कि "मेरे लिए तुमसे अधिक प्रिय वस्तु कोई है ही नहीं।" अये कल्याणकारिन् ! आप पहले कही हुयी अपनी इस बात को सत्य कर दीजिए ॥२०॥

अये नाथ ! मैं आपकी प्यारी हूँ और आप मेरे प्रिय हैं, फिर भी आप पगली की भाँति बिलखती हुयी अपनी स्त्री की बातों का उत्तर क्यों नहीं दे रहे हैं ? २१॥

अये राजन् ! इस समय (आपकी प्यारी स्त्री) कृशकाय, दीन, पीली और मलिन है। वह आधे वस्त्र को पहने हुये अनाथ की भाँति विलाप कर रही है ॥२२॥

अये विशाल नेत्रों वाले मानिन् ! आप शत्रुओं का संहार करने वाले हैं। आप मेरी ओर ध्यान ही नहीं दे रहे हैं। मैं तो यूथ से भटकी हुयी हरिणी की भाँति अकेले ही इधर उधर रोती हुई भटक रही हूँ ॥२३॥

अये महाराज ! इस विशाल वन में मैं अकेले ही आपको पुकार रही हूँ, किन्तु आप हैं कि कोई उत्तर ही नहीं दे रहे हैं ॥२४॥

अये नरश्रेष्ठ ! इस पर्वत पर कहीं भी मैं आपको देख ही नहीं रही हूँ। आप कुलीन हैं, शीलवान् हैं और हैं सर्वांग सुन्दर ॥२५॥

अये निषधाधिपते ! सिंह, व्याघ्र आदि से भरे हुये इस घोर वन में मैं आपको न सोता हुआ, न बैठा हुआ और न खड़ा हुआ ही देख रही हूँ ॥२६॥

मैं तो आपके लिए ही अत्यन्त दुःखी और शोक से दुबली हो रही हूँ। मैं पूछूँ भी तो किससे पूछूँ कि क्या आपको संयोगवश महाराज नल दिखाई पड़े हैं ॥२७॥

आज मुझे इस वन में प्रविष्ठ, रूपवान्, शत्रुसमूह को नष्ट करनेवाले महाराज के विषय में कौन बतलायेगा ॥२८॥

यमन्वेषसि राजानं नलं पद्मनिभेक्षणम् ।
अयं स इति कस्याद्य श्रोष्यामि मधुरां गिरम् ॥२९॥
अरण्यराडयं श्रीमांश्चतुर्दंष्ट्रो महाहनुः ।
शार्दूलोऽभिमुखः **प्रति**[1] **पृच्छा**[2]**म्येनमशङ्किता** ॥३०॥
भवान्मृगाणामधिपस्त्वमस्मिन्कानने प्रभुः ।
विदर्भराजतनयां दमयन्तीति विद्धि माम् ॥३१॥
निषधाधिपतेर्भार्या नलस्यामित्रघातिनः ।
पतिमन्वेषतीमेकां कृपणां शोककर्षिताम् ॥
आश्वासय मृगेन्द्रेह यदि दृष्टस्त्वया नलः ॥३२॥
अथवारण्यनृपते नलं यदि न शंससि ।
मामदस्व मृगश्रेष्ठ विशोकां कुरु दुःखिताम्[3] ॥३३॥
श्रुत्वारण्ये विलपितं ममैष मृगराट् स्वयम् ।
यात्येतां मृष्टसलिलामापगां सागरंगमाम् ॥३४॥
इमं शिलोच्चयं पुण्यं शृङ्गैर्बहुभिरुच्छ्रितैः ।
विराजद्भिर्दिवस्पृग्भिर्नैकवर्ण**मनोरमैः**[4] ॥३५॥
नानाधातुसमाकीर्णं विविधोपलभूषितम् ।
अस्यारण्यस्य महतः केतुभूतमि**वोच्छ्रितम्**[5] ॥३६॥
सिंहशार्दूलमातङ्गवराहर्क्षमृगायुतम् ।
पतत्रिभिर्बहुविधैः समन्तादनुनादितम् ॥३७॥
किंशुकाशोकबकुलपुंनागैरुपशोभितम्
सरिद्भिः सविहंगाभिः शिखरैश्चो**पशोभितम्**[6] ।
गिरिराजमिमं तावत्पृच्छामि नृपतिं प्रति ॥३८॥
भगवन्नचलश्रेष्ठ दिव्यदर्शन विश्रुत ।
शरण्य बहुकल्याण नमस्तेऽस्तु महीधर ॥३९॥

---

१. M. W. ऽभ्येति २. M. W. व्रजाम्ये
३. M. W. मां खादय मृगश्रेष्ठ दुःखादस्माद् विमोचय
४. M. W. मनोहरैः
५. M. W. वोत्थितम् ६. M. W. समाकुलम्

आज मुझे किसका वह मधुर शब्द सुनाई पड़ेगा कि "तुम कमल के समान नेत्रों वाले जिन महाराज नल को खोज रही हो, वह यह हैं" ॥२९॥

अरे ! मेरे सामने तो यह वनराज सिंह चला आ रहा है। इसके चार दाँत और बड़े बड़े जबड़े हैं। मैं निःशंक होकर इससे पूछती हूँ ॥३०॥

अये मृगराज ! आप इस वन में पशुओं के राजा हैं, आप सर्वसमर्थ हैं। मैं हूँ विदर्भराज की पुत्री दमयन्ती ॥३१॥

मैं शत्रुओं के संहारक निषधाधिपति की स्त्री हूँ। मैं यहाँ पर शोक से दुबली होती हुयी एकाकिनी अपने पति की खोज कर रही हूँ। यदि आपने कहीं नल को देखा हो तो आप मुझे सान्त्वना दीजिए ॥३२॥

अथवा, अये वनराज ! यदि आप नल के विषय में मुझसे कुछ नहीं बतला सकते हैं तो आप मुझे खाकर इस दुःख से ही मुझे छुटकारा दिला दीजिये ॥३३॥

अरे ! स्वयं यह मृगराज भी वन में मेरे विलाप को सुनकर (अपने पति) सागर की ओर जाने वाली स्वच्छ जल से युक्त नदी की ओर चल पड़ा है ॥३४॥

अच्छा तो तब तक मैं इस पर्वतराज से ही पूछती हूँ। यह बड़ी बड़ी शिलाओं से भरा हुआ है। यह तो बहुत सी ऊँची ऊँची गगनचुम्बिनी, रंगबिरंगी और सुन्दर सुन्दर चोटियों से और भी शोभायमान होने लगा है। इस पर नाना प्रकार की धातुयें और विविध प्रकार की मणियाँ हैं। यह पर्वत तो ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे कि इस वन की पताका हो। इसमें बहुत से सिंह, शार्दूल, हाथी, सुअर, रीछ और हरिण भरे पड़े हैं, और यह चारों ओर विविध प्रकार के पक्षियों की ध्वनि से प्रतिध्वनित हो रहा है। यह पर्वत किंशुक, अशोक, मौलश्री, पुन्नाग, कनेर, धव और प्लक्ष आदि उत्तमोत्तम पुष्पों से सुशोभित हो रहा है। इसमें बहुत-सी चोटियाँ और बहुत सी नदियाँ हैं जिन पर नाना प्रकार के पक्षी मँडरा रहे हैं ॥३५-३८॥

अये भगवन् ! पर्वतश्रेष्ठ ! सुन्दर ! विश्वविख्यात ! शरण देने वाले ! कल्याण-कारिन् ! भूधर ! आप को नमस्कार है ॥३९॥

प्रणमे त्वाभिगम्याहं राजपुत्रीं निबोध माम्।
राज्ञः स्नुषां राजभार्यां दमयन्तीति विश्रुताम् ॥४०॥

राजा विदर्भाधिपतिः पिता मम महारथः।
भीमो नाम क्षितिपतिश्चातुर्वर्ण्यस्य रक्षिता ॥४१॥

राजसूयाश्वमेधानां क्रतूनां दक्षिणावताम्।
आहर्ता पार्थिवश्रेष्ठः पृथुचार्वञ्चितेक्षणः ॥४२॥

ब्रह्मण्यः साधुवृत्तश्च सत्यवागनसूयकः।
शीलवान्सुसमाचारः पृथुश्रीर्धर्मविच्छुचिः ॥४३॥

सम्यग्गोप्ता विदर्भाणां निर्जितारिगणः प्रभुः।
तस्य मां विद्धि तनयां भगवंस्त्वामुपस्थिताम् ॥४४॥

निषधेषु **महाशैलश्वशुरो**[1] मे **नृपोत्तमः**[2]।
सुगृहीतनामा[3] विख्यातो वीरसेन इति स्म ह ॥४५॥

तस्य राज्ञः सुतो वीरः श्रीमान्सत्यपराक्रमः।
क्रमप्राप्तं पितुः स्वं यो राज्यं समनुशास्ति ह ॥४६॥

नलो **नामारिदमनः**[4] पुण्यश्लोक इति श्रुतः।
ब्रह्मण्यो वेदविद्वाग्मी पुण्यकृत्सोमपोऽग्नि**चित्**[5] ॥४७॥

यष्टा दाता च योद्धा च सम्यक्चैव प्रशासिता।
तस्य मामचलश्रेष्ठ विद्धि भार्यामिहागताम् ॥४८॥

त्यक्तश्रियं भर्तृहीनामनाथां व्यसनान्विताम्।
अन्वेषमाणां भर्तारं तं वै नरवरोत्तमम् ॥४९॥

समुल्लिखद्भिरेतैर्हि त्वया श्रृङ्गशतैर्नृपः।
कच्चिद्दृष्टोऽचलश्रेष्ठ वनेऽस्मिन्दारुणे नलः ॥५०॥

---

१. M. W. महाराजः
२. M. W. नरोत्तमः
३. M. W. गृहीतनामा
४. M. W. नामारिहा श्यामः
५. M. W. मान्

मैं आपके निकट आकर प्रणाम कर रही हूँ। मेरा परिचय यह है कि मैं राजपुत्री, राजभगिनी और राजरानी हूँ। मैं हूँ लोक प्रसिद्ध दमयन्ती ॥४०॥

मेरे पिता हैं महान् पराक्रमी विदर्भाधिपति भीम। वह चारों वर्णों की रक्षा करने वाले हैं ॥४१॥

राजाओं में श्रेष्ठ महाराज भीम बहुत सी दक्षिणा वाले राजसूय और अश्वमेध यज्ञों को किया करते हैं। वह स्वस्थ और दीर्घ नेत्रों वाले हैं ॥४२॥

महाराज भीम ब्राह्मण-प्रिय, साधुवृत्ति वाले, सत्यवादी, ईर्ष्यारहित, शीलवान्, वीर, ऐश्वर्यवान्, धर्मज्ञ और पवित्रात्मा हैं ॥४३॥

अये भगवन्! आपके सम्मुख उन्हीं विदर्भराज भीम की पुत्री दमयन्ती खड़ी हुयी है जो सब प्रकार से विदर्भवासियों की रक्षा करने वाले हैं और हैं अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले भी ॥४४॥

मेरे श्वसुर स्वनामधन्य वीरसेन जी हैं, जो निषध देश के राजा हैं, प्रसिद्ध हैं और पुरुषों में सर्वश्रेष्ठ हैं ॥४५॥

उन महाराज वीरसेन के ही वह पुत्र हैं, जो वीर, ऐश्वर्यवान् और सत्यवादी हैं। वह परम्परा से प्राप्त अपने पिता के राज्य पर शासन कर रहे हैं ॥४६॥

उनका नाम है नल। वह शत्रुओं का संहार करने वाले और पुण्यश्लोक हैं। वह ब्राह्मणप्रिय, वेदज्ञ, वाक्चतुर, पुण्यात्मा, सोमपान करनेवाले और अग्नि की उपासना करनेवाले हैं ॥४७॥

अये पर्वतश्रेष्ठ! यह मैं आपके सामने उन (नल) की स्त्री आयी हुयी हूँ जो यज्ञ करनेवाले, दानी, योद्धा और सम्यक् रूप से (प्रजा पर) शासन करनेवाले हैं ॥४८॥

मैं अपने पति से वियुक्त, अनाथ और दुःखी होकर अपने पति की खोज कर रही हूँ जो सम्पत्तिहीन होते हुए भी पुरुषों में सर्वश्रेष्ठ हैं ॥४९॥

अये पर्वतश्रेष्ठ! आप अपने इन सैकड़ों शिखरों से आकाश का स्पर्श किया करते हैं। तो क्या आपने इस घोर वन में कहीं नल को देखा है? ५०॥

गजेन्द्रविक्रमो धीमान्दीर्घबाहुरमर्षणः ।
विक्रान्तः सत्यवाग्धीरो[1] भर्ता मम महायशाः ।
निषधानामधिपतिः कच्चिद्दृष्टस्त्वया नलः ॥५१॥
किं मां विलपतीमेकां[2] पर्वतश्रेष्ठ दुःखिताम्[3] ।
गिरा नाश्वासयस्यद्य स्वां सुतामिव दुःखिताम् ॥५२॥
वीर विक्रान्त मर्मज्ञ सत्यसंध महीपते ।
यद्यस्यस्मिन्वने राजन्दर्शयात्मानमात्मना ॥५३॥
कदा नु स्निग्ध[4]गम्भीरां जीमूतस्वनसंनिभाम् ।
श्रोष्यामि नैषधस्याहं वाचं ताममृतोपमाम् ॥५४॥
वैदर्भीत्येव कथितां[5] शुभां राज्ञो महात्मनः ।
आम्नायसारिणीमृद्धां मम शोकनिबर्हिणीम्[6] ॥५५॥
इति सा तं गिरिश्रेष्ठमुक्त्वा पार्थिवनन्दिनी ।
दमयन्ती ततो भूयो जगाम दिशमुत्तराम् ॥५६॥
सा गत्वा त्रीनहोरात्रान्ददर्श परमाङ्गना ।
तापसारण्यमतुलं दिव्यकाननदर्शनम् ॥५७॥
वसिष्ठभृग्वत्रिसमैस्तापसैरुपशोभितम् ।
नियतैः संयताहारैर्दमशौचसमन्वितैः ॥५८॥
अब्भक्षैर्वायुभक्षैश्च पत्राहारैस्[7]तथैव च ।
जितेन्द्रियैर्महाभागैः स्वर्गमार्गदिदृक्षुभिः ॥५९॥
वल्कलाजिनसंवीतैर्मुनिभिः संयतेन्द्रियैः ।
तापसाभ्युषितं रम्यं ददर्शाश्रममण्डलम् ॥६०॥
सा दृष्ट्वैवाश्रमपदं नानामृगनिषेवितम् ।
शाखामृगगणैश्चैव तापसैश्च समन्वितम्[8] ॥६१॥

---

१. M. W. वीरो
२. M. W. विलपन्ती
३. M. W. विह्वलाम्
४. M. W. सुस्निग्ध
५. M. W. विस्पष्टां
६. M. W. विनाशिनीम
७. M. W. पर्णाहारैस्
८. M. W. नानामृगगणैर्जुष्टं शाखामृगगणायुतम् ।
तापसैः समुपेतञ्च सा दृष्ट्वैव समाश्वसत् ॥

मेरे स्वामी गजराज के समान विक्रमी, बुद्धिमान्, बड़ी बड़ी भुजाओं वाले, (शत्रुओं को) सहन न करनेवाले, पराक्रमी, सत्यवादी और महान् यशस्वी हैं। क्या आप ने ऐसे निषधाधिपति नल को देखा है ॥५१॥

अये पर्वतश्रेष्ठ ! मैं तो अकेली ही व्याकुल होकर विलाप कर रही हूँ। आप मुझे अपनी ही पुत्री की भाँति आश्वासन क्यों नहीं दे रहे हैं ?॥५२॥

आप तो वीर, पराक्रमी, धर्मज्ञ और सत्यप्रतिज्ञ हैं। अये राजन् ! यदि आप इस वन में हैं तो अपना दर्शन दीजिये ॥५३॥

"विदर्भपुत्रि !" इस प्रकार कहते हुये मनस्वी महाराज नल की उस वाणी को मैं कब सुन सकूँगी जो स्नेह में पगी, घनगर्जन के समान गम्भीर, सुस्पष्ट, शुभ, वेद-वचनों के समान सत्य, मेरे शोक को दूर करनेवाली और अमृत के समान (मधुर) है ?'॥५४-५५॥

राजकुमारी (दमयन्ती) पर्वतश्रेष्ठ से इस प्रकार कह कर पुनः उत्तर दिशा की ओर चली गयी ॥५६॥

परम सुन्दरी दमयन्ती ने तीन दिन और तीन रातें चलकर एक तपोवन को देखा। नन्दनकानन के समान उस वन की कोई तुलना ही नहीं हो सकती थी ॥५७॥

वह तपोवन वशिष्ठ, भृगु और अत्रि के समान नियमों का पालन करने वाले, संयत भोजन करनेवाले, इन्द्रियों का दमन करनेवाले और पवित्र ऋषियों से और भी सुशोभित हो रहा था ॥५८॥

उस तपोवन में दमयन्ती ने एक रमणीक आश्रम को देखा। उसमे रहने वाले तपस्वी जल, वायु और पत्ते खाकर जीवित रहते थे। वे जितेन्द्रिय, महात्मा, स्वर्गमार्ग के दर्शनाभिलाषी, वल्कल और मृगचर्म को धारण करनेवाले और अपनी इन्द्रियों पर संयम रखनेवाले थे ॥५९-६०॥

दमयन्ती ने उस तपोवन को देखा जो विविध प्रकार के हरिणों, वानरों और बहुत-से तपस्वियों से भरा हुआ था ॥६१॥

सुभ्रूः सुकेशी सुश्रोणी सुकुचा सुद्विजानना।
वर्चस्विनी सुप्रतिष्ठा **स्वञ्चितोद्यतगामिनी**[1] ॥६२॥
सा विवेशाश्रमपदं वीरसेनसुतप्रिया।
योषिद्रत्नं महाभागा दमयन्ती **मनस्विनी**[2] ॥६२॥
साभिवाद्य तपोवृद्धान्विनयावनता स्थिता।
स्वागतं त इति प्रोक्ता तैः सर्वैस्तापसैश्च सा ॥६४॥
पूजां चास्या यथान्यायं कृत्वा तत्र तपोधनाः।
आस्यतामित्यथोचुस्ते ब्रूहि किं करवामहै ॥६५॥
तानुवाच वरारोहा कच्चिद्भगवतामिह।
तपस्यग्निषु धर्मेषु मृगपक्षिषु चानघाः।
कुशलं वो महाभागाः स्वधर्मचरणेषु च ॥६६॥
तैरुक्ता कुशलं भद्रे सर्वत्रैति **यशस्विनी**[3]।
ब्रूहि सर्वानवद्याङ्गि का त्वं किं च चिकीर्षसि ॥६७॥
दृष्ट्वैव ते परं रूपं द्युतिं च परमामिह।
विस्मयो नः समुत्पन्नः समाश्वसिहि मा शुचः ॥६८॥
अस्यारण्यस्य **महती देवता वा महीभृतः**[4]।
अस्या नु[5] **नद्या** कल्याणि वद सत्यमनिन्दिते ॥६९॥
साब्रवीत्तानृषीन्नाहमरण्यस्यास्य देवता।
न चाप्यस्य गिरेर्विप्रा **न नद्या देवताप्यहम्**[6] ॥७०॥
मानुषीं मां विजानीत यूयं सर्वे तपोधनाः।
विस्तरेणाभिधास्यामि तन्मे श्रृणुत सर्वशः ॥७१॥
विदर्भेषु महीपालो भीमो नाम **महाद्युतिः**[7]।
तस्य मां तनयां सर्वे जानीत द्विजसत्तमाः ॥७२॥

---

१. M W. **स्वसितायतलोचना** २. M. W. **तपस्विनी**
३. M. W. **यशस्विनि**
४. M. W. **देवी त्वमुताहोऽस्य महीभृतः**
५. M W. **अस्याश्च** ६. M. W. **नैव नद्याश्च देवता**
७. M. W. **महीपतिः**

वीरसेन के पुत्र की प्रिय दमयन्ती ने तपस्विनी की भाँति आश्रम में प्रवेश किया। उसकी भृकुटि, उसके केश, उसके नितम्ब, स्तन, दाँत और मुख बड़े सुन्दर थे। वह सुन्दर वाणी बोलने वाली, प्रतिष्ठित, सुन्दर, काले काले और दीर्घ नेत्रों से युक्त थी और थी स्त्रियों में सर्वश्रेष्ठ ॥६२-६३॥

(वहाँ पहुँच कर) वह दमयन्ती तपिस्वयों का अभिवादन करके विनयपूर्वक खड़ी हो गयी। सभी तपस्वियों ने 'आपका स्वागत है' कहकर उसका अभिनन्दन किया ॥६४॥

तपस्वियों ने विधिवत् उसका आदर-सत्कार किया और फिर उससे कहा—'बैठिए, कहिये हम आपके लिये क्या कर सकते हैं' ?॥६५॥

सुन्दरी दमयन्ती ने तपस्वियों से पूछा—'आप लोग अपने धार्मिक कृत्यों को करते हुये इन यज्ञाग्नियों और पशु पक्षियों के बीच निष्पाप होकर तपस्या तो कर रहे हैं ? आप लोग अपने धर्मकृत्यों को करते हुये कुशलपूर्वक तो हैं' ?॥६६॥

तपस्वियों ने उत्तर दिया—'अयि यशस्विनि ! अयि सुन्दरि ! सर्वत्र कुशल ही कुशल है। अयि सुन्दरि ! यह तो बतलाओ कि तुम कौन हो और क्या करना चाहती हो ?॥६७॥

तुम्हारे इस परम सौन्दर्य और तेज को देखकर हम लोगों को आश्चर्य हो रहा है। धैर्य धारण करो, शोक मत करो ॥६८॥

तुम या तो इस वन की अधिष्ठात्री देवता हो अथवा इस पर्वत की देवी। या तो तुम इस नदी की ही अधिष्ठात्री देवी हो। अयि अनिन्द्य सुन्दरि ! तुम सब कुछ सच सच बतलाओ' ॥६९॥

दमयन्ती ने उन तपस्वियों को उत्तर दिया—'अये विप्र ! न तो मैं इस वन की देवी हूँ, न इस पर्वत की और न इस नदी की ही ॥७०॥

आप सभी तपस्वी हैं, आप यह जान लें कि मैं एक स्त्री हूँ। मैं जो कुछ विस्तार-पूर्वक कह रही हूँ, उसे आप लोग सुनिये ॥७१॥

विदर्भ देश के एक राजा हैं। उनका नाम है भीम। अये ब्राह्मण श्रेष्ठ ! मैं उन्हीं की पुत्री हूँ ॥७२॥

निषधाधिपतिर्धीमान्नलो नाम महायशाः।
वीरः संग्रामजिद्विद्वान्मम भर्ता विशांपतिः ॥७३॥
देवताभ्यर्चनपरो द्विजातिजनवत्सलः।
गोप्ता निषधवंशस्य **महाभागो महाद्युतिः**[1] ॥७४॥
सत्यवाग्**धर्म**[2]वित्प्राज्ञः सत्यसंधोऽरिमर्दनः।
ब्रह्मण्यो दैवतपरः श्रीमान्परपुरंजयः ॥७५॥
नलो नाम नृपश्रेष्ठो देवराजसमद्युतिः।
मम भर्ता विशालाक्षः पूर्णेन्दुवदनोऽरिहा ॥७६॥
आहर्ता क्रतुमुख्यानां वेदवेदाङ्गपारगः।
सपत्नानां मृधे हन्ता रविसोमसमप्रभः ॥७७॥
स कैश्चिन्निकृतिप्रज्ञैर**कल्याणैर्नराधमैः**[3]।
आहूय पृथिवीपालः सत्यधर्मपरायणः।
देवने कुशलैर्जिह्मैर्जितो राज्यं वसूनि च ॥७८॥
तस्य मामवगच्छध्वं भार्या राजर्षभस्य वै।
दमयन्तीति विख्यातां भर्तृदर्शनलालसाम् ॥७९॥
सा वनानि गिरींश्चैव सरांसि सरितस्तथा।
पल्वलानि च **रम्याणि**[4] तथारण्यानि सर्वशः ॥८०॥
अन्वेषमाणा भर्तारं नलं रणविशारदम्।
महात्मानं कृतास्त्रं च विचरामीह दुःखिता ॥८१॥
कञ्चिद्भगवतां **पुण्यं**[5] तपोवनमिदं नृपः।
भवेत्प्राप्तो नलो नाम निषधानां जनाधिपः ॥८२॥
यत्कृतेऽहमिदं **विप्राः**[6] प्रपन्ना भृशदारुणम्।
वनं प्रतिभयं घोरं शार्दूलमृगसेवितम् ॥८३॥
यदि कैश्चिदहोरात्रैर्न द्रक्ष्यामि नलं नृपम्।
आत्मानं श्रेयसा योक्ष्ये देहस्यास्य विमोचनात् ॥८४॥

---

१. M. W. **महातेजा महाबलः**
२. M. W. **अस्त्र**
३. M. W. **नार्यैरकृतात्मभिः**
४. M. W. **सर्वाणि**
५. M. W. **रम्यम्**
६. M. W. **दुर्गम्**

मेरे पति हैं निषधाधिपति नल ! वह बड़े बुद्धिमान्, यशस्वी, वीर, संग्राम में विजय प्राप्त करने वाले, विद्वान्, प्रजापालक, देवताओं की उपासना करनेवाले और ब्राह्मणों से प्रेम करनेवाले हैं। वह (महाराज नल) निषधवंश के रक्षक, महान् तेजस्वी और बलवान् हैं ।।७३-७४।।

वह सत्यवादी, अस्त्रविद्या में निपुण, बुद्धिमान्, सत्यप्रतिज्ञ और शत्रुओं का विनाश करनेवाले हैं। वह ब्राह्मणप्रिय, देवोपासक, ऐश्वर्यवान् और शत्रुओं के नगरों पर विजय प्राप्त करनेवाले हैं ।।७५।।

उनका नाम है नल। वह राजाओं में श्रेष्ठ और तेज में इन्द्र के समान हैं। ऐसे हैं मेरे पति, जो अपने शत्रुओं का दमन करनेवाले हैं। उनके नेत्र बड़े-बड़े और उनका मुख पूर्ण चन्द्रमा की भाँति (दीप्तिमान्) है ।।७६।।

वह मुख्य-मुख्य यज्ञों के अनुष्ठाता और वेद-वेदांग के ज्ञाता हैं। वह सूर्य और चन्द्रमा के समान तेजस्वी हैं। युद्ध में तो वह अपने शत्रुओं के संहारक ही हैं ।।७७।।

वह सत्य और धर्म का आचरण करनेवाले और पृथ्वी की रक्षा करनेवाले हैं। इसलिये कुछ कलुषित बुद्धिवाले, अनार्य, दुष्ट एवं जुआरी लोगों ने उन्हें बुलाकर जुए में उनके राज्य एवं सम्पूर्ण वैभव को जीत लिया है ।।७८।।

आप लोग मुझे उन्हीं नृपतिश्रेष्ठ की स्त्री समझिये। मैं दमयन्ती के नाम से प्रसिद्ध हूँ। (इस समय) मुझे अपने पति को देखने की ही लालसा है ।।७९।।

मैं वही दमयन्ती हूँ जो अपने महामना, रणकुशल, अस्त्रविद्या में प्रवीण पतिदेव नल को खोजती हुयी वनों, पर्वतों, तालाबों, नदियों और पोखरों में सर्वत्र घूमती फिर रही हूँ ।।८०-८१।।

निषधाधिपति महाराज नल कहीं आपके इस पवित्र तपोवन में तो नहीं आये हैं ।।८२।।

जिन नल के लिए मैं इस घोर, भयावह, दुष्प्रवेश्य, सिंहादि पशुओं से भरे हुये वन में आ पड़ी हूँ यदि कुछ ही दिनों में मैं उन्हें देख नहीं लेती हूँ तो मैं अपने इस शरीर को छोड़कर अपना कल्याण कर लूँगी ।।८३-८४।।

को नु मे जीवितेनार्थस्तमृते पुरुषर्षभम् ।
कथं भविष्याम्यद्याहं भर्तृशोकाभिपीडिता ॥८५॥
एवं[1] विलपतीमेकामरण्ये भीमनन्दिनीम् ।
दमयन्तीमथोचुस्ते तापसाः सत्य**वादिनः**[2] ॥८६॥
उदर्कस्तव कल्याणि कल्याणो भविता शुभे ।
वयं पश्यामस्तपसा क्षिप्रं द्रक्ष्यसि नैषधम् ॥८७॥
निषधानामधिपतिं नलं रिपु**निघातिनम्**[3] ।
भैमि धर्मभृतां श्रेष्ठं द्रक्ष्यसे विगतज्वरम् ॥८८॥
विमुक्तं सर्वपापेभ्यः सर्वरत्नसमन्वितम् ।
तदेव नगरश्रेष्ठं प्रशासन्तमरिंदमम् ॥८९॥
द्विषतां भयकर्तारं सुहृदां शोकनाशनम् ।
पतिं द्रक्ष्यसि कल्याणि कल्याणभिजनं नृपम् ॥९०॥
एवमुक्त्वा नलस्येष्टां महिषीं पार्थिवात्मजाम् ।
अन्तर्हितास्तापसास्ते साग्निहोत्राश्रमास्तदा ॥९१॥
सा दृष्ट्वा महदाश्चर्यं विस्मिता अ[4]भवत्तदा ।
दमयन्त्यनवद्याङ्गी वीरसेननृपस्नुषा ॥९२॥
किं नु स्वप्नो मया दृष्टः कोऽयं विधिरिहाभवत् ।
क्व नु ते तापसाः सर्वे क्व तदाश्रममण्डलम् ॥९३॥
क्व सा पुण्यजला रम्या **नाना**[5] द्विजनिषेविता ।
नदी ते च नगा[6] हृद्याः फलपुष्पोपशोभिताः ॥९४॥
ध्यात्वा चिरं भीमसुता दमयन्ती शुचिस्मिता ।
भर्तृशोकपरा दीना विवर्णवदनाभवत् ॥९५॥
सा गत्वाथापरां भूमिं वाष्पसंदिग्धया गिरा ।
विललापाश्रुपूर्णाक्षी दृष्ट्वाशोकतरुं ततः ॥९६॥

---

१. M. W. **तथा**
२. M. W. **दर्शिनः**
३. M. W. **निपातिनम्**
४. M. W. **ह्य**
५. M. W. **नदी**
६. M. W. **क्व नु ते ह**

उन पुरुषश्रेष्ठ नल के विना मेरे जीवन से ही क्या लाभ ? आज मैं इस पति-शोक की पीड़ा को कैसे सहन कर सकती हूँ?'॥८५॥

वन में अकेली ही इस प्रकार विलाप करती हुई भीमनन्दिनी दमयन्ती से सत्यदर्शी तपस्वियों ने कहा ॥८६॥

'अयि कल्याणि ! अयि सुन्दरि ! कुछ ही समय में तुम्हारा कल्याण होने वाला है। हम लोग तो अपने तपोबल से नल को देख ही रहे हैं, तुम भी उन्हें शीघ्र ही देख लोगी ॥८७॥

अयि भीमपुत्रि ! तुम अभी अभी निषधराज नल को देख लोगी। शत्रुओं के संहारक, धर्मात्माओं में श्रेष्ठ महाराज नल (सभी प्रकार की) विपत्तियों से मुक्त हैं ॥८८॥

उन्हें सभी पापों से छुटकारा मिल गया है, वह सभी रत्नों से भरे पूरे हैं और अपने शत्रुओं का दमन करते हुये वह अपने उसी नगर पर शासन कर रहे हैं ॥८९॥

अयि सुन्दरि ! तुम अपने पति को देखोगी। वह महाराज शत्रुओं को भयभीत करनेवाले, मित्रों के शोक को नष्ट करनेवाले और कल्याण करने वाले हैं' ॥९०॥

राजपुत्री और नल की रानी (दमयन्ती)से ऐसा कहकर सभी तपस्वी अग्निहोत्र और आश्रम के सहित अन्तर्धान हो गये ॥९१॥

महाराज वीरसेन की पुत्रवधू सुन्दरी दमयन्ती उस आश्चर्य को देखकर विस्मय में पड़ गयी ॥९२॥

(वह सोचने लगी) 'क्या मैंने कोई स्वप्न देखा है ? यह क्या विधान है ? कहाँ हैं वे तपस्वी जन और कहाँ है वह आश्रम मण्डल ?॥९३॥

कहाँ है वह सुन्दर नदी जिसका जल बहुत पवित्र था और जिसके तट पर ब्राह्मण विचरण किया करते थे ? कहाँ हैं फलों और पुष्पों से सुन्दर दिखाई देने वाले वे पर्वत ?'॥९४॥

बहुत समय तक इस प्रकार ध्यान करते करते सुन्दर मुस्कान वाली भीमपुत्री दमयन्ती अत्यन्त दीन और शोकातुर हो उठी और उसका मुख पीला पड़ गया ॥९५॥

इस प्रकार विलाप करती हुई और अश्रुपूरित नेत्रों से युक्त दमयन्ती दूसरे स्थान को चली गयी। अश्रुओं से उसकी वाणी रुँधी हुयी थी। वहाँ पर जाकर उसने एक अशोक वृक्ष को देखा ॥९६॥

उपगम्य तरुश्रेष्ठमशोकं पुष्पितं **तदा**[1]।
पल्लवापीडितं हृद्यं विहंगैरनुनादितम् ॥९७॥
अहो वतायमगमः श्रीमानस्मिन्वनान्तरे।
आपीडैर्बहुभिर्भाति श्रीमान्**द्रमिड**राडिव ॥९८॥
विशोकां कुरु मां क्षिप्रमशोक प्रियदर्शन।
वीतशोकभयाबाधं कच्चित्त्वं दृष्टावान्नृपम् ॥९९॥
नलं नामारिदमनं दमयन्त्याः प्रियं पतिम्।
निषधानामधिपतिं दृष्टवानसि मे प्रियम् ॥१००॥
एकवस्त्रार्धसंवीतं सुकुमारतनुत्वचम्।
व्यसनेनार्दितं वीरमरण्यमिदमागतम् ॥१०१॥
यथा विशोका गच्छेयमशोकनग तत्कुरु।
सत्यनामा भवाशोक **मम शोकविनाशनात्**[2] ॥१०२॥
एवं साशोकवृक्षं तमार्ता **त्रिः**[3] परिगम्य ह।
जगाम दारुणतरं देशं भैमी वराङ्गना ॥१०३॥
सा ददर्श नगान्नैकान्नैकाश्च सरितस्तथा।
नैकांश्च पर्वतान्रम्यान्नैकांश्च मृगपक्षिणः ॥१०४॥
कन्दरांश्च नितम्बांश्च **नदाश्चाद्भुतदर्शनान्**[4]।
ददर्श सा भीमसुता पतिमन्वेषती तदा ॥१०५॥
गत्वा प्रकृष्टमध्वानं दमयन्ती शुचिस्मिता।
ददर्शाथ महासार्थं हस्त्यश्वरथसंकुलम् ॥१०६॥
उत्तरन्तं नदीं रम्यां प्रसन्नसलिलां शुभाम्।
सुशीततोयां विस्तीर्णां हृदिनां वेतसैर्वृताम् ॥१०७॥
प्रोद्घुष्टां क्रौञ्चकुररैश्चक्रवाकोपकूजिताम्।
कूर्मग्राहझषाकीर्णां पुलिनद्वीपशोभिताम् ॥१०८॥

---

१. M. W. **वने**
२. M. W. **अशोकः शोकनाशनः**
३. M. W. **वै**
४. M. W. **नदीश्चाद्भुतदर्शनाः**

दमयन्ती वन में अशोक वृक्ष के पास गयी। वह फूल-पत्तों से लदा हुआ था और पक्षियों के गुञ्जन से तो और भी शोभित हो रहा था ॥९७॥

'अरे, देखो तो इस वन में पर्वत राज के समान यह वृक्ष कैसा शोभित हो रहा है। बहुत सी (पत्तों की) मालाओं से इसकी सुन्दरता और भी बढ़ गयी है ॥९८॥

अये प्रियदर्शन अशोक ! आप मुझे शीघ्र ही शोकहीन कर दीजिये। आपने शोक और भय से रहित महाराज (नल) को तो देखा है ॥९९॥

अरे, क्या आपने निषधराज नल को देखा है ? वह अपने शत्रुओं को नष्ट करनेवाले और दमयन्ती के प्रिय पति हैं ॥१००॥

वह इसी वन में आये हुये हैं। उनका शरीर अत्यन्त सुकुमार है जो वस्त्रार्द्ध से ढका है। वह बड़े वीर हैं किन्तु (इस समय) दुःख से पीड़ित हैं ॥१०१॥

अये प्रिय अशोक ! कुछ ऐसा कीजिये जिससे मैं यहाँ से शोकरहित होकर जा सकूँ। अये अशोक ! आप मेरे शोक को नष्ट करके अपने नाम को सत्य कर दीजिये' ॥१०२॥

इस प्रकार अपने दुःख से दुःखी दमयन्ती ने अशोक वृक्ष की परिक्रमा की। तत्पश्चात् वह सुन्दरी एक ऐसे प्रदेश की ओर चल पड़ी जो इससे भी अधिक भयानक था ॥१०३॥

वहाँ पर उसने अनेक सुन्दर-सुन्दर पर्वतों, अनेक नदियों, अनेक हरिणों और अनेक पक्षियों को देखा ॥१०४॥

अपने पति को खोजती हुयी दमयन्ती ने कन्दराओं, पर्वतों की तलहटियों और विचित्र-विचित्र नदियों को देखा ॥१०५॥

सुन्दर मुस्कान वाली दमयन्ती ने मार्ग में बहुत दूर जाकर एक सैन्य-दल को देखा जिसमें हाथी, घोड़े और रथ थे ॥१०६॥

वह सैन्य दल एक नदी को पार कर रहा था जिसका जल बहुत स्वच्छ और शान्त था, जो बहुत दूर तक विस्तृत, सुन्दर, स्नानयोग्य और वेंत के वृक्षों से घिरी हुयी थी ॥१०७॥

वह नदी क्रौञ्च और कुरर पक्षियों के उद्घोष से मुखरित हो रही थी, वहाँ पर चक्रवाक पक्षी कूजन कर रहे थे, उसमें कछुए, मगर और मछलियाँ भरी हुयी थीं और वह सिकता तट से शोभित हो रही थी ॥१०८॥

सा दृष्ट्वैव महासार्थं नलपत्नी यशस्विनी।
उपसर्प्य वरारोहा जनमध्यं विवेश ह ॥१०९॥
उन्मत्तरूपा शोकार्ता तथा वस्त्रार्धसंवृता।
कृशा विवर्णा मलिना पांशुध्वस्तशिरोरुहा ॥११०॥
तां दृष्ट्वा तत्र मनुजाः केचिद्भीताः प्रदुद्रुवुः।
केचिच्चिन्तापरास्तस्थुः केचित्तत्र **विचुक्रुशुः**[1] ॥१११॥
प्रहसन्ति स्म तां केचिदभ्यसूयन्त चापरे।
चक्रुस्तस्यां[2] दयां केचित्पप्रच्छुश्चापि भारत ॥११२॥
कासि कस्यासि कल्याणि किं वा मृगयसे वने।
त्वां दृष्ट्वा व्यथिताः स्मेह कच्चित्त्वमसि मानुषी ॥११३॥
वद सत्यं वनस्यास्य पर्वतस्याथ वा दिशः।
देवता त्वं हि कल्याणि त्वां वयं शरणं गताः ॥११४॥
यक्षी वा राक्षसी वा त्वमुताहोऽसि **वराङ्गना**[3]।
सर्वथा कुरु नः स्वस्ति रक्ष**स्वा**[4]स्माननिन्दिते ॥११५॥
यथायं सर्वथा सार्थः क्षेमी शीघ्रमितो व्रजेत्।
तथा विधत्स्व कल्याणि **त्वां वयं शरणं गताः**[5] ॥११६॥
तथोक्ता तेन सार्थेन दमयन्ती नृपात्मजा।
प्रत्युवाच ततः साध्वी भर्तृव्यसन**दुःखिता**[6]।
सार्थवाहं च सार्थं च जना ये **चात्र**[7] केचन ॥११७॥
यूनः[8] स्थविरबालाश्च सार्थस्य च पुरोगमाः।
मानुषीं मां विजानीत मनुजाधिपतेः सुताम्।
नृपस्नुषां राजभार्यां भर्तृदर्शनलालसाम् ॥११८॥
विदर्भराण्मम पिता भर्ता राजा च नैषधः।
नलो नाम महाभागस्तं मार्गाम्यपराजितम् ॥११९॥

---

१. M. W. **प्रचुक्रुशुः**
२. M. W. **अकुर्वत**
३. M. W. **सुरांगना**
४. M. W. **च**
५. M. W. **यथा श्रेयो हि नो भवेत्**
६. M. W. **पीडिता**
७. M. W. **तत्र**
८. M. W. **युव**

यशस्विनी दमयन्ती ने बहुत बड़े सैन्य दल को देखा। उसे देखते ही वह उसके निकट जाकर जनसमूह में पैठ गयी ॥१०९॥

उसका रूप पागलों जैसा था, वह शोक से दुःखित थी और आधे वस्त्र से लिपटी हुयी थी। वह दुबली, पीली और मलिन थी। उसके केश धूलिधूसरित थे ॥११०॥

वहाँ पर इस प्रकार से दमयन्ती को देखकर कुछ लोग भयभीत होकर भाग खड़े हुये। कुछ लोग चिन्तातुर होकर वहीं खड़े के खड़े ही रह गये और कुछ लोग ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगे ॥१११॥

कुछ लोग दमयन्ती के ऊपर हँस रहे थे, कुछ उससे ईर्ष्या कर रहे थे, कुछ लोग उसके प्रति दया प्रदर्शित कर रहे थे और कुछ लोग उससे (कुशल क्षेम) पूछ रहे थे ॥११२॥

(वे लोग कह रहे थे) 'अयि सुन्दरि! तुम कौन हो, किसकी पत्नी हो और इस वन में किसकी खोज कर रही हो? तुम्हें देखकर हमलोग व्यथित हो रहे हैं। क्या तुम कोई स्त्री हो?॥११३॥

अयि सुन्दरि! सच सच बतलाओ क्या तुम इस वन की देवी हो, क्या तुम इस पर्वत की देवी हो अथवा इस दिशा की देवी हो? (यदि ऐसा है तो) हम लोग तुम्हारी शरणागत हैं ॥११४॥

अयि सुन्दरि! यदि तुम यक्षिणी, राक्षसी अथवा देवांगना हो तो हम लोगों का कल्याण करो, हम लोगों की रक्षा करो ॥११५॥

अयि सुन्दरि! ऐसा ही करना जिससे यह सारा सैन्यदल यहाँ से शीघ्र ही कुशल पूर्वक निकल जाये' ॥११६॥

सैन्यदल के ऐसा कहने पर अपने पति के दुःख से दुःखित साध्वी राजकुमारी दमयन्ती ने उत्तर दिया। उसने सैन्यदल, उसके सेनापति और उसके आगे आगे चलनेवाले जितने युवक, वृद्ध और बालक थे उन सबको उत्तर दिया ॥११७॥

'अये बाल, वृद्ध, युवक एवं सैन्यदल के आगे आगे चलनेवाले महानुभावजन! आप लोग मुझे एक स्त्री समझिये। मैं एक राजा की कन्या, दूसरे राजा की पुत्र-बधू और राजरानी हूँ। मैं अपने पति को देखने के लिए लालायित हो रही हूँ ॥११८॥

विदर्भराज (भीम) मेरे पिता हैं और निषधाधिपति मेरे पति हैं। उनका नाम नल है। वह महान् भाग्यशाली हैं और हैं सभी के द्वारा अजेय। मैं उन्हीं को खोज रही हूँ ॥११९॥

यदि **जानीत**[1] नृपतिं क्षिप्रं शंसत मे प्रियम् ।
नलं **पार्थिव**[2]शार्दूलममित्रगणसूदनम् ॥१२०॥
तामुवाचानवद्याङ्गीं सार्थस्य महतः प्रभुः ।
सार्थवाहः शुचिर्नाम शृणु कल्याणि मद्वचः ॥१२१॥
अहं सार्थस्य नेता वै सार्थवाहः शुचिस्मिते ।
मनुष्यं नलनामानं **च**[3] पश्यामि यशस्विनि ॥१२२॥
कुञ्जरद्वीपिमहिषशार्दूलर्क्षमृगानपि ।
पश्याम्यस्मिन्वने **कष्टे**[4] **अ**[5]मनुष्यनिषेविते[6] ।
तथा नो यक्षराडद्य मणिभद्रः प्रसीदतु ॥१२३॥
साब्रवीद्वणिजः सर्वान्सार्थवाहं च तं ततः ।
क्व नु यास्यति सार्थोऽयमेतदाख्यातुमर्हथ[7] ॥१२४॥

सार्थवाह उवाच

सार्थोऽयं चेदिराजस्य सुबाहोः सत्य**वादिनः**[8] ।
क्षिप्रं जनपदं गन्ता लाभाय मनुजात्मजे ॥१२५॥

॥ इति नलोपाख्याने द्वादशः सर्गः ॥१२॥

---

१. M. W. जानीथ
२. M. W. पुरुष
३. M. W. न
४. M. W. कृत्स्ने
५. M. W. ह्य
६. M. W. ऋते त्वां मानुषीं मर्त्यं न पश्यामि महावने
७. M. W. सि
८. M W. दर्शिनः

यदि आप लोग जानते हों तो शीघ्र ही मेरे प्रिय (पति) महाराज नल के विषय में मुझे बतला दीजिये। वह पुरुषों में सिंह के समान (पराक्रमी) और अपने शत्रुओं को नष्ट करनेवाले हैं' ॥१२०॥

(यह सुनकर) सैन्यदल का सेनापति, जिसका नाम शुचि था, सुन्दरी दमयन्ती से बोला—'अयि सुन्दरि! मेरी बात सुनो ॥१२१॥

अयि सुन्दर मुस्कानवाली दमयन्ति! मैं ही इस सैन्यदल का नेता हूँ। अयि यशस्विनि! मैंने तो नल नामक मनुष्य को देखा नहीं है ॥१२२॥

यह सम्पूर्ण वन तो ऐसा है जिसमें मनुष्यों का निवास ही नहीं है। इसमें तो मैं हाथियों, गेंडों, भैंसों, सिंहों, रीछों और हरिणों को ही देखता हूँ। आज यक्षराज मणिभद्र हम लोगों पर कृपा करें' ॥१२३॥

तत्पश्चात् दमयन्ती ने सभी व्यापारियों और सैन्य-दल के नायक से कहा, 'आप यह तो बतलाइये कि यह दल कहाँ जाएगा?॥१२४॥'

सार्थवाह

'अयि सुन्दरि! यह दल शीघ्र ही (धन) लाभ के लिए महान् पराक्रमी एवं सत्य-वादी चेदिराज के राज्य को जाएगा' ॥१२५॥

॥ नलोपाख्यान का बारहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

त्रयोदशः सर्गः

बृहदश्व उवाच

सा तच्छ्रुत्वानवद्याङ्गी सार्थवाहवचस्तदा।
अगच्छत्तेन वै सार्धं भर्तृदर्शनलालसा[1] ॥१॥
अथ काले बहुतिथे वने महति दारुणे।
तडागं सर्वतोभद्रं पद्मसौगन्धिकं महत् ॥२॥
ददृशुर्वणिजो रम्यं प्रभूतयवसेन्धनम्।
बहु**मूलं**[2]फलोपेतं नानापक्षि**गणैर्वृतम्**[3] ॥३॥
तं दृष्ट्वा मृष्टसलिलं मनोहरसुखावहम्[4]।
सुपरिश्रान्तवाहास्ते निवेशाय मनो दधुः ॥४॥
संमते सार्थवाहस्य विविशुर्वनमुत्तमम्।
उवास सार्थः सु[5]महान्वेलामासाद्य पश्चिमाम् ॥५॥
अथार्धरात्रसमये निःशब्दस्तिमिते तदा।
सुप्ते सार्थे परिश्रान्ते हस्तियूथमुपागमत्।
पानीयार्थं गिरिनदीं मदप्रस्रवणाविलाम्[6] ॥६॥

---

१. M. W. जगाम सह तेनैव सार्थेन पतिलालसा
२. M. W. पुष्प
३. M. W. निषेवितम्
४. M. W. निर्मलस्वादुसलिलं मनोहारि सुशीतलम्
५. M. W. स
६. M. W. अथापश्यत सार्थं तं सार्थजान् सुबहून् गजान्।
ते तान् ग्राम्यगजान् दृष्ट्वा सर्वे वनगजास्तदा ॥
समाद्रवन्त वेगेन जिघांसन्तो मदोत्कटाः।
तेषामापततां वेगः करिणां दुःसहोऽभवत् ॥

नलोपाख्यान

सर्ग १३

बृहदश्व

दल के नेता की इस बात को सुनकर सुन्दरी दमयन्ती अपने पति की लालसा से उसी के साथ चल पड़ी ॥१॥

तत्पश्चात् बहुत समय तक उस विस्तृत एवं बीहड़ वन में चलते चलते वे लोग एक तालाब के पास पहुँचे। वह तालाब बहुत बड़ा, सुन्दर और कमलों की सुगन्धि, से महक रहा था ॥२॥

व्यापारियों ने देखा कि वह बहुत सुन्दर और बहुत से तृण और ईंधन से भरा हुआ था, उसमें बहुत से फूल और फल लगे हुए थे और उसमें विविध प्रकार के पक्षी निवास करते थे ॥३॥

उसका जल स्वच्छ, स्वादिष्ट, सुन्दर और शीतल था। उसे देखकर उन लोगों ने उसमें स्नान करने का विचार किया क्योंकि उनके सभी वाहक (पशु) थके हुए थे ॥४॥

दल के नेता की सम्मति से सभी लोगों ने उस उत्तम वन में प्रवेश किया। उस महान् दल ने वहाँ पश्चिम तट पर डेरा डाल दिया ॥५॥

आधी रात्रि के समय, जबकि सर्वत्र सन्नाटा छाया हुआ था और थका हुआ व्यापारियों का दल सोया हुआ था, हाथियों का एक समूह वहाँ पर आ पहुँचा। वह हस्ति-समूह मद जल से गन्दे जल वाली पहाड़ी नदी में पानी पीने के लिए आया था ॥६॥

नगाग्रादिव शीर्णानां श्रृंगाणां पततां क्षितौ।
स्यन्दतामपि नागानां मार्गा नष्टा वनोद्भवैः ॥

मार्गं संरुध्य संसुप्तं पद्मिन्याः सार्थमुत्तमम् ।
सुप्तं ममर्द[1] सहसा चेष्टमानं महीतले ॥७॥
माहारवं[2] प्रमुञ्चन्तः सार्थिकाः शरणार्थिनः ।
वनगुल्मांश्च धावन्तो निद्रान्धा **महतो भयात्**[3] ।
केचित्तैः करैः केचित्केचित्पद्भ्यां हता नराः ॥८॥
गोखरोष्ट्राश्वबहुलं पदातिजनसंकुलम्[4] ।
भयार्तं धावमानं तत्परस्परहतं तदा[5] ॥९॥
घोरान्नादान्विमुञ्चन्तो निपेतुर्धरणीतले ।
वृक्षेष्वासज्य[6] **संभग्नाः**[7] पतिता विषमेषु च[8] ।
तथा तन्निहतं[9] सर्वे समृद्धं सार्थमंडलम्[10] ॥१०॥

---

१. M. W. ते तं ममर्दुः २. M. W. हाहाकारम्
३. M. W. बहवोऽभवन्
४. M. W. निहतोष्ट्राश्च बहुलाः पदातिजनसंकुलाः
५. M. W. भयादाधावमानाश्च परस्परहतास्तदा
६. M. W. रुह्य ७. M. W. संरब्धा
८. M. W. एवं प्रकारैर्बहुभिर्दैवेनाक्रम्य हस्तिभिः
९. M. W. राजन् विनिहतम्
१०. M. W. आरावः सुमहांश्चासीत् त्रैलोक्यभयकारकः ।
एषोऽग्निरुत्थितः कष्टस्त्रायध्वं धावताधुना ॥
रत्नराशिर्विशीर्णोऽयं गृहणीध्वं किं प्रधावथ ।
सामान्यमेतद्द्रविणं न मिथ्यावचनं मम ॥
एवमेवाभिभाषन्तो विद्रवन्ति भयात्तदा ।
पुनरेवाभिधास्यामि चिन्तयध्वं सकातराः ॥
तस्मिंस्तथा वर्तमाने दारुणे जनसंक्षये ।
दमयन्ती च बुबुधे भयसन्त्रस्तमानसा ॥
अपश्यद्वैशसं तत्र सर्वलोकभयङ्करम् ।
अदृष्टपूर्वं तद् दृष्ट्वा बाला पद्मनिभेक्षणा ॥
संसक्तवदनाश्वासा उत्तस्थौ भयविह्वला ।
ये तु तत्र विनिर्मुक्ताः सार्थात्केचिदविक्षताः ॥
तेऽब्रुवन् सहिताः सर्वे कस्येदं कर्मणः फलम् ।
नूनं न पूजितोऽस्माभिर्मणिभद्रो महायशाः ॥

व्यापारियों का वह दल पद्मसर के मार्ग को रोककर पृथ्वी पर सोया हुआ था। (भागते हुए हस्ति-समूह ने) सोए हुए उस दल को मसल डाला ॥७॥

निद्रा से अन्धे व्यापारी भय से हाहाकार करते हुए शरण पाने की अभिलाषा से वन की झाड़ियों की ओर भागने लगे। हाथियों ने कुछ मनुष्यों को अपने दाँतों से मार डाला, कुछ को अपने शुण्डादण्डों से और कुछ को अपने पैरों से ॥८॥

गायों, गधों, ऊँटों, घोड़ों और पैदल चलनेवालों से भरे हुए मार्ग में दौड़ता हुआ व्यापारियों का दल परस्पर टकराकर नष्ट हो रहा था ॥९॥

मनुष्य घोर शब्द करते हुये पृथ्वी पर गिर रहे थे। वे लोग वृक्षों में लिपट लिपट कर ऊँची नीची भूमि में गिरते थे। इस प्रकार व्यापारियों का वह सम्पूर्ण समृद्धशाली दल वहाँ पर इस प्रकार नष्ट हो गया ॥१०॥

तथा यक्षाधिपः श्रीमान्नवै वैश्रवणः प्रभुः।
न पूजा विघ्नकर्तॄणामथवा प्रथमं कृता ॥
शकुनानां फलं वाऽथ विपरीतमिदं ध्रुवम्।
ग्रहा न विपरीतास्तु किमन्यदिदमागतम् ॥
अपरे त्वब्रुवन् दीना ज्ञातिद्रव्यविनाकृताः।
याऽसावद्य महासार्थे नारी ह्युन्मत्तदर्शना ॥
प्रविष्टा विकृताकारा कृत्वा रूपममानुषम्।
तयेयं विहिता पूर्वं माया परमदारुणा ॥
राक्षसी वा ध्रुवं यक्षी पिशाची वा भयंकरी।
तस्याः सर्वमिदं पापं नात्र कार्या विचारणा ॥
यदि पश्येम तां पापां सार्थघ्नीं नैकदुःखदाम्।
लोष्टभिः पांशुभिश्चैव तृणैः काष्ठैश्च मुष्टिभिः ॥
अवश्यमेव हन्याम सार्थस्य किल कृत्यकाम्।
दमयन्ती तु तच्छ्रुत्वा वाक्यं तेषां सुदारुणम् ॥
ह्रीता भीता च संविग्ना प्राद्रवद् यत्र काननम्।
आशंकमाना तत्पापमात्मानं पर्यदेवयत् ॥
अहो ममोपरि विधेः संरम्भो दारुणो महान्।
नानुबध्नाति कुशलं कस्येदं कर्मणः फलम् ॥
न स्मराम्यशुभं किञ्चित् कृतं कस्यचिदण्वपि।
कर्मणा मनसा वाचा कस्येदं कर्मणः फलम् ॥
नूनं जन्मान्तरकृतं पापमापतितं महत्।
अपश्चिमामिमां कष्टामापदं प्राप्तवत्यहम् ॥
भर्तुराज्यापहरणं स्वजनाच्च पराजयः।
भर्त्रा सह वियोगश्च तनयाभ्याञ्च विच्युतिः ॥
निर्नाथिता वने वासो बहुव्यालनिषेविते।

अथापरेद्युः संप्राप्ते हतशिष्टा जनास्तदा।
वनगुल्माद्वि[1]निष्क्रम्य शोचन्तो वैशसं कृतम्।
भ्रातरं पितरं पुत्रं सखायं च ज[2]नाधिप ॥११॥
अशोचत्तत्र वैदर्भी किं नु मे दुष्कृतं कृतम्।
योऽपि मे निर्जनेऽरण्ये संप्राप्तो यं जनार्णवः।
हतोऽयं[3] हस्तियूथेन मन्दभाग्यान्ममैव तु ॥१२॥
प्राप्तव्यं सुचिरं दुःखं **मया नूनमसंशयम्**[4]।
नाप्राप्तकालो म्रियते श्रुतं वृद्धानुशासनम् ॥१३॥
यन्नाहमद्य मृदिता हस्तियूथेन दुःखिता॥
न ह्यदैवकृतं किंचिन्नराणामिह विद्यते ॥१४॥
न च मे बालभावेऽपि किंचित्पापकृतं कृतम्।
कर्मणा मनसा वाचा यदिदं दुःखमागतम् ॥१५॥
मन्ये स्वयंवरकृते लोकपालाः समागताः।
प्रत्याख्याता मया तत्र नलस्यार्थाय देवताः।
नूनं तेषां प्रभावेन वियोगं प्राप्तवत्यहम् ॥१६॥
एवमादीनि दुःखानि सा विलप्य वराङ्गना।
हत**शिष्टैः**[5] सह तदा ब्राह्मणैर्वेदपारगैः।
अगच्छद्राजशार्दूल **दुःखशोकपरायणा**[6] ॥१७॥
गच्छन्ती सा चिरात्**कालात्पु**[7]रमासादयन्महत्।
सायाह्ने चेदिराजस्य सुबाहोः सत्य**वादिनः**[8]।
वस्त्रार्धकर्तसंवीता[9] प्रविवेश पुरोत्तमम् ॥१८॥

---

१. M. W. देशात्तस्माद्
२. M. W. नरा
३. M. W. स हतो
४. M. W. नूनमद्यापि वै मया।
५. M. W. शेषैः
६. M. W. चन्द्रलेखेव शारदी
७. M. W. बाला
८. M. W. दर्शिनः
९. M. W. अथ वस्त्रार्द्ध

दूसरे दिन बचे हुये लोग उस नरसंहार को सोचते हुए वन की झाड़ियों से बाहर निकल गये। उन्हें अपने भाई, पिता, पुत्र और मित्र जनों का शोक था ॥११॥

(यह देखकर) विदर्भराजनन्दिनी ने सोचा—'मैंने कौन-सा पाप किया है कि इस निर्जन वन में मनुष्यों का जो सागर मुझे देखने को मिला था वह भी मेरे ही दुर्भाग्य से हाथियों के द्वारा मार डाला गया है ॥१२॥

निश्चय ही मुझे बहुत समय तक दुःख भोगना पड़ेगा क्योंकि मैंने बड़े-बूढ़ों को कहते सुना है कि बिना समय आए हुये कोई मरता ही नहीं है ॥१३॥

वास्तव में भाग्य के बिना मनुष्यों का कुछ भी नहीं हो सकता है। यही कारण है कि मैं इतनी दुःखी होते हुए भी हाथियों के झुण्ड के द्वारा मार नहीं डाली गई ॥१४॥

मैंने अपने बचपन में भी मन, वचन और कर्म से कोई पाप नहीं किया है कि यह दुःख मेरे ऊपर आ पड़ा ॥१५॥

मैं तो समझती हूँ कि मेरे स्वयम्वर के लिए बहुत से लोकपाल आए हुये थे किन्तु नल की अभिलाषा से मैंने उन देवताओं का तिरस्कार किया था। उन्हीं के कारण मुझे यह वियोग प्राप्त हुआ है' ॥१६॥

सुन्दरी दमयन्ती अपने दुःखों पर इस प्रकार विलाप करती हुई मरने से बचे हुए वेदज्ञ ब्राह्मणों के साथ चल पड़ी। वह दुःख और शोक से व्याकुल थी ॥१७॥

चलते चलते दमयन्ती बहुत समय पश्चात् सायंकाल महापराक्रमी एवं सत्यवादी चेदिराज के महान् नगर में पहुँच गई। उस समय वह आधे वस्त्र के टुकड़े से ढकी हुई थी ॥१८॥

तां **विवर्णां**[1] कृशां दीनां मुक्तकेशीम**मार्जनाम्**[2]।
उन्मत्तामिव गच्छन्तीं ददृशुः पुरवासिनः ॥१९॥
प्रविशन्ती तु तां दृष्ट्वा चेदिराजपुरीं तदा।
अनुजग्मुस्ततो बाला ग्रामिपुत्राः कुतूहलात् ॥२०॥
सा तैः परिवृतागच्छत्समीपं राजवेश्मनः।
तां प्रासादगतापश्यद्राजमाता जनैर्वृताम्[3] ॥२१॥
सा जनं वारयित्वा तं प्रसादतलमुत्तमम्।
आरोप्य विस्मिता राजन्दमयन्तीमपृच्छत ॥२२॥
एवमप्यसुखाविष्टा बिभर्षि परमं वपुः।
भासि विद्युदिवाभ्रेषु शंस मे कासि कस्य वा ॥२३॥
न हि ते मानुषं रूपं भूषणैरपि वर्जितम्।
असहाया नरेभ्यश्च नोद्विजस्यमरप्रभे ॥२४॥
तच्छ्रुत्वा वचनं तस्या भैमी वचनमब्रवीत्।
मानुषीं मां विजानीहि भर्तारं समनुव्रताम् ॥२५॥
सैरन्ध्रीं जातिसंपन्नां भुजिष्यां कामवासिनीम्।
फलमूलाशनामेकां यत्रसायंप्रतिश्रयाम् ॥२६॥
असंख्येयगुणो भर्ता मां च नित्यमनुव्रतः।
भर्तारमपि तं वीरं छायेवानपगा सदा[4] ॥२७॥
तस्य दैवात्प्रसङ्गोऽभूदतिमात्रं स्म देवने।
द्यूते स निर्जितश्चैव वनमेकोऽभ्युपेयिवान् ॥२८॥
तमेकवसनं वीरमुन्मत्तमिव विह्वलम्।
आश्वासयन्ती भर्तारमहमन्वगमं[5] वनम् ॥२९॥

---

१. M. W. विह्वलाम् २. M. W. ममार्जिताम्
३. M. W. धात्रीमुवाच गच्छैनामानयेह ममान्तिकम् ॥
जनेन क्लिश्यते बाला दुःखिता शरणार्थिनी।
तादृग् रूपञ्च पश्यामि विद्योतयति मे गृहम् ॥
उन्मत्तवेशा कल्याणी श्रीरिवायतलोचना।
४. M. W. भक्ताऽहमपि तं वीरं छायेवानुगता पथि।
५. M. W. प्यगमम्

पुरवासियों ने देखा कि दमयन्ती चली जा रही है। वह दुबली है, उसका शरीर पीला पड़ गया है, वह अत्यन्त दीन है, उसके केश बिखरे हुए हैं, स्नान न करने के कारण वह गन्दी और पगली-सी है ॥१९॥

चेदिराज की नगरी में प्रवेश करती हुई दमयन्ती को देखकर ग्राम-निवासियों के छोटे-छोटे बालक कौतुकवश उसके पीछे पीछे चल पड़े ॥२०॥

ग्रामपुत्रों से घिरी हुई दमयन्ती राजमहल के समीप से निकली जहाँ पर राजप्रासाद पर खड़ी हुई राजमाता ने जनसमूह से घिरी हुई उस दमयन्ती को देखा ॥२१॥

राजमाता ने वहाँ से जनसमूह को हटा दिया। वह दमयन्ती को प्रासादतल पर बिठलाकर आश्चर्यचकित होकर उससे पूछने लगीं ॥२२॥

'अरे! सुखी न होते हुए भी तुम इस प्रकार सुन्दर शरीर वाली हो। तुम तो मेघों में विद्युत् की भाँति शोभित हो रही हो। बताओ तो कि तुम कौन और किसकी पत्नी हो? ॥२३॥

आभूषणों के न होते हुए भी तुम्हारा शरीर कितना विलक्षण है। अयि देवि दमयन्ति! असहाय होते हुए भी तुम मनुष्यों से भयभीत नहीं हो रही हो' ॥२४॥

राजमाता के इन वचनों को सुनकर दमयन्ती ने कहा—'मैं भी एक स्त्री हूँ जो अपने पति का अनुगमन कर रही हूँ ॥२५॥

उच्च जाति में उत्पन्न होकर भी मैं एक दासी की तरह हूँ और अपनी इच्छा से ही कहीं भी निवास कर सकती हूँ। सायंकाल होने पर मैं फल और मूल खाकर रह जाती हूँ ॥२६॥

मेरे पति असंख्य गुणों से युक्त हैं और वह मुझसे अनुरक्त भी हैं। मैं भी छाया की भाँति अपने पति के पीछे पीछे लगी रहती हूँ ॥२७॥

दुर्भाग्यवश वह जुए में फँस गये और उसमें पराजित होकर अकेले ही वन को चले गये। मैं इस वन में धैर्यपूर्वक उन्हीं के पीछे-पीछे चल रही हूँ जो एक वस्त्र पहने हुए हैं। वीर होते हुए भी वह एक पागल की भाँति विह्वल हैं ॥२८-२९॥

स कदाचिद्वने वीरः कस्मिंश्चित्कारणान्तरे।
क्षुत्परीतः सु[1]विमनास्तदप्येकं व्यसर्जयत् ॥३०॥
तमेकवसनं[2] नग्नमुन्मत्तं गतचेतसम्[3]।
अनुव्रजन्ती बहुला न स्वपामि निशाः सदा[4] ॥३१॥
ततो बहुतिथे काले सुप्तामुत्सृज्य मां क्वचित्।
वाससोऽर्धं परिच्छिद्य त्यक्तवान्मामनागसम् ॥३२॥
तं मार्गमाणा भर्तारं दह्यमाना दिनक्षपाः[5]।
न विन्दाम्यमरप्रख्यं प्रियं प्राणधनेश्वरम्[6] ॥३३॥
तामश्रुपरिपूर्णाक्षीं विलपन्तीं तथा बहु।
राजमाताब्रवीदार्तां भैमीमार्ततरा स्वयम् ॥३४॥
वसस्व मयि कल्याणि प्रीतिर्मे त्वयि वर्तते[7] ॥
मृगयिष्यन्ति ते भद्रे भर्तारं पुरुषा मम ॥३५॥
अथ वा स्वयमागच्छेत्परिधावन्नितस्ततः।
इहैव वसती भद्रे भर्तारमुपलप्स्यसे ॥३६॥
राजमातुर्वचः श्रुत्वा दमयन्ती वचोऽब्रवीत्।
समयेनोत्सहे वस्तुं त्वयि वीरप्रजायिनि ॥३७॥
उच्छिष्टं नैव भुञ्जीयां न कुर्यां पादधावनम्।
न चाहं पुरुषानन्यान्स[8]भाषेयं कथंचन ॥३८॥
प्रार्थयेद्यदि मां कश्चिद्दण्ड्यस्ते स पुमान्भवेत्[9]।
भर्तुरन्वेषणार्थं तु पश्येयं ब्राह्मणानहम् ॥३९॥

---

१. M. W. स्तु
२. M. W. वसना
३. M. W. मत्तवदेचतसम्
४. M. W. स्तदा
५. M. W. दिवानिशम्
६. M. W. प्राणेश्वरं प्रभुम्
७. M. W. परमा त्वयि
८. M. W. प्र
९. M. W. बध्यश्च तेऽसकृन्मन्द इति मे व्रतमाहतम्

उस वन में किसी कारण वीर नल ने भूख से पीड़ित होकर उस एक वस्त्र को भी अलग कर दिया ।।३०।।

एक वस्त्र होते हुए भी महाराज नल नग्न ही रहते थे, वह उन्मत्त थे और उनकी चेतना नष्ट हो गई थी। मैं उन्हीं के पीछे चलते चलते सारी रातें सो नहीं रही थी ।।३१।।

तत्पश्चात् बहुत समय व्यतीत हो जाने पर मुझ पापिनी को सोई हुई छोड़कर और मेरे आधे वस्त्र को फाड़कर वह कहीं चले गये हैं ।।३२।।

मैं रातदिन अपने उन्हीं पति को खोजती हुई जलती रहती हूँ, किन्तु मेरे देवतुल्य प्राणाधार कहीं भी प्राप्त नहीं हो रहे हैं ।।३३।।

इस प्रकार विलाप करती हुई, आँसुओं को बहाती हुई और दुःखी दमयन्ती से भी अधिक दुःखी होकर राजमाता ने कहा ।।३४।।

'अयि सुन्दरि ! तुम मेरे पास रहो। मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। अयि कल्याणि ! मेरे सेवक तुम्हारे पति को खोज लाएँगे ।।३५।।

संभव है इधर उधर दौड़ते हुए वह स्वयं ही यहाँ पर आ जाएँ। अयि सुन्दरि ! तुम यहीं रहती हुई अपने पति को प्राप्त कर लोगी' ।।३६।।

राजमाता की इन बातों को सुनकर दमयन्ती ने कहा—'अयि वीरमाते ! मैं आपके पास एक शर्त पर रह सकती हूँ ।।३७।।

मैं न तो (किसी का) जूठा खाऊँगी और न किसी के पैर धोऊँगी। मैं कभी भी पर-पुरुष से बातचीत नहीं करूँगी ।।३८।।

यदि किसी (परपुरुष) ने मुझसे इसके लिए प्रार्थना की तो आपको उसे दण्ड देना होगा। हाँ, अपने पति की खोज करने के लिए मैं ब्राह्मणों से अवश्य मिलूँगी ।।३९।।

यद्येवमिह कर्त्तव्यं व[1]साम्यहमसंशयम् ।
अतोऽन्यथा न मे वासो वर्तते हृदये क्वचित् ॥४०॥
तां प्रहृष्टेन मनसा राजमातेदमब्रवीत् ।
सर्वमेतत्करिष्यामि दिष्ट्या ते व्रतमीदृशम् ॥४१॥
एवमुक्त्वा ततो भैमीं राजमाता विशांपते ।
उवाचेदं दुहितरं सुनन्दां नाम भारत ॥४२॥
सैरन्ध्रीमभिजानीष्व सुनन्दे देवरूपिणीम्[2] ।
एतया सह मोदस्व निरुद्विग्नमनाः **स्वयम्[3]** ॥४३॥

॥ इति नलोपाख्याने त्रयोदशः सर्गः ॥१३॥

---

१. M. W. वत्स्याम्य
२. M. W. वयसा तुल्यतां प्राप्ता सखी तव भवत्वियम्
३. M. W. सदा

यदि आप ऐसा कर सकें तो मैं निश्चय ही यहाँ रह सकती हूँ। अन्यथा यहाँ रहने के लिए मेरी इच्छा नहीं है' ॥४०॥

यह सुनकर राजमाता ने प्रसन्न होकर दमयन्ती से कहा—'मैं यह सब कुछ करूँगी। यह बड़े सौभाग्य की बात है कि तुमने इस प्रकार का व्रत ले रखा है' ॥४१॥

राजमाता इस प्रकार दमयन्ती से कहकर सुनन्दा नामक अपनी पुत्री से बोलीं ॥४२॥

'अयि सुनन्दे! तुम देवियों के समान सौन्दर्यवाली इस (दमयन्ती) को अपनी दासी समझो। स्वयं प्रसन्न मन से तुम इसके साथ आनन्द प्राप्त करती रहो' ॥४३॥

॥ नलोपाख्यान का तेरहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

चतुर्दशः सर्गः

बृहदश्व उवाच

उत्सृज्य दमयन्तीं तु नलो राजा विशां पते।
ददर्श दावं दह्यन्तं महान्तं गहने वने ॥१॥
तत्र शुश्राव **मध्येऽग्नौ शब्दं**[1] भूतस्य कस्यचित्।
अभिधाव नलेत्युच्चैः पुण्यश्लोकेति चासकृत् ॥२॥
मा भैरिति नलश्चोक्त्वा मध्यमग्नेः प्रविश्य तम्।
ददर्श नागराजानं शयानं कुण्डलीकृतम् ॥३॥
स नागः प्राञ्जलिर्भूत्वा वेपमानो नलं तदा।
उवाच **विद्धि मां**[2] राजन्नागं कर्कोटकं नृप ॥४॥
मया प्रलब्धो **ब्रह्मर्षिरनागाः**[3] **सुमहातपाः**।
तेन मन्युपरीतेन शप्तोऽस्मि मनुजाधिप[4] ॥५॥
तस्य शापान्न **शक्नोमि**[5] पदाद्विचलितुं पदम्।
उपदेक्ष्यामि ते श्रेयस्त्रातुमर्हति मां भवान् ॥६॥
सखा च ते भविष्यामि मत्समो नास्ति पन्नगः।
लघुश्च ते भविष्यामि शीघ्रमादाय गच्छ माम् ॥७॥
एवमुक्त्वा स नागेन्द्रो बभूवाङ्गुष्ठमात्रकः।
तं गृहीत्वा नलः **प्रायादुद्देशं दाववर्जितम्**[6] ॥८॥

---

१. M. W. शब्दं वै मध्ये २. M. W. मां विद्धि
३. M. W. महर्षिर्नारदः स
४. M. W. तिष्ठ त्वं स्थावर इव यावदेव नलः क्वचित्।
इतो नेता हि तत्र त्वं शापान्मोक्ष्यसि मत्कृतात् ॥
५. M. W. शक्तोऽस्मि ६. M. W. प्रायाद्देशं दावविवर्जितम्।

नलोपाख्यान

सर्ग १४

बृहदश्व

महाराज नल ने दमयन्ती को छोड़कर जाते हुये गहन वन में जलती हुई दावाग्नि को देखा ॥१॥

नल को बार बार किसी प्राणी का यह शब्द सुनाई पड़ रहा था 'अये ! पुण्यश्लोक नल ! दौड़िये, दौड़िये' ॥२॥

(यह सुनकर) 'मत डरो, मत डरो' कहते हुये नल उस अग्नि के बीच में घुस पड़े। वहाँ उन्होंने कुण्डली बाँधे हुये सर्पराज को सोते देखा ॥३॥

काँपते हुए सर्पराज ने हाथ जोड़कर महाराज नल से कहा—'अये महाराज ! आप मुझे जान लीजिये। मैं कर्कोटक नाम का सर्प हूँ ॥४॥

अये राजन् ! मैंने महान् तपस्वी, पुण्यात्मा महर्षि (नारद) से कपट किया था। इससे उन्होंने क्रोध में आकर मुझे शाप दे दिया था ॥५॥

उनके शाप से मैं एक पग भी नहीं चल सकता हूँ। आप मेरी रक्षा कीजिये। मैं आपको आपके कल्याण की बात बताऊँगा ॥६॥

मैं आपका मित्र बन जाऊँगा। मेरे समान (और कोई) सर्प नहीं है। मैं आपके लिए भारस्वरूप नहीं रहूँगा। आप शीघ्र ही मुझे लेकर चल दीजिये ॥७॥

सर्पराज ऐसा कहकर अंगुष्ठमात्र हो गये और महाराज नल उसको लेकर उस स्थान की ओर चल दिए जहाँ अग्नि नहीं थी ॥८॥

आकाशदेशमासाद्य विमुक्तं कृष्णवर्त्मना।
उत्स्रष्टुकामं तं नागः पुनः कर्कोटकोऽब्रवीत्।९॥
पदानि गणयन्गच्छ स्वानि नैषध कानिचित्।
तत्र तेऽहं **महाराज**[1] श्रेयो धास्यामि यत्परम्॥१०॥
ततः संख्यातुमारब्धमदशद्दशमे पदे।
तस्य दष्टस्य तद्रूपं क्षिप्रमन्तरधीयत॥११॥
स दृष्ट्वा विस्मितस्तस्थावात्मानं विकृतं नलः।
स्वरूपधारिणं नागं ददर्श च महीपतिः॥१२॥
ततः कर्कोटको नागः सान्त्वयन्नलमब्रवीत्।
मया तेऽन्तर्हितं रूपं न त्वां विद्युर्जना इति॥१३॥
यत्कृते चासि **विकृतो**[2] दुःखेन महता नल।
विषेण स मदीयेन त्वयि दुःखं निवत्स्यति॥१४॥
विषेण संवृतैर्गात्रैर्यावत्त्वां न विमोक्ष्यति।
तावत्त्वयि महाराज दुःखं वै स विवत्स्यति॥१५॥
अनागा येन निकृतस्त्वमनर्हो जनाधिप।
क्रोधादसूययित्वा तं रक्षा मे भवतः कृता॥१६॥
न ते भयं नरव्याघ्र दंष्ट्रिभ्यः शत्रुतोऽपि वा।
ब्रह्मविद्भ्यश्च[3] भविता मत्प्रासादान्नराधिप॥१७॥
राजन्विषनिमित्ता च न ते पीडा भविष्यति।
संग्रामेषु च राजेन्द्र शश्वज्जयमवाप्स्यसि॥१८॥
गच्छ राजन्नितः सूतो बाहुकोऽहमिति ब्रुवन्।
समीपमृतुपर्णस्य स हि वेदाक्षनैपुणम्।
अयोध्यां नगरीं रम्यामद्यैव निषधेश्वर॥१९॥
स तेऽक्षहृदयं दाता राजाश्वहृदयेन वै।
इक्ष्वाकुकुलजः श्रीमान्मित्रञ्चैव भविष्यति॥२०॥

---

१. M. W. **महाबाहो** २. M. W. **निकृतो**
३. M. W. **ब्रह्मर्षिभ्यश्च**

वह उस सर्प को आकाश में उस स्थान में ले गये जहाँ कि अग्नि थी ही नहीं। महाराज नल कर्कोटक को छोड़ने वाले ही थे कि वह बोल उठा ॥९॥

'अये राजन्! आप अपने पदों को गिनते हुए चले चलिए। मैं आपको वहाँ पहुँचा दूँगा जहाँ आपका कल्याण होगा' ॥१०॥

नल ने अपने पदों को गिनना प्रारम्भ कर दिया किन्तु दसवें पद में सर्प ने उसे डस लिया। उसके डसते ही शीघ्र ही महाराज नल का वह रूप विलीन हो गया ॥११॥

नल अपने आपको इस विकृत रूप में देखकर आश्चर्यचकित होकर स्तब्ध रह गए। उन्होंने सर्पराज की ओर देखा जो अपने वास्तविक रूप में आ चुका था ॥१२॥

(यह देखकर) नल को सान्त्वना देते हुए कर्कोटक ने कहा—'मैंने आपके रूप को इसलिए छिपा दिया है जिससे कि लोग आपको जान न सकें ॥१३॥

अये महाराज नल! जिसके लिए आप दुःख से इतना विकृत हो रहे हैं वह मेरे विष के प्रभाव से दुःखपूर्वक आपमें तल्लीन रहेगा ॥१४॥

विष से सन्तप्त अपने शरीर से जब तक वह आपको छुटकारा नहीं दिला देगा तब तक वह दुःखी होकर आप ही में लीन रहेगा ॥१५॥

अये महाराज! निष्पाप होते हुए भी आप जिसके कारण इतने दुःखी हो रहे हैं, उसे मेरे क्रोध और ईर्ष्या का भागी होना पड़ा है और उससे आपकी रक्षा हो गयी है ॥१६॥

अये पुरुषसिंह! मेरी कृपा से आपको न तो हाथियों से भय होगा, न शत्रु से और न ब्रह्मज्ञ (ऋषियों) से ॥१७॥

अये महाराज! इस विष के कारण आपको पीड़ा नहीं होगी। आप संग्राम में सदैव विजयी होते रहेंगे ॥१८॥

महाराज! "मैं बटुक हूँ"—ऐसा कहते हुये आप यहाँ से ऋतुपर्ण के समीप चले जाइये। वह जुए का निपुण खिलाड़ी है। आप आज ही सुन्दर अयोध्या नगरी को चले जाइये ॥१९॥

महाराज ऋतुपर्ण आपसे अश्वों का ज्ञान प्राप्त करके आपको द्यूतक्रीड़ा का ज्ञान प्रदान करेंगे। इक्ष्वाकुवंशी महाराज ऋतुपर्ण आपके मित्र बन जायँगे ॥२०॥

भविष्यसि यदाक्षज्ञः श्रेयसा योक्ष्यसे तदा।
समेष्यसि च दारैस्त्वं मा स्म शोके मनः कृथाः।
राज्येन तनयाभ्याञ्च सत्यमेतद्ब्रवीमि ते ॥२१॥
स्वरूपं च यदा द्रष्टुमिच्छेथास्त्वं नराधिप।
संस्मर्तव्यस्तदा तेऽहं वासश्चेदं निवासयेः ॥२२॥
अनेन वाससाच्छन्नः स्वरूपं प्रतिपत्स्यसे।
इत्युक्त्वा **प्रददावस्मै**[1] दिव्यं वासोयुगं तदा ॥२३॥
एवं नलं **समादिश्य**[2] वासो दत्त्वा च कौरव।
नागराजस्ततो राजंस्तत्रैवान्तरधीयत ॥२४॥

॥ इति नलोपाख्याने चतुर्दशः सर्गः ॥१४॥

---

१. M. W. प्रददौ तस्मै २. M. W. च सन्दिश्य

जब आप द्यूतक्रीड़ा में निपुण हो जायँगे तो आपका कल्याण होगा। तब आप अपने कुटुम्बियों से मिल जायँगे। इसलिए आप अपने मन में शोक न कीजिए। मैं सच कहता हूँ कि तभी आप अपने राज्य और पुत्र को भी प्राप्त कर लेंगे ॥२१॥

अये राजन्! जब आप अपने (वास्तविक) रूप को देखना चाहें तब आपको मेरी याद कर लेनी चाहिये और इस वस्त्र को धारण कर लेना चाहिए ॥२२॥

आप इस वस्त्र को ढककर अपने वास्तविक रूप को प्राप्त कर लेंगे'—ऐसा कहकर कर्कोटक ने उन्हें दो दिव्य वस्त्र दिये ॥२३॥

महाराज नल से ऐसा कहकर और वह वस्त्र देकर सर्पराज वहीं अन्तर्धान हो गये ॥२४॥

॥ नलोपाख्यान का चौदहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

पंचदशः सर्गः

बृहदश्व उवाच

तस्मिन्नन्तर्हिते नागे प्रययौ नैषधो नलः।
ऋतुपर्णस्य नगरं प्राविशद्दशमेऽहनि ॥१॥
स राजानमुपातिष्ठद्बाहुकोऽहमिति ब्रुवन्।
अश्वानां वाहने युक्तः पृथिव्यां नास्ति मत्समः ॥२॥
अर्थकृच्छ्रेषु चैवाहं प्रष्टव्यो नैपुणेषु च।
अन्नसंस्कारमपि च जानाम्यन्यैर्विशेषतः ॥३॥
यानि शिल्पानि लोकेऽस्मिन्यच्चाप्यन्यत्सुदुष्करम्।
सर्वं यतिष्ये तत्कर्तुमृतुपर्ण भरस्व माम् ॥४॥

ऋतुपर्ण उवाच

बस बाहुक भद्रं ते सर्वमेतत्करिष्यसि।
शीघ्रयाने सदा बुद्धिर्धीयते[1] मे विशेषतः ॥५॥
स त्वमातिष्ठ योगं तं येन शीघ्रा हया मम।
भवेयुरश्वाध्यक्षोऽसि वेतनं ते शतं शताः ॥६॥
त्वामुपस्थास्यतश्चेमौ[2] नित्यं वार्ष्णेयजीवलौ।
एताभ्यां रंस्यसे सार्धं वस वै मयि बाहुक ॥७॥

बृहदश्व उवाच[3]

एवमुक्तो नलस्तेन न्यवसत्तत्र पूजितः।
ऋतुपर्णस्य नगरे सहवार्ष्णेयजीवलः ॥८॥

---

१. M. W. ध्रियते २. M. W. चैव
३. M. W. में नहीं है

नलोपाख्यान

सर्ग १५

बृहदश्व

सर्पराज के अन्तर्धान हो जाने पर निषधाधिपति नल चल पड़े। (चलते चलते) दसवें दिन उन्होंने ऋतुपर्ण के नगर में प्रवेश किया ॥१॥

'मैं बाहुक हूँ, और घोड़ों को सम्हालने में मेरे समान इस पृथ्वी पर और कोई नहीं है' ऐसा कहते हुए वह महाराज ऋतुपर्ण के समीप पहुँच गये ॥२॥

'जहाँ कहीं कोई विपत्ति हो अथवा निपुणता की आवश्यकता हो उसमें आप मेरी सम्मति ले सकते हैं। औरों की अपेक्षा मैं भोजन पकाना भी अच्छी प्रकार जानता हूँ ॥३॥

इस संसार में जितने भी शिल्प हैं अथवा और भी जो कुछ दुष्कर कर्म हैं उसके लिए मैं प्रयत्न करता रहूँगा। अये ऋतुपर्ण ! आप मेरा भरण-पोषण कर दीजिए' ॥४॥

ऋतुपर्ण

'अये बाहुक ! तुम्हारा कल्याण हो। तुम यहाँ पर (सुखपूर्वक) रहो। तुम सब कुछ कर लोगे। मैं सदैव शीघ्र आना जाना पसन्द करता हूँ ॥५॥

तुम वह उपाय करो जिससे मेरे अश्व वेगगामी हो जायें। तुम इन अश्वों के अध्यक्ष हो और तुम्हारा वेतन दस हज़ार है ॥६॥

अये बाहुक ! ये वार्ष्णेय और जीवल सदैव तुम्हारे साथ रहेंगे। तुम इन्हीं के साथ क्रीडा करते रहना। तुम (अवश्य ही) मेरे पास रहो' ॥७॥

बृहदश्व

इस प्रकार कहकर नल का आदर-सत्कार किया गया। वह वार्ष्णेय और जीवल के साथ ऋतुपर्ण के नगर में रहने लगे ॥८॥

स तत्र निवसन्राजा[1] वैदर्भीमनुचिन्तयन् ।
सायं सायं सदा चेमं श्लोकमेकं जगाद ह ॥९॥
क्व नु सा क्षुत्पिपासार्ता श्रान्ता शेते तपस्विनी ।
स्मरन्ती तस्य मन्दस्य कं वा साद्योपतिष्ठति ॥१०॥
एवं ब्रुवन्तं राजानं निशायां जीवलोऽब्रवीत् ।
कामेनां[2] शोचसे नित्यं श्रोतुमिच्छामि बाहुक[3] ॥११॥
तमुवाच नलो राजा मन्दप्रज्ञस्य कस्यचित् ।
आसीद्बहुमता नारी तस्या दृढतरं च सः[4] ॥१२॥
स वै केनचिदर्थेन तया मन्दो व्ययुज्यत ।
विप्रयुक्तश्च[5] मन्दात्मा भ्रमत्यसुखपीडितः ॥१३॥
दह्यमानः स शोकेन दिवारात्रमतन्द्रितः ।
निशाकाले स्मरंस्तस्याः श्लोकमेकं स्म गायति ॥१४॥
स वै भ्रमन्महीं[6] सर्वां क्वचिदासाद्य किंचन ।
वसत्यनर्हस्तद्दुःखं भूय एवानुसंस्मरन् ॥१५॥
सा तु तं पुरुषं नारी कृच्छ्रेऽप्यनुगता वने ।
त्यक्ता तेनाल्पपुण्येन दुष्करं यदि जीवति ॥१६॥
एका बालानभिज्ञा च मार्गणामतथोचिता ।
क्षुत्पिपासापरीता च[7] दुष्करं यदि जीवति ॥१७॥
श्वापदाचरिते नित्यं वने महति दारुणे ।
त्यक्ता तेनाल्पपुण्येन[8] मन्दप्रज्ञेन मारिष ॥१८॥
इत्येवं नैषधो राजा दमयन्तीमनुस्मरन् ।
अज्ञातवासमवसद्राज्ञस्तस्य[9] निवेशने ॥१९॥

॥ इति नलोपाख्याने पंचदशः सर्गः ॥१५॥

---

१. M. W. स वै तत्रावसद्राजा
२. M. W. कामेमाम्
३. M. W. आयुष्मन् कस्य वा नारी यामेवमनुशोचसि ।
४. M. W. वचः
५. M. W. स
६. M. W. विभ्रन्
७. M. W. परीतांगी
८. M. W. भाग्येन
९. M. W. न्यवसद्

वहाँ रहते हुए महाराज नल दमयन्ती का चिन्तन किया करते थे और प्रतिदिन सायंकाल यह श्लोक पढ़ा करते थे ।।९।।

'न जाने वह बेचारी (दमयन्ती) भूखी प्यासी और थकी हुई कहाँ पड़ी रहती होगी। मन्दभागी (नल) का स्मरण करती हुई वह न जाने कहाँ पर होगी' ।।१०।।

एक रात इस प्रकार कहते कहते महाराज नल से जीवल बोला—'अये बाहुक ! मैं भी तो सुनूँ कि वह कौन है जिसके लिए तुम नित्यप्रति शोकमग्न रहा करते हो' ।।११।।

महाराज नल ने जीवल से कहा 'किसी मूर्ख के एक पत्नी थी जो उसे बहुत प्यारी थी और वह उस स्त्री को बहुत प्यारा था ।।१२।।

प्रयोजनवश वह मूर्ख अपनी स्त्री से वियुक्त हो गया। वियुक्त होकर वह मूर्ख दुःख से पीड़ित होकर इधर उधर भटकता रहता था ।।१३।।

वह रात दिन शोक से जलता रहता था। रात्रि में अपनी स्त्री का स्मरण करते करते वह एक श्लोक गा उठता था ।।१४।।

सारी पृथ्वी पर घूमते हुए वह कहीं बैठ जाता था और अपने दुःख का स्मरण करते हुए वहीं पड़ रहता था ।।१५।।

वह स्त्री विपत्ति में भी वन में अपने पति का अनुकरण करती रही। उससे वियुक्त होकर यदि वह कठिनता से जीवित रही तो अपने अल्प पुण्य के कारण ही ।।१६।।

बेचारी स्त्री अनजाने और टेढ़े मेढ़े मार्गों पर भूखी-प्यासी भटकती हुई बड़ी कठिनता से जीवित रह सकी। अपने अल्प पुण्य के कारण उस मूर्ख ने उसे घोर वन में छोड़ दिया जहाँ बहुत से हिंसक जीव-जन्तु घूमते रहते थे' ।।१७-१८।।

इस प्रकार दमयन्ती का स्मरण करते हुए नल महाराज ऋतुपर्ण के भवन में अज्ञातवास करते रहे ।।१९।।

।। नलोपाख्यान का पन्द्रहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ।।

नलोपाख्यानम्

षोडशः सर्गः

बृहदश्व उवाच

हृतराज्ये नले भीमः सभार्ये प्रेष्यतां गते।
द्विजान्प्रस्थापयामास नलदर्शनकाङ्क्षया ॥१॥
संदिदेश च तान्भीमो वसु दत्वा च पुष्कलम्।
मृगयध्वं नलं **चैव**[1] दमयन्तीं च मे सुताम् ॥२॥
अस्मिन्कर्मणि **निष्पन्ने**[2] विज्ञाते निषधाधिपे।
गवां सहस्रं दास्यामि यो वस्तावानयिष्यति।
अग्रहारं च[3] दास्यामि ग्रामं नगरसंमितम् ॥३॥
न चेच्छक्याविहानेतुं दमयन्ती नलोऽपि वा।
ज्ञातमात्रेऽपि दास्यामि गवां दशशतं धनम् ॥४॥
इत्युक्तास्ते ययुर्हृष्टा ब्राह्मणाः सर्वतोदिशम्।
पुरराष्ट्राणि चिन्वन्तो नैषधं सह भार्यया ॥५॥
ततश्चेदिपुरीं रम्यां सुदेवो नाम वै द्विजः॥
विचिन्वानोऽथ वैदर्भीमपश्यद्राजवेश्मनि।
पुण्याहवाचने राज्ञः सुनन्दासहितां स्थिताम् ॥६॥
मन्द[4]प्रख्यायमानेन रूपेणाप्रतिमेन ताम्।
पिनद्धां[5] धूमजालेन प्रभामिव विभावसोः ॥७॥

---

१. M. W. **यूयम्**
२. M. W. **सम्पन्ने**
३. M. W. **अग्रहारांश्च**
४. M. W. **मन्दम्**
५. M. W. **निबद्धाम्**

नलोपाख्यान

सर्ग १६

बृहदश्व

जब नल के राज्य का अपहरण कर लिया गया और उन्होंने अपनी स्त्री दमयन्ती के साथ दासता स्वीकार कर ली तब उन्हें देखने की इच्छा से महाराज भीम ने ब्राह्मणों को चारों ओर भेज दिया ।।१।।

भीम ने उनको बहुत सा धन देकर यह आदेश दिया कि 'तुम लोग नल और मेरी पुत्री दमयन्ती की खोज कर लाओ ।।२।।

इस कार्य के हो जाने पर और निषधाधिपति महाराज नल का पता लग जाने पर जो कोई उन दोनों (नल और दमयन्ती) को ले आयेगा उसे मैं एक हजार गायें दूँगा और मैं उसे इतना अनुदान दूँगा कि वह गाँव को नगर की भाँति बना सके ।।३।।

नल और दमयन्ती का पता लगा लेने पर यदि कोई उन्हें यहाँ न भी ला सके तो भी मैं उसे एक हजार गायों का धन प्रदान करूँगा' ।।४।।

यह सुनकर ब्राह्मण लोग प्रसन्न होकर सभी दिशाओं को चले गये। पत्नी के साथ नल की खोज में उन्होंने नगरों और राष्ट्रों को छान डाला ।।५।।

तत्पश्चात् सुदेव नामक ब्राह्मण ने रमणीक चेदिराज की नगरी को खोजते खोजते राजभवन में दमयन्ती को देखा। वह सुनन्दा के साथ खड़ी हुई महाराज की विरुदावली गा रही थी ।।६।।

वह अप्रतिम रूपवती थी और ऐसे सौन्दर्य से युक्त थी जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार वह सूर्य की उस कान्ति के समान थी जो धुएँ से आच्छन्न रहती है ।।७।।

तां समीक्ष्य विशालाक्षीमधिकं मलिनां कृशाम्।
तर्कयामास भैमीति कारणैरुपपादयन्[1] ॥८॥
यथेयं मे पुरा दृष्टा तथारूपेयमङ्गना।
कृतार्थोऽस्म्यद्य दृष्ट्वेमां लोककान्तामिव श्रियम् ॥९॥
पूर्णचन्द्राननां[2] श्यामां चारुवृत्तपयोधराम्।
कुर्वन्तीं प्रभया देवीं सर्वा वितिमिरा दिशः ॥१०॥
चारुपद्मपलाशाक्षीं मन्मथस्य रतीमिव।
इष्टां **सर्वस्य जगतः**[3] पूर्णचन्द्रप्रभामिव ॥११॥
विदर्भसरसस्तस्माद्दैवदोषादिवोद्धृताम्।
मलपङ्कानुलिप्ताङ्गीं मृणालीमिव **तां भृशम्**[4] ॥१२॥
पौर्णमासीमिव निशां राहुग्रस्तनिशाकराम्।
पतिशोकाकुलां दीनां शुष्कस्रोतां नदीमिव ॥१३॥
विध्वस्तपर्णकमलां वित्रासितविहंगमाम्।
हस्तिहस्त**परिक्लिष्टां**[5] व्याकुलामिव पद्मिनीम् ॥१४॥
सुकुमारीं सुजाताङ्गीं रत्नगर्भगृहोचिताम्।
दह्यमानामि**वोष्णेन**[6] मृणालीम**चिरोद्धृताम्**[7] ॥१५॥
रूपौदार्यगुणोपेतां मण्डनार्हामिमण्डिताम्।
चन्द्रलेखामिव नवां व्योम्नि नीलाभ्रसंवृताम् ॥१६॥
कामभोगैः प्रियैर्हीनां हीनां बन्धुजनेन च।
देहं धारयतीं दीनां भर्तृदर्शनकाङ्क्षया ॥१७॥
भर्ता नाम परं नार्या भूषणं भूषणैर्विना।
एषा **वि**[8]रहिता तेन **शोभनापि**[9] न शोभते ॥१८॥

---

१. M. W. सुदेव उवाच
२. M. W. निभाम्
३. M. W. समस्तलोकस्य
४. M. W. चोद्धृताम्
५. M. W. परामृष्टाम्
६. M. W. इवार्केण
७. M. W. इव चोद्धृताम्
८. M. W. हि
९. M. W. शोभमाना

उस दीर्घ नेत्रों वाली, अधिक मलिन और कृश (स्त्री) को देखकर उसने यह अनुमान लगाया कि हो न हो यह दमयन्ती है ॥८॥

'यह स्त्री तो बिलकुल वैसी ही है जैसी मैं पहले देख चुका हूँ। इसकी शोभा तो संसार को मोहने वाली है। मैं इसे देखकर कृतार्थ हो गया हूँ ॥९॥

इसका मुख पूर्ण चन्द्रमा के समान है, इसका वर्ण श्याम और इसका स्तनमण्डल अत्यन्त सुन्दर है। यह अपनी प्रभा से सभी दिशाओं को अन्धकारहीन कर रही है ॥१०॥

इसके नेत्र कमलदल के समान हैं जिससे यह कामदेव की स्त्री रति के समान प्रतीत हो रही है। पूर्ण चन्द्रिका की भाँति यह सम्पूर्ण संसार की प्यारी है ॥११॥

ऐसा प्रतीत होता है मानो यह एक मृणालिनी है जो भाग्य के दोष से विदर्भरूपी तालाब से उखाड़ ली गई है। इसका शरीर कीचड़ तथा अन्य मलिनताओं से सना हुआ है ॥१२॥

यह उस पूर्णिमा की रात्रि के समान है जिसमें चन्द्रमा को राहु घेरे रहता है। पति-शोक से व्याकुल दीन दमयन्ती उस नदी के समान है जिसका प्रवाह सूख गया है ॥१३॥

यह उस कमलिनी के समान है जिसके पत्ते नष्ट हो चुके हैं, जिस पर से पक्षी भय-भीत होकर उड़ गए हैं और जो हाँथियों की सूँड से अस्त व्यस्त कर डाली गई है ॥१४॥

यह अत्यन्त सुकुमारी है और अपने सुन्दर अंगों के कारण यह रत्नों से युक्त भवनों में रहने के योग्य है। यह तो उस मृणालिनी के समान प्रतीत हो रही है जो अभी अभी उखाड़ ली गई है और गर्मी से झुलस रही है ॥१५॥

यह रूपवती और उदार है, आभूषणों के योग्य होते हुए भी यह आभूषणों से हीन है। यह तो आकाश में नील मेघों से घिरी हुई नवीन चन्द्रकला के समान प्रतीत हो रही है ॥१६॥

यह अपने प्रिय और अभीष्ठ भोग विलास से वंचित है, यह अपने बन्धुजनों से भी वियुक्त हो गई है। अपने पति के दर्शनों की लालसा से ही यह बेचारी शरीर धारण किए हुए है ॥१७॥

आभूषणों के न होने पर भी स्त्री का आभूषण पति ही हुआ करता है, किन्तु उससे वियुक्त होकर यह दमयन्ती सुन्दरी होते हुए भी शोभित नहीं हो रही है ॥१८॥

दुष्करं कुरुतेऽत्यर्थं हीनो यदनया नलः।
धारयत्यात्मनो देहं न शोकेनावसीदति ॥१९॥
इमामसितकेशान्तां शतपत्रायतेक्षणाम्।
सुखार्हां दुःखितां दृष्ट्वा ममापि व्यथते मनः। २०॥
कदा नु खलु दुःखस्य पारं यास्यति वै शुभा।
भर्तुः समागमात्साध्वी रोहिणी शशिनो यथा ॥२१॥
अस्या नूनं पुनर्लाभान्नैषधः प्रीतिमेष्यति।
राजा राज्यपरिभ्रष्टः पुनर्लब्ध्वैव[1] मेदिनीम् ॥२२॥
तुल्यशीलवयोयुक्तां तुल्याभिजनसंयुताम्।
नैषधोऽर्हति वैदर्भीं तञ्चेयमसितेक्षणा ॥२३॥
युक्तं तस्याप्रमेयस्य वीर्यसत्ववतो मया।
समाश्वासयितुं भार्यां पतिदर्शनलालसाम् ॥२४॥
अहमाश्वासयाम्येनां पूर्णचन्द्रनिभाननाम्।
अदृष्टपूर्वां दुःखस्य दुःखार्तां ध्यानतत्पराम् ॥२५॥

बृहदश्व उवाच

एवं विमृश्य विविधैः कारणैर्लक्षणैश्च ताम्।
उपगम्य ततो भैमीं सुदेवो ब्राह्मणोऽब्रवीत् ॥२६॥
अहं सुदेवो वैदर्भि भ्रातुस्ते दयितः सखा।
भीमस्य वचनाद्राज्ञस्त्वामन्वेष्टुमिहागतः ॥२७॥
कुशली ते पिता राज्ञि **जनित्री**[2] भ्रातरश्च ते।
आयुष्मन्तौ कुशलिनौ तत्रस्थौ दारकौ च **तौ**[3]।
त्वत्कृते बन्धुवर्गाश्च गतसत्वा इवासते ॥२८॥
अभिज्ञाय सुदेवं **तु**[4] दमयन्ती युधिष्ठिर।
पर्यपृच्छत्ततः[5] सर्वान्क्रमेण सुहृदः स्वकान् ॥२९॥

---

१. M. W. लब्ध्वा च
२. M. W. जननी
३. M. W. तौ
४. M. W. तम्
५. M. W. तान्

इससे वियुक्त होकर यदि नल शरीर धारण किये हुए हैं और अपने शोक से सन्तप्त नहीं हो रहे हैं तब तो वे अत्यन्त दुष्कर कर्म कर रहे हैं॥१९॥

इसे देखकर तो मेरा मन व्यथित हो रहा है क्योंकि यह सुख के योग्य होती हुई भी दुःख में पड़ी हुई है। इसके केश काले-काले और नेत्र कमलदल के समान बड़े बड़े हैं॥२०॥

यह साध्वी और सुन्दरी स्त्री न जाने अपने पति के समागम से कब उस प्रकार इस दुःख से पार होगी जिस प्रकार चन्द्रमा के समागम से रोहिणी दुःख से छुटकारा पा जाती है॥२१॥

इसको पुनः प्राप्त करके निश्चय ही महाराज नल उसी प्रकार प्रसन्न हो उठेंगे जिस प्रकार कोई राज्य से भ्रष्ट राजा पुनः पृथ्वी को प्राप्त करके प्रसन्न हो उठता है॥२२॥

निषधाधिपति नल दमयन्ती के योग्य हैं और सुन्दर नेत्रोंवाली यह दमयन्ती भी नल के योग्य है क्योंकि दोनों का शील और दोनों की अवस्था समान है। दोनों के सम्बन्धी भी एक ही जैसे हैं॥२३॥

मुझे तो इसे सान्त्वना ही देनी चाहिए क्योंकि वह अद्वितीय, वीर एवं पराक्रमी महाराज नल की पत्नी है और इसे अपने पति के दर्शनों की लालसा है॥२४॥

अच्छा, तो मैं इसे आश्वासन दे रहा हूँ क्योंकि इसका मुख चन्द्रमा के समान है, कभी दुःख को न देखकर भी यह दुःखी हो रही है और यह (अपने पति के) ध्यान में मग्न है'॥२५॥

बृहदश्व

इस प्रकार विभिन्न कारणों और लक्षणों से विचार करते हुए वह ब्राह्मण सुदेव दमयन्ती के समीप पहुँचकर उससे कहने लगा॥२६॥

'अयि दमयन्ति ! मैं तुम्हारे भाई का प्रियमित्र सुदेव हूँ, यहाँ पर महाराज भीम की आज्ञा से मैं तुम्हें खोजने के लिए चला आया हूँ॥२७॥

अयि महारानी जी ! आपके पिता, आपकी माता और आपके भाई कुशलपूर्वक हैं और आपके वे दोनों बच्चे भी सकुशल हैं, किन्तु आपके बन्धुजन आपके कारण चेतना-हीन से हो रहे हैं'॥२८॥

सुदेव को पहचान कर दमयन्ती क्रमशः अपने सुहृज्जनों के विषय में पूछने लगी॥२९॥

रुरोद च भृशं राजन्वैदर्भी शोककर्शिता।
दृष्ट्वा सुदेवं सहसा भ्रातुरिष्टं द्विजोत्तमम् ॥३०॥
ततो रुदन्तीं तां दृष्ट्वा सुनन्दा शोककर्शिताम्।
सुदेवेन सहैकान्ते कथयन्तीं च भारत ॥३१॥
जनित्र्यै प्रेषयामास[1] सैरन्ध्री **रुदते भृशम्**[2]।
ब्राह्मणेन समागम्य तां **वेद**[3] यदि मन्यसे ॥३२॥
अथ चेदिपतेर्माता राज्ञश्चान्तःपुरात्तदा।
जगाम यत्र सा बाला ब्राह्मणेन सहाभवत् ॥३३॥
ततः सुदेवमानाय्य राजमाता विशां पते।
पप्रच्छ भार्या कस्येयं सुता वा कस्य **भामिनी**[4] ॥३४॥
कथं च **नष्टा**[5] ज्ञातिभ्यो भर्तुर्वा वामलोचना।
त्वया च विदिता विप्र कथमेवंगता सती ॥३५॥
एतदिच्छाम्यहं **त्वत्तो ज्ञातुं**[6] सर्वमशेषतः।
तत्त्वेन हि ममाचक्ष्व पृच्छन्त्या देवरूपिणीम् ॥३६॥
एवमुक्तस्तया राजन्सुदेवो द्विजसत्तमः।
सुखोपविष्ट आचष्टे दमयन्त्या यथातथम् ॥३७॥

॥ इति नलोपाख्याने षोडशः सर्गः ॥१६॥

---

१. M. W. जनित्र्याः कथयामास
२. M. W. रोदतीति वै
३. M. W. वेत्थ
४. M. W. भाविनी
५. M. W. भ्रष्टा
६. M. W. श्रोतुं त्वत्तः

अपने भाई के प्रिय मित्र ब्राह्मण सुदेव को देखकर दमयन्ती शोक से विह्वल होकर सहसा रो पड़ी ॥३०॥

सुनन्दा ने देखा कि दमयन्ती शोक से व्याकुल हो रही है और वह एकान्त में सुदेव से बातचीत कर रही है ॥३१॥

उसने अपनी माता से कहा 'यह दासी बहुत रो रही है। यदि आप ठीक समझें तो ब्राह्मण (सुदेव) के पास जाकर इसका पता लगाइये' ॥३२॥

तदनन्तर चेदिराज की माता राजा के अन्तःपुर से वहाँ गई जहाँ दमयन्ती ब्राह्मण के साथ थी ॥३३॥

सुदेव को बुलाकर राजमाता ने उससे पूछा 'यह किसकी स्त्री और किसकी पुत्री है? ॥३४॥

यह सुन्दरी अपने परिचित जनों से अथवा अपने पति से कैसे अलग हो गई है? अये ब्राह्मण! यह तो मालूम करो कि इसकी यह अवस्था कैसे हो गई है ॥३५॥

मैं तुमसे यह सारा वृत्तान्त सम्पूर्णरूप से जानना चाहती हूँ। तुम इस सुन्दरी से पूछकर साररूप में मुझे सब कुछ बतला दो' ॥३६॥

यह सुनकर ब्राह्मणों में श्रेष्ठ सुदेव सुखपूर्वक बैठकर दमयन्ती से सारी बातें जानकर कहने लगे ॥३७॥

॥ नलोपाख्यान का सोलहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

सप्तदशः सर्गः

सुदेव उवाच

विदर्भराजो धर्मात्मा भीमो भीमपराक्रमः।
सुतेयं तस्य कल्याणी दमयन्तीति विश्रुता ॥१॥
राजा तु नैषधो नाम वीरसेनसुतो नलः।
भार्येयं तस्य कल्याणी पुण्यश्लोकस्य धीमतः ॥२॥
स वै द्यूते जितो[1] भ्रात्रा हृतराज्यो महीपतिः।
दमयन्त्या गतः सार्धं न प्राज्ञायत कर्हिचित् ॥३॥
ते वयं दमयन्त्यर्थे चरामः पृथिवीमिमाम्।
सेयमासादिता बाला तव पुत्रनिवेशने ॥४॥
अस्या रूपेण सदृशी मानुषी नेह विद्यते।
अस्याश्चैव भ्रुवोर्मध्ये सहजः पिप्लुरुत्तमः।
श्यामायाः पद्मसंकाशो लक्षितोऽन्तर्हितो मया ॥५॥
मलेन संवृतो ह्यस्यास्तन्वभ्रेणेव[2] चन्द्रमाः।
चिह्नभूतो विभूत्यर्थमयं धात्रा विनिर्मितः ॥६॥
प्रतिपत्कलुषेवेन्दोर्लेखा[3] नाति विराजते।
न चास्या नश्यते रूपं वपुर्मलसमाचितम्।
असंस्कृतमपि व्यक्तं भाति काञ्चनसंनिभम् ॥७॥

---

१. M. W. द्यूते निर्जितो २. M. W. इछन्नोऽभ्रेणेव
३. M. W. कलुषस्येन्दोः

नलोपाख्यान

सर्ग १७

सुदेव

'विदर्भराज भीम बहुत धर्मात्मा और पराक्रमी हैं। यह सुन्दरी उन्हीं की पुत्री है जो दमयन्ती के नाम से प्रसिद्ध है॥१॥

वीरसेन के पुत्र हैं नल जो कि निषधदेश के राजा हैं। यह सुन्दरी उन्हीं कीर्तिमान् एवं बुद्धिमान् महाराज नल की स्त्री है॥२॥

वह महाराज नल अपने भाई के द्वारा जुए में हार गये थे जिससे उनका राज्य छीन लिया गया था और तब वे दमयन्ती के साथ कहीं चले गए थे, पता नहीं कहाँ॥३॥

हम लोग इस पृथ्वी पर उस दमयन्ती के लिए ही विचरण कर रहे हैं। वह दमयन्ती आपके पुत्र के राजभवन में आ गई है॥४॥

इस संसार में दमयन्ती के समान रूपवती स्त्री और कोई है ही नहीं। इस सुन्दरी के भ्रूमध्य में मैंने एक उत्तम तिल देखा था जो उसके जन्म के साथ ही उत्पन्न हुआ था और जो कमल के समान था किन्तु अब वह विलीन हो गया है॥५॥

उसका वह तिल अब मलिनता से उसी प्रकार घिर गया है जिस प्रकार मेघ के द्वारा चन्द्रमा घिर जाता है। ब्रह्मा ने तो उसे ऐश्वर्य के चिह्न के रूप में बनाया था॥६॥

प्रतिपदा के चन्द्रमा की कला मलिन हो जाने के कारण शोभित नहीं हुआ करती है किन्तु इसका सौन्दर्य तो शरीर के मलयुक्त होने पर भी नष्ट नहीं हुआ है। बिना साज सवाँर के भी वह सोने की भांति शोभित हो रहा है॥७॥

अनेन वपुषा बाला पिप्लुनानेन **चैव ह**[1]।
लक्षितेयं मया देवी **पिहितो**[2]ऽग्निरिवोष्मणा ॥८॥

बृहदश्व उवाच

तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य सुदेवस्य विशां पते।
सुनन्दा शोधयामास पिप्लुप्रच्छादनं मलम् ॥९॥
स मलेनापकृष्टेन पिप्लुस्तस्या व्यरोचत।
दमयन्त्यास्तदा व्यभ्रे नभसीव निशाकरः ॥१०॥
पिप्लुं दृष्ट्वा सुनन्दा च राजमाता च भारत।
रुदन्त्यौ तां परिष्वज्य मुहूर्तमिव तस्थतुः।
उत्सृज्य वाष्पं शनकै राजमातेदमब्रवीत् ॥११॥
भगिन्या दुहिता मेऽसि पिप्लुनानेन सूचिता।
अहं च तव माता च **राजन्यस्य**[3] महात्मनः।
सुते दशार्णाधिपतेः सुदाम्नश्चारुदर्शने ॥१२॥
भीमस्य राज्ञः सा दत्ता वीरबाहोरहं पुनः।
त्वं तु जाता मया दृष्टा दशार्णेषु पितुर्गृहे ॥१३॥
यथैव ते पितुर्गेहं **तथेदमपि भामिनि**[4]।
यथैव हि[5] ममैश्वर्यं दमयन्ति तथा तव ॥१४॥
तां प्रहृष्टेन मनसा दमयन्ती विशां पते।
अभिवाद्य मातुर्भगिनीमिदं वचनमब्रवीत् ॥१५॥
अज्ञायमानापि सती **सुखमस्म्युषितेह वै**[6]।
सर्वकामैः सुविहिता रक्ष्यमाणा सदा त्वया ॥१६॥
सुखात्सुखतरो वासो भविष्यति न संशयः।
चिरविप्रोषितां मातर्मामनुज्ञातुमर्हसि ॥१७॥

---

१. M. W. **सूचिता**
२. M. W. **निभृतो**
३. M. W. **राज्ञस्तस्य**
४. M. W. **तथैव मम भाविनि**
५. M. W. **च**
६. M. W. **सुखमस्म्युषिता त्वयि**

इस शरीर और इस तिल के कारण यह सुन्दरी मुझे वैसी ही दिखाई दे रही है जैसे कि गर्मी के कारण अग्नि दिखाई पड़ती है' ॥८॥

बृहदश्व

सुदेव के इन वचनों को सुनकर सुनन्दा ने तिल को छिपा देने वाले मैल को साफ कर दिया ॥९॥

मल के नष्ट हो जाने पर दमयन्ती का वह तिल उसी प्रकार शोभित हो उठा जिस प्रकार आकाश में मेघों के छट जाने पर चन्द्रमा शोभित होने लगता है ॥१०॥

उस तिल को देखकर सुनन्दा और राजमाता रो पड़ीं। वे उसका आलिंगन करके क्षणभर के लिए खड़ी रह गईं। राजमाता आंसू बहाती हुई धीरे धीरे कहने लगी ॥११॥

'इस तिल से यह स्पष्ट हो गया कि तुम मेरी बहन की पुत्री हो। अयि सुन्दरि! मैं और तुम्हारी माता महाराज सुदामा की पुत्रियाँ हैं जो दशार्ण पर राज्य किया करते थे ॥१२॥

वह (तुम्हारी माता) भीम से विवाहित हो गई थी और मैं वीरबाहु से। तुम मेरे सामने ही मेरे पिता के घर में दशार्ण में उत्पन्न हुई थीं ॥१३॥

अयि सुन्दरि! जैसे तुम्हारे पिता का घर है वैसे तुम्हारे लिए यह घर भी है; जैसे मेरा ऐश्वर्य, वैसा तुम्हारा भी' ॥१४॥

दमयन्ती प्रसन्न होकर अपनी मौसी का अभिवादन करके कहने लगी ॥१५॥

'मैं अज्ञातरूप से भी यहाँ पर सुखपूर्वक रहती रही हूँ। मेरी सभी कामनाएँ पूरी होती रही हैं और आपके द्वारा मेरी सदैव रक्षा होती रही है ॥१६॥

अयि माता जी! अब मेरा यह निवास और भी अधिक सुखकर हो रहा है किन्तु मैं बहुत समय से अपने पति से वियुक्त हूँ इसलिए आप मुझे यहाँ से जाने की अनुज्ञा दीजिए ॥१७॥

दारकौ च हि मे नीतौ वसतस्तत्र बालकौ।
पित्रा विहीनौ शोकार्तौ मया चैव कथं नु तौ ॥१८॥
यदि चापि प्रियं किंचिन्मयि कर्तुमिहेच्छसि।
विदर्भान्यातुमिच्छामि शीघ्रं मे यानमादिश ॥१९॥
बाढमित्येव तामुक्त्वा हृष्टा मातृष्वसा नृप।
गुप्तां बलेन महता पुत्रस्यानुमते ततः ॥२०॥
प्रास्थापयद्राजमाता श्रीमती नरवाहिना।
यानेन भरतश्रेष्ठ **स्व**[1]**न्न**पानपरिच्छदाम् ॥२१॥
ततः सा नचिरादेव विदर्भानिगमच्छुभा[2]।
तां तु बन्धुजनः सर्वः प्रहृष्टः **प्रत्यपूजयत्**[3] ॥२२॥
सर्वान्कुशलिनो दृष्ट्वा बान्धवान्दारकौ च तौ।
मातरं पितरं **चैव**[4] सर्वं चैव सखीजनम् ॥२३॥
देवताः पूजयामास ब्राह्मणाश्च यशस्विनी।
विधिना परेण कल्याणी[5] दमयन्ती विशां पते ॥२४॥
अतर्पयत्सुदेवं च गोसहस्रेण पार्थिवः।
प्रीतो दृष्ट्वैव तनयां ग्रामेण द्रविणेन च ॥२५॥
सा व्युष्टा रजनीं तत्र पितुर्वेश्मनि **भामिनी**[6]।
विश्रान्ता मातरं राजन्निदं वचनमब्रवीत् ॥२६॥

॥ इति नलोपाख्याने सप्तदशः सर्गः ॥१७॥

---

१. M. W. **ह्यन्न**
२. M. W. **पुनः**
३. M. W. **समपूजयत्**
४. M. W. **चोभौ**
५. M. W. **परेण विधिना देवी**
६. M. W. **भाविनी**

मेरे दोनों बालक, मेरे पुत्र वहाँ पर रह रहे हैं। वे दोनों अपने पिता से तो वियुक्त हैं ही, मुझसे भी अलग रहकर उन पर न जाने क्या बीतती होगी ॥१८॥

यदि आप मेरी कुछ भलाई करना ही चाहती हैं तो आप मेरे लिए सवारी मँगा दीजिए। मैं शीघ्र ही विदर्भदेश को जाना चाहती हूँ' ॥१९॥

'अच्छा' कह कर दमयन्ती की मौसी ने प्रसन्नतापूर्वक, अपने पुत्र की सम्मति से, छिपकर रहनेवाली दमयन्ती को भेज दिया। उसने उसके साथ बहुत बड़ी सेना भेज दी और उसके साथ खाने-पीने और पहनने की सामग्री रख दी ॥२०-२१॥

तत्पश्चात् सुन्दरी दमयन्ती शीघ्र ही विदर्भदेश को चली गयी जहाँ पर उसके बन्धुओं ने प्रसन्न होकर उसका आदर-सत्कार किया ॥२२॥

दमयन्ती ने देखा कि उसके दोनों बच्चे, उसके भाई-बन्धु, उसकी सखियाँ सभी लोग कुशलपूर्वक हैं ॥२३॥

यह देखकर सुन्दरी और यशस्विनी दमयन्ती ने विधिपूर्वक देवी देवताओं की पूजा की ॥२४॥

अपनी पुत्री को देखकर महाराज भीम प्रसन्न हो गए और उन्होंने एक हजार गायों, ग्राम और धन से सुदेव को सन्तुष्ट कर दिया ॥२५॥

दमयन्ती ने रातभर अपने पिता के भवन में रहकर अपनी थकावट को दूर किया। तत्पश्चात् वह अपनी माता से इस प्रकार कहने लगी ॥२६॥

॥ नलोपाख्यान का सत्रहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

अष्टादशः सर्गः

दमयन्त्युवाच[1]

मां चेदिच्छसि जीवन्तीं मातः सत्यं ब्रवीमि ते।
नरवीरस्य **वै**[2] **तस्य** नलस्यानयने यत ॥१॥

बृहदश्व उवाच[3]

दमयन्त्या तथोक्ता तु सा देवी भृशदुःखिता।
वाष्पेण पिहिता[4] राजन्नोत्तरं किंचिदब्रवीत् ॥२॥
तदवस्थां तु तां दृष्ट्वा सर्वमन्तःपुरं तदा।
हाहाभूतमतीवासीद्भृशं च प्ररुरोद ह ॥३॥
ततो भीमं महाराजं भार्या वचनमब्रवीत्।
दमयन्ती तव सुता भर्तारमनुशोचति ॥४॥
अपकृष्य च लज्जां मां स्वयमुक्तवती नृप।
प्रयतन्तु तव प्रेष्याः पुण्यश्लोकस्य **दर्शने**[5] ॥५॥
तया **प्रचोदितो**[6] राजा ब्राह्मणान्वशवर्तिनः।
प्रास्थापयद्दिशः सर्वा यतध्वं नलदर्शने[7] ॥६॥
ततो विदर्भाधिपतेर्नियोगाद् **ब्राह्मणर्षभाः**[8]।
दमयन्तीमथो **दृष्ट्वा**[9] प्रस्थिताः स्मेत्यथाब्रुवन् ॥७॥

---

१. M. W. में यह सम्पूर्ण सर्ग पूर्ववर्ती सर्ग के साथ ही है।
२. M. W. चै
३. M. W. में नहीं है।
४. M. W. वाष्पेणाविहिता
५. M. W. मार्गणे
६. M. W. प्रदेशितो
७. M. W. मार्गणे
८. M. W. ब्राह्मणस्तदा
९. M. W. सृत्वा

नलोपाख्यान

सर्ग १८

दमयन्ती

'माता जी ! यदि आप मुझे जीवित देखना चाहती हैं तो मैं आप से सच सच कह रही हूँ कि आप मनुष्यों में श्रेष्ठ महाराज नल को लाने का उपाय कर दीजिए' ॥१॥

बृहदश्व

दमयन्ती के ऐसा कहने पर दमयन्ती की माता अत्यन्त दुःखी हो गईं। वह आँखों में आँसू भर कर दमयन्ती से कहने लगीं ॥२॥

दमयन्ती की इस अवस्था को देखकर सम्पूर्ण अन्तःपुर में हाहाकार मच गया और अन्तःपुरवासी ज़ोर ज़ोर से रोने लगे ॥३॥

तत्पश्चात् भीम की स्त्री ने उनसे कहा 'अये राजन् ! आपकी पुत्री दमयन्ती अपने पति के लिये शोक कर रही है ॥४॥

उसने तो अपनी सारी लज्जा को छोड़कर स्वयं ही मुझसे यह कह दिया है कि आपके दूत पुण्यात्मा नल को खोजने का प्रयत्न करें' ॥५॥

अपनी पत्नी के द्वारा प्रेरित होकर महाराज भीम ने अपने अधीनस्थ ब्राह्मणों को सभी दिशाओं में यह कह कर भेज दिया—'तुम लोग नल को खोजने का प्रयत्न करो' ॥६॥

तत्पश्चात् विदर्भाधिपति भीम की आज्ञा से सभी श्रेष्ठ ब्राह्मणों ने दमयन्ती के पास जाकर कहा—'देखो, हम लोग (नल की खोज में) जा रहे हैं' ॥७॥

अथ तानब्रवीद्भैमी सर्वराष्ट्रेष्विदं वचः।
ब्रुवध्वं[1] जनसंसत्सु तत्र तत्र पुनः पुनः ॥८॥
क्व नु त्वं कितव छित्त्वा वस्त्रार्धं प्रस्थितो मम।
उत्सृज्य विपिने सुप्तामनुरक्तां प्रियां प्रिय ॥९॥
सा वै यथा समादिष्टा त[2]त्रास्ते त्वत्प्रतीक्षिणी।
दह्यमाना भृशं बाला वस्त्रार्धेनाभिसंवृता ॥१०॥
तस्या रुदन्त्याः सततं तेन शोकेन पार्थिव।
प्रसादं कुरु वै वीर प्रतिवाक्यं दद[3]स्व च ॥११॥
एतदन्यच्च वक्तव्यं कृपां कुर्याद्यथा मयि।
वायुना धूयमानो हि वनं दहति पावकः ॥१२॥
भर्तव्या रक्षणीया च पत्नी हि पतिना सदा।
तन्नष्टमुभयं कस्माद्धर्मज्ञस्य सतस्तव ॥१३॥
ख्यातः प्राज्ञः कुलीनश्च **सानुक्रोशश्च त्वं सदा**[4]।
संवृत्तो निरनुक्रोशः शंके मद्भाग्यसंक्षयात् ॥१४॥
स कुरुष्व **महेष्वास**[5] दयां मयि **नरर्षभ**[6]।
आनृशंस्यं परो धर्मस्त्वत्त एव **हि मे**[7] श्रुतम् ॥१५॥
एवं ब्रुवाणान्यदि वः प्रतिब्रूयाद्धि कश्चन।
स नरः सर्वथा ज्ञेयः कश्चासौ क्व च वर्तते ॥१६॥
यच्चैवं वचनं श्रुत्वा ब्रूयात्प्रतिवचो नरः।
तदादाय वचः **क्षिप्रं**[8] ममावेद्यं द्विजोत्तमाः ॥१७॥
यथा च वो न जानीयाच्**चरतो**[9] **भीम**शासनात्।
पुनरागमनं चैव तथा कार्यमतन्द्रितैः ॥१८॥

---

१. M. W. **ब्रूयास्त**
२. M. W. **तथा**
३. M. W. **वदस्व**
४. M. W. **सानुक्रोशो भवान् सदा**
५. M. W. **नरव्याघ्र**
६. M. W. **नरेश्वर**
७. M. W. **मया**
८. M. W. **तस्य**
९. M. W. **ब्रुवतो मम**

दमयन्ती ने उन लोगों से कहा—'आप लोग सभी राष्ट्रों और जनसमूहों में जाकर बार बार यह कहिए कि "अये वञ्चक ! मेरे आधे वस्त्र को काटकर और वन में सोई हुई अपनी प्यारी पत्नी को छोड़कर तुम कहाँ चले गए हो ॥८-९॥

वह तो आपकी आज्ञानुसार आपकी प्रतीक्षा करती हुई वहीं पड़ी हुई है। अपने आधे वस्त्र से ढकी हुई वह बेचारी विरह से अत्यधिक जलती रहती है ॥१०॥

अये राजन् ! इस शोक से सदैव रोती हुई उस दमयन्ती पर कृपा कीजिए, उसे उत्तर दीजिए" ॥११॥

यह तो कहना ही, इसके अतिरिक्त और भी कुछ कहियेगा जिससे वह मुझ पर कृपा कर सकें। क्योंकि वायु के द्वारा हवा किए जाने पर अग्नि वन को जला डालती है ॥१२॥

पति को सदैव अपनी पत्नी का भरण पोषण और उसकी रक्षा करनी चाहिए। आप तो धर्मज्ञ हैं फिर आप इन दोनों ही कर्मों को क्यों नहीं कर रहे हैं ॥१३॥

आप सदा ही बुद्धिमान्, कुलीन और दयावान् प्रसिद्ध हैं। इसलिए मैं समझती हूँ कि आप मेरे भाग्य के नष्ट हो जाने के कारण ही इस प्रकार निर्दयी हो गए हैं ॥१४॥

अये वीर ! अये पुरुषोत्तम ! आप मेरे ऊपर दया कीजिए। दयालुता ही सबसे बड़ा धर्म है, यह तो मैंने आप से ही सुना है ॥१५॥

यदि तुम लोगों के ऐसा कहने पर वह कोई उत्तर दे दें तो तुम लोग पता लगाना कि वह मनुष्य कौन है और कहाँ हैं ॥१६॥

इन वचनों को सुनकर वह मधुरभाषी पुरुष जो कुछ भी कहे उसे तुम लोग आकर मुझसे बता देना ॥१७॥

तुम लोग सावधान होकर ऐसा काम करना जिससे महाराज भीम की आज्ञा से घूमते हुए और लौट कर आये हुए तुम लोगों को वह जान न सके ॥१८॥

यदि वासौ समृद्धः स्याद्यदि वाप्यधनो भवेत्।
यदि वाप्यर्थकामः स्याज्ज्ञेयमस्य[1] चिकीर्षितम् ॥१९॥
एवमुक्तास्त्वगच्छंस्ते ब्राह्मणाः सर्वतोदिशम्[2]।
नलं मृगयितुं राजंस्तथा[3] व्यसनिनं तदा[4] ॥२०॥
ते पुराणि सराष्ट्राणि ग्रामान्घोषांस्तथाश्रमान्।
अन्वेषन्तो नलं राजन्नाधिजग्मुर्द्विजातयः ॥२१॥
तच्च वाक्यं तथा सर्वं तत्र तत्र विशां पते।
श्रावयांचक्रिरे विप्रा दमयन्त्या यथेरितम् ॥२२॥

॥ इति नलोपाख्याने अष्टादशः सर्गः ॥१८॥

---

१. M. W. तस्य
२. M. W. दिशः
३. M. W. तदा
४. M. W. तथा

तुम लोग यह भी पता लगाना कि वह समृद्ध हैं अथवा धनहीन, वह क्या चाहता है और क्या करना चाहता है' ॥१९॥

इस प्रकार कहने पर वे सभी ब्राह्मण दुःखी नल को खोजने के लिये सभी दिशाओं ग्रामों, पल्लियों और आश्रमों में खोजते खोजते नल के पास पहुँच गये ॥२०-२१॥

दमयन्ती के द्वारा जो कुछ कहा गया था उन वचनों को सभी ब्राह्मणों ने इधर उधर सुनाया ॥२२॥

॥ नलोपाख्यान का अठारहवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

एकोनविंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

अथ दीर्घस्य कालस्य पर्णादो नाम वै द्विजः।
प्रत्येत्य नगरं भैमीमिदं वचनमब्रवीत् ॥१॥

नैषधं मृगयानेन दमयन्ति **दिवानिशम्**[1]।
अयोध्यानगरीं गत्वा **भाङ्गस्वरिरुपस्थितः**[2] ॥२॥

श्रावितश्च मया वाक्यं त्वदीयं स **महाजने**[3]।
ऋतुपर्णो महाभागो यथोक्तं वरवर्णिनि ॥३॥

तच्छ्रुत्वा नाब्रवीत्किंचिद्ऋतुपर्णो नराधिपः।
न च पारिषदः कश्चिद्भाष्यमाणो मयासकृत् ॥४॥

अनुज्ञातं तु मां **राजा**[4] विजने कश्चिदब्रवीत्।
ऋतुपर्णस्य पुरुषो बाहुको नाम नामतः ॥५॥

सूतस्तस्य नरेन्द्रस्य विरूपो ह्रस्वबाहुकः।
शीघ्रयाने सुकुशलो[5] **मृष्टकर्ता**[6] च भोजने ॥६॥

स विनिःश्वस्य बहुशो रुदित्वा च **मुहुर्मुहुः**[7]।
कुशलं चैव मां पृष्ट्वा पश्चादिदमभाषत ॥७॥

---

१. M. W. **मया नलम्**
२. M. W. **भांगासुरि**
३. M. W. **महामते**
४. M. W. **राज्ञा**
५. M. W. **शीघ्रयानेषु कुशलो**
६. M. W. **मिष्टकर्ता**
७. M. W. **पुनः पुनः**

नलोपाख्यान

सर्ग १९

बृहदश्व

बहुत समय पश्चात् पर्णाद नामक एक ब्राह्मण नगर में लौट आया। वह दमयन्ती से इस प्रकार कहने लगा ॥१॥

'अयि दमयन्ति! महाराज नल को खोजते खोजते मैं अयोध्या नगरी में जाकर भांगस्वरि के आश्रम में पहुँच गया ॥२॥

अयि सुन्दरि! आपने जो कुछ कहा था उसे मैंने जनसमूह में जाकर सौभाग्यशाली ऋतुपर्ण से कह सुनाया ॥३॥

उसे सुनकर महाराज ऋतुपर्ण कुछ भी न बोले। मेरे द्वारा बार बार कहने पर भी उनके पारिषदों में से किसी ने कुछ भी नहीं कहा, किन्तु महाराज ऋतुपर्ण की आज्ञा पाकर उनके बाहुक नामक सेवक ने एकान्त में कुछ कहा था ॥४-५॥

महाराज ऋतुपर्ण का एक सारथी था जो बहुत कुरूप था, और उसकी भुजायें छोटी छोटी थीं। वह रथ चलाने में और भोजन पकाने में कुशल था ॥६॥

पहले तो उसने लम्बी लम्बी आहें भरीं, फिर रोने लगा और रोता ही रहा। तत्पश्चात् मेरी कुशल को पूँछ कर इस प्रकार कहने लगा' ॥७॥

वैषम्यमपि संप्राप्ता गोपायन्ति कुलस्त्रियः।
आत्मानमात्मना सत्यो जितस्वर्गा न संशयः।
रहिता भर्तृभिश्चैव न क्रुध्यन्ति कदाचन[1] ॥८॥
विषमस्थेन मूढेन परिभ्रष्टसुखेन च।
यत्सा तेन परित्यक्ता तत्र न क्रोद्धुमर्हति ॥९॥
प्राणयात्रां परिप्रेप्सोः शकुनैर्हृतवाससः॥
आधिभिर्दह्यमानस्य **श्यामा न क्रोद्धुमर्हति** ॥१०॥
सत्कृतासत्कृता वापि पतिं दृष्ट्वा तथागतम्।
भ्रष्टराज्यं श्रिया हीनं श्यामा न क्रोद्धुमर्हति[2] ॥११॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा त्वरितोऽहमिहागतः।
श्रुत्वा प्रमाणं भवती राज्ञश्चैव निवेदय ॥१२॥
एतच्छ्रुत्वाश्रुपूर्णाक्षी पर्णादस्य विशाम्पते।
दमयन्ती रहोऽभ्येत्य मातरं प्रत्यभाषत ॥१३॥
अयमर्थो न संवेद्यो भीमे मातः कथंचन।
त्वत्संनिधौ **समादेक्ष्ये**[3] सुदेवं द्विजसत्तमम् ॥१४॥
यथा न नृपतिर्भीमः प्रतिपद्येत मे **मतम्**[4]।
तथा त्वया प्रयत्तव्यं मम चेत्प्रियमिच्छसि ॥१५॥
यथा चाहं समानीता सुदेवेनाशु बान्धवान्।
तेनैव मङ्गलेनाशु सुदेवो यातु माचिरम्।
समानेतुं नलं मातरयोध्यां नगरीमितः ॥१६॥
विश्रान्तं **च**[5] ततः पश्चात्पर्णादं द्विजसत्तमम्।
अर्चयामास वैदर्भी धनेनातीव **भामिनी**[6] ॥१७॥
नले चेहागते विप्र भूयो दास्यामि ते वसु।
त्वया हि मे बहु कृतं यथा नान्यः करिष्यति।
यद्भर्त्राहं समेष्यामि शीघ्रमेव द्विजोत्तम ॥१८॥

---

१. M. W. **प्राणांश्चारित्रकवचान् धारयन्ति वरस्त्रियः।**
२. M. W. **क्षुधितं व्यसनाप्लुतम्** ३. M. W. **नियोक्ष्येऽहम्**
४. M. W. **मतिम्** ५. M. W. **तु**
६. M. W. **भाविनी**

'कुलवधुयें विपत्ति में भी अपनी रक्षा आप ही कर लेती हैं। और इस प्रकार वे निश्चय ही स्वर्ग को भी प्राप्त कर लेती हैं। अपने पतियों से वियुक्त होने पर भी वे कभी क्रोध नहीं करती हैं ॥८॥

उसे क्रोध नहीं करना चाहिए क्योंकि उसे जो मनुष्य छोड़ गया था वह विपत्ति में पड़ा हुआ था, मोहग्रस्त था और सुखों से वञ्चित हो चुका था ॥९॥

उस सुन्दरी (दमयन्ती) को उस मनुष्य पर क्रोध नहीं करना चाहिये जिसके वस्त्र को पक्षियों ने छीन लिया है और जो किसी प्रकार जीवित रहने का इच्छुक है ॥१०॥

चाहे उसका सम्मान किया गया हो अथवा असम्मान उस सुन्दरी को उसके आने पर क्रोध नहीं करना चाहिए जिसका राज्य छिन गया है और जो धनहीन हो गया है ॥११॥

'उसके इन शब्दों को सुनकर मैं शीघ्र ही यहाँ पर चला आया हूँ। अब आप स्वयं ही सारी बात समझ लीजिये और उसे महाराज से भी बतला दीजिये' ॥१२॥

पर्णाद की इस बात को सुनकर रोती हुई दमयन्ती एकान्त में जाकर अपनी माता जी से कहने लगी ॥१३॥

'अयि माता जी ! आप के सम्मुख मैं इस ब्राह्मणश्रेष्ठ सुदेव को कुछ आदेश दूँगी, किन्तु आप उसे महाराज भीम से न कहियेगा ॥१४॥

यदि आप मेरी भलाई चाहती हैं तो आपको ऐसा ही प्रयत्न करना चाहिये जिससे महाराज भीम मेरे मन की बात न जान सकें ॥१५॥

अयि माता जी ! जिस कल्याण की भावना से इस सुदेव ने शीघ्र ही मुझे अपने बन्धु-जनों के पास पहुँचा दिया है। उसी भावना से महाराज नल को यहाँ लाने के लिये यह सुदेव यहाँ से अयोध्या को चले जायें' ॥१६॥

अब ब्राह्मण श्रेष्ठ पर्णाद विश्राम कर चुके थे इसलिये सुन्दरी दमयन्ती ने बहुत धन देकर उनका आदर-सत्कार किया ॥१७॥

(उसने कहा) 'अये ब्राह्मण ! जब महाराज नल यहाँ आ जायेंगे तब मैं फिर आपको बहुत सा धन दूँगी। अये ब्राह्मणश्रेष्ठ ! यदि यहाँ मेरा अपने पति से सम्मिलन हो जायेगा तब तो समझिये कि आपने वह कार्य किया है जिसे कोई दूसरा कर ही नहीं सकेगा' ॥१८॥

एवमुक्तोऽर्चयित्वा[1] तामाशीर्वादैः सु[2]मङ्गलैः।
गृहानुपययौ चापि कृतार्थः स[3] महामनाः ॥१९॥
ततश्चानाय्य तं विप्रं[4] दमयन्ती युधिष्ठिर।
अब्रवीत्संनिधौ मातुर्दुःखशोकसमन्विता ॥२०॥
गत्वा सुदेव नगरीमयोध्यावासिनं नृपम्।
ऋतुपर्णं वचो ब्रूहि पतिमन्यं चिकीर्षती[5]।
आस्थास्यति पुनर्भैमी दमयन्ती स्वयंवरम् ॥२१॥
तत्र गच्छन्ति राजानो राजपुत्राश्च सर्वशः।
यथा च गणितः कालः श्वोभूते स भविष्यति ॥२२॥
यदि संभावनीयं[6] ते गच्छ शीघ्रमरिंदम।
सूर्योदये द्वितीयं सा भर्तारं वरयिष्यति।
न हि स ज्ञायते वीरो नलो जीवन्मृतोऽपि वा[7] ॥२३॥
एवं तया यथोक्तं वै गत्वा राजानमब्रवीत्।
ऋतुपर्णं महाराज सुदेवो ब्राह्मणस्तदा ॥२४॥

॥ इति नलोपाख्याने एकोनविंशतितमः सर्गः ॥१९॥

---

१. M. W. ऽथाश्वास्य
२. M. W. स
३. M. W. सु
४. M. W. ततः सुदेवमाभाष्य
५. M. W. सम्पतन्निव कामगः
६. M. W. यस्
७. M. W. जीवति वा न वा

दमयन्ती की इस बात को सुनकर मनस्वी ब्राह्मण ने उसे मंगलवचनों से आशीर्वाद दिया और स्वयं कृतकृत्य होकर अपने घर चला गया॥१९॥

दमयन्ती ब्राह्मण पर्णाद को अपनी माता के समीप ले जाकर कहने लगी। उस समय वह अत्यन्त दुःखी थी॥२०॥

'अये सुदेव! तुम उस नगरी को जाना जहाँ अयोध्या-नरेश रहते हैं। वहाँ जाकर ऋतुपर्ण से कहना—"दमयन्ती दूसरे पति की कामना कर रही है अतः वह एक स्वयम्बर की तैयारी में है॥२१॥

चारों ओर से सभी राजागण एवं राजकुमार वहीं चले जा रहे हैं। (ज्योतिष्) गणना के अनुसार (स्वयम्बर का) वह समय कल ही है॥२२॥

अये शत्रुओं का दमन करने वाले महाराज! यदि सम्भव हो तो आप वहाँ शीघ्र ही चले जाइये। सूर्योदय होते ही दमयन्ती अपने लिये दूसरे पति का वरण कर लेगी क्योंकि यह कुछ पता नहीं चल रहा है कि महावीर नल जीवित हैं अथवा मर गये हैं"॥२३॥

ब्राह्मण सुदेव ने जाकर महाराज ऋतुपर्ण से वैसा ही निवेदन कर दिया जैसा उससे कहा गया था॥२४॥

॥ नलोपाख्यान का उन्नीसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

विंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

श्रुत्वा वचः सुदेवस्य ऋतुपर्णो नराधिपः।
सान्त्वयन् श्लक्ष्णया वाचा बाहुकं प्रत्यभाषत ॥१॥
विद[1]र्भान्यातुमिच्छामि दमयन्त्याः स्वयंवरम्।
एकाह्ना ह्यतत्वज्ञ मन्यसे यदि बाहुक ॥२॥
एवमुक्तस्य कौन्तेय तेन राज्ञा नलस्य ह।
व्यदीर्यत मनो दुःखात्प्रदध्यौ च महामनाः ॥३॥
दमयन्ती **भ[2]वेदे**तत्कुर्याद्दुःखेन मोहिता।
अस्मदर्थे भवेद्वायमुपायश्चिन्तितो महान् ॥४॥
नृशंसं बत वैदर्भी कर्तुकामा तपस्विनी।
मया क्षुद्रेण निकृता **पापेनाकृतबुद्धिना**[3] ॥५॥
स्त्रीस्वभावश्चलो लोके मम दोषश्च दारुणः।
स्यादेवमपि कुर्यात्सा **विवशा**[4] गतसौहृदा।
मम शोकेन संविग्ना नैराश्यात्तनुमध्यमा ॥६॥
न चैवं कर्हिचित्कुर्यात्सापत्या च विशेषतः।
यदत्र **तथ्यं पथ्यं च**[5] गत्वा वेत्स्यामि निश्चयम्।
ऋतुपर्णस्य वै काममात्मार्थं च करोम्यहम् ॥७॥

---

१. M. W. **विदर्भाम्**
२. M. W. **वदे**
३. M. W. **कृपणा पापबुद्धिना**
४. M. W. **विवासाद्**
५. M. W. **सत्यं वाऽसत्यम्**

नलोपाख्यान

सर्ग २०

बृहदश्व

सुदेव के इन वचनों को सुनकर महाराज ऋतुपर्ण मीठी मीठी वाणी में बाहुक को सान्त्वना देते हुए कहने लगे ॥१॥

'अये बाहुक ! मैं एक ही दिन में दमयन्ती के स्वयम्वर में भाग लेने के लिए विदर्भ देश को पहुँच जाना चाहता हूँ। तुम तो घोड़ों के विषय में विशेष जानकारी रखते हो, जो कुछ ठीक समझते हो (कहो)' ॥२॥

महाराज ऋतुपर्ण के इस प्रकार कहने पर नल का हृदय विदीर्ण हो गया। मनस्वी नल विचार करने लगे ॥३॥

'अरे ! दमयन्ती क्या ऐसी हो सकती है ? दुःख से पीड़ित होकर क्या वह यह सब कर सकती है ? अथवा मेरे (विषय में ज्ञान प्राप्त करने के) लिए यह महान् उपाय सोचा गया है ॥४॥

कितने आश्चर्य की बात है कि बेचारी दमयन्ती इस निर्दय कर्म को करने के लिए उद्यत हो गयी है। (किन्तु), क्षुद्र, पापी एवं बुद्धिहीन मेरे द्वारा ही तो उसका अपकार किया गया है ॥५॥

संसार में स्त्रियों का स्वभाव तो चञ्चल (प्रसिद्ध) है ही, इसमें मेरा भी बहुत बड़ा दोष है। सम्भव है सौहार्द नष्ट हो जाने के कारण वह विवश होकर यह भी कर डाले क्योंकि इस समय वह कृशोदरी दमयन्ती निराशा के कारण शोक से बहुत ही उद्विग्न रहने लगी है ॥६॥

ऐसा तो वह कभी भी नहीं कर सकती है, विशेषरूप से अपने पति के साथ तो नहीं ही कर सकती है; तथापि मैं जाकर यह निश्चयपूर्वक देखूँगा कि क्या तथ्य है और क्या उसका उपाय है। इस प्रकार मैं अपने (लाभ के) लिए ऋतुपर्ण की इच्छा को अवश्य ही पूर्ण करूँगा' ॥७॥

इति निश्चित्य मनसा बाहुको दीनमानसः।
कृताञ्जलिरुवाचेदमृतुपर्णं नराधिपम् ॥८॥
प्रतिजानामि ते **सत्यं**[1] **गमिष्यसि** नराधिप।
एकाह्ना पुरुषव्याघ्र विदर्भनगरीं नृप ॥९॥
ततः परीक्षामश्वानां चक्रे राजन्स बाहुकः।
अश्वशालामुपागम्य **भा**[2]**ङ्गस्वरि**नृपाज्ञया ॥१०॥
स त्वर्यमाणो बहुश ऋतुपर्णेन बाहुकः[3]।
अध्यगच्छत्कृशानश्वान्समर्थानध्वनि क्षमान् ॥११॥
तेजोबलसमायुक्तान्कुलशीलसमन्वितान् [illegible]।
वर्जिताँल्लक्षणैर्हीनैः पृथुप्रोथान्महाहनून्।
शुद्धान्दशभिरावर्तैः सिन्धुजान्वातरंहसः ॥१२॥
दृष्ट्वा तानब्रवीद्राजा किंचित्कोपसमन्वितः।
किमिदं प्रार्थितं कर्तुं प्रलब्धव्या हि ते वयम् ॥१३॥
कथमल्पबलप्राणा वक्ष्यन्तीमे हया मम।
महानध्वा च तुरगैर्गन्तव्यः[4] कथमीदृशैः ॥१४॥

बाहुक उवाच[5]

एते हया गमिष्यन्ति विदर्भान्नात्र संशयः।
अ[6]**थान्यान्**मन्यसे राजन्ब्रूहि **का**[7]**न्योजयामि** ते ॥१५॥

ऋतुपर्ण उवाच

त्वमेव हयतत्त्वज्ञः **कुशलश्चासि**[8] बाहुक।
यान्मन्यसे समर्थास्त्वं क्षिप्रं तानेव योजय ॥१६॥

---

१. M. W. **वाक्यम् गमिष्यामि**
२. M. W. **भांगसुरि**
३. M. W. **अश्वान् जिज्ञासमानो वै विचार्य च पुनः पुनः।**
४. M. W. **महदध्वानमपि च गन्तव्यम्**
५. M. W. **एको ललाटे द्वौ मूर्ध्नि द्वौ द्वौ पार्श्वोपपार्श्वयोः।**
द्वौ द्वौ वक्षसि विज्ञेयौ प्रयाणे चैक एव तु ॥
६. M. W. **यान्** ७. **तान्**
८. M. W. **कुशलो ह्यसि**

मन में इस प्रकार विचार करके दुःखी मन से बाहुक महाराज ऋतुपर्ण के पास गया और हाथ जोड़कर उनसे कहने लगा ॥८॥

'अये पुरुषसिंह ! महाराज ! ! मैं आपको यह वचन देता हूँ कि आप निश्चय ही एक दिन में विदर्भ नगरी को पहुँच जायेंगे' ॥९॥

महाराज भांगस्वरि की आज्ञा से बाहुक अश्वशाला को गया और वहाँ जाकर उसने सभी घोड़ों की परीक्षा की ॥१०॥

ऋतुपर्ण बड़ी जल्दी में थे। उनके द्वारा बार बार जल्दी करने पर बाहुक उन घोड़ों के पास गया जो बहुत दुबले पतले किन्तु मार्ग को तै करने में समर्थ थे ॥११॥

वे घोड़े तेजस्वी एवं बलवान् थे, अच्छे कुल में उत्पन्न और शीलवान् थे, उनमें (अश्वशास्त्र में) वर्जित कोई भी लक्षण न था और उनके नथुने तथा जबड़े बड़े बड़े थे। वे (शरीर पर बनी हुई) दस भंवरियों के कारण बिलकुल शुद्ध थे, वे सिन्धुदेश में उत्पन्न हुए थे तथा वायु के समान वेगगामी थे ॥१२॥

उन (दुबले पतले) घोड़ों को देखकर महाराज ऋतुपर्ण कुछ क्रुद्ध हो उठे। वह कहने लगे—'क्या तुमसे यही करने को कहा गया था, क्या तुम हमसे इस प्रकार कपट करना चाहते हो ? ॥१३॥

मेरे ये घोड़े इतने दुर्बल एवं निष्प्राण क्यों दिखाई दे रहे हैं ? इतना लम्बा मार्ग है, इन घोड़ों से उसे कैसे तय किया जा सकता है ?' ॥१४॥

बाहुक

'महाराज ! इसमें तनिक भी संशय नहीं कि ये घोड़े विदर्भ देश तक पहुँच जायेंगे, फिर भी आप जिन दूसरे घोड़ों को इसके योग्य समझते हों उन्हें बतलाइये। मैं उन्हें ही (आपके लिए रथ में) जोत दूँगा' ॥१५॥

ऋतुपर्ण

'अरे बाहुक ! तुम स्वयं ही घोड़ों के विषय में इतना ज्ञान रखते हो। तुम जिन्हें (इस लम्बे मार्ग को तय करने में) समर्थ समझो उन्हें ही जोत दो, किन्तु शीघ्रता करो' ॥१६॥

बृहदश्व उवाच

ततः सदश्वांश्चतुरः कुलशीलसमन्वितान् ।
योजयामास कुशलो जवयुक्तान्रथे नलः ॥१७॥
ततो युक्तं रथं राजा समारोहत्त्वरान्वितः ।
अथ पर्यपतन्भूमौ जानुभिस्ते हयोत्तमाः ॥१८॥
ततो नरवरः श्रीमान्नलो राजा विशाम्पते ।
सान्त्वयामास तानश्वांस्तेजोबलसमन्वितान् ॥१९॥
रश्मिभिश्च समुद्यम्य नलो यातुमियेष सः ।
सूतमारोप्य वार्ष्णेयं जवमास्थाय वै परम् ॥२०॥
ते चोद्यमाना **विधिना**[1] बाहुकेन हयोत्तमाः ।
समुत्पेतुरि[2]वाकाशं रथिनं मोहयन्निव ॥२१॥
तथा तु दृष्ट्वा तानश्वान्वहतो वातरंहसः ।
अयोध्याधिपतिर्धी[3]मान्विस्मयं परमं ययौ ॥२२॥
रथघोषं तु तं श्रुत्वा हयसंग्रहणं च तत् ।
वार्ष्णेयश्चिन्तयामास बाहुकस्य हयज्ञताम् ॥२३॥
किं नु स्यान्मातलिरयं देवराजस्य सारथिः ॥
तथा **हि**[4] लक्षणं वीरे बाहुके दृश्यते महत् ॥२४॥
शालिहोत्रोऽथ किं नु स्याद्धयानां कुलतत्त्ववित् ।
मानुषं समनुप्राप्तो वपुः परमशोभनम् ॥२५॥
उताहो स्विद्भवेद्राजा नलः परपुरंजयः ।
सोऽयं नृपतिरायात **इत्येवं**[5] समचिन्तयत् ॥२६॥
अथ वा यां नलो वेद विद्यां तामेव बाहुकः ।
तुल्यं हि लक्षये ज्ञानं बाहुकस्य नलस्य च ॥२७॥

---

१. M. W. **विधिवद्**
२. M. W. **रथ**
३. M. W. **श्रीमान्**
४. M. W. **तत्**
५. M. W. **इत्येव**

बृहदश्व

तत्पश्चात् नल ने ऋतुपर्ण के रथ में ऐसे चार घोड़ों को जोत दिया जो देखने में सुन्दर थे, अच्छी जाति के थे, शीलवान् और वेगवान् भी थे॥१७॥

घोड़ों से जुते हुये रथ में महाराज ऋतुपर्ण शीघ्र ही चढ़ गये। रथ में जुते हुये घोड़े अपने घुटनों (की शक्ति) से भूमि पर दौड़ने लगे॥१८॥

श्रीमान् महाराज नल ने तेज और बल से युक्त उन घोड़ों के वेग को कम किया॥१९॥

(घोड़ों की) लगामों को पकड़कर वार्ष्णेय नामक सारथी को रथ में बिठलाकर वह बड़े वेग से चल पड़े॥२०॥

बाहुक के द्वारा विधिपूर्वक हाँके जाते हुए घोड़े मानों आकाश में उड़ने लगे जिससे रथ में बैठे हुये ऋतुपर्ण मोह में पड़ गये॥२१॥

बुद्धिमान् अयोध्यानरेश ने वायु के समान वेगवान् घोड़ों को जाते हुए देखा। इससे वह अत्यन्त आश्चर्य में पड़ गये॥२२॥

रथ के उस निर्घोष को सुनकर और घोड़ों के नियन्त्रण को देखकर वार्ष्णेय बाहुक के अश्वज्ञान के विषय में विचार करने लगे॥२३॥

क्या यह बाहुक देवराज इन्द्र का सारथी मातलि तो नहीं है। क्योंकि इस वीर में वैसा ही लक्षण दिखलाई पड़ रहा है॥२४॥

क्या यह घोड़ों के कुल और उनके बल का ज्ञाता शालिहोत्र तो नहीं है जिसने इस सुन्दर मनुष्य-शरीर को प्राप्त कर लिया है'॥२५॥

वह सोच रहा था—'अथवा क्या यह शत्रुनगरों पर विजय प्राप्त कर लेनेवाले महाराज नल ही तो नहीं आ गए हैं॥२६॥

जिस विद्या को नल जानते हैं उसी विद्या को यह बाहुक भी जानता है। मुझे तो नल और बाहुक का ज्ञान समान ही दिखलाई पड़ता है॥२७॥

अपि चेदं वयस्तुल्यमस्य मन्ये[1] नलस्य च।
नायं नलो महावीर्यस्तद्विद्यस्तु[2] भविष्यति ॥२८॥
प्रच्छन्ना हि महात्मानश्चरन्ति पृथिवीमिमाम्।
दैवेन विधिना युक्ताः शास्त्रोक्तैश्च विरूपणैः[3] ॥२९॥
भवेत्तु मतिभेदो मे गात्रवैरूप्यतां प्रति।
प्रमाणात्परिहीनस्तु भवेदिति हि मे मतिः[4] ॥३०॥
वयःप्रमाणं तत्तुल्यं रूपेण तु विपर्ययः।
नलं सर्वगुणैर्युक्तं मन्ये बाहुकमन्ततः ॥३१॥
एवं विचार्य बहुशो वार्ष्णेयः पर्यचिन्तयत्।
हृदयेन महाराज पुण्यश्लोकस्य सारथिः ॥३२॥
ऋतुपर्णस्तु राजेन्द्र बाहुकस्य हयज्ञताम्।
चिन्तयन्मुमुदे राजा सहवार्ष्णेयसारथिः ॥३३॥
बलं वीर्यं[5] तथोत्साहं हयसंग्रहणं[6] च तत्।
परं यत्नञ्च संप्रेक्ष्य परां मुदमवाप ह ॥३४॥

॥ इति नलोपाख्याने विंशतितमः सर्गः ॥२०॥

---

१. M. W. बाहुकस्य
२. M. W. च
३. M. W. प्रच्छन्नाश्चापि रूपतः
४. M. W. मतिर्मम
५. M. W. ऐकाग्र्यञ्च
६. M. W. हयसङ्ग्रहणे

मैं तो समझता हूँ कि नल और इस बाहुक की अवस्था समान ही है। यह महाबली नल न सही उसकी विद्या को जाननेवाला तो है ही ॥२८॥

भाग्य की विडम्बना और शास्त्रोक्त बातों से महात्माजन इस पृथ्वी पर गुप्त-रूप से विचरण किया करते हैं ॥२९॥

इसके शरीर की विरूपता को देखकर मेरी मति चकरा जाती है। जब (इसके विषय में) कोई प्रमाण ही नहीं है तब मेरी बुद्धि कर ही क्या सकती है ॥३०॥

बाहुक और नल की अवस्था में तो समानता है ही, रूप में भले ही विपरीतता है। अन्त में मैं यही समझता हूँ कि यह बाहुक सभी गुणों से युक्त नल ही हैं' ॥३१॥

इस प्रकार सोचते सोचते सारथी वार्ष्णेय मन ही मन चिन्तित हो उठा ॥३२॥

अपने सारथी वार्ष्णेय के साथ बाहुक के अश्व सम्बन्धी ज्ञान का विचार कर करके ऋतुपर्ण प्रसन्न हो रहे थे ॥३३॥

इससे भी अधिक प्रसन्नता उन्हें तब होती थी जब वह बाहुक के बल, उसकी वीरता, उसके उत्साह, घोड़ों पर उसके नियन्त्रण और उसके प्रयास को देखते थे ॥३४॥

॥ नलोपाख्यान का बीसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

एकविंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

स नदीः पर्वतांश्चैव वनानि च सरांसि च।
अचिरेणातिचक्राम खेचरः खे चरन्निव ॥१॥
तथा प्रयाते तु रथे तदा भा[1]ङ्गस्वररिर्नृपः।
उत्तरीयम[2]थापश्यद्भ्रष्टं परपुरंजयः ॥२॥
ततः स त्वरमाणस्तु पटे निपतिते तदा।
ग्रहीष्यामीति तं राजा नलमाह महामनाः ॥३॥
निगृह्णीष्व महाबुद्धे हयानेतान्महाजवान्।
वार्ष्णेयो यावदेतं मे पटमानयतामिति[3] ॥४॥
नलस्तं प्रत्युवाचाथ दूरे भ्रष्टः पटस्तव।
योजनं समतिक्रान्तो न स शक्यस्त्वया[4] पुनः ॥५॥
एवमुक्तो नलेनाथ तदा भाङ्गस्वरिर्नृपः[5]।
आससाद वने राजन्फलवन्तं बिभीतकम् ॥६॥
तं दृष्ट्वा बाहुकं राजा त्वरमाणोऽभ्यभाषत।
ममापि सूत पश्य त्वं संख्याने परमं बलम् ॥७॥
सर्वः सर्वं न जानाति सर्वज्ञो नास्ति कश्चन।
नैकत्र परिनि[6]ष्ठास्ति ज्ञानस्य पुरुषे क्वचित् ॥८॥

---

१. M. W. भांगासुरि
२. M. W. मधो
३. M. W. इह
४. M. W. नाहर्तुं शक्यते पुनः
५. M. W. भांगासुरि
६. M. W. ण

नलोपाख्यान

सर्ग २१

बृहदश्व

नदियों, पर्वतों, वनों और सरोवरों को पार करता हुआ वह शीघ्रता से वैसे ही चला जा रहा था जैसे आकाश में पक्षी चला जाता है ॥१॥

जिस समय इस प्रकार से रथ चला जा रहा था, उस समय शत्रुओं के नगरों को नष्ट करनेवाले महाराज भांगस्वरि ने देखा कि उनका दुपट्टा (रथ से) खिसक गया है ॥२॥

वस्त्र के गिर जाने पर शीघ्रता से जाते हुये मनस्वी महाराज ने नल से कहा—'देखो, मैं इस वस्त्र को पकड़ लूँ ॥३॥

अये महाबुद्धे ! इन वेगगामी घोड़ों को रोको जिससे कि यह वार्ष्णेय मेरे वस्त्र को ले आये' ॥४॥

इस पर नल ने उत्तर दिया 'आपका वस्त्र बहुत दूर पर गिरा था। अब तो वह एक योजन पीछे रह गया है, उसे आप नहीं पा सकते हैं' ॥५॥

नल के ऐसा कहते कहते महाराज भांगस्वरि वन में एक विभीतक वृक्ष के समीप पहुँच गये जो फलों से लदा हुआ था ॥६॥

उस वृक्ष को देखकर महाराज ने शीघ्र ही बाहुक से कहा—'अये सूत ! तुम इनकी गणना में मेरी शक्ति देखो ॥७॥

सब लोग सब कुछ नहीं जानते हैं और कोई भी व्यक्ति सर्वज्ञ नहीं हुआ करता है। किसी एक ही पुरुष में सम्पूर्ण ज्ञान हो ही नहीं सकता है ॥८॥

वृक्षेऽस्मिन्यानि पर्णानि फलान्यपि च बाहुक।
पतितानि च[1] यान्यत्र तत्रैकमधिकं शतम्।
एकपत्राधिकं पत्रं फलमेकं च बाहुक॥९॥
पञ्चकोट्योऽथ पत्राणां द्वयोरपि च शाखयोः।
प्रचिनुह्यस्य शाखे द्वे याश्चाप्यन्याः प्रशासिकाः।
आभ्यां फलसहस्रे द्वे पञ्चोनं शतमेव च॥१०॥
ततो रथादवप्लुत्य[2] राजानं बाहुकोऽब्रवीत्।
परोक्षमिव मे राजन्कत्थसे शत्रुकर्शन्[3]॥११॥
अथ ते[4] गणिते राजन्विद्यते न परोक्षता।
प्रत्यक्षं ते महाराज गणयिष्ये[5] विभीतकम्॥१२॥
अहं हि नाभिजानामि भवेदेवं न वेति च।
संख्यास्यामि फलान्यस्य पश्यतस्ते जनाधिप।
मुहूर्तमिव वार्ष्णेयो रश्मीन्यच्छतु वाजिनाम्॥१३॥
तमब्रवीन्नृपः सूतं नायं कालो विलम्बितुम्।
बाहुकस्त्वब्रवीदेनं परं यत्नं समास्थितः॥१४॥
प्रतीक्षस्व मुहूर्तं त्वमथ वा त्वरते भवान्।
एष याति शिवः पन्था याहि वार्ष्णेयसारथिः॥१५॥
अब्रवीदृतुपर्णस्तं[6] सान्त्वयन्कुरुनन्दन।
त्वमेव[7] यन्ता नान्योऽस्ति पृथिव्यामपि बाहुक॥१६॥
त्वत्कृते यातुमिच्छामि विदर्भान्हयकोविद।
शरणं त्वां प्रपन्नोऽस्मि न विघ्नं कर्तुमर्हसि॥१७॥
कामञ्च ते करिष्यामि यन्मां वक्ष्यसि बाहुक।
विदर्भान्यदि यात्वाद्य सूर्यं दर्शयितासि मे॥१८॥

---

१. M. W. न्यपि
२. M. W. रथमवस्थाप्य
३. M. W. प्रत्यक्षमेतत् कर्तास्मि शातयित्वा बिभीतकम्
४. M. W. अथात्र
५. M. W. शातयिष्ये
६. M. W. तु
७. M. W. मिव

अये बाहुक ! इस वृक्ष में जितने पत्ते और फल हैं और जो यहाँ पर गिरे हुए पड़े हैं वे सब एक सौ एक हैं। ये पत्ते भी एक सौ एक हैं और ये फल भी उतने ही हैं ॥९॥

इन दोनों शाखाओं पर ५ करोड़ पत्तियाँ हैं। इन दोनों शाखाओं को मिला लो और इनमें जितनी टहनियाँ हैं उन्हें भी मिला लो। इन पर दो हजार पञ्चानवे फल हैं' ॥१०॥

तत्पश्चात् रथ से उतरकर बाहुक ने राजा से कहा—'अये शत्रुओं का संहार करने वाले महाराज ! आप जो कुछ कह रहे हैं वह मुझे दिखाई ही नहीं पड़ रहा है ॥११॥

अये राजन् ! इनकी गिनती कर लेने पर अस्पष्टता नहीं रह जायगी। इसलिए मैं आपके सामने ही इस विभीतक वृक्ष के पत्तों और फलों को गिन डालूँगा ॥१२॥

मैं यह तो नहीं जानता कि यह होगा या नहीं, किन्तु अये महाराज ! आपके देखते ही देखते मैं इसके फलों को गिन लूँगा। यह वार्ष्णेय क्षणभर के लिए इन घोड़ों की लगामों को रोक लें' ॥१३॥

महाराज ने सारथी (बाहुक) से कहा कि —'यह विलम्ब करने का समय नहीं है', किन्तु अपने प्रयत्न में लगे हुए बाहुक ने उत्तर दिया ॥१४॥

'या तो आप क्षणभर प्रतीक्षा कर लीजिए अथवा यदि जल्दी हो तो आप स्वयं चले जाइये। यह सारथी वार्ष्णेय आपके साथ साथ चला जाय, रास्ता तो बिलकुल सीधा है' ॥१५॥

महाराज ऋतुपर्ण ने उसे धैर्य बँधाते हुए कहा—'अये बाहुक ! इस पृथ्वी पर इन घोड़ों को रोकने वाले तुम्हीं हो, और कोई नहीं है ॥१६॥

अये अश्वों के पारखी ! मैं तो तुम्हारे लिए ही विदर्भदेश को जाने की इच्छा कर रहा हूँ। मैं तुम्हारी शरण में हूँ (मेरे कार्य में) विघ्न न डालो ॥१७॥

अये बाहुक ! यदि सूर्य रहते रहते ही मैं विदर्भ को पहुँच गया तो तुम मुझसे जो कुछ कहोगे, तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा' ॥१८॥

अथाब्रवीद्बाहुकस्तं संख्यायेमं[1] बिभीतकम्।
ततो विदर्भान्यास्यामि कुरुष्वेदं वचो मम॥१९॥
अकाम इव तं राजा गणयस्वेत्युवाच ह।[2]
सोऽवतीर्य रथात्तूर्णं शातयामास तं द्रुमम्॥२०॥
ततः स विस्मयाविष्टो राजानमिदमब्रवीत्।
गणयित्वा यथोक्तानि तावन्त्येव फलानि च॥२१॥
अत्यद्भुतमिदं राजन्दृष्ट्वानस्मि ते बलम्।
श्रोतुमिच्छामि तां विद्यां यथैतज्ज्ञायते नृप॥२२॥
तमुवाच ततो राजा त्वरितो गमने सदा[3]॥
विद्ध्यक्षहृदयज्ञं मां संख्याने च विशारदम्॥२३॥
बाहुकस्तमुवाचाथ देहि विद्यामिमाम् मम।
मत्तोऽपि चाश्वहृदयं गृहाण पुरुषर्षभ॥२४॥
ऋतुपर्णस्ततो राजा बाहुकं कार्यगौरवात्।
हयज्ञानस्य लोभाच्च तथेत्येवाब्रवीद्वचः॥२५॥
यथेष्टं त्वं गृहाणेदमक्षाणां हृदयं परम्।
निक्षेपो मेऽश्वहृदयं त्वयि तिष्ठतु[4] बाहुक।
एवमुक्त्वा ददौ विद्यामृतुपर्णो नलाय वै॥२६॥
तस्याक्षहृदयज्ञस्य शरीरान्निःसृतः कलिः।
कर्कोटकविषं तीक्ष्णं मुखात्सततमुद्वमन्॥२७॥
कलेस्तस्य तदार्तस्य शापाग्निः स विनिःसृतः।
स तेन कर्शितो राजा दीर्घकालमनात्मवान्॥२८॥
ततो विषविमुक्तात्मा स्व[5]रूपमकरोत्कलिः।
तं शप्तुमैच्छत्कुपितो निषधाधिपतिर्नलः॥२९॥

---

१. M. W. संख्याय च
२. M. W. एकदेशञ्च शाखायाः समादिष्ट मयाऽनघ।
गणयस्वास्य तत्त्वज्ञ ततस्त्वं प्रीतिमावह॥
३. M. W. नृपः
४. M. W. तिष्ठति
५. M. W. स्वं रूपम्

इस पर बाहुक ने महाराज ऋतुपर्ण को उत्तर दिया 'मैं पहले विभीतक के इन फलों की गिनती कर लूँगा उसके बाद ही विदर्भ को चलूँगा। आप मेरी बात मान लीजिए' ॥१९॥

महाराज ने उदासीन की भाँति उससे कहा, "अच्छा गिन ही लो'। शीघ्र ही रथ से उतरकर बाहुक ने वृक्ष को चीर डाला ॥२०॥

आश्चर्य से चकित् होकर वह महाराज से कहने लगा 'गिनती करने पर भी ये फल उतने ही हैं जितने आपने कहे थे ॥२१॥

अरे राजन्! यह तो बड़ी अद्भुत बात है। मैंने आपका बल देख लिया है। अब मैं वह विद्या जानना चाहता हूँ जिससे यह सब जाना जा सकता है' ॥२२॥

महाराज ऋतुपर्ण को जाने की जल्दी थी। इसलिए उन्होंने कहा—'तुम मुझे द्यूतविद्या में निपुण और गणना करने में प्रवीण समझो' ॥२३॥

यह सुनकर बाहुक ने महाराज ऋतुपर्ण से कहा, 'अये पुरुषोत्तम! आप अपनी इस विद्या को मुझे दे दीजिये और मुझसे अश्वों की विद्या ले लीजिये' ॥२४॥

ऋतुपर्ण को एक तो कार्य की गुरुता का ध्यान था, साथ ही उन्हें अश्वों के ज्ञान का लोभ भी था। इसलिए वह इस प्रकार कहने लगे ॥२५॥

'तुम अपनी इच्छानुसार मेरे द्यूत-ज्ञान को ले लो। अये बाहुक! मेरा यह अश्व-ज्ञान (अभी) तुम अपने पास ही धरोहर के रूप में रख लो'—ऐसा कहकर ऋतुपर्ण ने नल को जुए की सारी विद्या दे दी ॥२६॥

इस प्रकार जुए का ज्ञान प्राप्त कर लेने पर बाहुक (नल) के शरीर से कलि निकल गया और कर्कोटक का तीक्ष्ण विष भी वमन के द्वारा निकल गया ॥२७॥

इस प्रकार दुखी (नल) के शरीर से कलि की शापाग्नि निकल गयी। राजा नल अभी तक उसी से दुःखित होकर चेतनाहीन हो रहे थे ॥२८॥

उस विष से छुटकारा पा जाने पर कलि अपने वास्तविक रूप में आ गया। उसे देखकर निषधाधिपति महाराज नल उसे शाप देने के लिए उद्यत हो उठ ॥२९॥

तमुवाच कलिर्भीतो वेपमानः कृताञ्जलिः।
कोपं संयच्छ नृपते कीर्तिं दास्यामि ते पराम् ॥३०॥
इन्द्रसेनस्य जननी कुपिता माशपत्पुरा।
यदा त्वया परित्यक्ता ततोऽहं भृशपीडितः ॥३१॥
अवसं त्वयि राजेन्द्र सुदुःखमपराजित।
विषेण नागराजस्य दह्यमानो दिवानिशम्[1] ॥३२॥
ये च त्वां मनुजा लोके कीर्तयिष्यन्त्यतन्द्रिताः॥
मत्प्रसूतं भयं तेषां न कदाचिद्भविष्यति[2] ॥३३॥
एवमुक्तो नलो राजा न्ययच्छत्कोपमात्मनः।
ततो भीतः कलिः क्षिप्रं प्रविवेश बिभीतकम्।
कलिस्त्वन्येन नादृश्यत्कथयन्नैषधेन वै ॥३४॥
ततो गतज्वरो राजा नैषधः परवीरहा।
संप्रनष्टे कलौ राजन्संख्यायाथ फलान्युत ॥३५॥
मुदा परमया युक्तस्तेजसा च[3] परेण ह[4]।
रथमारुह्य तेजस्वी प्रययौ जवनैर्हयैः।
बिभीतकश्चाप्रशस्तः संवृत्तः कलिसंश्रयात् ॥३६॥
हयोत्तमानुत्पततो द्विजानिव पुनः पुनः।
नलः संचोदयामास प्रहृष्टेनान्तरात्मनाः ॥३७॥
विदर्भाभिमुखो राजा प्रययौ स महामनाः[5]।
नले तु समतिक्रान्ते कलिरप्यगमद्गृहान्[6] ॥३८॥
ततो गतज्वरो राजा नलोऽभूत्पृथिवीपते[7]।
विमुक्तः कलिना राजन्रूपमात्रवियोजितः ॥३९॥

॥ इति नलोपाख्याने एकविंशतितमः सर्गः ॥२१॥

---

१. M. W. शरणं त्वां प्रपन्नोऽस्मि शृणु चेदं वचो मम।
२. M. W. भयार्तं शरणं यातं यदि मां त्वं न शप्स्यसे।
३. M. W. ऽथ
४. M. W. च
५. M. W. यशाः
६. M. W. गृहम्
७. M. W. पतिः

यह देखकर कलि भयभीत होकर काँपने लगा। वह हाथ जोड़कर नल से कहने लगा—'अये राजन्! आप अपने क्रोध को रोकिये, मैं आपको बहुत यश प्रदान करूँगा ॥३०॥

आपके द्वारा परित्यक्त होकर इन्द्रसेन की माता अत्यन्त क्रुद्ध हो उठी थीं और उन्होंने मुझे शाप दे डाला था। तभी से मैं बहुत पीड़ित रहने लगा था ॥३१॥

अये अपराजित महाराज! तभी से मैं बहुत दुःखी होकर आपके अन्दर रहने लगा था। मैं तो दिनरात सर्पराज के विष से जलता रहता था ॥३२॥

जो मनुष्य आलस्यरहित होकर आपका गुणगान किया करेंगे उन्हें मुझसे होनेवाला भय कभी नहीं होगा' ॥३३॥

इस बात को सुनकर महाराज नल ने अपना क्रोध छोड़ दिया। भयभीत कलि शीघ्र ही विभीतक वृक्ष में पैठ गया। निषधराज से बात करते हुए कलि को अन्य किसी ने देखा ही नहीं ॥३४॥

अब शत्रुओं के पराक्रम को नष्ट करनेवाले महाराज नल का दुःख समाप्त हो चुका था। कलि के नष्ट हो जाने पर नल ने सभी फलों को गिन डाला ॥३५॥

वह अत्यन्त आनन्द और तेज से युक्त थे। तेजस्वी महाराज नल शीघ्रगामी अश्वों से युक्त रथ में बैठ गये। इधर कलि के निवास से विभीतक वृक्ष मुरझाने लगा ॥३६॥

नल मन ही मन बहुत प्रसन्न थे। वह पक्षियों की भांति (वेगगामी) अश्वों को पुनः पुनः हाँक रहे थे ॥३७॥

मनस्वी महाराज नल विदर्भ देश की ओर चले जा रहे थे। इधर नल के चले जाने पर कलि भी अपने निवासस्थान की ओर चल पड़ा ॥३८॥

अब महाराज नल की विपत्ति समाप्त हो चुकी थी। कलि से छुटकारा पा जाने के बाद वह केवल अपने रूप से ही रहित थे ॥३९॥

॥ नलोपाख्यान का इक्कीसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

द्वाविंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

ततो विदर्भान्संप्राप्तं सायाह्ने सत्यविक्रमम्।
ऋतुपर्णं जना राज्ञे भीमाय प्रत्यवेदयन् ॥१॥
स भीमवचनाद्राजा कुण्डिनं प्राविशत्पुरम्।
नादयन्रथघोषेण सर्वाः **सोपदिशो दश**[1] ॥२॥
ततस्तं रथनिर्घोषं नलाश्वास्तत्र शुश्रुवुः।
श्रुत्वा च समाहृष्यन्त पुरेव नलसंनिधौ ॥३॥
दमयन्ती च शुश्राव रथघोषं नलस्य तम्।
यथा मेघस्य नदतां गम्भीरं जलदागमे[2] ॥४॥
नलेन संगृहीतेषु पुरेव नलवाजिषु।
सदृशं **रथ**[3]निर्घोषं मेने भैमी तथा हयाः ॥५॥
प्रसादस्थाश्च शिखिनः शालास्थाश्चैव वारणाः।
हयाश्च शुश्रुवुस्तत्र[4] रथघोषं महीपतेः ॥६॥
ते श्रुत्वा रथनिर्घोषं वारणाः शिखिनस्तथा।
प्रणेदुरुन्मुखा राजन्**मेघोदयमिवेक्ष्य ह**[5] ॥७॥

---

१. M. W. **सविदिशो दिशः**

२. M. W. **परं विस्मयमापन्ना श्रुत्वा नादं महास्वनम्।**

३. M. W. **हय**

४. M. W. **तस्य**

५. M. W. **मेघनाद इवोत्सुकाः**

नलोपाख्यान

सर्ग २२

बृहदश्व

सन्ध्याकाल होते होते महापराक्रमी ऋतुपर्ण विदर्भदेश में पहुँच गये। राजपुरुषों ने उनके पहुँचने की सूचना महाराज भीम को दी ॥१॥

महाराज भीम की अनुज्ञा से ऋतुपर्ण ने कुण्डिनपुर में प्रवेश किया। वह अपने रथ के घोष से दशों उपदिशाओं को निनादित कर रहे थे ॥२॥

वह रथनिर्घोष नल के घोड़ों को भी सुनाई पड़ा, जिसे सुनकर उन्हें उतनी ही प्रसन्नता हुई जितनी नल के पास रहने में हुआ करती थी ॥३॥

नल के उस रथनिर्घोष को दमयन्ती ने भी सुन लिया। वह निर्घोष वर्षाकाल में मेघों के गर्जन के समान गंभीर था ॥४॥

दमयन्ती और नल के घोड़ों को वह रथनिर्घोष वैसा ही प्रतीत हुआ जैसा कि कभी पहले नल के घोड़ों के एकत्र होने पर प्रतीत हुआ करता था ॥५॥

राजप्रासाद पर बैठे हुए मोरों ने और गजशालाओं में बंधे हुये हाथियों और घोड़ों ने महाराज नल के रथनिर्घोष को सुन लिया ॥६॥

उस रथनिर्घोष को सुनकर मयूर और हाथी उसी प्रकार ऊपर को मुँह करके शब्द करने लगे जिस प्रकार वह घटाओं के घिर जाने पर शब्द करने लगते हैं ॥७॥

दमयन्त्युवाच

यथासौ रथनिर्घोषः पूरयन्निव मेदिनीम्।
ममाह्लादयते चेतो नल एष महीपतिः ॥८॥
अथ चन्द्राभवक्त्रं तं न पश्यामि नलं यदि।
असंख्येयगुणं वीरं **विनशिष्याम्यसंशयम्**[1] ॥९॥
यदि **वै**[2] **तस्य** वीरस्य बाहोर्नाद्याहमन्तरम्।
प्रविशामि सुखस्पर्शं **विनशिष्याम्यसंशयम्**[3] ॥१०॥
यदि मां मेघनिर्घोषो नोपगच्छति नैषधः।
अद्य चामीकरप्रख्यो[4] **विनशिष्याम्यसंशयम्**[5] ॥११॥
यदि मां सिंहविक्रान्तो मत्तवारण**वारणः**[6]।
नाभिगच्छति राजेन्द्रो **विनशिष्याम्यसंशयम्** ॥१२॥
न स्मराम्यनृतं किंचिन्न स्मराम्य**नुपाकृतम्**[7]।
न च पर्युषितं वाक्यं स्वैरेष्वपि **महात्मनः**[8] ॥१३॥
प्रभुः क्षमावान्वीरश्च **मृदुर्दान्तो जितेन्द्रियः**[10]।
रहोऽनीचानुवर्ती च क्लीववन्मम नैषधः ॥१४॥
गुणांस्तस्य स्मरन्त्या मे तत्पराया दिवानिशम्।
हृदयं दीर्यत इदं शोकात्प्रियविनाकृतम् ॥१५॥

बृहदश्व उवाच

एवं विलपमाना सा नष्टसंज्ञेव भारत।
आरुरोह महद्वेश्म पुण्यश्लोकदिदृक्षया ॥१६॥
ततो मध्यमकक्षायां ददर्श रथमास्थितम्।
ऋतुपर्णं महीपालं सहवार्ष्णेयबाहुकम् ॥१७॥

---

१. M. W. **विनंक्ष्यामि न संशयः**
२. M. W. **चैतस्य**
३. M. W. **न भविष्याम्य**
४. M. W. **प्रख्यम्**
५. M. W. **प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्**
६. M. W. **विक्रमः**
७. M. W. **विनक्ष्यामि न संशयः**
८. M. W. **पकारताम्**
९. M. W. **कदाचन**
१०. M. W. **दाता चाभ्यधिको नृपैः**

दमयन्ती

'सम्पूर्ण पृथ्वी को भरता हुआ यह रथ निर्घोष जिस प्रकार से हो रहा है उससे मेरा मन ऐसे प्रसन्न हो उठता है जैसे कि यह महाराज नल ही (आ गये) हों' ॥८॥

आज यदि मुझे असंख्य गुणों से युक्त चन्द्रवदन वीर नल का दर्शन न हुआ तो निश्चय ही मेरा सर्वनाश हो जायगा ॥९॥

यदि आज मुझे उन पराक्रमी नल के सुखद भुजपाश में जाने को न मिला तो मेरा सर्वनाश ही हो जायगा ॥१०॥

यदि आज मेघ के समान गर्जन करने वाले एवं सुवर्ण के समान तेजोमय नल मेरे पास न आगये तो मेरा सर्वनाश ही हो जायगा ॥११॥

यदि आज सिंह के समान पराक्रमी और मस्त हाथियों को पराजित कर देनेवाले महाराज नल मेरे पास न आये तो मेरा सर्वनाश ही हो जायगा ॥१२॥

महाराज नल के साथ बातचीत करने में मुझे किसी ऐसे वाक्य का स्मरण नहीं हो रहा है जो झूठ हो, अप्रिय हो अथवा अनर्गल हो ॥१३॥

मेरे प्रिय महाराज निषधाधिपति समर्थ, क्षमाशील, वीर, मृदुभाषी, (कामनाओं का) दमन करनेवाले और जितेन्द्रिय हैं। एकान्त में भी उन्होंने नीच अथवा नपुंसक व्यक्ति की भांति व्यवहार नहीं किया है ॥१४॥

मैं तो रात दिन उनके ध्यान में मग्न रहती हुई उन्हीं के गुणों का चिन्तन किया करती हूँ। अपने प्रिय के वियोग में मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है' ॥१५॥

बृहदश्व

इस प्रकार विलाप करती हुई दमयन्ती चेतनाहीन सी हो रही थी। वह पुण्यात्मा महाराज नल को देखने की इच्छा से ऊँचे राजप्रासाद के ऊपर चढ़ गयी ॥१६॥

उसने मध्य के कक्ष में रथ को खड़ा हुआ देखा। वहीं पर उसने वार्ष्णेय और बाहुक को साथ लिये हुये महाराज ऋतुपर्ण को भी देखा ॥१७॥

ततोऽवतीर्य वार्ष्णेयो बाहुकश्च रथोत्तमात्।
हयांस्तानवमुच्याथ स्थापयामास[1] रथम् ॥१८॥
सोऽवतीर्य रथोपस्थादृतुपर्णो नराधिप।
उपतस्थे महाराज भीमं भीमपराक्रमम् ॥१९॥
तं भीमः प्रतिजग्राह पूजया परया ततः।
अकस्मात्सहसा प्राप्तं स्त्रीमन्त्रं न स्म विन्दति ॥२०॥
किं कार्यं स्वागतं तेऽस्तु राज्ञा **पृष्टश्च**[2] भारत।
नाभिजज्ञे स नृपतिर्दुहित्रर्थे समागतम् ॥२१॥
ऋतुपर्णोऽपि राजा स धीमान्सत्यपराक्रमः।
राजानं राजपुत्रं वा न स्म पश्यति कंचन।
नैव स्वयंवरकथां न च विप्रसमागमम् ॥२२॥
ततो विगणयन्राजा मनसा **को**[3]**सलाधिपः**।
आगतोऽस्मीत्युवाचैनं भवन्तमभिवादकः ॥२३॥
राजापि च स्मयन्भीमो मनसा**भिविचिन्तयत्**[4]।
अधिकं योजनशतं तस्यागमनकारणम् ॥२४॥
ग्रामान्बहूनतिक्रम्य नाध्यगच्छद्यथातथम्।
अल्पकार्यं विनिर्दिष्टं तस्यागमनकारणम् ॥२५॥
नैतदेवं स नृपतिस्तं सत्कृत्य व्यसर्जयत्।
विश्राम्यता**मिति व**[5]**दन्क्लान्तोऽसीति** पुनः पुनः ॥२६॥
स सत्कृतः प्रहृष्टात्मा प्रीतः प्रीतेन पार्थिवः।
राजप्रेष्यैरनुगतो दिष्टं वेश्म समाविशत् ॥२७॥
ऋतुपर्णे गते राजन्वार्ष्णेयसहिते नृपे।
बाहुको रथमा**स्थाय**[6] रथशालामुपागमत् ॥२८॥
स मोचयित्वा तानश्वान्परिचार्य च शास्त्रतः।
स्वयं चैतान्समाश्वास्य रथोपस्थ उपाविशत् ॥२९॥

---

१. M. W. **वै**
२. M. W. **पृष्ठः स**
३. M. W. **कोशल**
४. M. W. **समचिन्तयत्**
५. M. W. **त्युवाच**
६. M. W. **दाय**

वार्ष्णेय और बाहुक रथ से उतर पड़े और उन्होंने घोड़ों को खोलकर खड़ा कर दिया ॥१८॥

रथ से उतर कर महाराज ऋतुपर्ण महापराक्रमी महाराज भीम के पास पहुँच गये ॥१९॥

महाराज भीम ने ऋतुपर्ण को इस प्रकार अकस्मात् आया हुआ देखकर उनका बहुत आदर-सत्कार किया क्योंकि उन्हें अपनी पुत्री की मन्त्रणा का ज्ञान ही न था ॥२०॥

महाराज भीम ने ऋतुपर्ण से कहा 'आप कैसे आगये, आपका स्वागत है'। उन्हें यह पता ही न था कि वह उनकी पुत्री के लिए आये हुये हैं ॥२१॥

ऋतुपर्ण ने न तो वहाँ पर राजा को देखा, न राजकुमार को। उन्हें न तो स्वयम्बर की ही बात सुन पड़ी और न ब्राह्मणों के आगमन की ॥२२॥

कोसलपति महाराज ऋतुपर्ण ने अपने मन में सोच-विचार करते हुए कहा—'मैं तो केवल आपका अभिवादन करने के लिए ही आया हूँ' ॥२३॥

महाराज भीम अपने मन में यह विचार करते हुए मुस्करा रहे थे कि 'क्या इनके सौ योजन चलकर आने का यही अभिप्राय है ॥२४॥

यह इस छोटे से कार्य के लिए ही इन बहुत से गावों को नांघते फांदते जैसे तैसे तो यहां आये नहीं हैं ॥२५॥

यह बात तो नहीं है' ऐसा सोचकर महाराज भीम ने ऋतुपर्ण को विदा करते हुए कहा 'आप थके हुए हैं, जाकर विश्राम कीजिए' ॥२६॥

महाराज ऋतुपर्ण भीम के आदर और प्रेम से प्रसन्न हो उठे। उन्होंने राजदूतों के साथ राजभवन में प्रवेश किया ॥२७॥

इधर महाराज ऋतुपर्ण वार्ष्णेय के साथ राजभवन को चले गये। उधर बाहुक रथ में बैठकर रथशाला की ओर चल पड़े ॥२८॥

बाहुक ने घोड़ों को खोल दिया और विधिवत् उनकी सेवा की। वह स्वयं ही घोड़ों को प्यार करके रथ के बीच में बैठ गया ॥२९॥

दमयन्ती तु शोकार्ता दृष्ट्वा भाङ्गस्वरिं[1] नृपम्।
सूतपुत्रं च वार्ष्णेयं बाहुकं च तथाविधम् ॥३०॥
चिन्तयामास वैदर्भी कस्यैष रथनिस्वनः।
नलस्येव महानासीन्न च पश्यामि नैषधम् ॥३१॥
वार्ष्णेयेन भवेन्नूनं विद्या सैवोपशिक्षिता।
तेनास्य[2] रथनिर्घोषो नलस्येव महानभूत् ॥३२॥
आहो स्विदृतुपर्णोऽपि यथा राजा नलस्तथा।
त[3]तोऽयं रथनिर्घोषो नैषधस्येव लक्ष्यते ॥३३॥
एवं वि[4]तर्कयित्वा तु दमयन्ती विशाम्पते।
दूतीं प्रस्थापयामास नैषधान्वेषणे नृप[5] ॥३४॥

॥ इति नलोपाख्याने द्वाविंशतितमः सर्गः ॥२२॥

---

१. M. W. भांगसुरिम्
२. M. W. द्य
३. M. W. तथा
४. M. W. सा
५. M. W. शुभा

महाराज भांगस्वरि, सूतपुत्र वार्ष्णेय और बाहुक की इस अवस्था को देखकर दमयन्ती शोक में डूब गयी ।।३०।।

दमयन्ती सोचने लगी—'अरे, नल के रथ के समान यह किसके रथ का निर्घोष हो रहा था ? महाराज नल तो दिखाई नहीं पड़ रहे हैं ।।३१।।

निश्चय ही वार्ष्णेय ने नल की उस विद्या को सीख लिया है जिससे नल के रथघोष के समान उसके रथ का निर्घोष भी हो रहा था ।।३२।।

अथवा यह ऋतुपर्ण भी नल के समान ही हैं, इसीलिए इनके रथ का निर्घोष भी नल के रथ के निर्घोष के समान सुनाई पड़ रहा है' ।।३३।।

इस प्रकार सोच विचार करती हुई दमयन्ती ने नल की खोज करने के लिए दूती को भेज दिया ।।३४।।

।। नलोपाख्यान का बाईसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ।।

नलोपाख्यानम्

त्रयोविंशतितमः सर्गः

दमयन्त्युवाच

गच्छ केशिनि जानीहि क एष रथवाहकः।
उपविष्टो रथोपस्थे विकृतो ह्रस्वबाहुकः ॥१॥
अभ्येत्य कुशलं भद्रे मृदुपूर्वं समाहिता।
पृच्छेथाः पुरुषं ह्येनं यथातत्वमनिन्दिते ॥२॥
अत्र मे महती शंका भवेदेष नलो नृपः।
तथा च मे मनस्तुष्टिर्हृदयस्य च निर्वृतिः ॥३॥
ब्रूयाश्चैनं कथान्ते त्वं पर्णादवचनं यथा।
प्रतिवाक्यञ्च सुश्रोणि बुध्येथास्त्वमनिन्दिते ॥४॥

बृहदश्व उवाच

एवं समाहिता गत्वा दूती बाहुकमब्रवीत्।
दमयन्त्यपि कल्याणी प्रासादस्थान्**ववैक्षत**[1] ॥५॥

केशिन्युवाच

स्वागतं ते मनुष्येन्द्र कुशलं ते ब्रवीम्यहम्।
दमयन्त्या वचः साधु निबोध पुरुषर्षभ ॥६॥
कदा वै प्रस्थिता यूयं किमर्थमिह चागताः।
तत्वं ब्रूहि यथान्यायं वैदर्भी श्रोतुमिच्छति ॥७॥

---

१. M. W. ह्युपैक्षत

नलोपाख्यान

सर्ग २३

दमयन्ती

'अयि केशिनि ! जाओ और देखो कि यह सारथी कौन है जो कि रथ में बैठा हुआ है, जिसका शरीर विकृत है और जिसकी भुजाएँ छोटी छोटी हैं ॥१॥

अयि भद्रे ! उस पुरुष के समीप जाकर मीठी मीठी वाणी में उसकी कुशल-क्षेम पूछना, और ठीक ठीक बात जान लेना ॥२॥

इस समय मुझे बहुत बड़ी शंका यह हो रही है कि यह नल ही न हों, क्योंकि (इन्हें देखकर) मेरा मन संतुष्ट और हृदय प्रफुल्लित हो रहा है ॥३॥

पर्णाद की भांति कथा के अन्त में तुम भी उससे (कुछ) कहना और अयि सुन्दरि ! वह जो कुछ भी उत्तर दे उसे समझ लेना' ॥४॥

बृहदश्व

दूती सावधानीपूर्वक बाहुक के समीप जाकर उससे बातचीत करने लगी। दमयन्ती भी परकोटे पर खड़ी खड़ी यह सब देखती रही ॥५॥

केशिनी

'अये राजन् ! आपका स्वागत है। मैं आपकी कुशलता की कामना कर रही हूँ। आप दमयन्ती की बात को सुन लीजिए ॥६॥

आप कहाँ से चलकर आये हैं ? यहाँ कैसे आ गये हैं ? आप जैसे भी उचित समझिये बताइये, दमयन्ती आप से सब कुछ सुनना चाहती है' ॥७॥

बाहुक उवाच

श्रुतः स्वयंवरो राज्ञा **कौसल्येन**[1] **यशस्विना**।
द्वितीयो दमयन्त्या वै **श्वोभूत इति भामिनि**[2] ॥८॥
श्रुत्वा तं[3] प्रस्थितो राजा शतयोजनयायिभिः।
हयैर्वातजवैर्मुख्यैरहमस्य च सारथिः ॥९॥

केशिन्युवाच

अथ योऽसौ तृतीयो वः स कुतः कस्य वा पुनः।
त्वञ्च कस्य कथञ्चेदं त्वयि कर्म समाहितम् ॥१०॥

बाहुक उवाच

पुण्यश्लोकस्य वै सूतो वार्ष्णेय इति विश्रुतः।
स नले विद्रुते भद्रे **भा**[4]**ङ्गस्वरिमुपस्थितः** ॥११॥
अहमप्यश्वकुशलः सूदत्वे च **सुनिष्ठितः**[5]।
ऋतुपर्णेन सारथ्ये भोजने च वृतः स्वयम् ॥१२॥

केशिन्युवाच

अथ जानाति वार्ष्णेयः क्व नु राजा नलो गतः।
कथं च त्वयि **वेतेन**[6] कथितं स्यात्तु बाहुक ॥१३॥

बाहुक उवाच

इहैव पुत्रो निक्षिप्य नलस्याशुभकर्मणः।
गतस्ततो यथाकामं नैष जानाति नैषधम् ॥१४॥
न चान्यः पुरुषः कश्चिन्नलं वेत्ति यशस्विनि।
गूढश्चरति लोकेऽस्मिन्नष्टरूपो महीपतिः ॥१५॥

---

१. M. W. **कौशलेन महात्मना**
२. M. W. **भविता श्व इति द्विजात्**
३. M. W. **श्रुत्वैतत्**
४. M. W. **भांगासुरि**
५. M. W. **प्रतिष्ठितः**
६. M. W. **चैतेन**

बाहुक

'कोशलराज ने एक ब्राह्मण से यह सुना था कि कल दमयन्ती का दूसरा स्वयम्बर होने वाला है॥८॥

यह सुनकर महाराज सौ योजन की यात्रा करने वाले, वायु के समान वेगगामी घोड़ों के द्वारा चल पड़े। मैं उन्हीं का सारथी हूँ'॥९॥

केशिनी

'यह जो तीसरा व्यक्ति आपके साथ है वह कौन है और किस जाति का है? आप किस जाति के हैं और आपने यह कर्म क्यों स्वीकार कर लिया है'? ॥१०॥

बाहुक

'यह पुण्यश्लोक (नल) का सारथी है, जो वार्ष्णेय नाम से प्रसिद्ध है। अयि सुन्दरि! जब महाराज नल (राज्य) छोड़कर भाग गये तब वह भांगस्वरि के पास चला आया था॥११॥

मैं अश्वों (को सम्हालने) में चतुर और रसोइये के काम में अभ्यस्त था, इसलिये मुझे भी ऋतुपर्ण ने सारथी और रसोइये के स्थान पर नियुक्त कर लिया है'॥१२॥

केशिनी

'तो क्या वार्ष्णेय यह जानता है कि महाराज नल कहाँ चले गये हैं? अये बाहुक! क्या (इस सम्बन्ध में) इसने आपको कुछ बतलाया है'? ॥१३॥

बाहुक

'अभागे नल अपने दोनों बच्चों को यहाँ पर रखकर कहाँ चले गये हैं, इसे यह वार्ष्णेय नहीं जानता है॥१४॥

अयि यशस्विनि! किसी अन्य पुरुष को भी नल के विषय में कुछ ज्ञात नहीं है। नल ने अपना रूप छोड़ दिया है और वह छिपा छिपा इस संसार में विचरण कर रहा है॥१५॥

आत्मैव हि[1] नलं वेत्ति या चास्य तदनन्तरा।
न हि वैतानि[2] लिङ्गानि नलं शंसन्ति[3] कर्हिचित् ॥१६॥

केशिन्युवाच

योऽसावयोध्यां प्रथमं गतवान्ब्राह्मणस्तदा।
इमानि नारीवाक्यानि कथयानः पुनः पुनः ॥१७॥
क्व नु त्वं कितव छित्त्वा वस्त्रार्धं प्रस्थितो मम।
उत्सृज्य विपिने सुप्तामनुरक्तां प्रियां प्रिय ॥१८॥
सा वै यथा समादिष्टा त[4]त्रास्ते त्वत्प्रतीक्षिणी।
दह्यमाना दिवारात्रं वस्त्रार्धेनाभिसंवृता ॥१९॥
तस्या रुदन्त्याः सततं तेन दुःखेन पार्थिव।
प्रसादं कुरु वै वीर प्रतिवाक्यं प्रयच्छ[5] च ॥२०॥
तस्यास्तत्प्रियमाख्यानं प्रब्रवीहि[6] महामते।
तदेव वाक्यं वैदर्भी श्रोतुमिच्छत्यनिन्दिता ॥२१॥
एतच्छ्रुत्वा प्रतिवचस्तस्य दत्तं त्वया किल।
यत्पुरा तत्पुनस्त्वत्तो वैदर्भी श्रोतुमिच्छति ॥२२॥

बृहदश्व उवाच

एवमुक्तस्य केशिन्या नलस्य कुरुनन्दन।
हृदयं व्यथितं चासीदश्रुपूर्णे च लोचने ॥२३॥
स निगृह्यात्मनो दुःखं दह्यमानो महीपतिः।
वाष्पसंदिग्धया वाचा पुनरेवेदमब्रवीत्[7] ॥२४॥
वैषम्यमपि संप्राप्ता गोपायन्ति कुलस्त्रियः।
आत्मानमात्मना सत्यो जितस्वर्गा न संशयः ॥२५॥

---

१. M. W. तु
२. M. W. स्वानि
३. M. W. नलः शंसति
४. M. W. तथा
५. M. W. वदस्व
६. M. W. प्रवदस्व
७. M. W. बाहुक उवाच

नल के विषय में केवल उसकी अन्तरात्मा को ही पता है, क्योंकि नल के किसी भी चिह्न का ज्ञान किसी को भी नहीं है'॥१६॥

केशिनी

'जो ब्राह्मण उस समय पहले अयोध्या को गया था वह बार बार किसी स्त्री के इन शब्दों को कहता जा रहा था॥१७॥

"अये कपटी! मेरे वस्त्र के अर्द्धभाग को फाड़कर तुम कहाँ चले गये हो? अये प्रिय! तुम इस वन में मुझे सोती हुई छोड़ गये थे। मैं तुम में अनुरक्त थी, तुम्हारी प्यारी थी॥१८॥

तुमने जैसे आदेश दिया था वैसे ही रहती हुई वह तुम्हारी प्रतीक्षा किया करती है। वह आधे वस्त्र में लिपटी हुई रात दिन (तुम्हारे वियोग में) जलती रहती है॥१९॥

अये राजन्! इस प्रकार दुःख से रोती हुई दमयन्ती पर कृपा करो और उसकी बातों का उत्तर दो॥२०॥

अये बुद्धिमान्! तुम वही बात कहो जो उसे अच्छी लगे। सुन्दरी दमयन्ती उसी बात को सुनना चाहती है"॥२१॥

ब्राह्मण के ऐसा कहने पर पहले तुमने जो कुछ कहा था, दमयन्ती तुमसे उसी को सुनना चाहती है'॥२२॥

बृहदश्व

केशिनी के ऐसा कहते कहते नल का हृदय व्यथित हो गया और उनके दोनों नेत्रों में अश्रु आ गये॥२३॥

(दुःख से) जलते हुये नल ने अपने दुःख को रोक लिया। वह अश्रुओं से रुंधे हुये कण्ठ से पुनः कहने लगे॥२४॥

'सत्कुल में उत्पन्न होनेवाली स्त्रियाँ विपत्ति में पड़ जाने पर भी अपने आप अपनी रक्षा कर लेती हैं और निश्चय ही (इससे) वह स्वर्ग को जीत लेती हैं॥२५॥

रहिता भर्तृभिश्चैव[1] न क्रुध्यन्ति कदाचन।
प्राणांश्चरित्रकवचान्धारयन्तीह सत्स्त्रियः[2] ॥२६॥
प्राणयात्रां परिप्रेप्सोः शकुनैर्हृतवाससः।
आधिभिर्दह्यमानस्य श्यामा न क्रोद्धुमर्हति[3] ॥२७॥
सत्कृतासत्कृता वापि पतिं दृष्ट्वा तथागतम्।
भ्रष्टराज्यं श्रिया हीनं क्षुधितं व्यसनाप्लुतम् ॥२८॥
एवं ब्रुवाणस्तद्वाक्यं नलः परमदुःखितः।
न वाष्पमशकत्सोढुं प्ररुरोद च[4] भारत ॥२९॥
ततः सा केशिनी गत्वा दमयन्त्यै न्यवेदयत्।
तत्सर्वं कथितञ्चैव विकारञ्चैव तस्य तम् ॥३०॥

॥ इति नलोपाख्याने त्रयोविंशतितमः सर्गः ॥२३॥

---

१. M. W. चापि २. M. W. धारयन्ति वरस्त्रियः
३. M. W. विषमस्थेन मूढेन परिभ्रष्टसुखेन च।
यत्सा तेन परित्यक्ता तत्र न क्रोद्धुमर्हति ॥
४. M. W. दाथ

अच्छी स्त्रियाँ पतियों से परित्यक्त होकर भी क्रोध नहीं करती हैं। वे अपने चरित्र के कवच से अपने प्राणों की रक्षा किया करती हैं॥२६॥

उस (व्यक्ति) की सुन्दरी स्त्री को तो और भी क्रोध नहीं करना चाहिये जो अपनी प्राणयात्रा के लिए उद्यत हो, जिसके वस्त्र का अपहरण पक्षियों ने कर लिया हो और जो विपत्तियों से जल रहा हो॥२७॥

(उसे तब भी क्रोध नहीं करना चाहिये) जब वह पति को इस स्थिति में आया हुआ देखे जिसका राज्य छीन लिया गया हो, जिसका ऐश्वर्य नष्ट हो गया हो, जो भूखा और विपत्तिग्रस्त हो। चाहे वह स्त्री ऐसे व्यक्ति से सम्मानित अथवा अपमानित ही क्यों न हुई हो'॥२८॥

इन शब्दों को कहते कहते नल अत्यन्त दुःखित हो गये। अब वह अपने अश्रुओं को रोक न सके और रो पड़े॥२९॥

नल ने जो कुछ कहा था और उनमें जो विकार उत्पन्न हो गया था उसे केशिनी ने जाकर दमयन्ती से कह सुनाया॥३०॥

॥ नलोपाख्यान का तेईसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

चतुर्विंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

दमयन्ती तु तच्छ्रुत्वा भृशं शोकपरायणा।
शंकमाना नलं तं वै केशिनीमिदमब्रवीत् ॥१॥
गच्छ केशिनि भूयस्त्वं परीक्षां कुरु बाहुके।
अब्रुवाणा समीपस्था चरितान्यस्य लक्षय ॥२॥
यदा च किंचित्कुर्यात्स कारणं तत्र भामिनि[1]।
तत्र संचेष्टमानस्य **संलक्ष्यं ते**[2] विचेष्टितम् ॥३॥
न चास्य प्रतिबन्धेन देयोऽग्निरपि **भामिनि**[3]।
याचते न जलं देयं **स**[4]**म्यगत्वरमाणया** ॥४॥
एतत्सर्वं समीक्ष्य त्वं चरितं मे निवेदय[5]।
यच्चान्यदपि पश्येथास्तच्चाख्येयं त्वया मम ॥५॥
दमयन्त्यैवमुक्ता सा जगामाथाशु[6] केशिनी।
निशाम्य च हृदयज्ञस्य[7] लिङ्गानि पुनरागमत् ॥६॥
सा तत्सर्वं यथावृत्तं दमयन्त्यै न्यवेदयत्।
निमित्तं यत्तदा[8] दृष्टं बाहुके दिव्यमानुषम् ॥७॥

---

१. M. W. **भाविनि**
२. M. W. **लक्षयन्ती**
३. M. W. **केशिनि**
४. M. W. **सर्वथा**
५. M. W. **निमित्तं यत्त्वया दृष्टं बाहुके दैवमानुषम्।**
६. M. W. **च**
७. M. W. **निशम्याथ हयज्ञस्य**
८. M. W. **तया**

नलोपाख्यान

सर्ग २४

बृहदश्व

सारे वृत्तान्त को सुनकर दमयन्ती अत्यन्त शोकाकुल हो उठी। उस व्यक्ति में नल की शंका करती हुई वह केशिनी से इस प्रकार कहने लगी ॥१॥

'अयि केशिनि! तुम पुनः उनके पास जाकर उनकी परीक्षा करो। तुम बिना कुछ कहे हुए ही उनके समीप में रहती हुई उनके व्यवहारों को ध्यानसे देखती रहना ॥२॥

अयि सुन्दरि! तुम उनके द्वारा किये जाने वाले कार्य के कारण पर भी ध्यान देती रहना ॥३॥

उसके कहने पर (भी) तुम उसे अग्नि मत देना और यदि वह तुमसे जल माँगे तो तुम टालमटोल करके (उसे) जल भी मत देना ॥४॥

उसके इस सारे व्यवहार को देखकर तुम मुझे बताना। (इसके अतिरिक्त) उसमें और कोई (विशेष) बात भी यदि देखना, तो उसे भी मुझे बतला देना' ॥५॥

दमयन्ती के ऐसा कहने पर केशिनी शीघ्र ही चल पड़ी। यह अश्वपालक के सभी लक्षणों को देखकर पुनः लौट गयी ॥६॥

उसने बाहुक में जिस जिस दैवी अथवा मानुषी लक्षण को देखा था उसे दमयन्ती से कह सुनाया ॥७॥

केशिन्युवाच

दृढं शुच्युपचारोऽसौ न मया मानुषः क्वचित्।
दृष्टपूर्वः श्रुतो वापि दमयन्ति तथाविधः॥८॥
ह्रस्वमासाद्य संचारं नासौ विनमते क्वचित्।
तं तु दृष्ट्वा यथासङ्गमुत्सर्पति यथासुखम्।
संकटेऽप्यस्य सुमहद्विवरं जायतेऽधिकम्[1]॥९॥
ऋतुपर्णस्य चार्थाय भोजनीयमनेकशः।
प्रेषितं तत्र राज्ञा च मांसं **सुबहु**[2] पाशवम्॥१०॥
तस्य प्रक्षालनार्थाय **कुम्भस्तत्रोपकल्पितः**[3]।
स[4] **तेनावेक्षितः कुम्भः पूर्ण एवाभवत्तदा**॥११॥
ततः प्रक्षालनं कृत्वा समधिश्रित्य बाहुकः।
तृणमुष्टिं समादाय **आविध्यैनं**[5] समादधत्॥१२॥
अथ प्रज्वलितस्तत्र सहसा हव्यवाहनः।
तदद्भुततमं दृष्ट्वा विस्मिताहमिहागता॥१३॥
अन्यच्च तस्मिन्सुमहदाश्चर्यं लक्षितं मया।
यदग्निमपि संस्पृश्य **नैव दह्यत्यसौ**[6] शुभे॥१४॥
छन्दे चोदकं तस्य वहत्यावर्जितं द्रुतम्।
अतीव चान्यत्सुमहदाश्चर्यं दृष्टवत्यहम्॥१५॥
यत्स पुष्पाण्युपादाय हस्ताभ्यां ममृदे शनैः।
मृषमानानि पाणिभ्यां तेन पुष्पाणि तान्यथ॥१६॥
भूय एव सुगन्धीनि हृषितानि भवन्ति **च**[7]।
एतान्यद्भुतकल्पानि दृष्ट्वाहं द्रुतमागता॥१७॥

---

१. M. W. में नहीं है
२. M. W. बहु च
३. M. W. कुम्भास्तत्रोपकल्पिताः
४. M. W. ते तेनावेक्षिताः कुम्भाः पूर्णा एवाभवंस्ततः
५. M. W. सवितुस्तम्
६. M. W. नैवासौ दह्यते
७. M. W. हि

केशिनी

'अयि दमयन्ति ! वह बड़ा पवित्र है। ऐसा मनुष्य तो मैंने न कभी देखा है और न सुना ही है ॥८॥

(चलते चलते) किसी छोटे द्वार के पास आ जाने पर भी वह नहीं झुकता है, अपितु उसे देखकर द्वार ही इतना ऊँचा हो जाता है कि वह सुखपूर्वक उसमें से निकल सके। संकट में भी उसके लिये अधिक अवकाश मिल जाता है ॥९॥

ऋतुपर्ण के लिए महाराज (भीम) के द्वारा अनेक बार बहुत सा भोज्य पशु-मांस भेजा जाता रहा है ॥१०॥

उसे धोने के लिए वहाँ पर एक घड़ा बनवा दिया गया था। जैसे ही उसने घड़े को देखा वह जल से भर गया ॥११॥

उस मांस को धोकर बाहुक ने उसे चूल्हे पर रख दिया। फिर मुट्ठी भर घास लेकर उसे उद्दीप्त करने लगा ॥१२॥

सहसा ही वहाँ पर अग्नि प्रज्वलित हो उठी। उस अद्भुत दृश्य को देखकर मैं आश्चर्यचकित होकर यहाँ चली आयी हूँ ॥१३॥

एक और भी अत्यन्त आश्चर्य की बात मुझे दिखाई पड़ी। अयि सुन्दरि ! वह बात यह थी कि अग्नि को छूकर भी वह जलता नहीं था ॥१४॥

उसकी इच्छा से ही जल प्रवाहित होता था और उसकी इच्छा से ही वह नीचे गिर जाता था। और भी एक आश्चर्य की बात मैंने वहाँ देखी थी ॥१५॥

वह बात यह थी कि वह जिन फूलों को लेकर दोनों हाँथों से मसल दिया करता था, वे पुष्प उसके हाथों से मल दिये जाने पर पुनः सुगन्धित एवं प्रफुल्लित हो उठते थे। मैं इन आश्चर्यजनक बातों को देखकर शीघ्र यहाँ चली आयी हूँ' ॥१६-१७॥

बृहदश्व उवाच

दमयन्ती तु तच्छ्रुत्वा पुण्यश्लोकस्य चेष्टितम्।
अमन्यत नलं प्राप्तं कर्मचेष्टाभिसूचितम्॥१८॥
सा शङ्कमाना भर्तारं नलं बाहुकरूपिणम्।
केशिनीं श्लक्ष्णया वाचा रुदती पुनरब्रवीत्॥१९॥
पुनर्गच्छ प्रमत्तस्य बाहुकस्योपसंस्कृतम्।
महानसाच्छृतं मांसं समादायैहि भामिनि[1]॥२०॥
सा गत्वा बाहुके व्यग्रे[2] तन्मांसमपकृष्य च।
अत्युष्णमेव त्वरिता तत्क्षणं[3] प्रियकारिणी।
दमयन्त्यै ततः प्रादात्केशिनी कुरुनन्दन॥२१॥
सोचिता नलसिद्धस्य मांसस्य बहुशः पुरा।
प्राश्य मत्वा नलं सूदं[4] प्राक्रोशद्भृशदुःखिता॥२२॥
वैक्लव्यं च परं[5] गत्वा प्रक्षाल्य च मुखं ततः।
मिथुनं प्रेषयामास केशिन्या सह भारत॥२३॥
इन्द्रसेनां सह भ्रात्रा समभिज्ञाय बाहुकः।
अभिद्रुत्य ततो राजा परिष्वज्याङ्कमानयत्॥२४॥
बाहुकस्तु समासाद्य सुतौ सुरसुतोपमौ।
भृशं दुःखपरीतात्मा सस्वरं[6] प्ररुरोद ह॥२५॥
नैषधो दर्शयित्वा तु विकारमसकृत्तदा।
उत्सृज्य सहसा पुत्रौ केशिनीमिदमब्रवीत्॥२६॥

---

१. M. W. भाविनि
२. M. W. बाहुकस्याग्रे
३. M. W. तत्क्षणात्
४. M. W. सूतम्
५. M. W. परमम्
६. M. W. सुस्वरम्

बृहदश्व

दमयन्ती ने उस पुण्यात्मा के व्यवहार के विषय में सुना। उसके कर्म और व्यवहारों से वह समझ गयी कि उसने महाराज नल को प्राप्त कर लिया है॥१८॥

उसे बाहुक रूपधारी मनुष्य के विषय में नल की शंका होने लगी। रोती हुई दमयन्ती कोमल वाणी में केशिनी से कहने लगी॥१९॥

'तुम पुनः जाओ और प्रमत्त बाहुक की रसोई से उसके द्वारा पकाये हुए मांस को लेकर यहाँ चली आओ'॥२०॥

केशिनी दमयन्ती की भलाई करनेवाली थी। इसलिए बाहुक के व्यग्र रहते ही उसने शीघ्र ही गर्म गर्म मांस को लाकर दमयन्ती को दे दिया॥२१॥

उसने नल के पकाये हुए मांस का पहले बहुत बार आस्वादन किया था। मांस को चखकर वह समझ गई कि वह सारथी नल है और वह अत्यन्त दुःखी होकर चिल्ला उठी॥२२॥

वह अत्यन्त व्याकुल थी, किन्तु उसने अपना मुख धोकर अपने दोनों बच्चों को केशिनी के साथ (नल के पास) भेज दिया॥२३॥

बाहुक ने भाई के साथ (आयी हुई) इन्द्रसेना को पहचान लिया। उसने दौड़कर दोनों बच्चों का आलिंगन करके उन्हें गोद में उठा लिया॥२४॥

देवपुत्रों के समान दोनों बच्चों के पास पहुँचकर बाहुक अत्यन्त दुःखित हो उठे और ज़ोर ज़ोर से रोने लगे॥२५॥

उस समय निषधराज (नल) ने अपने अन्दर बार बार उठने वाले विकार को देखा। वह सहसा उन दोनों बच्चों को छोड़कर केशिनी से कहने लगे॥२६॥

इदं सुसदृशं भद्रे मिथुनं मम पुत्रयोः।
ततो[1] दृष्ट्वैव सहसा वाष्पमुत्सृष्टवानहम् ॥२७॥

बहुशः संपतन्तीं त्वां जनः **शंकेत** दोषतः।
वयं च देशातिथयो गच्छ भद्रे **नमोऽस्तु ते**[2] ॥२८॥

॥ इति नलोपाख्याने चतुर्विंशतितमः सर्गः ॥२४॥

---

१. M. W. अतो
२. M. W. यथासुखम्

'अयि सुन्दरि ! ये दोनों तो बिलकुल मेरे पुत्रों के समान ही हैं, (इसीलिए) इन्हें देखकर सहसा मेरे आँसू आ गये थे ॥२७॥

अयि कल्याणि ! तुमको बार बार यहाँ आती हुई देखकर लोग तुममें दोष की शंका करने लगेंगे, क्योंकि हम लोग तो इस देश में अपरिचित हैं। इसलिए तुम यहाँ से चली जाओ, तुम्हें प्रणाम है' ॥२८॥

॥ नलोपाख्यान का चौबीसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

पंचविंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

सर्वं विकारं दृष्ट्वा तु पुण्यश्लोकस्य धीमतः।
आगत्य केशिनी क्षिप्रं दमयन्त्यै न्यवेदयत् ॥१॥
दमयन्ती ततो भूयः प्रेषयामास केशिनीम्।
मातुः सकाशं दुःखार्ता नलशंकासमुत्सुका[1] ॥२॥
परीक्षितो मे बहुशो बाहुको नलशंकया।
रूपे मे संशयस्त्वेकः स्वयमिच्छामि वेदितुम् ॥३॥
स वा प्रवेश्यतां मातर्मां वानुज्ञातुमर्हसि।
विदितं वाथ वाज्ञातं पितुर्मे संविधीयताम् ॥४॥
एवमुक्ता तु वैदर्भ्या सा देवी भीममब्रवीत्।
दुहितुस्तमभिप्रायमन्वजानाच्च[2] पार्थिवः ॥५॥
सा वै पित्राभ्यनुज्ञाता मात्रा च भरतर्षभ।
नलं प्रवेशयामास यत्र तस्याः प्रतिश्रयः[3] ॥६॥
तं तु दृष्ट्वा यथायुक्तं दमयन्ती नलं तदा।
तीव्रशोकसमाविष्टा बभूव वरवर्णिनी ॥७॥
ततः काषायवसना जटिला मलपंकिनी।
दमयन्ती महाराज बाहुकं वाक्यमब्रवीत् ॥८॥

---

१. M. W. नलदर्शनकाङ्क्षया २. M. W. स
३. M. W. तां स्म दृष्ट्वैव सहसा दमयन्तीं नलो नृपः।
आविष्टः शोकदुःखाभ्यां बभूवाश्रुपरिप्लुतः ॥

नलोपाख्यान

सर्ग २५

बृहदश्व

केशिनी ने पुण्यात्मा एवं बुद्धिमान् (नल) के विकार को देखा और शीघ्र ही आकर दमयन्ती से निवेदन करने लगी ॥१॥

नल की शंका से उत्सुक दमयन्ती ने दुःख पीड़ित होकर केशिनी को पुनः माता के पास भेजा ॥२॥

'नल की आशंका से मैंने बाहुक की बहुत परीक्षा कर ली है। मुझे (अभी) उसके स्वरूप के विषय में आशंका है। उसे मैं स्वयं जानना चाहती हूँ ॥३॥

माता जी ! या तो वही यहाँ पर प्रवेश करे या आप मुझे वहाँ जाने की अनुमति प्रदान करें। मेरे पिता जी चाहे यह जानें या न जानें, आप ऐसा उपाय कर ही दीजिये' ॥४॥

दमयन्ती की इस बात को सुनकर उसकी माता ने महाराज भीम से उसके अभिप्राय को बतलाया। महाराज भीम ने अपनी अनुमति दे दी ॥५॥

अपने माता पिता की अनुज्ञा से उसने नल को अपने निवासस्थान में प्रवेश कराया ॥६॥

सुन्दरी दमयन्ती नल की इस अवस्था को देखकर अत्यन्त शोक में डूब गई ॥७॥

वह गेरुए वस्त्र पहने हुयी थी, उसके केश उलझे हुये थे और उसका शरीर मलिन था। उसने बाहुक से इन शब्दों को कहा ॥८॥

दृष्टपूर्वस्त्वया कश्चिद्धर्मज्ञो नाम बाहुक।
सुप्तामुत्सृज्य विपिने गतो यः पुरुषः स्त्रियम् ॥९॥
अनागसं प्रियां भार्यां विजने श्रममोहिताम्।
अपहाय तु को गच्छेत्पुण्यश्लोकमृते नलम् ॥१०॥
किं नु तस्य मया कार्यमपराद्धं[1] महीपतेः।
यो मामुत्सृज्य विपिने गतवान्निद्रया हृताम् ॥११॥
साक्षाद्देवानपाहाय वृतो यः स मया पुरा।
अनुव्रतां साभिकामां पुत्रिणीं त्यक्तवान्कथम् ॥१२॥
अग्नौ पाणिगृहीतां च हंसानां वचने स्थिताम्[2]।
भरिष्यामीति[3] सत्यं च[4] प्रतिश्रुत्य क्व तद्गतम् ॥१३॥
दमयन्त्या ब्रुवन्त्यास्तु सर्वमेतदरिंदम्।
शोकजं वारि नेत्राभ्यामसुखं प्रास्रवद्बहु ॥१४॥
अतीव कृष्णताराभ्यां[5] रक्तान्ताभ्यां जलं तु तत्।
परिस्रवन्नलो दृष्ट्वा शोकार्तं[6] इदमब्रवीत् ॥१५॥
मम राज्यं प्रनष्टं यन्नाहं तत्कृतवान्स्वयम्।
कलिना तत्कृतं भीरु यच्च त्वामहमत्यजम् ॥१६॥
त्वया तु धर्मभृच्छ्रेष्ठे[7] शापेनाभिहतः पुरा।
वनस्थया दुःखितया शोचन्त्या मां दिवाससम्[8] ॥१७॥
स मच्छरीरे त्वच्छापाद्दह्यमानोऽवसत्कलिः।
त्वच्छापदग्धः सततं सोऽग्नाविव समाहितः[9] ॥१८॥
मम च व्यवसायेन तपसा चैव निर्जितः।
दुःखस्यान्तेन चानेन भवितव्यं हि नौ शुभे ॥१९॥

---

१. M. W. बाल्याद
२. M. W. पाणिं गृहीत्वा तु देवानामग्रतस्तथा
३. M. W. भविष्यामिति
४. M. W. तु
५. M. W. सा
६. M. W. शोकार्ताम्
७. M. W. पापः कृच्छ्रेण
८. M. W. दिवानिशम्
९. M. W. ऽग्नावग्निरिवाहितः

'अये बाहुक ! क्या तुमने कहीं इसके पूर्व उस धर्मात्मा व्यक्ति को देखा है जो वन में सोयी हुयी अपनी स्त्री को छोड़कर कहीं चला गया है ॥९॥

पुण्यात्मा नल के अतिरिक्त ऐसा व्यक्ति कौन हो सकता है जो अपनी स्त्री को निर्जन वन में छोड़कर चल दे। स्त्री भी कैसी जो पापरहित, प्रिय और श्रम से चेतना-शून्य थी ॥१०॥

मैंने उन महाराज का ऐसा कौन सा अपराध कर दिया था कि वह मुझको वन में उस समय छोड़ गये जब मैं निद्रा में डूबी हुयी थी ॥११॥

वह मुझको छोड़कर चले कैसे गये ? मैंने तो उन्हें सभी देवताओं को छोड़कर वरण किया था। मैं तो उनकी अभिलाषा और आज्ञा ने अनुसार काम करती रही हूँ ॥१२॥

अरे ! वह कहाँ चले गये हैं ? उन्होंने अग्नि के समक्ष मेरा पाणिग्रहण किया था, मैं हंसों की बातों पर विश्वास किये हुये थी और उन्होंने तो यह प्रतिज्ञा की थी कि "मैं तुम्हारा भरण-पोषण करता रहूँगा" ॥१३॥

दमयन्ती के ऐसा कहते कहते उसके दोनों नेत्रों से शोकाश्रु वह निकले ॥१४॥

नल ने देखा कि दमयन्ती के नेत्रों की पुतलियाँ काली काली हैं, उनके अपांग रक्तवर्ण के हैं और उनके नेत्रों से अश्रु-प्रवाह हो रहा है। यह देखकर वह शोकाकुल होकर इस प्रकार कहने लगे ॥१५॥

'मेरे राज्य का जो सर्वनाश हुआ है उसे स्वयं मैंने तो किया नहीं है। अयि भीरू ! मैंने जो तुम्हें छोड़ दिया था वह भी कलि की करतूत थी ॥१६॥

अयि सुन्दरि ! इसीलिये तो तुमने उसे उस समय शाप दे दिया था जब कि तुम वस्त्रहीन मेरे लिये शोक करती हुई दुःखित होकर निवास कर रही थी। तुम्हारे शाप से जलता हुआ कलि मेरे शरीर में निवास कर रहा था। तुम्हारे शाप से जला हुआ वह मानो निरन्तर अग्नि में ही पड़ा रहता था ॥१७-१८॥

किन्तु मैंने अपने उद्योग और तप से उसे पराजित कर लिया है। अयि सुन्दरि ! अब तो हम लोगों के इस दुःख का अन्त हो ही जाना चाहिए' ॥१९॥

विमुच्य मां गतः पापः स ततोऽहमिहागतः[1]।
त्वदर्थं विपुलश्रोणि न हि मेऽन्यत्प्रयोजनम् ॥२०॥
कथं तु नारी भर्तारमनुरक्तमनुव्रतम्।
उत्सृज्य वरयेदन्यं यथा त्वं भीरु कर्हिचित् ॥२१॥
दूताश्चरन्ति पृथिवीं कृत्स्नां नृपतिशासनात्।
भैमी किल स्म भर्तारं द्वितीयं वरयिष्यति ॥२२॥
स्वैरवृत्ता यथाकाममनुरूपमिवात्मनः।
श्रुत्वैव चैवं त्वरितो भा[2]ङ्गस्वरिरुपस्थितः ॥२३॥
दमयन्ती तु तच्छ्रुत्वा नलस्य परिदेवितम्।
प्राञ्जलिर्वेपमाना च भीता वचन[3]मब्रवीत् ॥२४॥[4]

॥ इति नलोपाख्याने पंचविंशतितमः सर्गः ॥२५॥

---

१. M. W. चागतः २. M. W. भांगासुरि
३. M. W. च नलम्
४. M. W. में यहाँ से सर्ग पृथक् नहीं है।

जैसे ही उस पापी ने मुझे छोड़ा कि मैं यहाँ पर आ गया हूँ। अयि दीर्घनितम्बिनि! मैं यहाँ पर तुम्हारे लिये ही आया हूँ। मेरे यहाँ आने का और कोई प्रयोजन ही नहीं है ॥२०॥

अयि भीरू! कहीं कोई स्त्री तुम्हारी भाँति अपने अनुरक्त एवं आज्ञाकारी पति को छोड़कर किसी अन्य पुरुष का वरण कर लेती है? ॥२१॥

महाराज की आज्ञा से उनके दूत सम्पूर्ण पृथ्वी पर (यह कहते हुये) घूम रहे हैं कि "भीमनन्दिनी दमयन्ती दूसरे पति का वरण करेगी" ॥२२॥

वह अपनी इच्छानुसार अपने अनुरूप पति का वरण करेगी यह सुनकर ही भांगस्वरि दौड़कर यहाँ आ गये हैं' ॥२३॥

नल के इस विलाप को सुनकर दमयन्ती भय से काँपने लगी। वह हाथ जोड़कर उनसे बोली ॥२४॥

॥ नलोपाख्यान का पचीसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

षड्विंशतितमः सर्गः

दमयन्त्युवाच

न मामर्हसि कल्याण पापेन[1] परिशङ्कितुम्।
मया हि देवानुत्सृज्य वृतस्त्वं निषधाधिप ॥१॥
तवाभिगमनार्थं तु सर्वतो ब्राह्मणा गताः।
वाक्यानि मम गाथाभिर्गायमाना दिशो दश ॥२॥
ततस्त्वां ब्राह्मणो विद्वान्पर्णादो नाम पार्थिव।
अभ्यगच्छत्कोस[2]लायामृतुपर्णनिवेशने ॥३॥
तेन वाक्ये हृते[3] सम्यक्प्रतिवाक्ये तथाहृते।
उपायोऽयं मया दृष्टो नैषधानयने तव ॥४॥
त्वामृते न हि लोकेऽन्य एकाह्ना पृथिवीपते।
समर्थो योजनशतं गन्तुमश्वैर्नराधिप ॥५॥
तथा चेमौ महीपाल भजेऽहं चरणौ तव[4]।
यथा नासत्कृतं किंचिन्मनसापि चराम्यहम् ॥६॥
अयं चरति लोकेऽस्मिन्भूतसाक्षी सदागतिः।
एष **मुञ्चतु मे**[5] प्राणान्यदि पापं चराम्यहम् ॥७॥
तथा चरति तिग्मांशुः परेण भुवनं सदा।
स **विमुञ्चतु मे**[6] **प्राणान्**यदि पापं चराम्यहम् ॥८॥

---

१. M. W. दोषेण २. M. W. श
३. M. W. कृते
४. M. W. स्पृशेयं तेन सत्येन पादावेतौ महीपते
५. M. W. मे मुञ्चतु ६. M. W. मुञ्चतु मम

नलोपाख्यान

सर्ग २६

दमयन्ती

'अये सुन्दर ! निषधराज ! आप को मेरे प्रति इस पाप कर्म की आशंका नहीं करनी चाहिए क्योंकि मैंने तो सब देवताओं को छोड़कर आपका वरण किया था ।।१।।

आपको खोजने के लिये दसों दिशाओं में गाथाओं को गाने वाले ब्राह्मण गये हुये हैं ।।२।।

अये राजन् ! तत्पश्चात् पर्णाद नामक एक ब्राह्मण ने आपको कोसल में ऋतुपर्ण के भवन में खोज लिया था ।।३।।

वह मेरे संदेश को आप के पास ले गये थे और आपके संदेश को मेरे पास लाये थे। उसके बाद ही आपको यहाँ लाने के लिये मुझे यह उपाय सूझा था ।।४।।

अये राजन् ! इस संसार में आपके अतिरिक्त अन्य कोई भी व्यक्ति अश्वों के द्वारा सौ योजन की दूरी को एक दिन में पूरा नहीं कर सकता है ।।५।।

अये राजन् ! मैं आपके इन चरणों को इसीलिये प्राप्त कर सकी हूँ क्योंकि मैंने अपने मन से भी किसी असत् कर्म का चिन्तन नहीं किया है। यदि मैं पापाचारिणी हूँ तो (वायु) जो संसार में सभी प्राणियों को देखती रहती है, मेरे प्राणों का अपहरण कर ले ।।६-७।।

यदि मैंने कोई पाप किया हो तो यह सूर्य मेरे प्राणों का अपहरण कर ले जो इस संसार में ऊपर ऊपर चलता रहता है ।।८।।

चन्द्रमाः सर्वभूतानामन्तश्चरति साक्षिवत्।
स **विमुञ्चतु मे**[1] प्राणान्यदि पापं चराम्यहम्॥९॥
एते देवास्त्रयः कृत्स्नं त्रैलोक्यं धारयन्ति वै।
विब्रुवन्तु यथासत्यमेते वाद्य त्यजन्तु माम्॥१०॥
एवमुक्ते ततो[2] वायुरन्तरि[3]क्षादभाषत।
नैषा कृतवती पापं नल सत्यं ब्रवीमि ते॥११॥
राज[4]**ञ्शीलनिधिः** स्फीतो दमयन्त्या सुरक्षितः।
साक्षिणो रक्षिणश्चास्या वयं त्रीन्परिवत्सरान्॥१२॥
उपायो विहितश्चायं त्वदर्थमतुलोऽनया।
न ह्येकाह्ना शतं गन्ता **त्व**[5]**दृते**ऽन्यः पुमानिह॥१३॥
उपपन्ना त्वया भैमी त्वञ्च भैम्या महीपते।
नात्र शंका त्वया कार्या संगच्छ सह भार्यया॥१४॥
तथा ब्रुवति वायौ तु पुष्पवृष्टिः पपात ह।
देवदुन्दुभयो नेदुर्ववौ च पवनः शिवः। १५॥
तदद्भुततमं दृष्ट्वा नलो राजाथ भारत।
दमयन्त्यां विशंकां तां व्यपाकर्षदरिंदमः॥१६॥
ततस्तद्वस्त्रमरजः प्रावृणोद्वसुधाधिपः।
संस्मृत्य **नागराजानं**[6] ततो लेभे **वपुः स्वकम्**[7]॥१७॥
स्वरूपिणं तु भर्तारं दृष्ट्वा भीमसुता तदा।
प्राक्रोशदुच्चैरालिंग्य पुण्यश्लोकमनिन्दिता॥१८॥
भैमीमपि नलो राजा भ्राजमानो यथा पुरा।
सस्वजे स्वसुतौ चापि यथावत्प्रत्यनन्दत॥१९॥
ततः स्वोरसि विन्यस्य वक्त्रं तस्य शुभानना।
परीता तेन दुःखेन निशश्वासायतेक्षणा॥२०॥

---

१. M. W. **मुञ्चतु मम**
२. M. W. **एवमुक्तस्तया**
३. M. W. **री**
४. M. W. **राजन्**
५. M. W. **त्वामृते**
६. M. W. **नागराजं तम्**
७. M. W. **स्वकं वपुः**

यह चन्द्रमा तो सभी प्राणियों के अन्तःकरण में साक्षी रूप में विचरण करता रहता है। यदि मैंने कोई पाप किया हो तो यह मेरे प्राणों का अपहरण कर ले ॥९॥

ये (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) तीनों देवता सम्पूर्ण संसार को धारण कर रहे हैं। ये या तो सच सच कहें या मुझे छोड़ दें' ॥१०॥

दमयन्ती के ऐसा कहने पर अन्तरिक्ष लोक से वायु बोल उठी—'अये नल! मैं सच सच कह रही हूँ कि इस दमयन्ती ने कोई पाप नहीं किया है ॥११॥

अये राजन्! इस दमयन्ती ने अपने उज्ज्वल शील की निधि को भली भाँति सुरक्षित रखा है। हम लोग तीन वर्षों तक इसकी रक्षा करते रहे हैं इसीलिये हम लोग इसके साक्षी हैं ॥१२॥

यह अनुपम उपाय दमयन्ती ने तुम्हारे लिये ही किया है, क्योंकि इस संसार में तुम्हारे अतिरिक्त और कोई व्यक्ति एक दिन में सौ योजन नहीं जा सकता है ॥१३॥

भीमपुत्री दमयन्ती तुमसे मिल गयी है और तुम दमयन्ती से मिल गये हो। इस समय तुम्हें शंका नहीं करनी चाहिए, तुम अपनी स्त्री दमयन्ती के साथ चले जाओ' ॥१४॥

वायु के ऐसा कहते ही पुष्पवृष्टि होने लगी, देवताओं की दुन्दुभियाँ बज उठीं और कल्याणकारी वायु चलने लगी ॥१५॥

महाराज नल ने इस महान् अद्भुत दृश्य को देखा। दमयन्ती के विषय में उनकी शंका समाप्त हो चुकी थी ॥१६॥

उन्होंने सर्पराज का ध्यान करते हुये उस शुभ्र वस्त्र को पहन लिया जिससे उन्हें अपना वास्तविक रूप प्राप्त हो गया ॥१७॥

भीमपुत्री दमयन्ती ने अपने पति के वास्तविक रूप को देखा। वह सुन्दरी पुण्यश्लोक नल का आलिंगन करके ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगी ॥१८॥

पहले के समान सुन्दरता से युक्त महाराज नल ने भी दमयन्ती का आलिंगन कर लिया। उन्होंने अपने दोनों बच्चों को भी प्यार किया ॥१९॥

दीर्घ नेत्रों से युक्त सुन्दरी दमयन्ती महाराज नल के मुख को अपने वक्षस्थल पर रखकर दुःखित होकर आहें भरने लगी ॥२०॥

तथैव मलदिग्धाङ्गी परिष्वज्य शुचिस्मिता[1]।
सुचिरं **पुरुषव्याघ्रं**[2] तस्थौ **साश्रुपरिप्लुता**[3] ॥२१॥
ततः सर्वं यथावृत्तं दमयन्त्या नलस्य च।
भीमायाकथयत्प्रीत्या **वैदर्भ्या जननी**[4] नृप ॥२२॥
ततोऽब्रवीन्महाराजः कृतशौचमहं नलम्।
दमयन्त्या सहोपेतं **काल्यं**[5] द्रष्टा सुखोषितम्[6] ॥२३॥
ततस्तौ सहितौ रात्रिं कथयन्तौ पुरातनम्।
वने विचरितं सर्वमूषतुर्मुदितौ नृप[7] ॥२४॥
स चतुर्थे ततो वर्षे संगम्य सह भार्यया।
सर्वकामैः सुसिद्धार्थो लब्धवान्परमां मुदम् ॥२५॥
दमयन्त्यपि भर्तारमवा[8]प्याप्यायिता भृशम्।
अर्धसंजातस[9]स्येव तोयं प्राप्य वसुन्धरा ॥२६॥

सेवं समेत्य व्यपनीततन्द्री[10]
शान्तज्वरा हर्षविवृद्धसत्वा।
रराज भैमी समवाप्तकामा
शीतांशुना रात्रिरिवोदितेन ॥२७॥

॥ इति नलोपाख्याने षड्विंशतितमः सर्गः ॥२६॥

---

१. M. W. शुचिस्मिताम् २. M. W. पुरुषव्याघ्रस्
३. M. W. शोकपरिप्लुतः ४. M. W. वैदर्भीजननी
५. M. W. कल्यं ६. M. W. बृहदश्व उवाच
७. M. W. गृहे भीमस्य नृपतेः परस्परसुखैषिणौ।
वसेतां हृष्टसंकल्पौ वैदर्भी च नलश्च ह॥
८. M. W. आसाद्य ९. M. W. श
१०. M. W. यतन्द्रां

दमयन्ती का शरीर मलिन था किन्तु उसकी मुस्कान (पहले के समान ही) सुन्दर थी। नल का आलिंगन करके वह बहुत समय तक आँसुओं से भीगी हुई खड़ी रही ॥२१॥

तत्पश्चात् दमयन्ती की माता ने नल और दमयन्ती का सम्पूर्ण वृत्तान्त भीम से कह सुनाया ॥२२॥

तत्पश्चात् महाराज भीम ने कहा—'मैं दमयन्ती के साथ सुख से रहते हुये और पवित्र कर्म करने वाले नल को देखूँगा' ॥२३॥

नल और दमयन्ती ने एक दूसरे से बीते हुये वृत्तान्त और वन के भ्रमण को कहते हुये सुखपूर्वक साथ साथ रात्रि को व्यतीत कर दिया ॥२४॥

चौथे वर्ष में अपनी पत्नी से मिलकर महाराज नल अत्यन्त आनन्दित हो उठे। उनकी सभी कामनायें पूरी हो चुकी थीं ॥२५॥

दमयन्ती भी अपने पति को प्राप्त करके वैसे ही अत्यन्त आनन्दित हो उठी जैसे कि जल को प्राप्त करके वह पृथ्वी प्रफुल्लित हो उठती है जिस पर कुछ कुछ हरियाली उगी रहती है ॥२६॥

दमयन्ती अपने पति से मिल रही थी, उसकी तन्द्रा समाप्त हो चुकी थी, उसका दुःख दूर हो चुका था और वह हर्षविभोर थी। अपनी सभी इच्छाओं को पूर्ण करके दमयन्ती उसी प्रकार शोभित हो रही थी जिस प्रकार चन्द्रमा के उदय होने से रात्रि शोभित हो उठती है ॥२७॥

॥ नलोपाख्यान का छब्बीसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

सप्तविंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

अथ तां व्युषितो रात्रिं नलो राजा स्वलंकृतः।
वैदर्भ्या सहितः **काल्यं**[1] ददर्श वसुधाधिपम् ॥१॥
ततोऽभिवादयामास प्रयतः श्वशुरं नलः।
तस्यानु[2] दमयन्ती च ववन्दे पितरं शुभा ॥२॥
तं भीमः प्रतिजग्राह पुत्रवत्परया मुदा।
यथार्हं पूजयित्वा तु समाश्वासयत प्रभुः।
नलेन सहितां तत्र दमयन्तीं पतिव्रताम् ॥३॥
तामर्हणां नलो राजा प्रतिगृह्य यथाविधि।
परिचर्यां स्वकां तस्मै यथावत्प्रत्यवेदयत् ॥४॥
ततो बभूव नगरे सुमहान्ह्**र्षनि**[3]स्वनः।
जनस्य संप्रहृष्टस्य नलं दृष्ट्वा तथागतम् ॥५॥
अशोभय[4]**च्च** नगरं पताकाध्वजमालिनम्।
सि[5]**क्तसं**मृष्टपुष्पाढ्या राजमार्गाः **कृतास्तदा**[6] ॥६॥
द्वारि द्वारि च पौराणां पुष्पभङ्गः प्रकल्पितः।
अर्चितानि च सर्वाणि देवतायतनानि च ॥७॥
ऋतुपर्णोऽपि शुश्राव बाहुकच्छद्मिनं नलम्।
दमयन्त्या समायुक्तं जहृषे च नराधिपः ॥८॥

---

१. M. W. काले
२. M. W. ततोऽनु
३. M. W. हर्षजः
४. M. W. यन्त
५. M. W. सिक्ताः सु
६. M. W. स्वलंकृताः

नलोपाख्यान

सर्ग २७

बृहदश्व

तदनन्तर रात भर वहाँ रह कर सभी अलंकारों से अलंकृत होकर नल प्रातःकाल दमयन्ती के साथ महाराज भीम से मिलने गये ॥१॥

पहले तो महाराज नल ने नम्रतापूर्वक अपने श्वसुर का अभिवादन किया। तत्पश्चात् सुन्दरी दमयन्ती ने अपने पिता को प्रणाम किया ॥२॥

महाराज भीम ने आनन्दित होकर अपने पुत्र के समान नल का स्वागत किया। उन्होंने नल के साथ पतिव्रता दमयन्ती का समुचित आदर-सत्कार करके उसे सान्त्वना दी ॥३॥

महाराज नल ने भी विधिपूर्वक आदर-सत्कार करके महाराज भीम को अपनी सेवायें अर्पित कर दीं ॥४॥

इस प्रकार नल को आया हुआ देखकर जन-समूह हर्षित हो उठा। नगर हर्ष की ध्वनि से भर उठा ॥५॥

वह ध्वज और पताकाओं से शोभित होने लगा। राजमार्गों पर जल का छिड़काव होने लगा और उनके ऊपर पुष्प बिखेर दिये गये ॥६॥

नगरवासियों के प्रत्येक द्वार पर पुष्पमालायें लटका दी गईं और देवालयों में पूजा होने लगी ॥७॥

ऋतुपर्ण ने भी बाहुक के रूप में गुप्त रूप से रहने वाले नल और दमयन्ती के संयोग के विषय में सुना। इससे वह भी अत्यन्त आनन्दित हो उठे ॥८॥

तमानाय्य नलो राजा क्षमयामास पार्थिवम्।
स च तं क्षमयामास हेतुभिर्बुद्धिसंमनः[1] ॥९॥
स सत्कृतो महीपालो नैषधं विस्मयान्वितः[2]।
दिष्ट्या समेतो दारैः स्वैर्भवानित्यभ्यनन्दत ॥१०॥
कच्चित्तु नापराधं ते कृतवानस्मि नैषध।
अज्ञातवासं वसतो मद्गृहे निषधाधिप[3] ॥११॥
यदि वा बुद्धिपूर्वाणि यद्यबुद्धानि[4] कानिचित्।
मया कृतान्यकार्याणि तानि मे[5] क्षन्तुमर्हसि ॥१२॥

नल उवाच

न मेऽपराधं कृतवांस्त्वं स्वल्पमपि पार्थिव।
कृतेऽपि च न मे कोपः क्षन्तव्यं हि मया तव ॥१३॥
पूर्वं ह्यसि सखा मेऽसि संबन्धी च नराधिप।
अत ऊर्ध्वं तु भूयस्त्वं प्रीतिमाहर्तुमर्हसि ॥१४॥
सर्वकामैः सुविहितैः सुखमस्म्युषितस्त्वयि।
न तथा स्वगृहे राजन्यथा तव गृहे सदा ॥१५॥
इदञ्च ह्यज्ञानं त्वदीयं मयि तिष्ठति।
तदुपाकर्तुमिच्छामि मन्यसे यदि पार्थिव ॥१६॥

बृहदश्व उवाच[6]

एवमुक्त्वा ददौ विद्यामृतुपर्णाय नैषधः।
स च तां प्रतिजग्राह विधिदृष्टेन कर्मणा ॥१७॥

---

१. M. W. संमतैः
२. M. W. विस्मिताननः
३. M. W. वसुधा
४. M. W. बुद्ध्यापि
५. M. W. त्वम्
६. M. W. में नहीं है।

नल ने महाराज ऋतुपर्ण के पास जाकर क्षमा याचना की और बुद्धिमान् ऋतुपर्ण ने भी उनसे क्षमा याचना की ॥९॥

इस प्रकार आदर सत्कार से आश्चर्यचकित होकर महाराज ऋतुपर्ण ने नैषध का अभिनन्दन करके उनसे कहा— 'अपने परिवार के साथ आप सुखी रहें ॥१०॥

अये! निषधराज!! नल!!! अज्ञात रूप से मेरे घर में रहते हुये आप के प्रति मुझसे कोई अपराध तो नहीं हो गया है? ॥११॥

यदि जाने अनजाने मुझसे कोई अनुचित कार्य हो गया हो तो उसे आप क्षमा कर दीजियेगा' ॥१२॥

नल

'अये राजन्! आपने मेरा तनिक भी अपराध नहीं किया है। और यदि आपसे कुछ अपराध हो भी जाता तो मुझे क्रोध नहीं आता। मैं तो उसे क्षमा ही कर देता ॥१३॥

अये महाराज! आप मेरे पुराने सखा और सम्बन्धी हैं। इसके बाद भी आप मेरे प्रति अपना प्रेम बनाये रखियेगा ॥१४॥

महाराज! जिस सुख से मैं आपके घर में रहा हूँ, वह सुख तो मुझे अपने घर में भी नहीं था। आपके यहाँ मेरी सारी इच्छायें पूर्ण होती रही हैं ॥१५॥

अये राजन्! यदि आप उचित समझें तो मैं अपना सारा अश्वज्ञान आपको दे दूँ' ॥१६॥

बृहदश्व

ऐसा कह कर नल ने अपनी अश्वविद्या ऋतुपर्ण को दे दी। ऋतुपर्ण ने भी विधि-पूर्वक उसे ग्रहण कर लिया ॥१७॥

ततो गृह्याश्वहृदयं तदा भाङ्गस्वरिर्नृपः।[1]
सूतमन्यमुपादाय ययौ स्वपुरमेव हि ॥१८॥
ऋतुपर्णे प्रतिगते[3] नलो राजा विशाम्पते।
नगरे कुण्डिने कालं नातिदीर्घमिवावसत् ॥१९॥

॥ इति नलोपाख्याने सप्तविंशतितमः सर्गः ॥२७॥

---

१. M. W. गृहीत्वा चाश्वहृदयं राजन् भाङ्गासुरि
२. M. W. निषधाधिपतेश्चापि दत्त्वाऽक्षहृदयं नृप :
३. M. W. गते राजन्

तत्पश्चात् महाराज भांगस्वरि अश्वज्ञान को प्राप्त करके दूसरे सारथी को साथ लेकर अपने नगर को चले गये ॥१८॥

ऋतुपर्ण के जाने के उपरान्त महाराज नल ने बहुत थोड़े समय तक ही कुण्डिनपुर में निवास किया ॥१९॥

॥ नलोपाख्यान का सत्ताईसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

नलोपाख्यानम्

अष्टाविंशतितमः सर्गः

बृहदश्व उवाच

स मासमुष्य कौन्तेय भीममामन्त्र्य नैषधः।
पुरादल्पपरीवारो जगाम निषधान्प्रति ॥१॥
रथेनैकेन शुभ्रेण दन्तिभिः परिषोडशैः।
पञ्चाशद्भिर्हयैश्चैव षट्शतैश्च पदातिभिः ॥२॥
स कम्पयन्निव महीं त्वरमाणो महीपतिः।
प्रविवेशातिसंरब्धस्तरसैव महामनाः ॥३॥
ततः पुष्करमासाद्य वीरसेनसुतो नलः।
उवाच दीव्याव पुनर्बहु वित्तं मयार्जितम् ॥४॥
दमयन्ती च यच्चान्यन्मया वसु समर्जितम्[1]।
एष वै मम संन्यासस्तव राज्यं तु पुष्कर ॥५॥
पुनः प्रवर्ततां द्यूतमिति मे निश्चिता मतिः।
एकपाणेन भद्रं ते प्राणयोश्च पणावहे ॥६॥
जित्वा परस्वमाहृत्य राज्यं वा यदि वा वसु।
प्रतिपाणः प्रदातव्यः परं हि धनमुच्यते[2] ॥७॥
न चेद्वाञ्छसि तद् द्यूतं[3] युद्धद्यूतं प्रवर्तताम्।
द्वैरथेनास्तु वै शान्तिस्तव वा मम वा नृप ॥८॥

---

१. M. W. मम किञ्चन विद्यते
२. M. W. परमो धर्म उच्यते
३. M. W. द्यूतं त्वम्

नलोपाख्यान

सर्ग २८

बृहदश्व

एक मास तक कुण्डिनपुर में निवास करके भीम की आज्ञा प्राप्त कर महाराज नल थोड़े से सेवकों के साथ वहाँ से निषध देश की ओर चल पड़े ॥१॥

महाराज नल ने बड़े वेग से पृथ्वी को कम्पित सी करते हुये निषध देश में प्रवेश किया। उस समय उनके साथ एक सुन्दर रथ, सोलह हाथी, पचास घोड़े और छः सौ पैदल थे ॥२-३॥

तदनन्तर वीरसेन के पुत्र नल ने पुष्कर के समीप जाकर कहा—'आइये, हम लोग फिर जुआ खेलें। अब मैंने बहुत सा धन संग्रह कर लिया है ॥४॥

अये पुष्कर ! दमयन्ती तथा यह जो कुछ धन मेरे पास है उसे मैं दाँव पर लगा दूँगा और अपने राज्य को आप दाँव पर रख दीजिये ॥५॥

मैंने यह निश्चय कर लिया है कि जुए का खेल फिर हो। हम लोग एक ही बाजी में अपने अपने प्राणों की बाजी लगा दें ॥६॥

जो भी जीतेगा वह दूसरे का धन, राज्य और सब कुछ ले लेगा। दाँव पर लगाये हुये धन को दे ही देना चाहिये क्योंकि वही सबसे श्रेष्ठ धन कहा जाता है ॥७॥

यदि आप यह जुआ नहीं खेलना चाहते हों तो युद्ध का ही जुआ हो जाये। हम दोनों के मल्लयुद्ध में या तो मैं शान्त हो जाऊँ या आप ॥८॥

वंशभोज्यमिदं राज्यं **मार्गितव्यं**[1] यथा तथा।
येन **ते**[2]**नाप्युपायेन** वृद्धानामिति शासनम् ॥९॥
द्वयोरेकतरे बुद्धिः क्रियतामद्य पुष्कर।
कैतवेनाक्षवत्यां वा युद्धे वा नाम्यतां धनुः ॥१०॥
नैषधेनैवमुक्तस्तु पुष्करः प्रहसन्निव।
ध्रुवमात्मजयं मत्वा प्रत्याह पृथिवीपतिम् ॥११॥
दिष्ट्या त्वयार्जितं वित्तं प्रतिपाणाय नैषध[3]।
दिष्ट्या च **दुष्कृतं**[4] कर्म दमयन्त्याः क्षयं गतम्।
दिष्ट्या च म्रियसे राजन्सदारोऽ**रिनिबर्हण**[5] ॥१२॥
धनेनानेन **वैदर्भी**[6] जितेन समलंकृता।
मामुपस्थास्यति व्यक्तं दिवि शक्रमिवाप्सराः ॥१३॥
नित्यशो हि स्मरामि त्वां **प्रतीक्षामि**[7] च नैषध।
देवने च[8] मम प्रीतिर्न भवत्यसुहृद्गणैः ॥१४॥
जित्वा त्वद्य वरारोहां दमयन्तीमनिन्दिताम्।
कृतकृत्यो भविष्यामि सा हि मे नित्यशो हृदि ॥१५॥
श्रुत्वा तु तस्य ता वाचो बह्वबद्धप्रलापिनः।
इयेष स शिरश्छेत्तुं खड्गेन कुपितो नलः ॥१६॥
स्मयंस्तु रोषताम्राक्षस्तमुवाच ततो **नृपः**[9]।
पणावः किं व्याहरसे **जित्वा वै**[10] व्याहरिष्यसि ॥१७॥
ततः प्रावर्तत द्यूतं पुष्करस्य नलस्य च।
एकपाणेन भद्रं ते नलेन स पराजितः।
सरत्नकोश**निचयः**[11] प्राणेन पणितोऽपि च ॥१८॥

---

१. M. W. **आर्थितव्यम्**
२. M. W. **के**
३. M. W. **में नहीं है**
४. M. W. **दुष्करम्**
५. M. W. **ऽद्य महाभुज**
६. M. W. **वै भैमी**
७. M. W. **प्रतीक्षेऽपि**
८. M. W. **देवनेन**
९. M. W. **नलः**
१०. M. W. **जितो न**
११. M. W. **निचयैः**

यह राज्य तो वंश परम्परा से चला आ रहा है, इसलिये इसे जैसे तैसे करके ले लेना चाहिये—यह वृद्धजनों का आदेश है ॥९॥

अये पुष्कर! दो में से एक निर्णय तो करना ही पड़ेगा। या तो जुए में पांसा पकड़िये या युद्ध में धनुष झुकाइये' ॥१०॥

नल की इस बात को सुनकर पुष्कर ने सोचा कि उसकी विजय निश्चित है। इसलिए वह हंसते हुये महाराज नल से कहने लगा ॥११॥

'अये नल! बड़े सौभाग्य से ही दमयन्ती के पापों का नाश हो पाया है। अये राजन्! शत्रुओं के संहारक! यह भी बड़ी प्रसन्नता की बात है कि अपनी पत्नी के साथ आप को मैं वश में कर रहा हूँ ॥१२॥

इस जीते हुये धन से अलंकृत दमयन्ती मेरे समीप खड़ी होकर उसी प्रकार शोभित होगी जिस प्रकार स्वर्ग लोक में इन्द्र के समीप खड़ी होकर एक अप्सरा शोभित होती है ॥१३॥

अये नल! मैं तो बहुत समय से आपका स्मरण कर रहा हूँ और आपकी प्रतीक्षा भी कर रहा हूँ, क्योंकि जो मित्र नहीं हैं उनके साथ जुआ खेलने में मुझे आनन्द नहीं आता है ॥१४॥

आज मैं इस अनिंद्य सुन्दरी दमयन्ती को जीतकर कृतकृत्य हो जाऊँगा क्योंकि वह नित्य ही मेरे हृदय में रहा करती है' ॥१५॥

इस प्रकार पुष्कर की अनर्गल बातचीत को सुनकर नल क्रुद्ध हो उठे। उनके मन में आया कि खड्ग से उसका सिर काट दें ॥१६॥

क्रोध से महाराज नल के नेत्र लाल पड़ गये थे। उन्होंने मुस्करा कर पुष्कर से कहा—'आइये, हम लोग जुआ खेल लें। आप बकवास क्यों कर रहे हैं। जीत कर ही इस प्रकार कहियेगा' ॥१७॥

तदनन्तर नल और पुष्कर का जुआ होने लगा। नल के एक ही दाँव से पुष्कर पराजित हो गया। उसका रत्नकोष और उसके प्राण—सभी कुछ जीत लिये गये ॥१८॥

जित्वा च पुष्करं राजा प्रहसन्निदमब्रवीत्।
मम सर्वमिदं राज्यमव्यग्रं हतकण्टकम् ॥१९॥
वैदर्भी न त्वया शक्या राजापसद वीक्षितुम्।
तस्यास्त्वं सपरीवारो मूढ दासत्वमागतः ॥२०॥
न त्वया तत्कृतं कर्म येनाहं **निर्जितः**[1] पुरा।
कलिना तत्कृतं कर्म त्वं **तु**[2] मूढ न बुध्यसे॥
नाहं परकृतं दोषं त्वय्याधास्ये कथंचन ॥२१॥
यथासुखं त्वां जीवस्व[3] प्राणानभ्युत्सृ[4]**जामि** ते।[5]
तथैव च मम प्रीतिस्त्वयि वीर न संशयः ॥२२॥
सौभ्रात्रं **चैव**[6] मे त्वत्तो न कदाचित्प्रहास्यति।
पुष्कर त्वं हि मे भ्राता **संजीवस्व शतं समा**[7] ॥२३॥
एवं नलः सान्त्वयित्वा भ्रातरं सत्यविक्रमः।
स्वपुरं प्रेषयामास परिष्वज्य पुनः पुनः ॥२४॥
सान्त्वितो नैषधेनैवं पुष्करः प्रत्युवाच **तम्**[8]।
पुण्यश्लोकं तदा राजन्नभिवाद्य कृताञ्जलिः ॥२५॥
कीर्तिरस्तु तवाक्षय्या जीव वर्षायुतं सुखी।
यो मे वितरसि प्राणानधिष्ठानञ्च पार्थिव ॥२६॥
स तथा सत्कृतो राज्ञा मासमुष्य तदा नृपः।
प्रययौ स्वपुरं हृष्टः पुष्करः स्वजनावृतः ॥२७॥

---

१. M. W. **विजितः**
२. M. W. **च**
३. M. W. **त्वम्**
४. M. W. **वसृजामि**
५. M. W. **तथैव सर्वसम्भारं स्वमंशं वितरामि ते**
६. M. W. **चापि**
७. M. W. **सञ्जीव शरदः शतम्**
८. M. W. **ह**

पुष्कर को जीतकर महाराज नल ने हँसते हुये कहा—'अब तो मेरा यह सम्पूर्ण राज्य निष्कण्टक और सुखी हो गया है॥१९॥

अये नीच! अब तो तू दमयन्ती की ओर देख भी नहीं सकता है। अये मूर्ख! अब तो तू अपने परिवार के साथ उसका सेवक हो गया है॥२०॥

पहले जब तूने मुझे जीत लिया था तब वह तेरी करतूत न थी। वह करतूत तो कलि की थी, जिसे, रे मूर्ख! तू जानता ही न था। मैं दूसरे के दोष का आरोपण तेरे ऊपर कभी भी नहीं करूँगा॥२१॥

तू जीवित रह। मैं तेरे प्राणों को छोड़ दे रहा हूँ। रे वीर! मैं तुझसे वैसे ही प्रेम करता रहूँगा, इसमें तनिक भी संशय नहीं है॥२२॥

तेरे प्रति मेरे हृदय में जो भ्रातृत्व भाव है वह कभी भी समाप्त न होगा। अरे पुष्कर! तू मेरा भाई होकर सौ वर्ष जीवित रह'॥२३॥

महापराक्रमी नल ने अपने भाई पुष्कर को सांत्वना देकर और बार बार उसका आलिंगन करके उसे अपने नगर को भेज दिया॥२४॥

नल के द्वारा इस प्रकार सांत्वना दिलाये जाने पर पुष्कर पुण्यश्लोक नल का अभिवादन करके और हाथ जोड़कर कहने लगा—'अये राजन्! आप मुझे प्राणों एवं आवास का दान दे रहे हैं इसलिये आप की कीर्ति अमर हो और आप करोड़ों वर्षों तक जीवित रहें'॥२५-२६॥

महाराज नल से इस प्रकार आदरसत्कार पाकर पुष्कर वहाँ एक महीने तक रहता रहा। उसके बाद वह प्रसन्नचित्त होकर अपने बन्धु-बान्धवों के साथ अपने नगर को चल पड़ा॥२७॥

महत्या सेनया राजन्विनीतैः परिचारकैः।
भ्राजमान इवादित्यो वपुषा **पुरुषर्षभ**[1] ॥२८॥
प्रस्थाप्य पुष्करं राजा वित्तवन्तमनामयम्।
प्रविवेश पुरं[2] श्रीमानत्यर्थमुप**शोभितम्**[3]।
प्रविश्य सान्त्वयामास पौरांश्च निषधाधिपः ॥२९॥[4]
प्रशान्ते तु पुरे हृष्टे संप्रवृत्ते महोत्सवे।
महत्या सेनया राजा दमयन्तीमुपानयत् ॥३०॥
दमयन्तीमपि पिता सत्कृत्य परवीरहा।
प्रस्थापयदमेयात्मा भीमो भीमपराक्रमः ॥३१॥
आगतायां तु वैदर्भ्यां सपुत्रायां नलो नृप।
वर्तयामास मुदितो देवराडिव नन्दने ॥३२॥
तथा प्रकाशतां यातो जम्बूद्वीपेऽथ[5] राजसु।
पुनः **स्वे चावसद्राज्ये**[6] प्रत्याहृत्य महायशाः।
ईजे च विविधैर्यज्ञैर्विधिवत्स[7]**वाप्त**दक्षिणैः ॥३३॥

॥ इति नलोपाख्याने अष्टाविंशतितमः सर्गः ॥२८॥
॥ इति नलोपाख्यानं समाप्तम् ॥

---

१. M. W. भरतर्षभ
२. M. W. पुरीम्
३. M. W. शोभिताम्
४. M. W. पौरजानपदाश्चापि सम्प्रहृष्टतनूरुहाः।
ऊचुः प्राञ्जलयः सर्वे सामात्यप्रमुखा जनाः॥
अद्य स्म निर्वृता राजन् पुरे जनपदेऽपि च।
उपासितुं पुनः प्राप्ता देवा इव शतक्रतुम्॥
५. M. W. स
६. M. W. शशास तद् राज्यम्
७. M. W. चाप्त

उसके साथ बहुत बड़ा सैन्य दल और बहुत से नौकर चाकर थे। उसका शरीर सूर्य के समान तेजोमय था॥२८॥

नल ने पुष्कर को धन-धान्य से युक्त और सुखी करके विदा कर दिया। तत्पश्चात् उन्होंने अपने नगर में प्रवेश किया। नगर में प्रवेश करके वह अपने नगर निवासियों को सांत्वना देने लगे॥२९॥

नगर में आनन्दोत्सव सम्पन्न हो चुका, वहाँ पर शान्ति हो गयी। अब महाराज नल बहुत बड़ी सेना के साथ दमयन्ती को नगर में ले आये॥३०॥

शत्रुओं का संहार करने वाले महान् पराक्रमी भीम ने भी आदर-सत्कार पूर्वक प्रसन्न मन से दमयन्ती को विदा किया॥३१॥

पुत्रों के साथ दमयन्ती के आ जाने पर महाराज नल अपने नगर में उसी प्रकार सुखपूर्वक रहने लगे जिस प्रकार देवराज इन्द्र नन्दन वन में रहा करते हैं॥३२॥

महाराज नल ने जम्बू द्वीप के राजाओं में प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। वह महान् यश के भागी हो कर पुनः अपने राज्य में रहने लगे। महाराज नल ने विधिपूर्वक बहुत से यज्ञों का अनुष्ठान किया जिसमें उन्होंने बहुत सी दक्षिणा दे डाली॥३३॥

॥ नलोपाख्यान का अट्ठाईसवाँ सर्ग समाप्त हुआ ॥

॥ नलोपाख्यान समाप्त ॥

शब्द-सूची

अ

अंशम्---द्वितीयान्त, एक वचन, पु०, भाग

अंशुमान्---प्रथमान्त, एक० व०, पु०, सूर्य
विशेषण--किरणमय, चमकदार, चमकीला

अकथयत्---उसनें कहा, प्रथम पु०, एक व०, कथ् धातु (कहना) परस्मैपद, चुरादि का अन० भूत

अकरोत्---उसने किया, प्र० पु०, ए० व०, कृ धा० (करना) उभयपद, तनादि का अन० भूत

अकस्मात्---अव्यय, बिनाकारण, बिना साधन। अ नहीं, और कस्मात्, जो कि किम् (क्या या कौन) का पञ्चम्यन्त एक वचन है, से इस शब्द की व्युत्पत्ति हुयी है

अकाम---प्रथमान्त, एक व०, अकाम (पु०, स्त्री० नपुं०) का पुल्लिग रूप; बिना कामना वाला, बिना इच्छा के; अपनी इच्छा के विरुद्ध कुछ करने वाला (अ=नहीं, काम=इच्छा)

अकार्याणि---अकार्य नपुं० शब्द का प्रथमान्त, बहु० व०, जिसे नहीं करना चाहिये था, अनुचित कार्य

अकाले---सप्तम्यन्त, एक व०, पु०। असमय में, अनुचित समय में (अ=नहीं, काल=समय)

अकीर्तिम्---द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री० यश, बड़ाई

अकीर्तिकरम्---नपुं०, प्रथमान्त, एक व०, जिससे कीर्ति न प्राप्त हो, (अ=नहीं, कीर्ति, कर=करने वाला)

अकीर्तिः---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अप्रशंसा, अपयश

अकुर्वत---कृ धा० आत्मने०, तनादि का अन० भूत में प्रथम पु० का बहुवचन, उन्होंने किया

अकुर्वतः---अकुर्वत् पु०, स्त्री०, नपुं०, का षष्ठ्यन्त एक व०, पु०, न करते हुये

अकृतात्मभिः—अकृतात्मन् पु०, स्त्री०, नपुं० शब्द का तृतीयान्त ब० व०, अनिश्चित या असंयत मन वालों के द्वारा (बहुव्रीहि समास—अकृत=अनिश्चित, असंयत; आत्मावाला)

अकृत्वा—कृ धातु का भूतकालिक कृदन्त बिना किये हुये

अक्लेद्यः—अक्लेद्य पु०, स्त्री०, नपुं० का प्रथमान्त एक व०, पु०, जो गीला न हो सके, जो भीग न सके

अक्षज्ञः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अक्षक्रीड़ा (जुए) को जानने वाला

अक्षद्यूते—तत्पु० स०, अक्ष=पांसा (जुआ), द्यूते सप्तम्यन्त एक व०, पांसे के जुए में

अक्षनैपुणम्—नपुं० द्वितीयान्त, एक व०, पांसें (के खेल) में निपुणता

अक्षप्रियः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जुए में रुचि रखने वाला

अक्षमदसम्मत्तम्—तत्पु०, अक्ष=पांसा (जुआ), मद=उन्मत्तता,=सम्मत्तम् द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उन्मत्त या उन्मत्त किया गया। सम्मत्त=सम् मद् (धातु) क्त प्रत्यय

अक्षयस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अनश्वर, अमर (अ=नहीं और क्षय=नाश)

अक्षय्या—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जो नष्ट न होने वाली हो

अक्षवत्याम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, पांसे (जुए) से खेलती हुयी

अक्षहृदयम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पांसे (जुए) का ज्ञान, पांसे (जुए) में निपुणता। (तत्पु० स० अक्ष=पांसा, जुआ और हृदय=अन्तरतम अंश, गहन ज्ञान)

अक्षहृदयज्ञम्—तत्पु० स०, अक्ष=पांसा (जुआ), हृदय=ज्ञान, ज्ञम्=ज्ञ शब्द का द्वितीयान्त एक व०, पु०, ज्ञान रखने वाला अर्थात् पांसे (जुए) का ज्ञान रखने वाला

अक्षहृदयज्ञस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, जुए का ज्ञान रखनेवाले का

अक्षाः—अक्ष, पांसा (जुआ) का प्रथमान्त बहु व०

अक्षाणाम्—षष्ठ्यन्त, बहुव०, पु०, पांसों (जुओं) का

अक्षान्—द्वितीयान्त, बहुव०, पु०, पांसों (जुओं) को

अक्षेषु—सप्तम्यन्त बहुव० पु०, पांसों (जुओं) में

अक्षौहिणीपतिः—तत्पु० समास, प्रथमान्त एक व०, अक्षोहिणी सेना का स्वामी (अक्षौहिणी एक सम्पूर्ण सेना जिसमें १०९३५० पैदल, ६५६१० घोड़े, २१८७० रथ और २१८७० हाथी हों)

अखिलान्—द्वितीयान्त बहु व०, पु०, सम्पूर्ण

अगच्छंस् (अगच्छन्)—गम् धातु, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, बहुव० वे गये, या वे गयीं

अगच्छत्—गम् धातु, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह गया या वह गयी

अगच्छद्—पूर्ववत्

अगमम्—गम् धातु, भ्वादिगण, उत्तम पु०, एक व०, सामान्य भूत, मैं गया या गयी

अगमंस् (अगमन्)—गम् धातु, भ्वादिगण, प्रथम पु०, बहु व०, सामान्य भूत वे गये या गयीं

अगमत्—गम् धातु, भ्वादिगण, प्रथम पु०, एक व०, सामान्य भूत, वह गया या गयी

अगमद्—पूर्ववत्

अगाधे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, गहरा, अथाह, जिसकी गहराई न नापी जा सके

अग्निम्—द्वितीयान्त एक व०, अग्नि को

अग्निदग्धः—तत्पुरुष स०, अग्निना = अग्नि से, दग्धः = जला हुआ

अग्निपुरोगमान्—बहु० समास, पु०, द्वितीयान्त, बहुव०, अग्नि (देव) जिसके नेता हैं

अग्निमान्—पु०, प्रथमा एक वचन, अग्नि की उपासना करनेवाला या अग्नि का आधान करने वाला

अग्निशिखाम्—तत्पुरुष स०, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अग्नि की शिखा को

अग्निषु—सप्तम्यन्त बहु व०, पु०, अग्नियों (अग्निदेवताओं) में

अग्नेः—षष्ठ्यन्त एक व०, पु०, अग्नि (देवता) का

अग्नौ—सप्तम्यन्त एक व०, पु० अग्नि (देवता) में

अग्रतस्—अव्यय, सम्मुख, उपस्थिति में

अग्रहारांश् (अग्रहारान्)—द्वितीयान्त बहुव०, पु०, ब्राह्मणों को दान की हुई भूमि, ब्राह्मणों से बसा हुआ गांव

अग्रे—अव्यय, उपस्थिति में, सम्मुख, पहले, आगे

अङ्कम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, गोद

अङ्गना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री

अङ्गानि—प्रथमान्त बहुव०, नपुं०, शरीर के अवयव

अङ्गुष्ठमात्रकः—प्रथमान्त एक व०, पु०, अंगूठे की नाप का

अचलम्—द्वितीयान्त एक व०, पु०, पर्वत

अचलश्रेष्ठ---तत्पु० स०, सम्बोधन, एक व०, पु० अन्य पर्वतों में श्रेष्ठ हो (हे)
अचलान्---द्वितीयान्त बहुव०, पु०, पर्वतों को
अचलो (अचलः)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्थिर, न चलने वाला
अचिन्त्यो (अचिन्त्यः)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका चिन्तन न किया जा सके
अचिराद् (अचिरात्)---अव्यय, शीघ्र, कम समय में
अचिरेण---अव्यय, शीघ्र, थोड़े समय में
अचेतनम्---द्वितीयान्त एक व०, पु०, चेतनाहीन, बेहोश
अचेतसम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विवेकशून्य
अछेद्यो (अछेद्यः)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, जो काटा न जा सके, अविभाज्य
अजम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नपुं०, जिसका जन्म न हो
अजगरो (अजगरः)---प्रथमान्त एक व०, पु०, बड़ा और जाति विशेष का सर्प
अजीयत---जि धातु अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, कर्मवाच्य, वह जीत लिया गया था
अज्ञातम्---प्रथमान्त एक व०, नपुं०, अज्ञात
अज्ञायमाना---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री० जो जानी न जाय
अटमानस् (अटमानः)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, घूमता हुआ
अटमानाव् (अटमानौ)---प्रथमान्त द्वि व०, पु०, घूमते हुये
अटमानौ---प्रथमान्त, द्विव०, पु० कृदन्त, (अट् धातु आत्मनेपद), घूमते हुये
अटवीम्---द्वितीयान्त एक व०, स्त्री०, जंगल को
अटव्याम्---सप्तम्यन्त एक व०, स्त्री०, जंगल में
अणु (ण्)---द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मिनट, क्षण
अण्डजः---प्रथमान्त एक व०, पु०, अण्डे से उत्पन्न होने वाला, पक्षी
अतःपरम्---अव्यय, इसके परे, इसके बाद, अब से
अतथोचिता---प्रथमान्त एक व०, स्त्री०, जिसके लिये ऐसा (भाग्य या व्यवहार) उचित न हो
अतन्द्रितः---अव्यय, लगातार, बिना थके हुये, अनलसित
अतन्द्रिताः---प्रथमान्त, बहुव०, पु०, स्त्री०, अथक, कर्मरत, उत्सुक
अतन्द्रितैः---तृतीयान्त, बहु व०, पु०, आलस्यरहितों के द्वारा
अतर्पयत्---तृप धातु, प्रेरणार्थक अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, आनन्दित कर दिया, सन्तुष्ट कर दिया
अति---उपसर्ग, ऊपर, परे, अत्यन्त, परिमाण के परे

अतिक्रम्य---अति (उपसर्ग) + क्रम् (धातु) + ल्यप् (प्रत्यय) अतिक्रमण करके, पार करके

अतिचक्राम---अति पूर्वक क्रम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पार किया था

अतिचरामि---अति पूर्वक चर् धा०, उत्तम पु०, एक व०, वर्तमान काल, भ्वादिगण, मैं पाप करता हूँ, उल्लंघन करता हूँ

अतिथीन्---द्वितीयान्त, पुल्लिंग, बहुव०, मेहमानों को

अतिदीर्घम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्त्री०, नपुं०, बहुत लम्बा या लम्बी, नातिदीर्घकालम् = बहुत लम्बे समय तक नहीं

अतिदुर्धर्ष---सम्बोधन, एक व०, पु०, जिसे पकड़ना दुष्कर है (हे)

अतिमात्रम्---अव्यय, जिसकी नाप न हो सके, अधिक

अतियशाः---द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहुत यशस्विनी, अत्यन्त प्रसिद्धि वाली

अतिरिच्यते---अति पूर्वक रिच् धातु, प्रथम पु०, एक व०, कर्मवाच्य, यह अधिक आवश्यक है, यह बढ़कर है, यह अधिक खराब है

अतिविराजते---अति और वि पूर्वक राज् धातु०, आत्म०, भ्वादिगण, वर्तमान काल, एक व०, वह अधिक चमकता है, वह अधिक शोभित होता है

अतिष्ठत्---स्था धा०, भ्वादिगण, प्रथम पु०, एक व०, अनद्यतन भूत, वह खड़ा हुआ या खड़ी हुयी

अतिस्वस्था---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त अच्छे स्वास्थ्य वाली

अतीतवाक्पथे---बहु० समास, अतीत = पार कर लिया है, वाक्पथे = सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बोलने के उपयुक्त

अतीव---अव्यय, अत्यधिक

अतुलम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु० नपुं०, अद्वितीय, अतुलनीय

अतस् (अतः)---अव्यय, इसलिये। कभी२ अस्मात् के लिये भी प्रयुक्त होता है तब इसका अर्थ होता है यहाँ से। इसलिये

अतोनिमित्तम्---अव्यय, इसलिये, इस कारण से

अत्यजम्---त्यज् धा०, भ्वादिगण, उत्तम पु०, एक व०, अनद्यतनभूत, मैंने छोड़ दिया

अत्यद्भुतम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु० नपुं०, अत्यन्त अद्भुत, अत्यन्त आश्चर्यजनक

अत्यन्तम्---अव्यय, अत्यधिक, जो नापा न जा सके

अत्यर्थम्---अव्यय, अत्यधिक, जो नापा न जा सके

अत्युष्णम्---द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बिल्कुल गरम, बहुत गरम

अथ—अव्यय, तब, अब, बाद में

अथवा—अव्यय, या, कि, किन्तु, और भी

अदशद्—दंश् धातु०, भ्वादिगण, प्रथम पु०, एक व०, अनद्यतन भूत, उसने काट लिया या काटा

अदस्—सर्वनाम, वह, यह

अदाह्यो (अदाह्यः)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अदाह्य, जो अग्नि से जलाया न जा सके

अदीनात्मा—बहु० समास, अदीन आत्मावाला

अदृढ़तरम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अत्यन्त अनिश्चित

अदृश्यः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अदृश्य, जो दिखाई न दे

अदृश्यत्—दृश् धातु, प्रथम पु०, एक व०, अनद्यतनभूत, उसने देखा। महाभारत में कभी कभी यह इसी रूप में कर्मवाच्य के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है जिसका अर्थ होता है वह देखा गया

अदृष्टकामो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका प्रेम अज्ञात है, जिसकी इच्छा या भावना अज्ञात है

अदृष्टपूर्वम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नपुं०, जो पहले कभी न देखा गया हो

अदृष्टपूर्वाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जो पहले कभी न देखी गयी हो

अदैवम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, भाग्यहीन, अभागा

अद्भुतदर्शनाः—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहुव०, स्त्री०, विलक्षण रूपवाली, देखने में विलक्षण

अद्भुतरूपान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, विचित्र रूपवाले

अद्भुतलिङ्गानि—कर्मधा० समास, द्वितीयान्त, बहु०, नपुं०, अद्भुत चिह्न

अद्य—अव्यय, आज, अब

अद्यापि—अव्यय, अब भी, आज भी

अधनो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निर्धन

अधर्मकृच्छ्रे—कर्म धा० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, दुष्ट या दूषित दुःख में

अधर्मो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अधर्म, पाप, कर्तव्यहीन

अधि—उपसर्ग, ऊपर, पर

अधिकम्—प्रथमान्त, एक व०, पु० अधिक

अधिकम्—अव्यय, अधिक

अधिगमनार्थम्—अव्यय, पाने के लिये, ढूंढ़ने के लिये

अधिजग्मुर् (अधिजग्मुः)---अधि पूर्वक गम् धातु, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहुव०, उन्होंने ढूँढ़ा या पाया

अधिपतिः---प्रथमान्त, एक व०, पु०, शासक, राजा, स्वामी

अधिपस् (अधिपः)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा

अधिष्ठानम्---प्रथमान्त, द्वितीयान्त, एक वचन, नपुं०, घर, रहने की जगह

अधीते---अधि पूर्वक इ धातु, अदादिगण, आत्म०, प्रथम पु०, एक व०, वर्तमान, वह पढ़ता है

अधुना---अव्यय, अब

अधो (अधः)---अव्यय, नीचे

अधोमुखम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नीचे की ओर

अध्यगच्छत्---अधि पूर्वक गम् धा०, प्रथम पु०, एक व०, अनद्यतनभूत, वह पहुँचा, उसने पाया

अध्यगाद्---अधि पूर्वक इ या गा धातु, प्रथम पु०, एक व०, अनद्यतनभूत, उसने सम्बोधित किया, उसने ग्रहण किया

अध्वनि---सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, मार्ग में

अध्वानम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मार्ग को

अनघ---सम्बोधन, एक व०, पु०, हे निष्पाप, हे दोषहीन

अनपकृते---सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, जिसका अपकार न हुआ हो उसमें

अनभिज्ञा---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अपरिचिता, जिसे ज्ञान न हो

अनया---सर्वनाम, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, इसके द्वारा

अनयोस् (अनयोः)---सर्वनाम, षष्ठ्यन्त, द्वि व०, पु०, इन दोनों का

अनर्हस् (अनर्हः)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, अयोग्य ।

अनवद्याङ्गि---सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, ओ अनिन्दनीय अवयवों वाली

अनवद्याङ्गी---बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसके शरीरावयव अधिक सुन्दर हों

अनसूयकः---प्रथमान्त, एक व०, पु०, ईर्ष्याहीन

अनागसम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, निष्कलुष, पापहीन

अनागा (अनागास्)---प्रथमान्त, एक व०, पु०, दोषहीन

अनात्मवान्---प्रथमान्त, एक व०, पु०, आत्माहीन, स्वत्वहीन, आपे से बाहर

अनाथवत्---अव्यय, रक्षकहीन की तरह, पतिविहीन की भाँति

अनाथाम्---द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्वामी अथवा रक्षक के बिना

अनामयम्---द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, स्वस्थ, सुरक्षित

अनार्यैर् (अनार्यैः)---तृतीयान्त, बहु व०, पु०, नपुं०, अयोग्यों के द्वारा, दुष्टों के द्वारा

अनाशिनो---षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, अनश्वर, नाशहीन (का)

अनित्यास् (अनित्याः)---प्रथमान्त, बहुव०, पु०, नश्वर, अस्थाई, परिवर्तनशील

अनिन्दिता---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसकी निन्दा न हो

अनीचानुवर्ती---प्रथमान्त, एक व०, पु०, नीच आचरण न करनेवाला, नीचता का व्यवहार न करने वाला

अनु---उपसर्ग, पीछे, बाद में

अनुगता---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पीछे पीछे गयी, बाद में गयी, अनुपूर्वक गम् धातु का कृदन्त, कर्मवाच्य

अनुचिन्तयन्---अनु पूर्वक चिन्त् धातु का कृदन्त, कर्मवाच्य प्रथमान्त, एक व०, पु०, सोचते हुये

अनुजग्मुस्---अनु पूर्वक गम् धातु, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु० व०, वे पीछे पीछे गये। वे बाद को गये

अनुज्ञातम्---अनु पूर्वक ज्ञा धातु, कृदन्त, कर्मवाच्य, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आज्ञा प्राप्त, किया हुआ

अनुज्ञातुम्---अनु पूर्वक ज्ञा धातु + तुमुन् प्रत्यय, आज्ञा देने को (के लिये)

अनुत्तमाम्---द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त अच्छी

अनुनादितम्---अनु पूर्वक नद् धातु, कृदन्त, कर्मवाच्य, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रतिध्वनित किया गया

अनुन्मत्ता---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जो पागल न हो (ऐसी स्त्री)

अनुपश्यामि---अनु पूर्वक दृश् धातु, वर्तमान; उत्तम पु०, एक व०, मैं पहले से देखता हूँ या देखती हूँ

अनुबध्नाति---अनु पूर्वक बन्ध् धातु, क्र्यादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह अनुकरण करता है या करती है, वह सेवा करता है या करती है

अनुभूय---अनु पूर्वक भू धातु, कृदन्त, देखकर, समझकर, अनुभव करके

अनुभूयताम्---अनु पूर्वक भू धातु, अनुज्ञा, प्रथमपु० एकव० कर्मवाच्य, इसका आनन्द लेने दो, इसका अनुभव होने दो

अनुमते---सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सम्मति से, राय से

अनुरक्तम्---अनुपूर्वक रञ्ज् धातु, कृदन्त, कर्मवाच्य, द्वितीयान्त, एक व०, पु० आसक्त, लगा हुआ

अनुरक्ता---(देखिये अनुरक्तम्), प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भक्तिपूर्वक, आसक्त, रमी हुयी

अनुरागम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रेम, प्यार, आसक्ति, लगाव

अनुरुध्यन्ति---अनु पूर्वक रुध् धातु, दिवादिगण, परस्मै०, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु० व०, उत्पन्न करते हैं, अभ्यस्त करते हैं

अनुरूपम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उपयुक्त, नपुं०, योग्य

अनुव्रजन्ती---अनु पूर्वक व्रज् धातु, परस्मै०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पीछा करती हुयी, बाद में जाती हुयी

अनुव्रतः---प्रथमान्त, एक व०, पु०, भक्त, आसक्त (जैसे कोई पति पत्नी के प्रति)

अनुव्रता---प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भक्ता (स्त्री)

अनुशुश्रुम---अनु पूर्वक श्रु धा०, लिट् लकार, उत्तम पु०, बहुव०, हम लोगों ने सुना

अनुशोचति---अनु पूर्वक शुच् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह शोक करता है या करती है

अनुशोचितुम्---अनु पूर्वक शुच् धा०+तुमुन् प्रत्यय, शोक करना, दुःख करना (करने के लिए)

अनुसंस्मरन्---अनु+सम् पूर्वक स्मृ धा० कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, याद करते हुये

अनुस्मरन्---अनु पूर्वक स्मृ धा०, कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, पु०, याद करते हुये

अनुस्मृत्य---अनु पूर्वक स्मृ धा०, कृदन्त, याद करके

अनृतम्---द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, असत्य

अनेन---तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, इसके द्वारा

अनेकशः---अव्यय, बड़ी मात्रा अथवा संख्या में, बहुतायत से

अन्तःपुरम्---प्रथमान्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, स्त्रियों के रहने का स्थान, रनिवास

अन्तःपुरसमीपस्थे---तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, रनिवास के समीप स्थित

अन्ततः---अव्यय, अन्त में

अन्तरम्---द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अवसर, क्षण, मध्यभाग, बीच

अन्तरधीयत---अन्तर् पूर्वक धा धातु, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, अन्तर्धान हो गया, छिप गया, गायब हो गया

अन्तरप्रेप्सुर्---तत्पु०, समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुअवसर पाने का इच्छुक

अन्तरात्मना---तृतीयान्त, एक व०, पु०, अन्तरात्मा से

अन्तरिक्षे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, अन्तरिक्ष में, वायु में, आकाश में

अन्तरिक्षगो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अन्तरिक्ष में गमन करने वाला (पक्षी)

अन्तर्हितम्—अन्तर् पूर्वक धा धातु, कृदन्त, कर्मवाच्य, प्रथमान्त एक व०, नपुं०, गायब कर दिया गया, परिवर्तित कर दिया गया

अन्तवन्त—प्रथमान्त, बहुव०, पु०, अन्त सहित, सीमायुक्त

अन्तश् (अन्तर्)—अव्यय, में, बीच में

अन्तः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अन्त

अन्तिकम्—अव्यय, निकट

अन्तेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, अन्त से

अन्नपानपरिच्छदाम्—बहुव्रीहि, द्वितीयान्त, एक० व०, स्त्री०, भोजन, पेय (पीने की वस्तु, जल) और वस्त्र से युक्त

अन्नरसम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अन्न के रस को

अन्नसंस्कारम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भोजन सामग्री की तैयारी

अन्यः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दूसरा

अन्यत्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दूसरा

अन्यतमम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, एक या दूसरा

अन्यत्र—अव्यय, दूसरी जगह

अन्यथा—अव्यय, दूसरी तरह से

अन्या—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दूसरी (स्त्री)

अन्योन्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, एक दूसरे को

अन्वजानात्—अनु पूर्वक ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने आज्ञा दी, उसने सम्मति दी

अन्वयात्—अन् पूर्वक इ धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने पीछा किया, वह पीछे गया या गयी

अन्वास्त—अनु पूर्वक इ धा०, अदादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने किया

अन्वितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, युक्त, सहित

अन्वेषणार्थम्—अव्यय, खोजने के लिये

अन्वेषती—अनु पूर्वक एष् धा०, भ्वादिगण, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, खोजते हुये

अन्वेषन्ती—प्रथमान्त, बहु० व०, पु०, खोजती हुयी

अन्वेषमाणा—अनुपूर्वक एष् धा०, आत्म०, कृदन्त, एक व०, स्त्री०, खोजती हुयी

अन्वेषसि—अनुपूर्वक एष् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, मध्यम पु०, एक व०, तू खोजता या खोजती है

अन्वेष्टारो—अनुपूर्वक इष् धा० का कर्तृवाच्य प्रथमान्त, बहु० व०, पु०, खोज करनेवाले

अन्वेष्टुम्—अनु पूर्वक इष् धा० + तुमुन् प्रत्यय, खोजने के लिये

अप—उपसर्ग, दूर, से

अपकारताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बुराई को, अपराध को

अपकृते—अप पूर्वक कृ धा०, कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु० जिसका अपकार हुआ है उसमें

अपकृष्टेन—अप पूर्वक कृष् धा०, कृदन्त, तृतीयान्त, एक व०, पु० या नपुं०, हटाये हुये से, रगड़े हुये से, छीने हुये से

अपकृष्यः—अप पूर्वक कृष् धा०, कृदन्त, छीनकर, हटाकर

अपक्रान्ते—अप पूर्वक क्रम् धा०, कृदन्त, सप्तम्यन्त एक व०, पु० व नपुं०, अलग होने पर , चले जाने पर

अपराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दूसरी को

अपराजित—सम्बोधन, एक व०, पु० व नपुं०, हे हारे हुये व्यक्ति

अपराणि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, दूसरों को

अपराङ्मुखाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जिन्होंने मुँह नहीं फेरा है

अपराद्धम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अपराधी, अपराध का दोषी, जिसके विरुद्ध अपराध किया गया है

अपराधम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दोष को, अपराध को

अपरिहार्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, अत्याज्य, जिसे तिरस्कृत न किया जा सके

अपरे—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, दूसरे

अपरेद्युः (अपरेद्युस्)—अव्यय, दूसरे दिन

अपश्चिमाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसका मोड़ न हो, जिसका अन्त न हो

अपश्यन्—दृश् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, बहु व०, (उन्होंने) देखा

अपश्यत्—देखिये अपश्यन्, एक व०, (उसने) देखा

अपहरन्ति—अप पूर्वक हृ धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे चुराते हैं, अपहरण करते हैं

अपहाय—अप पूर्वक हा धा०, कृदन्त, छोड़कर, तिरस्कृत करके

अपहृतज्ञानो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका ज्ञान नष्ट हो गया है, ज्ञानशून्य

अपहृता—अप पूर्वक हृ धा०, कृदन्त, कर्मवाच्य प्रथमान्त, एक० व०, स्त्री०, ले जायी गयी, चुरा ली गयी

अपापचेतसम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, निष्पाप मन वाले को, दोषहीन मनवाले को

अपाम्—षष्ठ्यन्त, बहु० व०, स्त्री०, पानी का

अपाम्पतिः (अपाम्पतिर्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जल का स्वामी, वरुण

अपावृतम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, खुले हुये को

अपि—अव्यय, भी

अपिहिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ढकी हुयी, भरी हुयी (यहाँ अपि उपसर्ग और धा धातु के कृदन्त हित से मिलकर यह शब्द बना हुआ है)

अपृच्छत्—प्रच्छ् धा०, तुदादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एकव०, उसने पूछा

अपृच्छन्—देखिये अपृच्छत्, बहु व०, उन्होंने पूछा

अप्रजः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निस्सन्तान

अप्रतिनन्दन्तम्—अ और प्रति पूर्वक नन्द् धा०, कृदन्त द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आदर या स्वागत न करते हुये को

अप्रतिमाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसके समान कोई दूसरा न हो, अद्वितीया

अप्रतिमेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, अद्वितीय (से)

अप्रतिमो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अद्वितीय, जिसकी कोई समता न हो, अतुलनीय

अप्रतीकारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बदला न लेना, रक्षा न करना, न रोकते हुये

अप्रमेयस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, जो नापा न जा सके, अनन्त, अतुल

अप्रशस्तः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अनुत्तम, अयोग्य, अभिशप्त

अप्राप्तकालो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका समय नहीं आया है

अप्सराः—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, इन्द्रलोक या स्वर्गलोक में रहनेवाली स्त्रियाँ। अप्सरायें इन्द्रलोक में निवास करनेवाली सुन्दरियाँ थीं, जो कि समुद्र-मन्थन के समय निकली थीं। रामायण में उनके जन्म का वर्णन इस प्रकार मिलता है—"तत्पश्चात् विक्षुब्ध सागर से अप्सराओं का समूह निकला। उनका यह नाम जल से (आपः) उत्पन्न होने के कारण पड़ गया। वह सहस्रों अप्सरायें स्वर्गीय वस्त्र और मणियों से विभूषित थीं"—विल्सन कृतम् "विक्रमोर्वशीय" की भूमिका, पृष्ठ १३

अवध्यो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जो मारा न जा सके

अबिभ्यत्—भी धा०, जुहोत्यादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह भयभीत हुआ या हुयी

अबुद्ध्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, बिना निश्चय के, बिना इच्छा के

अबुध्यत—बुध् धा०, दिवादिगण, अनद्यतनभूत, एक व०, उसने देखा, वह जागा

अब्भक्षैर् (अब्भक्षैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु० व नपुं०, जल को पीने वालों के द्वारा

अब्रवीः(स्)—तू कहता है, देखिये अब्रवीत्

अब्रवीच् (त्)—देखिये अब्रवीत्

अब्रवीत्—ब्रू धा०, अदादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने कहा, वह बोला

अब्रवीन्—देखिये अब्रवीत

अब्रुवन्—ब्रू धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने कहा, वे बोले

अब्रुवाणा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बिना बोलते हुये, बिना कहते हुये

अभवंस्—देखिये अभवन्

अभवच्—देखिये अभवत्

अभवत्—भू धा०, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह था, वह हुआ

अभवद्—देखिये अभवत्

अभवन्—भू धा०, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, बहु व०, वे थे, वे हुये

अभावो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कमी, अभाव

अभाषत—भाष् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, प्रथम पु०, एक व०, वह बोला, उसने कहा

अभि—उपसर्ग, को, ओर, ऊपर

अभिचरामि—अभिपूर्वक चर् धा०, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, उल्लंघन करता हूँ, पापाचार करता हूँ

अभिगच्छति—वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह (उस) ओर जाता है, वह लौटता है, देखिये अभिजग्मुस्

अभिगम्य—अभि पूर्वक गम् धा०, कृदन्त, निकट जाकर

अभिजग्मुस्—अभि पूर्वक गम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे निकट पहुँचे, वे निकट गये, वे गये

अभिजज्ञे—अभिपूर्वक ज्ञा धा०, आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह जानता था

अभिजानामि—अभि पूर्वक ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं जानता हूँ

अभिजानीयाम्—उत्तम पु०, विधि—लिङ्, मुझे पहचानना चाहिये। देखिये अभिजानामि

अभिजानीष्व—आज्ञा वाचक, आत्म०, मध्यम पु०, एक व०, तू जान, तू समझ

अभिज्ञाय—अभि पूर्वक ज्ञा धा०, कृदन्त, पहचानकर,

अभिद्रुत्य—अभि पूर्वक द्रु धा०, कृदन्त, ओर दौड़कर

अभिधाव—अभि पूर्वक धाव् धातु, भ्वादिगण, अनुज्ञा, मध्यम पु०, एक व०, तू यहाँ दौड़कर आ

अभिधास्यामि—अभि पूर्वक धा धातु, भविष्यत्, उत्तम पु०, एक व०, मैं कहूँगा, मैं वर्णन करूँगा

अभिनन्दति—अभि पूर्वक नन्द् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह आनन्दित होता है

अभिनन्द्य—अभिपूर्वक नन्द् धा०, कृदन्त, आनन्दित होकर

अभिप्रायम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इच्छा, निश्चय

अभिप्रायस्—प्रथमान्त, एक व०, निश्चय

अभिभवति—अभि पूर्वक भू धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जीतता है, परास्त करता है

अभिभाषन्तो—अभि पूर्वक भाष् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पुकारते हुये, कहते हुये

अभिभाषिणी—अभिपूर्वक भाष् धा० से बना हुआ कर्तृवाच्य, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बोलती हुयी

अभिभाषे—अभि पूर्वक भाष् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं कहता हूँ, मैं बोलता हूँ

अभिमुखो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सामने, मुँह के सामने, मुँह की ओर

अभिरूपम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सुन्दर

अभिवर्धते—अभि पूर्वक वृध् धातु, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, बढ़ता है

अभिवादकः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रणाम करने वाला, अभिवादन करनेवाला

अभिवादयामास—अभि पूर्वक प्रेरणार्थक वद् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रणाम किया था

अभिवीक्ष्य—अभि और वि पूर्वक ईक्ष् धा०, कृदन्त, देखकर, ध्यान से देखकर

अभिव्यक्तम्—अव्यय, स्पष्ट, प्रकट

अभिशापाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, अभिशाप से

अभिसंवृता—अभि और सम् पूर्वक वृ धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ढँकी हुयी, कपड़े पहने हुयी

अभिससार—अभि पूर्वक सृ धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह समीप आया

अभिहतः—अभिपूर्वक हन् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एकव०, पु०, मारा हुआ, दुःखित किया गया

अभीप्सवः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पाने का इच्छुक

अभूद् (त्)—भू० धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह था, वह हुआ

अभ्यगच्छत्—अभि पूर्वक गम् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह पहुँचा, वह गया

अभ्यगच्छद्—देखिये अभ्यगच्छत्

अभ्यगात्—अभि पूर्वक इ या गा धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह पहुँचा

अभ्यजानात्—अभि पूर्वक ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने जाना या पहिचाना

अभ्यधिकम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बड़ा, अच्छा

अभ्यधिको (:)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़ा अच्छा

अभ्यनन्दत—अभि पूर्वक नन्द् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, उसने प्रणाम किया, अभिवादन किया या बधाई दी

अभ्यनुज्ञाता—अभि और अनु पूर्वक ज्ञा धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आज्ञा प्राप्त की हुयी

अभ्यपूजयन्—अभि पूर्वक पूज् धा०, चुरादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने पूजा की

अभ्यभाषत—अभि पूर्वक भाष् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह बोला, उसने कहा, उसने उत्तर दिया

अभ्यभाषन्त—देखिये अभ्यभाषत, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने कहा, वे बोले

अभ्ययात्—अभिपूर्वक या धा०, अदादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह गया

अभ्यसूयन्ति—अभि पूर्वक असूय् धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे अपशब्द कहते हैं, वे क्रोध या घृणा से बोलते हैं

अभ्यागता—अभि और आ पूर्वक गम् धा०, कृदन्त,प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आई हुयी

अभ्यागताम्—देखिये अभ्यागता, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आई हुयी को

अभ्यासपरिवर्तिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, इधर उधर या निकट में घूमती हुयी

अभ्येति—अभि पूर्वक इ धा०, अदादिगण, वर्तमान काल, प्रथम पु०, एक व०, आता है, पहुँचता है

अभ्येत्य—अभि और आ पूर्वक इ धातु, कृदन्त, पहुँचकर, आकर

अभ्रेण—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, बादल से

अभ्रेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, बादलों में

अमण्डिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अविभूषिता

अमनुष्यनिषेविते—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, जहाँ मनुष्यों का निवास न हो उस (स्थान) में

अमन्यत—मन् धा०, आत्म०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने सोचा

अमरप्रख्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अमर (व्यक्ति) की तरह

अमरप्रभे—हे अमर (स्त्री) की भाँति सुन्दरी

अमरवद् (त्)—अमर (देवता) की भाँति

अमरान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु० अमरों को

अमरोत्तमाः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु० पु०, अमरों में उत्तम

अमरोपम—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे अमरों की भाँति

अमरोपमः—प्रथमान्त, देखिये अमरोपम

अमर्षणः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अधीर, असहिष्णु

अमात्यान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मंत्रियों को

अमानुषम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जो मनुष्य न हो उसको

अमार्जिताम्—मृज् अथवा मार्ज् धा० का कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अस्वच्छ, बिना धुली हुयी

अमित्रगणसूदनम्—तत्पु०, समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शत्रु समूह को मारने वाले

अमित्रघातिनः—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, शत्रु का हनन करने वाले को

अमृतत्वाय—चतुर्थी, एक व०, नपुं०, अमरता के लिये

अमृतोपमाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अमृततुल्य।

अमृष्यमाणा (अमृष्यमाणास्)—मृष् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सहन न करने वाला, असहिष्णु

अमेयात्मा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् आत्मा वाला, महात्मा

अयम्—सर्वनाम, पु०, प्रथमान्त, एक व०, पु०, यह, वह

अयोध्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अयोध्या नगरी को

अयोध्याधिपतिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अयोध्या का राजा

अयोध्यावासिनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अयोध्या में निवास करने वाले को

अरण्यम्—प्रथमान्त और द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वन, जंगल

अरण्यनृपते—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे वन के राजा!

अरण्यराट्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वनराज, जंगल के राजा

अरण्यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, जंगल का

अरण्यानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, जंगलों को

अरण्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, जंगल में

अरजः—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, धूलि रहित, स्वच्छ, शुद्ध

अरञ्जयत्—रञ्ज् धा० (प्रेरणार्थक), अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रसन्न किया

अरालपक्ष्मनयनाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, टेढ़ी पलकों से युक्त नेत्रों वाली (स्त्री को)

अरिकर्षण—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शत्रुओं को खींचने वाले, आकर्षित करने वाले

अरिन्दम—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शत्रुओं को मारने वाले

अरिन्दमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शत्रुओं को मारने वाले को

अरिमर्दनम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शत्रुओं को मारने वाले को

अरिमर्दनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शत्रुओं को मारने वाला

अरिसूदन—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शत्रुओं को मारने वाले

अरिहा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शत्रुओं को मारने वाला

अर्केण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, सूर्य के द्वारा

अर्चयामास—अर्च् धा०, चुरादिगण, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पूजा की थी

अर्चयित्वा—अर्च् धा०, चुरादिगण, कृदन्त, पूजा करके

अर्चितानि—अर्च् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, पूजे गये हुये

अर्जितम्—अर्ज् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, प्राप्त किया गया, इकट्ठा किया गया

अर्जुनारिष्टसछन्नम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अर्जुन और नीम वृक्षों से ढका हुआ

अर्थकामः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धन का इच्छुक

अर्थकामांस् (अर्थकामान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, धन के इच्छुकों को

अर्थकृच्छ्रेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, कठिन मामलों में

अर्थाय—अव्यय, के लिये, लाभ के लिये (यहाँ पर चतुर्थी का प्रयोग क्रिया विशेषण के अर्थ में हुआ है)

अर्थितव्यम्—अर्थ् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, खोजने के योग्य

अर्थे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वस्तु में

अर्थे—अव्यय, के लिये

अर्थेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वस्तु से

अर्थो— (**अर्थस्**)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वस्तु

अर्दितम्—अर्द् धा०, कृदन्त, द्वितीयान्त एक व०, पु०, दुःखित

अर्द्धम्—प्रथमान्त और द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आधा

अर्द्धरात्रसमये—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, आधीरात के समय में

अर्द्धवस्त्रसंवीताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आधे वस्त्र से ढकी हुयी (स्त्री को)

अर्द्धसञ्जातशस्या—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसमें अन्न आधा उत्पन्न हुआ है

अर्द्धेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, आधे से

अर्हणाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आदर या योग्यता को

अर्हति—अर्ह् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह योग्य है, वह अधिकारी है

अर्हथ—अर्ह् धा०, वर्तमान, म० पु०, बहु व०, तुम लोग योग्य हो

अर्हसि—वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू योग्य है

अर्हा—प्रथमान्त, बहु व०, योग्य, उचित

अलक्षितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अदृष्ट, न देखा गया

अल्पकार्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, छोटा काम

अल्पपरीवारो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसके सेवकों की संख्या कम है

अल्पपुण्येन—कर्मधा० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, थोड़े पुण्य से

अल्पबलप्राणा—बहु० समास, प्रथमान्त, बहुव०, पु०, जिसके प्राणों में थोड़ा बल हो

अल्पभाग्येन—कमर्धा० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, थोड़े भाग्य से

अव—उपसर्ग, नीचे, दूर से

अवकर्तनम्—प्रथमान्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, काटना

अवकृष्टस्—अव पूर्वक कृष् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, पु०, खींचा हुआ, घसीटा हुआ

अवकृष्यते—अव पूर्वक कृष् धा०, वर्तमान, कर्मवाच्य, प्रथम पु०, एक व०, वह पीछे घसीटा जाता है, नीचे खींचा जाता है

अवगच्छध्वम्—अव पूर्वक गम् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम लोग जानो

अवतीर्य—अव पूर्वक तृ धा०, कृदन्त, उतरकर, नीचे आकर

अवन्तीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अवन्ती को, एक नगरी का नाम, आधुनिक उज्जैन, जिसे उज्जयिनी, विशाला और पुष्प-करण्डिनी भी कहते हैं।

अवमुच्य—अव पूर्वक मुच् धा०, कृदन्त, कसकर, खोलकर

अवशिष्टम्—अव पूर्वक शिष् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बचा हुआ

अवश्यम्—अव्यय, अवश्य

अवसम्—वस् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, उत्तम पु०, एक व०, मैंने निवास किया

अवसंस् (सन्)—वस् धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने निवास किया।

अवसक्ता—अव पूर्वक सञ्ज् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लगी हुयी, मिली हुई

अवसच् (त्)—वस् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने निवास किया

अवसद्—देखिये अवसत्

अवसीदति—अव पूर्वक सद् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह नष्ट होता है, कष्ट पाता है, डूबता है

अवसृजामि—अव पूर्वक सृज् धा०, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं मानता हूँ, स्वीकार करता हूँ

अवस्त्रताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नंगापन, वस्त्रों का अभाव

अवस्थातुम्—अव पूर्वक स्था धा०, तुमुन् प्रत्यय, खड़े होने के लिये, ठहरने के लिये

अवस्थाप्य—अव पूर्वक स्था (प्रेरणार्थक) धा०, कृदन्त, रोक कर, स्थिर करके, स्थापित करके

अवस्थितः—अवपूर्वक स्था धा०, कृदन्त, एक व०, पु०, खड़ा हुआ

अवस्थिता (अवस्थितास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, खड़े हुये, देखिये अवस्थितः

अवस्थितान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, खड़े हुओं को

अवाप—अव पूर्वक आप् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्राप्त किया

अवाप्य—अव पूर्वक आप् धा०, कृदन्त, प्राप्त करके

अवाप्स्यसि—अव पूर्वक आप् धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू प्राप्त करेगा

अवारयत्—वृ धा०, (प्रेरणार्थक), अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने निवारण किया, बचाया

अविक्षताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बिना चोट खाये, बिना हानि उठाये (अ=नहीं, विक्षत, वि पूर्वक क्षण् धा०, कृदन्त, घायल चोट खाया हुआ, हानि उठाया हुआ)

अविनाशिनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नाश न होने वाले को

अविन्दत—विन्द् अथवा विद् धा०, तुदादिगण, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने पाया

अविशङ्केन—तृतीयान्त, एक व०, पु० और नपुं०, निस्संदेह, बे हिचक

अवेक्षिताः—अव पूर्वक ईक्ष् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देखे हुये

अवेक्षितुम्—अव पूर्वक ईक्ष् धा०, तुमुन् प्रत्यय, देखने के लिये, विचार करने के लिये

अवेक्ष्य—अव पूर्वक ईक्ष् धा०, कृदन्त,, सोचकर, देखकर, ध्यान देकर

अवैमि—अव पूर्वक इ धा०, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं जानता हूँ, समझता हूँ

अव्यक्तो (:)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अप्रकट, जो दिखाई न दे

अव्यग्रम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अक्षुब्ध, जो परेशान न हो

अव्ययम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, नष्ट न होने वाला, सदैव रहने वाला, अमर

अव्ययस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, नाश न होने वाले का, सदैव रहने वाले का

अव्ययाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नाश न होने वाली को

अशकत्—शक् धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह समर्थ हुआ

अशक्नुवन्—योग्य न होकर (अ नहीं; शक्नुवन् शक् धा०, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, योग्य होकर, समर्थ होते हुए)

अशङ्किता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, निडर, अभय

अशपत्—शप् धा०, उभयपद, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने शाप दिया

अशस्त्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शस्त्रहीन को

अशुभम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पाप, दोष, दुष्टता

अशुभकर्मणः—बहु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, दुष्टकर्म करने वाले का

अशेषतः—अव्यय, पूर्णरूप से, बिना कुछ शेष रहे

अशेषेण—अव्यय, पूर्णतया

अशोक—सम्बोधन, एक व०, हे अशोक ! इस वृक्ष का नाम दो शब्दों से बना है—अ=नहीं और शोक=दुःख। भारतीय वृक्षों में यह सबसे सुन्दर है। सर विलियम जोन्स का कहना है कि—'वनस्पति संसार फूले हुये अशोक वृक्ष से अधिक सुन्दर कोई दृश्य ही नहीं प्रस्तुत करता है। इसकी ऊँचाई साधारण होती है। इसके फूल बड़े और रंग बिरंगे होते हैं। इनमें प्रायः नारंगी, तूली, पीले और गहरे नारंगी रंगों का मेल होता है। शिव जी को अशोक बहुत प्रिय है और प्रायः शिव-मंदिरों के पास यह लगाया जाता है। लंका में इसकी बहुतायत है'

अशोकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अशोक वृक्ष को

अशोकः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अशोक वृक्ष

अशोकतरुम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अशोक वृक्ष को

अशोकनग—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे अशोक वृक्ष !

अशोकवृक्षम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अशोक वृक्ष को

अशोचत्—शुच् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने शोक किया

अशोच्यान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, अशोचनीय, जिनके विषय में शोक न किया जा सके

अशोभयन्त—शुभ् धा० (प्रेरणार्थक), आत्म०, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने शोभित किया, सजाया

अशोष्यः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जो सूख न सके

अश्रुपरिपूर्णाक्षीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आँसुओं से भरे हुये नेत्रों वाली (स्त्री) को

अश्रुपरिप्लुतः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आँसुओं से भीगा हुआ

अश्रुपूर्णाक्षी—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आँसुओं से भरे नेत्रों वाली

अश्रुपूर्णे—तत्पु० समास, प्रथमान्त, द्वि० व०, नपुं०, आँसुओं से भरे हुये

अश्वकुशलः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, घोड़ों (के पालन) में कुशल

अश्वकोविदः (स्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घोड़ों (की विशेषताओं) को जाननेवाला

अश्वमेधादिभिर्—तृतीयान्त, बहु० व०, स्त्री०, अश्वमेध आदि (यज्ञों) से

अश्वमेधेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, अश्वमेध (यज्ञ) से। पुराणों में यह यज्ञ सर्वोत्तम बतलाया गया है। कहा जाता है कि यदि कोई व्यक्ति सौ अश्वमेध कर ले तो वह स्वर्ग का सिंहासन प्राप्त कर स्वयं इन्द्र हो जाता है। ऋग्वेद में इसका उद्देश्य केवल धन बतलाया गया है और रामायण में भी दशरथ ने इसे केवल पुत्र-प्राप्ति का साधन बनाया था। ऋग्वेद से यह भी पता चलता है कि पहले घोड़े की बलि दी जाती थी, तदुपरान्त उसके टुकड़े टुकड़े करके सभी पुरोहित खाते थे और अग्नि के द्वारा देवताओं को भी उसकी बलि दी जाती थी

अश्वशालाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, घुड़साल को, घोड़े रखने की जगह को

अश्वहृदयम्—प्रथमान्त और द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, घोड़ों का ज्ञान

अश्वहृदयेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, घोड़ों के ज्ञान से

अश्वांस्—देखिये अश्वान्

अश्वाध्यक्षो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घोड़ों का स्वामी

अश्वान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, घोड़ों को

अश्वानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, घोड़ों के

अश्विनोः—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, पु०, सूर्य के जुड़ुआ पुत्र। ये सदैव युवक और सुन्दर रहते हैं। ये देवताओं के वैद्य हैं। प्रो० विल्सन कहते हैं—"देवताओं में मरुतों के बाद अश्विनों का ही अधिक वर्णन मिलता है। बाद के पौराणिक वर्णनों में वे सूर्य के पुत्र कहे गये हैं, किन्तु वेदों में उनकी उत्पत्ति का कुछ भी वर्णन नहीं है। एक स्थान पर सागर (सिन्धु) को उनकी माता कहा गया है, किन्तु कुछ विद्वान् सागर से भी सूर्य और चन्द्रमा का ही अभिप्राय समझते हैं जो कि सागर से ही उत्पन्न माने गये हैं। उन्हें 'दस्रा' भी कहा गया है, वे शत्रुओं और रोगों के नाश करने वाले हैं, क्योंकि वे देवताओं के वैद्य हैं। उन्हें 'नासत्य'—जिसमें असत्य न हो—भी कहा गया है। उनका वर्णन इस प्रकार है—वे अजर और सुन्दर हैं। त्रिकोणकार, तीन पहियों से युक्त गाड़ी में गदहों

के द्वारा खींचे जाते हैं, अपने उपासकों का भल करते हैं, उनके शत्रुओं का संहार करते हैं, आवश्यकता पड़ने पर सहायता करते है और दुःख एवं भय से मुक्त करते हैं। स्वर्ग से अधिक पृथ्वी ही उनका कार्य-क्षेत्र है और अपने गुणों के कारण वे धार्मिक न होकर वीर ही हैं। सूर्य की चमक से भी उनका सम्बन्ध बतलाया जाता है और ये उषाकाल को लाने वाले कहे जाते हैं। इस (उषा) काल में उन्हें सोमरस की बलि देना भी बतलाया गया है

अश्विनौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, देखिये, अश्विनोः

अश्वैर्—तृतीयान्त, बहु०, पु०, घोड़ों के द्वारा

अष्ठमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आठवाँ

अष्ठादशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अठारहवाँ

अष्ठौ—द्वितीयान्त, आठ

असंवीतः—बिना ढका हुआ

असंशयम्—अव्यय, निस्संदेह

असंस्कृतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बिना सजावट

असकृद् (त्)—अव्यय, बार बार

असंख्येयगुणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, देखिये असंख्येयगुणो

असंख्येयगुणो (:)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, अगणित गुण वाला

असतो—अ पूर्वक अस् धा०, कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, जिसका अस्तित्व न हो उसका

असत्कृतम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बुराई, बुरा काम

असत्कृता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया है, जिसका सत्कार नहीं किया गया है

असत्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं० झूठ, असत्य

असपत्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जिसका कोई वैरी न हो, शत्रुहीन को

असहाया—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बिना सहायता की, बिना साथी की

असि—अस् धा०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू है

असितकेशान्ताम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसके केशों का अग्रभाग काला है ऐसी स्त्री को

असितेक्षणा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, काले नेत्रों वाली

असुखम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कष्टदायक, दुःख

असुखजीविकाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी जीवन वाली (स्त्री) को

असुखपीडितः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःख से सताया हुआ
असुखाविष्टा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःख से सतायी हुयी
असुहृद्गणैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, शत्रुओं के समूहों से
असृजत्—सृज् धा०, तुदादिगण, अनद्यतनभूत, एक व०, उसने छोड़ दिया
असौ—प्रथमान्त, एक व०, वह
अस्ति—अस् धा०, अदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह है
अस्तु—अस् धा०, अदादिगण, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, इसे होने दो, (यह) हो
अस्त्रवित्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अस्त्रविद्या को जानने वाला
अस्पृशतः—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, न छूते हुये
अस्मत्समीपतः (स्)—क्रिया विशेषण, मेरे निकट से
अस्मदर्थे—अव्यय, मेरे कारण, मेरे लिये
अस्माकम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, हमारा
अस्मान्—द्वितीयान्त, बहु व०, हमको
अस्मान् (त्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, इससे
अस्माभिः—तृतीयान्त, बहु व०, हमसे
अस्मासु—सप्तम्यन्त, बहु व०, हममें
अस्मि—अस् धा०, अदादिगण, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं हूँ
अस्मिन्—सप्तम्यन्त, एक व०, इसमें
अस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, इसका
अस्या (स्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, इसका
अस्याम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, इसमें
अस्याश्—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, इसका
अस्वर्ग्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अस्वर्गीय, जो स्वर्ग के योग्य न हो
अस्वस्थाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जो स्वस्थ न हो , जो आपे में न हो
अस्वेदान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जिनके पसीना न आता हो, उनको
अहम्—प्रथमान्त, एक व० मैं
अहत्वा—हन् धा०, कृदन्त, न मारकर
अहनि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, दिन में
अहिंसानिरतो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, अहिंसा में लगा हुआ
अहिताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, शत्रु, हित न करने वाले
अहो—विस्मयादिबोधक, अरे, आह, शोक है
अहोरात्रान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, दिन-रात

अहोरात्रैर्—तृतीयान्त, बहु व०, देखिये अहोरात्रान्

अहोवत्—अव्यय, दुःख है, अरे, आह

अहोस्विद—संशयबोधक अव्यय

आ

आकारवन्तः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आकृतिवाले, अच्छी तरह बने हुये

आकारवर्णसुश्लक्ष्णाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, जिनका रूप-रंग अत्यन्त कोमल हो ऐसी स्त्रियाँ

आकाशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आकाश को

आकाशदेशम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आकाश के क्षेत्र को, आकाश को

आकृष्यमाणः—आ पूर्वक कृष् धा०, वर्तमान, कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, खींचा जाता हुआ

आक्रन्दमानाम्—आ पूर्वक क्रन्द् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रोती हुयी, पुकारती हुई

आक्रम्य—आ पूर्वक क्रम् धा०, भूतकालिक अभिभक्तिक कृदन्त, आक्रमण करके

आक्षिपन्तीम्—आ पूर्वक क्षिप् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आक्षेप करती हुयी, घृणित करती हुयी

आख्यातुम्—आ पूर्वक ख्या धा०, तुमुन् प्रत्यय, कहने के लिये

आख्यानम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कहानी, कथा, कहे हुये शब्द

आख्यानपञ्चमान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जिसमें पुराण पाँचवें हैं

आख्यासि—आ पूर्वक ख्या धा०, अदादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू कहता है

आख्येयम्—आ पूर्वक ख्या धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कहने के लिये

आगच्छतो—आ पूर्वक गम् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, आते हुये, पहुँचते हुये

आगच्छन्—आ पूर्वक गम् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, बहु व०, वे आये

आगच्छेत्—आ पूर्वक गम् धा०, विधिलिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे आना चाहिये

आगतम्—आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, आया हुआ

आगतः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आया है

आगता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आयी

आगतान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, आये हुओं को

आगताम्—आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आयी हुयी को

आगतायाम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, आने पर

आगते—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, आने पर

आगत्य—आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आ करके

आगमत्—आ पूर्वक गम धा०, सामान्यभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह आया या आयी

आगमनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, आना, आगमन

आगमनकारणम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आने का कारण

आगम्य—आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आकर

आचक्ष्व—आ पूर्वक चक्ष्, धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू कह, तू वर्णन कर

आचचक्षे—आ पूर्वक चक्ष् धा०, आ०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने कहा

आचरन्—आ पूर्वक चर् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आचरण करते हुये, करते हुये

आचष्टे—आ पूर्वक चक्ष् धा०, अदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह कहता है, वर्णन करता है

आचार्या—प्रथमान्त, बहु व०, पु० आचार्य, गुरू, शिक्षक

आचार्यान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, आचार्यों को

आच्छन्नः—आ पूर्वक छद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कपड़े पहने हुये, ढका हुआ

आजगाम—आ पूर्वक गम् धा०, परोक्षभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह आया

आजग्मुर्—आ पूर्वक गम् धा०, परोक्षभूत, प्रथम पु०, बहु व०, वे आये थे

आजुहाव—आ पूर्वक ह्वे धा०, परोक्षभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने बुलाया था

आततायिनः—द्वितीयान्त, बहु० पु०, दुष्ट, अत्याचारी लोग

आतुरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुर्बल, अयोग्य, असमर्थ, रोगी

आतुरम—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रोगी को

आतिष्ठ—आ पूर्वक स्था धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू ग्रहण कर, तू अभ्यास कर

आतिष्ठद्—आ पूर्वक स्था धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह चल पड़ा, रवाना हुआ

आतिष्ठेत्—आ पूर्वक स्था धा०, विधि लिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे करना चाहिये

आत्थ—अह् धा०, परोक्ष भूत, म० पु०, एक व०, तू ने कहा है

आत्मजयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अपनी विजय को

आत्मन्—पु० आत्मा

आत्मनः—षष्ठ्यन्त, एक व०, आत्मा का

आत्मनश्—षष्ठ्यन्त, एक०, अपने आप का

आत्मना—तृतीयान्त, एक व०, आत्मा से, अपने आप से

आत्मनो—देखिये आत्मनः

आत्मप्रभांश् (न्)—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अपने आप से चमकने वाले को

आत्मभवम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अपने से उत्पन्न

आत्मा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखिये आत्मन्

आत्मानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आत्मा को

आत्मार्थम्—अपने लिये

आदाय—आ पूर्वक दा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, लेकर, पाकर

आदित्य (आदित्यः)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सूर्य

आदित्यः (आदित्यस्)—देखिये आदित्यः

आदित्या (आदित्यास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आदित्य एक देवता विशेष जो सूर्य का ही एक रूप है। आदित्य बारह हैं जो कश्यप और अदिति के पुत्र कहे गये हैं। वह वर्ष के बारहों महीनों में सूर्य के ही चिह्न हैं। कुछ लोग इनके नाम इस प्रकार बतलाते हैं—सूर्य, वरुण, वेदाङ्ग, भानु, इन्द्र, रवि, गभस्ति, यम, स्वर्णरेता, दिवाकर, मित्र, विष्णु। विष्णु पुराण में उनका वर्णन इस प्रकार है—विष्णु, शक्र, आर्यमन्, धूति, त्वष्टृ, पूषन्, विवस्वत्, सवितृ, मित्र, वरुण, अंशु, और भग। इनमें से अधिकांश तो सूर्य के ही विशेषण हैं

आदित्यो—देखिये आदित्यः

आदिष्टो—आ पूर्वक दिश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आदेश पाया हुआ, आज्ञा पाया हुआ

आधावमानाश्—आ पूर्वक धाव् धातु, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, दौड़ते हुये, भागते हुये

आधास्ये—आ पूर्वक धा धा०, भविष्यत् काल, उत्तम पु०, एक व०, मैं धारण करूँगा, मैं रखूँगा

आधिपत्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, राजसत्ता

आधिभिर्--तृतीयान्त, बहु व०, पु०, दुःख से, दर्द से, कष्ट से

आनय--आ पूर्वक नी धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू ला, तू जाकर ला

आनयत्--आ पूर्वक नी धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह लाया, उसने लिया

आनयताम्--आ पूर्वक नी धा०, आत्म०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह लाये

आनयने--सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, लाने में

आनयिष्यति (आनेष्यति)--आ पूर्वक नी धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह फिर लायेगा

आनयामास--आ पूर्वक नी धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने मँगाया

आनाय्य--आ पूर्वक नी धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, मँगाकर, साथ साथ मँगाकर

आनृशंस्यम्--प्रथम पु०, एक व०, नपुं०, भाववाचक संज्ञा, अक्रूरता, अकठोरता

आनेतुम्--आ पूर्वक नी धा०, तुमुन् प्रत्यय, कर्म व कर्तृ वा०, लाने के लिये

आपगाम्--द्वितीयान्त, एक व० स्त्री०, नदी को

आपतताम्--आ पूर्वक पत् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, बहु व०, आगे की ओर भागते हुओं को

आपतितम्--आ पूर्वक पत् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, हुआ, गिर पड़ा

आपदम्--द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, विपत्ति को, दुःख को

आपन्ना--प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अभागिनी, दुःखिनी, प्राप्त की हुयी

आपीडैर्(:)--तृतीयान्त, बहु व०, पु०, मालों से, हारों से

आपो--प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, जल (सदैव बहुवचनान्त होता है)

आप्तकारिभिः--तृतीयान्त, बहु व०, पु०, विश्वसनीय, गुप्त

आप्तदक्षिणैः-- बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, जिन्हें उपयुक्त भेंट प्राप्त है उनके द्वारा

आप्नोति--आप् धा०, स्वादिगण, प्रथम पु०, एक व०, वह प्राप्त करता है

आप्यायिता--प्यै धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सन्तुष्ट, सान्त्वना प्राप्त

आभाष्य--आ पूर्वक भाष् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, कहकर, बोलकर

आभ्याम्--चतुर्थ्यन्त, द्विव०, इनके लिये

आमन्त्र्य--आ पूर्वक मन्त्र् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, अभिवादन करके, प्रणाम करके, बिदाई देकर

आम्नायसारिणीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, वेदों के सार से भरी हुयी, वेदों की तरह गतिवाली

आयतलोचना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बड़े बड़े नेत्रों वाली

आयतेक्षणा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बड़े बड़े नेत्रों वाली

आयतेक्षणाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बड़े बड़े नेत्रों वाली को

आयात (स्)—आ पूर्वक या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आया हुआ

आयाति—आ पूर्वक या धा०, अदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह आता है

आयान्तम्—आ पूर्वक या धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आये हुये को

आयान्तु—आ पूर्वक या धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, बहु व०, वे आयें

आयुक्तम्—आ पूर्वक युज् धा० भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सम्मिलित, संयुक्त, प्राप्त

आयुष्मन्—सम्बोधन एक व०, हे दीर्घ जीवन वाले

आयुष्मन्तौ—प्रथमान्त, द्विव०, पु०, लम्बे जीवन वाले

आरब्धम्—आ पूर्वक रभ् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, आरम्भ किया हुआ

आरभ्य—आ पूर्वक रभ् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आरम्भ करके, स्वीकार करके

आरावः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चिल्लाहट, शोर

आरूरोह—आ पूर्वक रूह् धा०, परोक्ष भूत,, प्रथम पु०, एक व०, वह चढ़ा था या चढ़ी थी

आरूह्य—आ पूर्वक रूह् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, चढ़कर

आरोप्य—आ पूर्वक रूह् धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अभिभक्तिक कृदन्त, चढ़ाकर, रखकर, आरोप करके

आर्त्तः—आ पूर्वक अर्द् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त , एक व०, दुःखी

आर्त्ततरा—प्रथमान्त, एक व० स्त्री०, अधिक दुखिया, अधिक शोकातुर

आर्त्तस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, दुःखी (व्यक्ति) का, सताये हुये का

आर्त्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुखियारी, दुःखी

आर्त्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुखिया को, दुःखी को

आर्त्तो—देखिये आर्त्तः

आर्य—सम्बोधन, एक व०, हे मान्यवर !

आलयान्--द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, घरों को

आलिङ्ग्य--आ पूर्वक लिङ्ग् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आलिङ्गन करके, चिपटा करके

आलीयते--आ पूर्वक ली धा०, दिवादिगण, आत्म०, वतमान, प्रथम पु०, एक व०, वह मूर्छित होती है

आलोक्य--आ पूर्वक लोक् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देखकर के

आवयोः--षष्ठ्यन्त द्विव०, हम दोनों का

आवर्जितम्--आ पूर्वक वृज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, झुका हुआ, उंडेला हुआ, नीचे गिराया हुआ

आवर्त्तैर्--तृतीयान्त, बहु व०, पु०, घोड़े के बाल जो पीछे की ओर घुँघराले होकर आते हैं। आवर्त्त शरीर पर विभिन्न प्रकार के बने हुये बालों के घूंघर को कहते हैं

आवह--आ पूर्वक वह् धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, प्रथमान्त, तू ले जा, तू ला

आवार्य--आ पूर्वक वृ धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छिपा करके

आविशत्--आ पूर्वक विश् धा०, तुदादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रवेश किया

आविष्टः--आ पूर्वक विश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घुसा हुआ, प्रभावित

आविष्टम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रभावित, भरा हुआ

आविष्टो--देखिये आविष्टः

आवेद्यम्--आ पूर्वक वि धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कहने को, घोषित करने को

आव्रजन्--आ पूर्वक व्रज् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, बहु व०, वे गये, वे पहुँचे

आशङ्कमाना--आ पूर्वक शङ्क् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, डरते हुये, शङ्कित होते हुये

आशीर्वादैः--तृतीयान्त बहु व०, पु०, आशीर्वादों से

आशु--अव्यय, शीघ्रता से

आश्चर्यम्--प्रथमान्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आश्चर्य

आश्रमपदम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आश्रम

आश्रममण्डलम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आश्रम, साधुओं के रहने का स्थान

आश्रमान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, आश्रमों को

आश्रमाश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आश्रम

आश्रयेत्—आ पूर्वक श्रि धा०, भ्वादिगण, विधिलिङ, प्रथम पु०, एक व०, उसे आश्रय लेना चाहिये

आश्रयेद्—देखिये आश्रयेत्

आश्रिता—आ पूर्वक श्रि धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आश्रय प्राप्त की हुई, खड़ी हुई

आश्वासयत—आ पूर्वक श्वस् धा० (प्रेरणार्थक), अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम दोनों धैर्य दो, तुम दोनों साहस दो

आश्वासयन्ती—वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, धैर्य बँधाती हुयी, साहस देती हुयी

आश्वासयसि—वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू धैर्य देता है

आश्वासयामि—वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं धैर्य देता हूँ

आश्वस्य—आ पूर्वक श्वस् धा० (प्रेरणार्थक), भतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आश्वासन देकर, धैर्य देकर

आसम्—अस् धा०, अनद्यतन भूत, उ० पु०, एक व०, मैं था, मैं हुआ

आसते—आस् धा०, अदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे बैठते हैं, वे रहते हैं

आसनेभ्यः—पञ्चम्यन्त, बहु व०, नपुं० आसनों से

आसनेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं० आसनों से

आससाद—आ पूर्वक सद् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह पहुँचा था, वह आया था, उसने पाया था

आसादयद् (त्)—आ पूर्वक सद् धा०, चुरादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह पहुँचा या पहुँची

आसादिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मिली, हुई, प्राप्त की हुई,

आसाद्य—आ पूर्वक सद् धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पहुँचकर, जाकर, निकट जाकर, पाकर, अनुभव करके

आसीद् (त्)—अस् धा०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह था

आसीन्—देखिये आसीद्

आसीनाः—आस् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बैठे हुये

आस्ते—आस् धा०, अदादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह बैठता है

आस्थाय—भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, लाभ उठाकर, आस्था रखकर

आस्थास्यति—आ पूर्वक स्था धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह करेगा, लगेगा या देखेगा

आस्थास्ये—आ पूर्वक स्था धा०, आत्म०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं प्रयोग करूँगा, मैं ग्रहण करूँगा

आस्थितम्—आ पूर्वक स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, खड़े होकर, खड़े हुये को

आस्यताम्—आस् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, यह बैठा दिया जाये

आह—अह् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने कहा

आहर्ता—आ पूर्वक हृ धा०, दिवादिगण, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देने वाला, यज्ञ करने वाला, बलि देने वाला

आहर्तुम्—आ पूर्वक हृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, लाने को, ले जाने को, करने को, उठाने को

आहवे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, युद्ध में

आहितम्—आ पूर्वक धा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, रखा हुआ, बनाया हुआ, ग्रहण किया हुआ

आहितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखिये आहितम्

आहुस्—अह् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, बहु व०, वे बोले, उन्होंने कहा

आहूय—आ पूर्वक ह्वे धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, बलाकर, ललकार कर

आहृते—आ पूर्वक हृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, लाने पर

आहृत्य—आ पूर्वक हृ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, ले जाकर

आहोस्विद् (आहोस्वित्)—संशय व्यक्त करने वाला अव्यय

आह्लादयते—आ पूर्वक ह्लाद् धा० (प्रेरणार्थक), आत्म०, प्रथम पु०, एक व०, वह आनन्दित होता है

आह्वानम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, ललकार, पुकार

इ

इक्ष्वाकुकुलजः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, इक्ष्वाकु कुल में जन्म लेनेवाला (इक्ष्वाकु सूर्य वंशी प्रथम राजकुमार थे)

इङ्गितैः—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, सङ्केत से, इशारे से

इच्छति—इष् धा०, तुदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह इच्छा करता है, चाहता है

इच्छन्ति—वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे इच्छा करते हैं, चाहते हैं

इच्छसि—वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू चाहता है

इच्छामि—वर्तमान, उ० पु०, मैं चाहता हूँ, इच्छा करता हूँ

इच्छेथाम्—इष् धा०, तुदादिगण, विधिलिङ, म० पु०, एक व०, तुझे इच्छा करना चाहिये

इतः—यहाँ से ।

इतश्चेतश्च—अव्यय, इधर उधर, यहाँ-वहाँ

इतस्—देखिये इतः

इतस्ततः—अव्यय, इधर उधर, यहाँ वहाँ

इति—अव्यय, इसलिये, इस तरह, ऐसा करते हुये

इतो (इतस्)—अव्यय, यहाँ से

इदम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, यह

इन्दोर् (:)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, चन्द्रमा का

इन्द्रपुरोगमाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, इन्द्र जिनके आगे चलते हैं, इन्द्र जिनके अगुआ हैं

इन्द्रलोकम्—तत्पु०, समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इन्द्रलोक को

इन्द्रसेनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, (नल और दमयन्ती के पुत्र) इन्द्रसेन को

इन्द्रसेनस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, इन्द्रसेन का

इन्द्रसेनाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री० (नल और दमयन्ती की पुत्री) इन्द्रसेना को

इन्द्रियाणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, नपुं०, इन्द्रियों को

इन्द्रो (इन्द्रः)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, (इन्द्र स्वर्ग लोक का राजा)

इमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इसको

इमाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, इसको

इमामि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, इनको

इमे—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, ये

इयम्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री० यह

इयेष—इष् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, इच्छा की, चाहा

इव—अव्यय, तरह, जैसे कि, जैसे

इषुभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वाणों से

इष्ट—इष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, इच्छित, चाहा हुआ या चाही हुयी

इष्टम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इच्छित, चाहा हुआ

इष्टा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्यारी

इष्टाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्यारी को

इष्टै (स्)—तृतीयान्त, बहु व०, चाहे हुओं के द्वारा

इष्ट्वा—यज् धा०, भूतिकालिक कर्म कृदन्त, यज्ञ करके, बलि करके

इह—अव्यय, यहाँ

इहागतः (इह+आगतः)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, यहाँ आया हुआ

ई

ईक्षणम्—द्वितीयान्त, एक व० स्त्री०, आँख को

ईजे—यज् धा०, आत्म०, परोक्ष भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने यज्ञ किया

ईदृश (स्)—इसके समान, ऐसा

ईदृशम्—प्रथमान्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, इसके जैसे को, ऐसे को

ईदृशैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, ऐसों के द्वारा, इनके ऐसों के द्वारा

ईप्सितः—आप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, इच्छित, चाहा हुआ

ईप्सिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चाही हुयी को

ईप्सितो—देखिये ईप्सितः

ईयिवान्—इ धा०, परोक्ष भूत, कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वह गया

ईरितः—ईर् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु० भेजा गया, कहा गया

ईरितम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कहा गया, बोला गया

ईशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वामी

ईश्वर—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे ईश्वर

ईश्वराणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, ईश्वरों का, स्वामियों का

उ

उक्त—वच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, बोला हुआ, कहा हुआ, सम्बोधित किया हुआ

उक्तम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कहा हुआ

उक्तमात्रे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, केवल कहने पर, तुरन्त ही कहने पर

उक्तवती—वच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, वह बोली

उक्तवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बोला

उक्तस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कहा, सम्बोधित किया

उक्तस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, कहे हुये का

उक्ताः—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कही हुयी

उक्ताः (उक्तास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, कहे हुये, सम्बोधित किये हुये

उक्तास्—देखिये उक्ता :

उक्ते—सप्तम्यन्त, एक व०, कहे जाने पर, सम्बोधित किये जाने पर

उक्तो—देखिये उक्तस्

उक्त्वा—वद् धा०, अविभक्तिक कृदन्त, कहकर, बोलकर

उग्रशासनः—बहु समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसकी आज्ञा कठोर है

उचिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, उचित, अभ्यस्त

उच्चैः (उच्चैस्)—अव्यय, जोर से, ऊँचे स्वर से

उच्चैर्—देखिये उच्चैः

उच्छिष्टम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जूठा, बचा हुआ, छोड़ दिया गया हुआ

उच्छोषणम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जो सूख जाता है, झुलस जाता है

उच्छ्रितैः—तृतीयान्त, बहु व०, ऊँचे

उच्यते—वच् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, कहा जाता है

उत्—उपसर्ग, ऊपर, ऊपर की ओर

उत—संशयबोधक अव्यय

उताहो—प्रश्नवाचक, या कि

उताहोस्विद्—संशयबोधक अव्यय

उत्तमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, अच्छा

उत्तमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अच्छा

उत्तमगन्धाढ्याः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, जिनमें बहुत अच्छी सुगन्धि हो

उत्तरम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, उत्तर

उत्तरन्तम्—उत् पूर्वक तृ धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पार करते हुये, पार जाते हुये

उत्तराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, उत्तर दिशा को

उत्तरीयम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, ऊपर का वस्त्र, दुपट्टा, ओढ़नी

उत्तस्थौ—उत् पूर्वक स्था धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह खड़ा हुआ या खड़ी हुयी

उत्तिष्ठ—उत् पूर्वक स्था धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू उठ, तू खड़ा हो

उत्थितः— उत् पूर्वक स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उठा हुआ

उत्थितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उठे हुये को

उत्पतते—उत् पूर्वक पत् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह ऊपर उठती है, उछलती है

उत्पततो—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, ऊपर उड़ते हुओं को

उत्पतन्तः—उत् पूर्वक पत् धा० वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु० व०, पु०, ऊपर की ओर उड़ते हुये

उत्सर्गे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, छोड़ने पर

उत्सर्पति—उत् पूर्वक सृप् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, वह ऊपर उठता है, बढ़ता है

उत्ससर्ज—उत् पूर्वक सृज् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने छोड़ दिया

उत्सहते—वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह सहन करता है, योग्य है, सहता है

उत्सहे—उत् पूर्वक सह् धा०, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं योग्य हूँ, मैं सहन कर सकता हूँ

उत्साद्यन्ते—उत् पूर्वक सद् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान, प्रथम पु०, बहु० व०, वे नष्ट किये जाते हैं

उत्सुकाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, उत्सुक, आशा करते हुये

उत्सृज्य—उत् पूर्वक सृज् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, छोड़कर, फेंक कर, जाने देकर

उत्सृष्टवान्—उत् पूर्वक सृज् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जाने दिया है, छोड़ दिया है

उत्सृष्टा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, छोड़ी गयी, फेंकी गयी

उत्स्रष्टुकामम्—उत् पूर्वक सृज् धा०, तुमुन् प्रत्यय, द्वितीयान्त, एक व० पु०, छोड़ने की इच्छा करने वाले को

उदकम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जल

उदर्कस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भविष्य काल, आने वाला समय

उदर्के—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, आने वाले समय में

उदारः(स्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, उदार, कृपालु

उदारान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, कृपालुओं को, उदारों को

उदाहृतम्—उत् और आ पूर्वक हृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, वर्णन किया हुआ, घोषित किया हुआ

उदितेन—उत् पूर्वक इ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, तृतीयान्त, एक व०, पु०, उठे हुये, निकले हुये (के द्वारा)

उद्दिश्य—अव्यय, संकेत, करके, सम्बोधित करके

उद्धृताम्—उत् पूर्वक हृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, फाड़ी हुयी, उखाड़ी हुयी

उद्यतः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, तैयार, उत्सुक, लालायित

उद्यताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, तैयार

उद्वमन्—उत् पूर्वक वम् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उलटी करते हुये, कै करते हुये, वमन करते हुये

उद्विजसि—उत् पूर्वक विज् धा०, तुदादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व० तू डरता है (यह क्रिया पञ्चम्यन्त के साथ आती है)

उद्वेजते—उत् पूर्वक विज् धा०, भ्वादि गण, आत्म० वर्तमान, प्रथम पु० एक व०, हिलता है

उद्वेपते—उद् पूर्वक वेप् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, हिलता है, क्षुब्ध होता है

उन्मत्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पागल को

उन्मत्तदर्शना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पगली सी दिखाई देने वाली

उन्मत्तरूपा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पगली जैसे रूप वाली

उन्मत्तवद्—अव्यय, पागल की तरह, उन्मत्त जैसा

उन्मत्तवेशा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पागल के समान वस्त्रों वाली

उन्मत्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, पगली

उन्मत्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पगली को

उन्मुखाः (स्)—प्रथमान्त, बहु० व०, पु०, ऊपर की ओर मुँह उठाये हुये, ऊपर की ओर देखते हुये

उप—उपसर्ग, तरफ, निकट, साथ

उपकल्पिताः—उप पूर्वक क्लृप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, तैयार

उपगच्छति—उप पूर्वक गम् धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह निकट आता है, वापस होता है

उपगम्य—उप पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पास जाकर या पहुँचकर

उपचक्रमे—उप पूर्वक क्रम् धा०, आत्म०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रयास किया या कोशिश की

उपचर्य—उप पूर्वक चर् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सेवा करके, पालन करके

उपतस्थे—उप पूर्वक स्था धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह पहुँचा या गया

उपतिष्ठति—उप पूर्वक स्था धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व० वह निकट जाता है, वह साथ ठहरता है

उपदेक्ष्यामि—उप पूर्वक दिश् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं बताऊँगा, उपदेश दूँगा

उपपद्यते—उप पूर्वक पद् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, हो रहा है, ठीक हो रहा है

उपपन्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, प्राप्त किया हुआ

उपपन्ना—प्रथमान्त, एकव०, स्त्री०, पायी हुई

उपपन्नान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पाये हुओं को

उपपन्नो—उप पूर्वक पद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, युक्त, सहित

उपपादयन्—उप पूर्वक पद् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान कृदन्त, अनुमान लगाते हुये, सिद्ध करते हुये, प्रतिपादन करते हुये

उपययौ—उप पूर्वक या धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह गया, निकट गया, वापस हुआ

उपरतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, हटे हुये को, अलग हो गये को

उपरि—अव्यय, ऊपर, पर

उपलक्षितः—उप पूर्वक लक्ष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखा हुआ

उपलप्स्यसे—उप पूर्वक लभ् धातु०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू पायेगा

उपलभ्य—उप पूर्वक लभ् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देखकर, जानकर

उपवनेषु---सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, उपवनों में, बागों में

उपविष्टम्---उप पूर्वक विश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बैठे हुये को, बैठते हुये को

उपविष्टो---प्रथमान्त, एक व०, पु०, बैठा हुआ

उपशिक्षिता---उप पूर्वक शिक्ष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पढ़ी लिखी

उपशोभितम्---द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शोभित होने वाले को

उपशोभिताम्---उप पूर्वक शुभ् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शोभित होने वाली को

उपसंस्कृतम्---उप और सम् पूर्वक कृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पके हुये को, सजे हुये को

उपसम्प्राप्य---उप और सम् पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पहुँचकर

उपसर्प्य---उप पूर्वक सृप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकट जाकर

उपस्थास्यतश्---उप पूर्वक स्था धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, द्वि० व०, वे दोनों साथ रहेंगे, वे दोनों उपस्थित होंगे

उपस्थास्यति---उप पूर्वक स्था धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह निकट खड़ा होगा या खड़ी होगी

उपस्थितः---उप पूर्वक स्था धा० भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आया, पहुँचा, खड़ा हुआ

उपस्थितम्---प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, आया हुआ

उपस्थिताम्---द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आयी हुयी को

उपस्पृश्य---उप पूर्वक स्पृश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आचमन करके

उपाकर्तुम्---उप और आ पूर्वक कृ धा० तुमुन् प्रत्यय, लेने के लिये

उपागमत्---उप पूर्वक गम् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह आया

उपागम्य---उप और आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकट जाकर, निकट पहुँच कर

उपातिष्ठद्---उप पूर्वक स्था धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह गया, वह निकट आया

उपादाय---उप और आ पूर्वक दा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, लेकर

उपानयत्---उप पूर्वक नी धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह लाया, निकट ले आया

उपायश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, उपाय

उपायेन—तृतीयान्त, एक व० पु०, उपाय से, तरकीब से

उपायो (स्)—देखिये उपायश्

उपाविशत्—उप पूर्वक विश् धा०, तुदादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह बैठा

उपासितुम्—उप पूर्वक आस् धा० तुमुन् प्रत्यय, उपासना करने के लिये, पूजा करने के लिये

उपेतम्—द्वितीयान्त एक व०, पु०, समीप आये हुये को

उपेयतुः—उप पूर्वक इ धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, द्विव०, वे दोनों पहुँचे, वे दोनों आये

उपेयिवान्—उप पूर्वक इ धा०, परोक्ष कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वह गया, उसने सहारा लिया

उपैक्षत्—उप पूर्वक ईक्ष् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने ऊपर देखा, उसने उपेक्षा (लापरवाही) की

उभयम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दोनों

उभयोर्—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, पु०, नपुं०, दोनों का

उभौ—द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, दोनों

उरगाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, साँप

उरगेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, साँप के द्वारा

उल्लिखद्भिर्—उत् पूर्वक लिख् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, रेखायें बनाते हुये

उवाच—वच् धा०, परोक्ष भूत, प्रथमपु०, एक व०, वह बोला, उसने कहा

उवास—वस् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह रहा या रहता था

उषितस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रहता हुआ

उषिता—वस् धा० भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रहती हुयी

उषितो—देखिये उषितस्

उष्मणा—तृतीयान्त, एक व०, पु०, गर्मी से

उष्य—वस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रहकर

ऊ

ऊचु—वच् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने कहा

ऊचुस्—देखिये ऊचुः

ऊर्द्ध्वम्—अव्यय, बाद में, ऊपर

ऊर्द्ध्वदृष्टिर्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री० जिसकी निगाह ऊपर को हो

ऊषतुर्—वस् धा०, परोक्ष भूत, प्रथमपु०, द्वि व०, उन दोनों ने रात बिताया

ऋ

ऋक्षवन्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, ऋक्षवन्त एक पर्वत का नाम है (ऋक्षवत् भालुओं से युक्त)। ऋक्षवत् पर्वत विन्ध्याचल श्रेणी का एक भाग है जो मालवा को खानदेश और बरार से अलग करता है

ऋक्षांश् (न्)—द्वितीयान्त, बहुव०, पु०, भालुओं को

ऋच्छति—ऋ (ऋच्छ्) धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, जाता है

ऋताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सत्य

ऋते—अव्यय, सिवा, अतिरिक्त, बिना

ऋतुपर्ण—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे ऋतुपर्ण !

ऋतुपर्णम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, ऋतुपर्ण को, ऋतुपर्ण अयोध्या के एक राजा का नाम था

ऋतुपर्णनिवेशने—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं० ऋतुपर्ण के घर में

ऋतुपर्णस्य—षष्ठ, एक व०, पु०, ऋतुपर्ण का

ऋतुपर्णाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, ऋतुपर्ण के लिए

ऋतुपर्णे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, ऋतुपर्ण में

ऋतुपर्णेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, ऋतुपर्ण के द्वारा

ऋतुपर्णो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ऋतुपर्ण, राजा का नाम

ऋद्धम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सम्पन्न, धनवान्

ऋद्धाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, धनवती

ऋषिसत्तमौ—तत्पु० समास, प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, दो बहुत अच्छे ऋषि

ऋषीन्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, ऋषियों को, साधुओं को

ए

एक (स्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, एक

एकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रथमान्त, एक व०, नपुं० एक को, एक

एकः—देखिये एकस्

एकतः (एकतस्)—अव्यय, एक ओर, एक भाग पर

एकतरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, दो में एक

एकतो—देखिये एकतः

एकत्र—अव्यय, एक में, एक जगह, साथ साथ

एकदेशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, एक भाग को

एकपाणेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, एक खेल में, एक दाँव में

एकवसनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, केवल एक वस्त्र धारण किये हुये को

एकवसना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, एक वस्त्र धारण करने वाली

एकवस्त्रताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, एक वस्त्र रखने के भाव को

एकवस्त्रसंवीताव् (एकवस्त्रसंवीतौ)—बहु० समास, प्रथमान्त, द्वि० व०, पु०, एक वस्त्र धारण किये हुये

एकवस्त्रा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, एक वस्त्र वाली

एकवस्त्रार्द्धसंवीतम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, एक वस्त्र का आधा भाग धारण किये हुये

एकवासा (एकवासास्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बहु० समास, एक वस्त्र पहनने वाला

एकविंशतितमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, इक्कीसवाँ

एकस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, एक का

एकेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, नपुं०, एक से, अकेले

एका—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, एक, अकेली

एकाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, एक को , अकेली को

एकाकिनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अकेली, सूनी

एकाग्र्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, ध्यान, एकचित्तता

एकादशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ग्यारहवाँ

एकान्ते—अव्यय, एकान्त में, गुप्त रूप में

एकार्थसमुपेतम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, एक ही उद्देश्य से आया हुआ

एकाह्ना—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, एक दिन

एकैकशस्—अव्यय, एक एक करके, अकेले

एको—देखिये एक

एतज् (त्)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, यह

एतत्—देखिये एतज्

एतद्—देखिये एतज्

एतदर्थम्--इसलिये, इस कारण
एतया--तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, इसके साथ, इसके द्वारा
एतस्मिन्--सप्तम्यन्त, एक व०, इसमें, इस पर
एतस्मिन्न--देखिये एतस्मिन्।
एतान्--द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, इनको
एतानि--द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, इनको
एताभ्याम्--तृतीयान्त, द्वि० व०, इन दोनों से
एतावत्--अव्यय, इतना , इस सीमा तक
एतावद्--प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, इस सीमा तक, इतना
एति-- इ धा०, अदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जाता है
एते--प्रथमान्त, बहु व०, पु०, ये
एतेन--तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, इसके द्वारा
एतौ--द्वितीयान्त, द्वि० व०, पु०, ये दो
एनम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इसको
एनाम्--द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, इसको
एव--अव्यय, ही
एवम्--अव्यय, इस तरह, इसलिये
एवंरूपम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इस प्रकार का
एवङ्गता--प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, इस दशा में, इस परिस्थिति में पड़ी हुयी
एवङ्गताम्--द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, इस दशा में पड़ी हुयी को
एवङ्गुणम्--ऐसे गुणों से युक्त, ऐसे अच्छे को
एवमादीनि--द्वितीयान्त, बहुव०, नपुं०, इस तरह की
एष (स्)--प्रथमान्त, एक व०, पु०, यह, वह
एषाम्--षष्ठ्यन्त, बहु व०, उनका, इनका
एषो--देखिये एष
एष्यति--इ धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह जायेगा
एहि--आ पूर्वक इ धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, आओ

ऐ

ऐच्छत्--इष् धा०, अनद्यतनभूत, प्रथमपु०, एक व०, उसने इच्छा की, उसने चाहा

ऐश्वर्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, प्रभुता, बड़प्पन, साम्राज्य
ऐश्वर्यात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, साम्राज्य से

औ

औषधम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, औषधि, दवा

क

कम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, किसको
कः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कौन
कच्चित्—प्रश्नवाचक, या, कि
कच्चिद्—देखिये कच्चित्
कञ्चन—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कोई
कतरन् (त्)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दो में कौन सा
कत्थसे—कत्थ् धा०, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू डींग मारता है
कथम्—अव्यय, कैसे, किस ढंग से
कथञ्चन—अव्यय, किसी तरह से, किसी ढंग से
कथयध्वम्—कथ् धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम सब कहो, वर्णन करो, बतलाओ
कथयन्—कथ् धा०, चुरादिगण, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कहते हुये, बतलाते हुये, बोलते हुये
कथयन्तीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कहती हुयी को, बोलती हुयी को
कथयन्तौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, कहते हुये
कथयानः—कथ् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कहते हुये, बोलते हुये
कथयिष्यन्ति—कथ् धा०, चुरादिगण, भविष्यत्, प्रथम पु०, बहुव०, वे कहेंगे
कथयिष्यामि—कथ् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं कहूँगा, मैं बतलाऊँगा
कथयेद्—कथ् धा०, विधि लिङ, प्रथम पु०, एक व०, उसे कहना चाहिये, बोलना चाहिये
कथान्ते—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व० नपुं०, बातचीत के अन्त में, कथा के अन्त में
कथितम्—कथ् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कहा हुआ, वर्णन किया हुआ

कथिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कही हुयी, वर्णन की हुयी

कथ्यमाने—कथ् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, कहे जाने पर

कदा—अव्यय कब

कदाचन—अव्यय, किसी समय

कदाचिद् (कदचित्)—अव्यय, किसी समय, संयोग से

कनकस्तम्भरूचिरम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सोने के खम्भे की भाँति चमकदार या सुन्दर

कन्दरांश् (न्)—द्वितीयान्त, बहु० व०, पु०, गुफाओं को

कन्दर्पः (स्)—प्रथमान्त, एक व०, प्रेम का देवता, कामदेव उसे काम, कामदेव, मन्मथ (विवेक को मथ डालने वाला), मनसिज (हृदय से उत्पन्न) और अनंग (शरीर हीन) भी कहते हैं

कन्यकाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, कन्या को

कन्या—स्त्री०, क्वारी लड़की

कन्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कन्या को

कन्यारत्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, क्वारी लड़कियों में रत्न की भाँति, एक सुन्दरी लड़की

कन्यास्—प्रथमान्त, स्त्री०, बहु व०, लड़कियाँ

कमलगर्भाभम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कमल के भीतर वाले भाग के समान शोभायमान

कमलेक्षणा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कमल के समान नेत्रों वाली

कम्पयन्(कम्पयन्)—कम्प् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, हिलाते हुये, हिलते हुये

करवाणि—कृ धा०, अनुज्ञा, उ० पु०, एक व०, मैं करूँ, मैं कर सकता हूँ, मुझे करने दो

करवामहै—कृ० धा०, आत्म०, अनुज्ञा, उ० पु०, एक व०, हम लोग करें, हमें करने दो

करिणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु० व०, पु०, हाथियों का

करिष्य (करिष्ये)—कृ धा०, आत्म०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं करूँगा

करिष्यति—कृ धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह करेगा

करिष्यसि—कृ धा०, भविष्यत्०, म० पु०, एक व०, तू करेगा

करिष्यामि—कृ० धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं करूँगा

करूणम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दयापूर्ण

करैः--तृतीयान्त, बहु० व०, पु०, हाथी के सूंडों के द्वारा

करोमि--कृ धा०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं करता हूँ

कर्कोटकम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कर्कोटक एक सर्प का नाम

कर्कोटकविषम्--तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कर्कोटक (सर्प) के विष को

कर्कोटको--प्रथमान्त, एक व०, पु०, कर्कोटक (सर्प)

कर्णिकारधवप्लक्षैः--द्वन्द्व समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, कर्णिकार, धव और प्लक्ष वृक्षों के द्वारा

कर्तव्यम्--कृ धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, करने योग्य, काम

कर्तुम्--कृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, करने को, करने के लिये

कर्तुकामा--प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, करने का इच्छुक

कर्म--प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, काम

कर्मचेष्ठाभिसूचितम्--बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, काम और संकेतों से प्रकट होने वाले को

कर्मणः--षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं, काम का

कर्मणा--तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, काम से

कर्मणि--सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, काम में

कर्षयन्--कृष् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, खींचते हुये, एकत्र करते हुये

कर्षिता--कृष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, खींची हुयी, कष्ट पायी हुयी

कर्षितो--प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःखित किया हुआ, सताया हुआ

कर्हिचित्--अव्यय, किसी समय, सदैव

कलिम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कलिको देखिये कलिः

कलिः--प्रथमान्त, एक व०, पु०, कलि, सृष्टि का चौथा युग जो एक देव या दानव के रूप में प्रस्तुत किया गया है

कलिना--तृतीयान्त, एक व०, पु०, कलि से

कलिर् (कलिस्)--देखिये कलिः

कलिसंश्रयात्, तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, कलि के आश्रय से

कले--सम्बोधन, एक व०, पु०, हे कले !

कलेस्—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, कलि का
कलौ—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, कलि में
कल्पते—क्लृप् धा०, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह योग्य है
कल्यम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कल (आनेवाला)
कल्याण—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शोभनशील!
कल्याणाभिजनम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सद्वंश में उत्पन्न होने वाले को
कल्याणि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दरि!
कल्याणि—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी
कल्याणीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी को
कल्याणो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शोभाशील
कश् (कस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कौन
कश्चन्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कोई
कश्चिद्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कोई
कश्चिन् (कश्चित्)—देखिये कश्चिद्
कश्मलम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मन की खिन्नता, नीचता, दुर्बलता
कष्टस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःख
कष्टाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुष्टा को
कस्—देखिये कश्
कस्मात्—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, कैसे, क्यों
कस्माद्—देखिये कस्मात्
कस्मिंश्चित्—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, किसी में
कस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, किसका
कस्यचित्—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, किसी का
कस्यचिद्—देखिये कस्यचित्
का—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कौन
कांश्चिद्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, किन्हीं (लोगों) को
काङ्क्षन्ति—काङ्क्ष् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु० व०, वे इच्छा करते हैं, चाहते हैं
काङ्क्षतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, चाहे हुये को
काङ्क्षे—काङ्क्ष् धा०, आत्मा०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं इच्छा करता हूँ, चाहता हूँ

काचिद्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कोई (स्त्री)

काञ्चनसन्निभम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं० सोने के समान कान्ति वाले को

काञ्चिद् (काञ्चित्)—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, किसी को

काननम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, वन को, जंगल को

कानने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, जंगल में, वन में

कानिचित्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु० व०, नपुं०, किनको

कान्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्यारी

कान्तिर् (स्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरता

काम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, किसको

कामम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रेम को

कामम्—अव्यय, इच्छा से

कामगः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जो बिना आशा के आ जाये, अपनी इच्छा से जाने वाला

कामधुक्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कामधेनु

कामभोगैः—तत्पु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, प्रेम का, आनन्दों के द्वारा

कामयेच् (त्)—कम् धा०, चुरादिगण, विधि लिङ, प्रथम पु०, एक व०, इच्छा करना चाहिये

कामवासिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जहाँ इच्छा हो वहाँ रहने वाली को

कामस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रेम

कामस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, प्रेम का

कामार्तस्—तत्पु०, समास, काम (प्रेम) से पीड़ित

कारणम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कारण को

कारणात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, कारण से

कारणान्तरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, कारण के समय

कारणैर्—तृतीयान्त, बहु० व०, नपुं०, कारणों से

कारयामास—कृ धा० (प्रेरणार्थक), लिट्, लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने किया या कराया

कार्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, काम को

कार्यगौरवात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, काम की आवश्यकता या प्राथमिकता के कारण

कार्यवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसके पास कोई काम हो

कार्या—कृ धा०, भविष्यत्, कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, की जाने वाली

कालम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, समय को

कालः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, समय

कालस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, समय का

काले—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० समय में

कालो—देखिये कालः

काषायवसना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, गेरुए कपड़ों को धारण किये हुये

काष्ठैश्—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, लकड़ियों से

किम्—सर्वनाम, क्या, कौन

किंशुकाशोकवकुल-पुन्नागैर्—द्वन्द्व समास, किंशुक (पलाश), अशोक, वकुल (मौलश्री) और पुन्नाग वृक्षों के द्वारा

किञ्चन—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कोई कोई वस्तु, कोई स्थान

किञ्चित्—सर्वनाम, नपुं०, कुछ वस्तु, कोई वस्तु

किञ्चिद्—देखिये किञ्चित्

किञ्चिन्—देखिये किञ्चित्

कितव—सम्बोधन, एक व०, पु०, रे दुष्ट ! रे धूर्त

किन्नु—अव्यय, कितना कम, क्या

किमर्थम्—अव्यय, किस कारण से, क्यों

कीर्तयिष्यन्ति—कृत् धा०, चुरादिगण, भविष्यत्, प्रथम पु०, बहु० व०, वे गायेंगे, बखान करेंगे

कीर्तिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, यश को

कीर्तिस् (कीर्तिर्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, यश

कुञ्जरद्वीपिमहिषशार्दूलर्क्षमृगान्—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, बहु० व०, पु०, हाथी, तेंदुए, भैंसें, चीते, रीछ और हरिणों को

कुण्डलीकृतम्—द्वितीययान्त, एक व०, पु०, जिसने कुण्डली बना ली है।

कुण्डिनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कुण्डिन, भीम की राजधानी जो बरार (विदर्भ) में है

कुण्डिने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, देखिये कुण्डिनम्

कुतस्—अव्यय, कहाँ से, क्यों

कुतूहलात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, उत्सुकता से, आनन्द से, आश्चर्य से

कुपिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, क्रुद्ध

कुपितो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्रुद्ध

कुमारांश् (कुमारान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, लड़कों को

कुम्भाः(स्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, घड़े

कुररीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, एक पक्षी विशेष (टिटिहरी) को

कुरु—पु०, सूर्यवंशीय राजकुमार का नाम, जो पश्मिोत्तर भारत और देहली के समीप के प्रदेश का राजा था। वह धृतराष्ट्र और पाण्डु दोनों का पूर्वज था। कुरू से सम्बद्ध (कौरव) उपाधि इसीलिये प्रायः दोनों के साथ प्रयुक्त होती है, तथापि कौरवों से ही इस का विशेष सम्बन्ध है

कुरु—कृ धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू कर, तू बना

कुरुते—कृ धा०, वर्तमान, आत्म०, प्रथम पु०, एक व०, वह करता है

कुरुनन्दन—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे कुरु के पुत्र

कुरुष्व—कृ धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू कर

कुर्यात्—कृ धा०, विधि लिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे करना चाहिये

कुर्याद्—देखिये कुर्यात्

कुर्याम्—कृ धा०, विधि लिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे करना चाहिये

कुर्वन्तीम्—कृ० धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, करती हुयी को

कुर्वन्तु—कृ धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, बहु व०, वे करें

कुलम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वंश, कुल

कुलघ्नानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, वंश के नाशकों का

कुलतत्त्ववित्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वंश की दशा को जानने वाला

कुलधर्माः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, वंश के नियम

कुलधर्माश्—देखिये कुलधर्माः

कुलशीलसमन्वितान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०,(अच्छे) वंश और स्वभाववाले

कुलशीलोपसम्पन्न—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे सद्वंश और शील से युक्त

कुलस्त्रिय (कुलस्त्रियस्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, (सद्) वंश की स्त्रियाँ

कुलस्त्रियः—देखिये कुलस्त्रिय

कुलस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, वंश का

कुलीनश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सद्वंश में उत्पन्न

कुशलम्—प्रथमान्त, व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कुशल,

कुशलस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अच्छा, स्वस्थ

कुशलिनो (कुशलिनस्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, अच्छे, स्वस्थ, सम्पन्न

कुशलिनौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, अच्छे, स्वस्थ

कुशली—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्वस्थ, अच्छा

कुशलैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, चतुरों से, निपुणों से

कुशलो—देखिये कुशलस्

कूर्मग्राहझषाकीर्णाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कछुये, मकर और मछलियों से भरी हुयी को

कृच्छ्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, कष्ट, दुःख

कृच्छ्रे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, कष्ट ये, दुःख में

कृच्छ्रेण—तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, कष्ट से, दुःख से

कृतम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, किया हुआ, समाप्त

कृतकृत्यो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका उद्देश्य पूर्ण हो चुका है

कृतनिश्चयः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसने निश्चय कर लिया है

कृतवती—कृ धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसने कर लिया है

कृतवन्तो—देखिये कृतवती, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, उन्होंने किया

कृतवान्—देखिये कृतवती, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उसने किया

कृतवांस्—देखिये कृतवान्

कृतशौचम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जिसने शौच कर लिया है, जो पवित्र हो चुका है

कृता—कृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, किया गया

कृताञ्जलिम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, हाथ जोड़ कर

कृताञ्जलिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, हाथ जोड़कर

कृताञ्जलिर् (कृताञ्जलिस्)—बहु समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, हाथ जोड़-कर

कृतानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, किये हुये, देखिये कृता

कृतार्थः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका उद्देश्य पूरा हो चुका है

कृतार्थो—देखिये कृतार्थः

कृतास्त्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जो अस्त्रों में कुशल है

कैश्चिन्—देखिये कैश्चित्

कृताहाराम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जो खाना बना या खा चुकी है

कृते—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, कर लेने पर, कर लिये जाने पर

कृते—अव्यय, के लिये, कारण से

कृत्यकाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, वह स्त्री जो विनाश का मुख्य कारण है, विनाशिनी

कृत्वा—कृ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, करके, बनाकर

कृत्स्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, व नपुं० सम्पूर्ण को, पूरे को

कृत्स्नाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूरी को

कृथा (अकृथाः)—कृ धा०, आत्म०, परोक्ष भूत, म० पु०, एक व०, किया

कृपणा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखिनी, दीन, नीच

कृपणाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखिनी को, नीच को

कृपया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, दया से

कृपाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दया को

कृश—दुबला

कृशा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुबली-पतली

कृशाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुबली-पतली को

कृशान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, दुबले-पतलों को

कृष्णवर्त्मना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, अग्नि से

कृष्णसाराभ्याम्—पञ्चम्यन्त, द्वि व०, नपुं०, जिसका मध्यभाग काला हो, काले धब्बों वाले से

के—प्रथमान्त, बहु व०, कौन

केचन—प्रथमान्त, बहु व०, कुछ

केचिच् (केचिद्, केचित्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, कुछ

केनचिद्—तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, किसी के द्वारा

केतुभूतम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, झण्डे के रूप में प्रयुक्त होने वाले को

कोशिनि—सम्बोधन, एक व०, हे केशिनि

कोशिनी—प्रथमान्त, एक व० स्त्री०, केशिनी एक दासी का नाम

केशिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, केशिनी को

केशिन्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, केशिनी के द्वारा

कैतवेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, जुए से, छल से

कैश्चिद् (कैश्चित्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, किन्हीं के द्वारा

कोट्यो—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, करोड़, सौ लाख
कोपः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्रोध
कोपम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, क्रोध को
कोपसमन्वितः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्रोध से युक्त
कोशलाधिपः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कोशल का राजा
कोशलान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, कोशल देश अथवा उसमें रहने वालों को
कोशलायाम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, कोशल में
कौन्तेय—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे कुन्ती के पुत्र
कौमारम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बचपन, युवावस्था
कौरव—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे कुरु के वंशज
कौरव्य—सम्बोधन एक व०, पु०, हे कुरु के वंशज
कौशलेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, कोशल के राजा से
क्रतुभिः (क्रतुभिर्,क्रतुभिस्, क्रतुभिश्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, यज्ञों से
क्रतुमुख्यानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, मुख्य यज्ञों का
क्रतूनाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, यज्ञों का
क्रन्दमानाम्—क्रन्द् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी को, विलाप करती हुयी को, चिल्लाती हुयी को
क्रमप्राप्तम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, क्रम अथवा पैतृक सम्पत्ति के रूप से प्राप्त
क्रमेण—तृतीयान्त, क्रम से
क्रियताम्—कृ धा०, कर्मवाच्य, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह करे,
क्रुध्यन्ति—क्रुध् धा०, दिवादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे क्रोध करते हैं
क्रोद्धुम्—क्रुध् धा०, दिवादिगण, तुमुन् प्रत्यय, क्रोध करने के लिये
क्रोधसमन्वितः—तत्पु०, समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्रोध से भरा हुआ
क्रोधाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, क्रोध से
क्रोशति—क्रुश् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह चिल्लाता है
क्रौञ्चकुररैश्—द्वन्द्व समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, क्रौञ्च और कुरर (टिटिहरी) पक्षियों से
क्लमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, थकावट
क्लान्तो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, थका हुआ
क्लिश्यते—क्लिश् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह दुःखित किया जाता है, उसे कष्ट दिया जाता है

क्लीववत् (क्लीववत्)—नपुंसक या दुर्बल मनुष्य की तरह

क्लैव्यम्—द्वितीयान्त एक व०, नपुं०, दुर्बलता

क्व—अव्यय, कहाँ

क्वचित्—अव्यय, कहीं

क्वचिद्—देखिये क्वचित्

क्वापि—अव्यय, कहीं भी

क्षणे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, एक क्षण में

क्षणेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, क्षण से

क्षत्रियस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, क्षत्रिय का

क्षत्रियाः (क्षत्रियास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, क्षत्रिय लोग

क्षन्तव्यम्—क्षम् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, क्षमा किये जाने योग्य

क्षन्तुम्—क्षम् धा०, तुमुन् प्रत्यय, क्षमा करने के लिये

क्षमन्तु—क्षम् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे क्षमा कर, उन्हें क्षमा करने दो

क्षमयामास—क्षम् धा० (प्रेरणार्थक), परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने क्षमा कर दिया था

क्षमान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, योग्यों को

क्षमावान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्षमाशील

क्षयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नाश, अन्त

क्षितिपतिश् (क्षितिपतिस्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पृथ्वी का स्वामी, राजा

क्षितिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी को

क्षितौ—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी पर

क्षिप्रम्—अव्यय, शीघ्र

क्षुत्तृषान्वितम्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भूख और प्यास से दुःखित

क्षुत्परीतस्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, भूख से पीड़ित, भूखा

क्षुत्पिपासपरिश्रान्तौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, भूख और प्यास से थके हुये

क्षुत्पिपासापरीताङ्गी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भूख और प्यास से दुःखित अङ्गोवाली

क्षुत्पिपासार्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भूख और प्यास से दुखित

क्षुद्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, तुच्छ, छोटा

क्षुद्रः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नीच
क्षुद्रेण—तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, नीच से
क्षुधया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, भूख से
क्षुधा—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, भूख
क्षुधान्वितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भूखा
क्षुधार्तस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, भूख से दुःखी का, भूखे का
क्षुधाविष्टः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, भूखा
क्षुधितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भुखे को
क्षुधितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भूखा
क्षेमतरम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अधिक प्रसन्न, अधिक अच्छा
क्षेमी—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुरक्षित, अच्छा, सम्पन्न

ख

खगमांस् (खगमान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, (आकाश में जाने वाले) पक्षियों को
खगा (खगास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पक्षिगण
खड्गम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, तलवार
खड्गेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, तलवार से
खम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आकाश को
खलु—अव्यय, वास्तव में
खादय—खाद् धा०, चुरादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू खा, तू निगल
खे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, आकाश में
खेचरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पक्षी
ख्यातः—ख्या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रसिद्ध, पुकारा हुआ

ग

गच्छ—गम् धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जा
गच्छति—गम् धा० भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जाता है
गच्छन्तम्—गम् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जाते हुये को
गच्छन्ति—गम् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे जाते हैं
गच्छन्ती—गम् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जाती हुयी
गच्छन्तीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जाती हुयी को

गच्छामो—गम् धा०, वर्तमान, उ० पु०, बहु व०, हम जाते हैं

गच्छावो (गच्छावस्)—गम् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उ० पु०, द्वि व०, हम (दो) जाते हैं

गच्छेत्—गम् धा०, भ्वादिगण, विधि लिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे जाना चाहिये

गच्छेद्—देखिये गच्छेत्

गच्छेयम्—गम् धा०, भ्वादिगण, उ० पु०, एक व०, मुझे जाना चाहिये

गजान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, हाथियों को

गजेन्द्रविक्रमो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, हाथियों के राजा (बड़े हाथी) के समान बलशाली

गजैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, हाथियों से

गणयन्—गण् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, गिनता हुआ

गणयस्व—गण् धा०, चुरादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू गिने

गणयित्वा—गण् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, गिन कर

गणान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, समूहों को,

गणितः—गण् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, गिना हुआ

गणिते—गण् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, गिने जाने पर

गत—गम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, गया हुआ

गतः (गतस्)—देखिये गत

गतक्लमा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसकी थकावट दूर हो गयी है

गतचेतनः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बेहोश, चेतनाहीन

गतचेतसम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बेहोश को

गतज्वरो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका ज्वर उतर गया है

गतवान्—गम् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, चला गया है

गतसङ्कल्पा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसका निश्चय या विचार समाप्त हो गया है

गतसत्त्वा (गतसत्त्वास्)—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जिनकी शक्ति समाप्त हो चुकी है

गतसौहृदा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जिसकी मित्रता समाप्त हो चुकी है

गताः—गम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, गये हुये

गतासून्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जिनके प्राण निकल गये हैं, मरे हुओं को
गतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चाल, दशा
गते—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, चले जाने पर
गतेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, चले जाने पर
गतो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, गया हुआ
गतौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, गये हुये
गत्वा—गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जाकर
गन्तव्यम्—गम् धा०, भविष्यत्, कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जाने के योग्य
गन्ता—गम् धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह जायेगा
गन्तासि—गम् धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू जायेगा
गन्तुम्—गम् धा०, तुमुन् प्रत्यय, जाने के लिये
गन्धर्वो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देवताओं की गाने वाली एक जाति। ये मनुष्यो के कर्मों को देखने वाले हैं और संख्या में ६ करोड़ हैं
गमः (अगमः)—गम् धा०, परोक्ष भूत, म० पु०, एक व०, यह प्रायः मा या मास्म के साथ प्रयुक्त होता है, तब इसका तात्पर्य होता है मत जाओ
गमने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, जाने पर
गमिष्यन्ति—वे जायेंगे
गमिष्यामि—गम् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं जाऊँगा
गम्भीरम्—अव्यय, गम्भीर
गरीयो—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, भारी, खराब
गरुत्मन्तः (गरुत्मन्तस्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, गरूड़, एक पक्षी
गवाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, स्त्री०, गायों का
गहने—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, गहरा, घना
गात्रवैरूप्यताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शरीर या अङ्गों का दोष
गात्राणि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, शरीर के अङ्ग
गात्रेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, अङ्गों में
गात्रैर् (गात्रैः)—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, अङ्गों से
गाथाभिर् (गाथाभिस्)—तृतीयान्त, बहु व०, स्त्री०, गीतों से
गायति—गै धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह गाता है, दुहराता है

गायमाना (गायमानास्)—गै धा०, भ्वादिगण, आत्म०; वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, गाते हुये

गिरम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, वाणी

गिरः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, वाणी, शब्द

गिरम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, वाणी को

गिरा—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, वाणी से

गिराव् (गिरौ)—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, पर्वत पर

गिरिकूटानि—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, पर्वत की चोटियाँ

गिरिगुहाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पर्वत की गुफा को

गिरिनदीम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पर्वत की नदी को, पहाड़ी नदी को

गिरिराजम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ पर्वत को

गिरिश्रेष्टम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उत्तम पर्वत को

गिरींश् (गिरीन्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पहाड़ों को

गिरेर्—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पर्वत का

गुणवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, गुणी, अच्छा

गुणान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, गुणों को, अच्छाइयों को

गुणांस् (गुणान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, अच्छाइयों को

गुणैः (गुणैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, अच्छाइयों से, गुणों से

गुणैर् (गुणैस्)—देखिये गुणैः

गुप्ताम्—गुप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रक्षा की हुयी को

गुरून्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बड़ों को, सम्मानितों को

गुल्मैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, झाड़ियों से

गूढश्—गुह् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छिपा हुआ

गृहम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, घर

गृहाण—ग्रह् धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू ग्रहण कर, ले

गृहान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, घर, स्त्री

गृहीतनामा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका नाम लिया गया है

गृहीत्वा—ग्रह् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, लेकर, उठाकर

गृहे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, घर में

गृह्णाति—ग्रह् धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह लेता है

गृहणीध्वम्—ग्रह् धा०, क्र्यादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, तुम लो

गेहम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, घर

गोपायन्ति—गुप्, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे रक्षा करते हैं

गोप्ता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रक्षा करने वाला

गोसहस्रेण—तत्पु० समास तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, हजारों गायों से

ग्रसते—ग्रस् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह निगलता है

ग्रस्ताम्—ग्रस् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पकड़ी हुयी को, घिरी हुयी को

ग्रस्यमाना—ग्रस् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पकड़ी हुयी

ग्रस्यमानाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पकड़ी हुयी को

ग्रहा (ग्रहास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नक्षत्र

ग्रहीतुम्—ग्रह् धा०, तुमुन प्रत्यय, पकड़ने के लिये, लेने के लिये

ग्रहीष्यामि—ग्रह् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं लूँगा, पकड़ूँगा

ग्रामम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, गाँव को

ग्रामान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, गाँवों को

ग्रामिपुत्राः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, गाँव वाले के लड़के

ग्रामेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, गाँव से

ग्राम्यगजान्—कर्म० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, गाँव के हाथियों को

ग्राहेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, सर्प से

ग्राहो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सर्प

घ

घातयति—हन् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह मारता है

घोरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भयंकर, भयानक

घोरान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, भयानक

घोरायाम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, भयानक (में)

घोरे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, भयानक (में)

घोषयामास—घुष् धा०, चुरादिगण, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने घोषणा की थी

घोषांस् (घोषान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, झोंपड़ों को
घ्नतो—हन् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मारते हुये को

च

च—अव्यय, और, भी
चक्रवाकोपकूजिताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जो चक्रवाक पक्षी के कूजन से भरी हुयी है
चक्रिरे—कृ धा०, आत्म०, परोक्ष भूत, उन्होंने किया, बनाया
चक्रे—कृ धा०, आत्म०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने बनाया या किया
चक्षमे—क्षम् धा०, आत्म०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने सहन किया
चक्षूंषि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, नेत्रों को
चतुरः—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, चार
चतुरो—देखिये चतुरः
चतुर्थः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चौथा
चतुर्थे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, चौथे में
चतुर्दशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चौदहवाँ
चतुर्दंष्ट्रो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, चार दाँतों वाला
चतुर्विंशतितमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चौबीसवाँ
चत्वार (चत्वारस्)—प्रथमान्त, बहु व०, चार
चन्द्रमाः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चन्द्रमा
चन्द्रलेखा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, चन्द्रमा की कला
चन्द्रलेखाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चन्द्रमा की कला को
चन्द्राभवक्त्रम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चन्द्रमा की आभा के समान मुखवाला
चरति—चर् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह घूमता है, चलता है
चरन्ति (न्)—चर् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे चलते हैं, घूमते हैं
चरन्—चर् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जाता हुआ, घूमता हुआ
चरामः—चर् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उ०पु०, बहु व०, हम इधर उधर घूमते हैं
चरामि—चर् धा०, वर्तमान, उ०पु०, एक व०, मैं घूमता हूँ
चरितम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, काम, चरित

चरितव्रतः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिस प्रतिज्ञा का आचरण किया गया है

चरितानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, काम

चरिष्यति—चर् धा०, भ्वादिगण, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह घूमेगा

चचाल—चल् धा०, परोक्ष भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह चला

चलो (:)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चंचल

चातुर्वर्ण्यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, चार जातियों का

चामीकरप्रख्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सोने की तरह

चारित्रकवचान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सदाचरण (चरित्र) रूपी कवचों को

चारूदर्शने—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दरि

चारूपद्मविशालाक्षीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर कमल के समान बड़े बड़े नेत्रों वाली को

चारूवृत्तपयोधराम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर गोल स्तनों वाली को

चारूसर्वाङ्गशोभन—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे सभी सुन्दर अङ्गोंवाले

चारूहासिनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मधुर मुसकान वाली

चारूहासिनीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मधुर मुसकान वाली को

चारूणि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं० सुन्दर

चिकीर्षन्ती—कृ धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, काम करने की इच्छा वाली

चिकीर्षमाणस्—कृ धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, करने के इच्छा वाला

चिकीर्षसि—कृ धा०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू करने की इच्छा करता है

चिकीर्षितम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जिसे करने की इच्छा की गई है

चित्तप्रमाथिनी—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, हृदय को मथ डालने वाली

चित्राः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, विचित्र प्रकार की

चिन्तयध्वम्—चिन्त् धा०, चुरादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम सब सोचो

चिन्तयन्—चिन्त् धा०, चुरादिगण, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सोचता हुआ

चिन्तयन्ती—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सोचती हुयी

चिन्तयन्त्याः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, सोचती हुयी

चिन्तयामास—चिन्त् धा०, चुरादिगण, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने सोचा था

चिन्तयित्वा—चिन्त् धा०, चुरादिगण, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सोचकर

चिन्तये—चिन्त् धा०, चुरादिगण, आत्म०, वर्तमान, उ०पु०, एक व०, मैं सोचता हूँ

चिन्तापरा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, चिन्ता में डूबी हुयी

चिन्तापरास्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, चिन्तित

चिन्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चिन्ता को

चिन्तयानस्य—चिन्त् धा०, चुरादिगण, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सोचते हुये (का)

चिन्तितो—चिन्त् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सोचा हुआ

चिन्वन्तो—चि धा०, स्वादिगण, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, ढूँढ़ते हुये

चिरम्—अव्यय, बहुत समय से

चिरविप्रोषिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहुत देर से निकाली हुयी को

चिराद् (चिरात्)—अव्यय, बहुत समय के बाद

चिह्नभूतो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निशान बना हुआ

चेत्—अव्यय, अगर

चेतसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, मन से, हृदय से

चेतो—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मन, हृदय

चेदिपतेर्—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, चेदिराज का। चेदि एक देश का नाम है, शायद यह आधुनिक चन्देल देश है। हरिवंशपुराण में रुक्मिणी के विवाह के सम्बन्ध में इसका वर्णन है

चेदिपुरीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चेदिनगर को

चेदिराजपुरीम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चेदिराज नगर को

चेदिराजस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, चेदिराज का

चेष्टमानम्—चेष्ट् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चेष्टा करते हुये को

चोद्यमानाः (स्)—चुद् धा० (प्रेरणार्थक), कर्मवाच्य, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्रेरित किये जाते हुये

छ

छकुनान् (शकुनान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पक्षियों को
छचीम् (शचीम्)—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, इन्द्र की पत्नी को
छन्देन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, इच्छा से
छन्नः—छद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, ढका हुआ
छपितुम्—(शपितुम्)—शप् धा०, तुमुन् प्रत्यय, शाप देने के लिये
छाया—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, छाया
छायाद्वितीयो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छाया जिसके साथ में है
छित्त्वा—छिद् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, काटकर
छिन्दन्ति—छिद् धा०, रूधादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे काटते हैं
छुचिः (शुचिः)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पवित्र
छूरो (शूरो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीर
छृतम् (शृतम्)—श्रा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पकाया हुआ
छेत्तुम्—छिद् धा०, तुमुन् प्रत्यय, काटने के लिये
छोकम्— (शोकम्)—दुःख
छ्रुत्वा—श्रु धा०, अविभक्तिक कृदन्त, सुनकर
छ्रेयः (श्रेयः)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कल्याणकारी
छ्रेयो—देखिये छ्रेयः

ज

ज—समास के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है पैदा हुआ
जगाद—गद् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने कहा
जगाम—गम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह गया
जग्मतुर्—गम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, द्वि व०, वे (दोनों) गये
जग्मुर्—गम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे गये
जग्राह—ग्रह् धा०, क्र्यादिगण, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पकड़ा
जज्ञुर्—ज्ञा धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने जाना, वे समझे
जटिला—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, उलझे केशों वाली

जनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पुरुष, जनता

जननी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, माता

जनपदम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, देश

जनपदे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, देश में

जनमध्यम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मनुष्यों के बीच में

जनयामास—जन् धा० (प्रेरणार्थक), लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने उत्पन्न किया

जनसंसत्सु—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, स्त्री०, जनसमूह में

जनसंक्षये—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, मनुष्यों के नष्ट होने पर

जनस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, मनुष्य का

जनाः (स्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मनुष्य

जनाधिप—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे मनुष्यों के राजन्

जनाधिपः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा

जनाधिपाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, राजा

जनार्णवः—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मनुष्यों का सागर (समूह)

जनास्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मनुष्य

जनित्र्याः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, माता का

जनेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, मनुष्य से

जनैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों से

जन्म—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, उत्पत्ति, जन्म

जन्मान्तरकृतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दूसरे जन्म में किया गया

जम्ब्वाम्रलोध्रखदिरसालवेत्रसमाकुलम्—द्वन्द्व और तृ० तत्पुरुष समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जामुन, आम, लोध्र (एक वृक्ष जिसकी छाल रंगने के काम में आती है) खैरा, साल और बेत से भरा हुआ

जम्बुद्वीपे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, जम्बुद्वीप में, यह संसार का मध्यस्थ भाग है। पुराणों में भारतवर्ष का यही नाम है

जयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जीत

जयेम—जि धा०, भ्वादिगण, विधि लिङ, उ० पु०, बहु व०, हमें जीतना चाहिए

जयेयुः—जि धा०, भ्वादिगण, विधि लिङ, प्रथम पु०, बहु व०, उन्हें जीतना चाहिये

जरा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बुढ़ापा

जलम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पानी

जलदागमे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बादलों के आ जाने पर

जलमात्रेण—केवल जल से

जवम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वेग

जवनैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, तेज़ी से

जवयुक्तान्—तृ० तत्पुरुष समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, तेज़ , वेगयुक्त

जवेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वेग से

जहासि—हा धा०, जुहोत्यादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू छोड़ता है

जहृषे—हृष् धा०, आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह हर्षित हुआ

जातरूपपरिष्कृतान्—तत्पु० समास, परि पूर्वक कृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सोने से साफ़ किया हुआ

जातसङ्कल्पः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका निश्चय हुआ है

जातस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, पैदा हुये का

जाता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पैदा हुयी

जातिधर्माः—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु० व०, पु०, जाति के नियम

जातिसम्पन्नाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, उत्तम जातिवाली को, उत्तम जन्म से युक्त

जातु—अव्यय, सदैव

जानाति—ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जानता है

जानामि—ज्ञा धा०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं जानता हूँ, समझता हूँ

जानीत—ज्ञा धा०, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम सब जानो

जानीथ—ज्ञा धा०, वर्तमान, म० पु०, बहु० व०, तुम जानते हो

जानीयाम्—ज्ञा धा०, विधि लिङ्, उ० पु०, एक व०, मुझे जानना चाहिये

जानीयाद् (त्)—ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, विधि लिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे जानना चाहिये

जानीषे—ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू जानता है

जानीहि—ज्ञा धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जान

जानुभिस्—तृतीयान्त, बहु० व०, नपुं०, घुटनों से

जायते—जन् धा०, दिवादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह पैदा होता है

जिघांसन्तो—हन् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मारने के इच्छुक

जिज्ञासमानो—ज्ञा धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जानने की इच्छा करता हुआ

जितम्—जि धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं० जीता हुआ

जितस्वर्गाः (स्)—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु० व०, स्त्री०, जिसने स्वर्ग को जीत लिया है

जितेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, जीते हुये से

जितेन्द्रियैर्—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, जिन्होंने इन्द्रियों को जीत लिया है, उनसे

जितो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जीता हुआ

जित्वा—जि धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जीतकर

जिहीर्षवः—हृ धा० से इच्छावाचक विशेषण, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पकड़ने का इच्छुक

जिह्मैर् (स्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, दुष्टों के द्वारा

जीमूतस्वनसन्निभाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बादल की ध्वनि की तरह

जीयते—जि धा०, वर्तमान, कर्म वा०, प्रथम पु०, एक व०, जीता जाता है

जीर्णानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, पुराने

जीव—जीव् धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जीवित रह

जीवति—जीव् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जीवित रहता है

जीवतु—जीव् धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह जीवित रहे

जीवन्तीम्—जीव् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जीवित रहने वाली को

जीवितेन—तृतीयेन, एक व०, नपुं०, जीवन से

जुष्टम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, युक्त

जेता—जि धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह जीवित रहेगा।

ज्ञ

ज्ञ—समासों के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है जानने वाला

ज्ञातमात्रे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, केवल जानने पर

ज्ञातिद्रव्यविनाकृतः—द्वन्द्व और तृ० तत्पुरुष समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जान पहिचान वाले और धन से रहित

ज्ञातिभ्यो—पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु०, जान पहचान वालों से

ज्ञातिषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, जान पहचान वालों में

ज्ञातीन्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जान पहचान वालों को

ज्ञातुम्—ज्ञा धा०, तुमुन् प्रत्यय, जानने के लिये

ज्ञानम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, ज्ञान
ज्ञानस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, ज्ञान का
ज्ञायते—ज्ञा धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जाना जाता है
ज्ञास्यामि—ज्ञा धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं जानूँगा
ज्ञेयः—ज्ञा धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जानने योग्य
ज्ञेयम्—ज्ञा धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जाननें योग्य

झ

झिल्लिकागणनादितम्—तत्पु० समास, नद् (प्रेरणार्थक) भूतकालिक कर्म कृदन्त, झींगुरों के समूहों के शब्दों से भरा हुआ

त

त इमे (ते इमे)—वे ही, वही
तडागम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, तालाब, पोखर
तडागानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, तालाब, पोखर
तत्—सर्वनाम, प्रथमान्त, द्वितीयान्त, प्रथम पु०, एक व०, वह, उसको
ततः प्रभृति—अव्यय, तब से लेकर, उस समय से आगे तक
ततः (स्)—अव्यय, बाद में, तब, तब से
ततस्ततः—अव्यय, तब-तब, आगे
ततो—देखिये ततस्
तत्पापम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं० उस पाप को
ततो (तस्मात्)—अव्यय, इससे, उससे
तत्क्षणात्—अव्यय, उस क्षण ही, उस समय ही
तत्पराया (तत्परायास्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, लगी हुयी, भक्तिपूर्वक लगी हुयी
तत्प्रियम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, उसका प्यारा, उसके प्यारे को
तत्र—अव्यय, वहाँ, उस स्थान में
तत्रस्थौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, वहाँ रहने वाले
तत्त्वम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सत्य, वास्तविक दशा
तत्त्वज्ञ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे वास्तविकता के जानने वाले
तत्त्वेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सत्यता से, वास्तविकता से
तथा—अव्यय, उसी प्रकार, समान ढंग से

तथागतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, ऐसी अवस्था में
तथापि—अव्यय, तब भी, तो भी
तथारूपा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ऐसे रूप वाली
तथाविधः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, इस प्रकार का, ऐसा
तथाविधम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० या अव्यय, इस ढंग से, ऐसा
तथाविधाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, ऐसी स्थिति में
तथैव—अव्यय, ऐसा ही, इसी ढंग से
तथोत्साहम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, ऐसा उत्साह रखनेवाले को
तथ्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सत्यता
तदनन्तरा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, उसके बाद, उसके निकट
तदवस्थाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, उस अवस्था (दशा) को
तदा—अव्यय, तब
तदाकाराम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, ऐसे रूप वाली को, ऐसी आकृति वाली को
तद्दुःखम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वह दुःख, उसके लिये दुःख, उसका दुःख
तद्रूपम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, उसके समान
तद्विद्यश्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उसका ज्ञान रखने वाला
तन् (त्)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, वह
तनयाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पुत्री को
तनयाभ्याम्—तृतीयान्त व पञ्चम्यन्त, द्वि व०, पु०, दो पुत्रों से
तनुमध्यमा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पतली कमर वाली, सुन्दर कटि वाली
तनुमध्याम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, पतली कमर वाली
तन्द्राम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, थकावट, आलस्य
तपः—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, तपस्या
तपसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, तपस्या या भक्ति से
तपसि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, भक्ति में, तपस्या में
तपस्विनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, तपस्या करने वाली, दीन, दुःखिनी, बेचारी
तपोधनाः—प्रथमान्त व सम्बोधन, बहु व०, पु० तपस्या ही जिसका धन है
तपोवनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पवित्र या तस्पया के जंगल को
तपोवृद्धाम्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, तपस्या में ही बूढ़ी होने वाली को
तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उसको

तया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, उसके द्वारा

तयोः— (**तयोर्, तयोस्**)—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, उन (दोनों) का

तरसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, वेग से, रफ़्तार से

तरुश्रेष्ठम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अच्छे वृक्ष को

तर्कयित्वा—तर्क् धा०, चुरादिगण, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सोचकर, आक्षेप करके

तर्कयामास—तर्क् धा०, चुरादिगण, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने अनुमान किया, विचार किया, सन्देह किया

तल्लक्षणम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, उसका लक्षण

तव—षष्ठ्यन्त, एक व०, तेरा

तस्थतुः—स्था धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, द्वि व०, वे (दो) खड़े हुये

तस्थुः—(**तस्थुर, तस्थुस्**)—स्था धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे खड़े हुये

तस्थौ—स्था धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह खड़ा हुआ

तस्माद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, उससे, इसलिये, उस कारण से

तस्मान्— (**तस्मात्**)—देखिये तस्माद्

तस्मिंस्—(**तस्मिन्**)—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, उसमें

तस्मिन्न (**तस्मिन्**)—देखिये तस्मिंस्

तस्मै—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, उसके लिये

तस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, उसका

तस्या— (**स्**)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, उसका

तस्याः— (**तस्याश्**)—देखिये तस्या

ता (**स्**)—प्रथमान्त, द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, वे

ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, उसको

तांस्—(**तान्**)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, उनको

तादृग्—प्रथमान्त, एक व०, नपु०, उसके समान, वैसा

तानि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, उनको

तापसा (**तापसाः, तापसास्**)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, तपस्वी, साधु

तापसाध्युषितम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, साधुओं से बसा हुआ

तापसारण्यम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, तपस्वियों के रहने वाले जंगल को

तापसैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, तपस्वियों से, भक्तों से

तापसैर् (तापसैस्)—देखिये तापसैः

तापसैश्—देखिये तापसैः

ताभिश्— (**ताभिस्**)—तृतीयान्त, बहु व०, स्त्री०, उनके द्वारा

ताव् (तौ)—द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, वे दोनों

तावत्—अव्यय, तब तक

तावन्ति—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, इतने

तिग्मांशुः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सूर्य

तिथौ—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व स्त्री०, तिथि में। प्रत्येक महीना तीस दिनों या तिथियों में बँटा रहता है। मनुस्मृति में इन तिथियों का शुभ और अशुभ फल बताया गया है जैसे—"अमावस्या गुरू को नष्ट करती है, चतुर्दशी सीखने वाले को, अष्ठमी और पूर्णिमा शास्त्रों के स्मरण को नष्ट करती हैं, अतः विद्यार्थी को इन दिनों नहीं पढ़ना चाहिए।"

तिष्ठ—स्था धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू रह, ठहर

तिष्ठताम्—स्था धा०, भ्वादिगण, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, खड़े हुओं का

तिष्ठति—स्था० धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह ठहरता है, खड़ा होता है, रहता है

तिष्ठत्सु—स्था धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, ठहरे हुओं में, रहने पर

तीक्ष्णम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, तेज़

तीव्ररोषसमाविष्टा—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, तीव्र क्रोध से भरी हुयी

तीव्रशोकसमाविष्टा—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त शोक से भरी हुयी

तीव्रशोकार्ता—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, तीव्र दुःख से दुःखित

तु—अव्यय, लेकिन

तुल्यम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, समान

तुल्यताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, समानता

तुल्यशीलवयोयुक्ताम्—तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, समान शील और आयु वाली

तुल्याकृतीन्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, समान रूपवाले को

तुल्याभिजनसंवृताम्—तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, समान वंशवालों से घिरी हुयी को

तुल्यो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, समान
तुष्टिर् (स्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, संतोष, प्रसन्नता
तूर्णम्—अव्यय, शीघ्रता से
तूष्णीम्—अव्यय, शान्ति से, चुपचाप
तृणमुष्टिम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, तृण से भरी हुयी मुट्ठी को
तृणैः—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, तिनकों से, घास से, बाँसों से
तृतीयः (तृतीयो, तृतीयस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, तीसरा
तृप्ता—तृप् धा०, भूतकालिका कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सन्तुष्ट
तृषितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्यासा
ते—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, वे
ते—चतुर्थ्यन्त व षष्ठ्यन्त, एक व०, तेरे लिये, तेरा
तेजसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, प्रकाश से, तेज से, शक्ति से, सुन्दरता से
तेजस्वी—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चमकदार, तेजवान्
तेजोबलसमन्वितान्—तत्पुरुष, द्वितीयान्त, बहु व०, पु० तेज और बल से युक्त
तेजोबलसमायुक्तान्—तत्पुरुष, द्वितीयान्त, बहु व०, पु० तेज और बल से युक्त
तेन—तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, उससे
तेभ्यः (स्)—चतुर्थ्यन्त, बहु व०, उनके लिये
तेषाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, उनका
तेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, उनमें
तैर् (स्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, उनके द्वारा
तोयम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पानी, जल
तोरणेन—तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, तोरण से, महराब से
तोषयामास—तुष् धा० (प्रेरणार्थक), लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने सन्तुष्ट किया, प्रसन्न किया
तौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, वे दोनों
त्यक्तजीवितयोधिनः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्राण छोड़ कर युद्ध करने वाले
त्यक्तवान्—त्यज् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छोड़ दिया है।
त्यक्तश्रियम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसने लक्ष्मी को छोड़ दिया है, उसकी
त्यक्ता—त्यज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, छोड़ी हुयी

त्यक्तुकामस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, छोड़ने का इच्छुक
त्यक्तुम्—त्यज् धा०, तुमुन् प्रत्यय, छोड़ने के लिये
त्यक्त्वा—त्यज् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़ कर
त्यजन्तु—त्यज् धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, बहु व०, वे छोड़ें
त्यजेथाः—त्यज् धा०, आत्म०, विधि लिङ, म० पु०, एक व०, तुझे छोड़ना चाहिये
त्यजेयम्—त्यज् धा०, विधि लिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे छोड़ना चाहिये
त्रयः—प्रथमान्त, बहु व०, तीन
त्रयोदशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, तेरहवाँ
त्रयोविंशतितमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, तेइसवाँ
त्रातुम्—त्रै धा०, तुमुन् प्रत्यय, रक्षा करने के लिये, बचाने के लिये
त्रायध्वम्—त्रै धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, अपने आपको बचाओ
त्राहि—अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू रक्षा कर
त्रिदशेश्वराः—तत्पु० समास, सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे अमरों (देवताओं) के स्वामी
त्रिदिवम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, स्वर्ग को
त्रिरात्रम्—द्विगु समास, तीन रातों तक
त्रीन्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, तीन
त्रैलोक्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, तीनों लोक (आकाश, पृथ्वी और पाताल)
त्रैलोक्यभयकारकः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, तीनों लोकों को भयभीत करने वाला
त्रैलोक्यराज्यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, तीनों लोकों के राज्य को
त्वम्—प्रथमान्त, एक व०, तू
त्वक्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, त्वचा, खाल
त्वच्छापदग्धः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, तेरे शाप से जला हुआ
त्वच्छापाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, तेरे शाप से
त्वत्—सर्वनाम तू, तुम, पञ्चम्यन्त, एक व०, तुम से
त्वत्कृते—अव्यय, तेरे कारण, तेरे लिये
त्वत्तः (स्)—तुझसे
त्वत्तो—देखिये त्वत्तः
त्वत्प्रतीक्षिणी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, तेरी प्रतीक्षा करने वाली
त्वत्सन्निधौ—तत्पु० समास, सप्तम्यन्तः, एक व०, स्त्री०, तेरे समीप

त्वद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, तुझसे

त्वदर्थम्—अव्यय, तेरे लिये

त्वदर्थे—अव्यय, तेरे कारण, तेरे लिये

त्वदीयम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, तेरा

त्वम्—प्रथमान्त, एक व०, तू

त्वया—तृतीयान्त, एक व०, तुझसे

त्वयि—सप्तम्यन्त, एक व०, तुझमें

त्वरते—त्वर् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह शीघ्रता करता है।

त्वरमाणया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, शीघ्रता करने वाली से

त्वरमाणस्—त्वर् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शीघ्रता करता हुआ

त्वरमाणा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शीघ्रता करती हुयी

त्वरमाणो—देखिये त्वरमाणस्

त्वरान्वितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शीघ्रता से युक्त

त्वरिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शीघ्र

त्वरिताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, शीघ्र

त्वरिता (त्वरितस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शीघ्र

त्वर्यमाणो—त्वर् धा०, कर्म वाच्य, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शीघ्रता करता हुआ

त्वा—द्वितीयान्त, एक व०, तुझको

त्वाम्—द्वितीयान्त, एक व०, तुझको

द

द—समास के अन्त में आने पर इसका अर्थ होता है देने वाला,

दंष्ट्रिभ्यः—पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु०, बड़े २ दाँतों वाले पशु से

दक्षाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चतुर, कुशल

दक्षिणापथः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दक्षिण प्रदेश, दक्षिण मार्ग। वास्तव में दक्षिण वह है जो दाहिने हाथ की ओर हो। यहाँ पर दक्षिण पथ से तात्पर्य नर्मदा नदी के दक्षिण ओर के प्रदेश से है। यही दक्षिण शब्द बिगड़ कर अब 'डेकन' हो गया है

दक्षिणापथम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दक्षिण प्रदेश को

दक्षिणावताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, भेंट रखने वाले, ब्राह्मणों के लिये भेंट या दक्षिणा से युक्त

दक्षिणे—अव्यय, दक्षिण की ओर

दण्डधारणम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, सज़ा, दण्ड

दण्डभयात्—तत्पु०, समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, दण्ड के भय से

दण्डिभिः—तृतीयान्त, बहु० व०, पु०, द्वारपालों से, रक्षकों से

दण्ड्यस्—दण्ड् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दण्ड के योग्य

दत्तम्—दा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दिया हुआ

दत्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दी हुयी

दत्त्वा—दा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देकर

ददर्श—दृश् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने देखा

ददुः—दा धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने दिया

ददृशुः (र, स्)—दृश् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने देखा

ददृशे—दृश् धा० आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने देखा

ददौ—दा धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने दिया

दधुः—धा धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने लगाया, रक्खा, धारण किया

दन्तिभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, हाथियों से

दन्तैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, दाँतों से

दमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दमयन्ती के भाई दम को

दमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शान्ति, अपने को रोकना

दमनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दमयन्ती के भाई दमन को

दमनः—**(दमनो, दमनस्)**—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दमन

दमयन्ति—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे दमयन्ती

दमयन्ती—भीम की पुत्री और नल की स्त्री

दमयन्तीम्—दमयन्ती को

दमयन्तीसकाशे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, दमयन्ती के निकट

दमयन्तीसखीगणात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, दमयन्ती की सहेलियों के समूह से

दमयन्त्यर्थम्—दमयन्ती के लिये

दमयन्त्यर्थे—दमयन्ती के लिये, दमयन्ती की खोज में

दमयन्त्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती से

दमयन्त्या (दमयन्त्यास्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, दमयन्ती का
दमयन्त्याम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती में
दमयन्त्यै—चतुर्थ्यन्त, एक व०, दमयन्ती के लिये
दमशौचसमन्वितैः—तत्पु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, दम और पवित्रता से युक्त रहने वालों से
दयाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दया
दयितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्यारे को
दयितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्यारा
दयितान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, प्यारों को
दरीश्—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री, गुफाओं को
दर्शनलालसाम्—तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, देखने की इच्छा को
दर्शय—दृश् धा० (प्रेरणार्थक), अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू दिखा
दर्शयितासि—दृश् धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू दिखायेगा
दर्शयित्वा—दृश् धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, दिखलाकर
दश—द्वितीयान्त, बहु व०, दश को
दशभिर्—तृतीयान्त, बहु व०, दश से
दशमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दसवाँ
दशमे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, दसवें में
दशार्णाधिपतेः—तत्पु० समास, दशार्ण देश के राजा का
दशार्णेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, दशार्ण देश में। यह प्रदेश मध्यभारत में विन्ध्याचल के दक्षिण पूर्व की ओर है। मेघदूत (श्लोक २४) में इसका वर्णन है और वहाँ विदिशा को इसकी राजधानी बतलाया गया है। विल्सन के अनुसार यह प्रदेश आधुनिक छत्तीसगढ़ से मिलता जुलता है
दष्टस्य—दंश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, काटे हुये का
दहति—दह् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जलाता है
दह्यते—दह् धा० दिवादिगण, कर्म वाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह जलाया जाता है
दह्यन्तम्—दह् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जलते हुये को
दह्यमानः—दह् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान कृदन्त, जलाया हुआ
दह्यमानस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, जलाये हुये का
दह्यमाना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जलायी हुयी
दह्यमानाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जलायी हुयी को

दह्यमानो—देखिये दह्यमानः

दाक्ष्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, चतुरता

दाता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दानी, देने वाला

दानम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दान

दान्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दमयन्ती के भाई दान्त को

दारकौ—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, दो बच्चे

दारुणः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भयानक, कठोर

दारूणतरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अधिक भयानक, अधिक कठोर

दारूणाकृतिः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, भयानक या कठोर आकृति वाला

दारूणाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भयानक

दारूणे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, भयानक

दारूणः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भयानक

दारैः—(स्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, स्त्रियों से

दावम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वन की आग

दावविवर्जितम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वन की आग से छोड़ा हुआ

दासत्वम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दासता

दासीनाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, स्त्री०, दासियों का

दास्यामि—दा धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मै दूँगा

दिग्वाससम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नंगा (आकाश या दिशायें ही जिसके वस्त्र हैं)

दिदृक्षवः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देखने की इच्छा वाले

दिदृक्षुर्—दृश् धा० से इच्छावाचक विशेषण, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखने के इच्छुक

दिवम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्वर्ग

दिवा—अव्यय, दिन में

दिवानिशम्—द्वन्द्व समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं० या अव्यय, दिन रात

दिवारात्रम्—अव्यय, दिन रात

दिवि—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, आकाश में, स्वर्ग में

दिविस्पृग्भिर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, आकाश को छूने वालों के द्वारा

दिवौकसः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जिसका निवास स्वर्ग में है, देवता

दिव्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सुन्दर

दिव्यकाननदर्शनम्—बहु० समास, सुन्दर वन के समान दिखाई देने वाले को

दिव्यदर्शनविश्रुत—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे अपनी सुन्दरता के कारण प्रसिद्ध

दिव्यमानुषम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, देवता या मनुष्य

दिव्याश्—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, स्वर्गीय, दैवी

दिशः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, दिशा का

दिशः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, दिशाओं को

दिशम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दिशा का

दिशो—देखिये दिशः

दिष्टम्—दिश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दिखाया हुआ

दिष्ट्या—अव्यय, भाग्य से

दीन—दुःखी, गरीब

दीनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःखी को

दीनमानसः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दीन मनवाला

दीना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी

दीना (दीनास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, दुःखी

दीनाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, दुःखी

दीप्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चमकती हुयी

दीर्घकालम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बहुत समय

दीर्घबाहुर् (स्)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, लम्बी भुजाओं वाला

दीर्घस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, लम्बे का

दीर्यते—दृ धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह फाड़ा जाता है

दीव्य—दिव् धा०, दिवादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जुआ खेल

दीव्यतः—दिव् धा०, दिवादिगण, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, खेलते हुये का

दीव्यमानम्—दिव् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, खेलता हुआ

दीव्याव—दिव् धा०, दिवादिगण, अनुज्ञा, उ०पु०, द्विव०, हम दोनों खेलें

दुःखम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दुःख

दुःखम्—द्वितीयान्त, एक व० (क्रिया विशेषण के रूप में प्रयुक्त), दुःख से

दुःखतरम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अधिक दुःखी
दुःखपरीतात्मा— बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसकी आत्मा दुःख से दुःखी हो
दुःखशोकसमन्विता—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःख और शोक से घिरी हुयी
दुःखस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, दुःख का
दुःखात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, दुःख से
दुःखाद्—देखिये दुःखात्
दुःखार्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी
दुःखार्ता (दुःखार्तास्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, दुःखी
दुःखार्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी को
दुःखार्तो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःखी
दुःखितः—दुख् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःखित
दुःखितया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी से
दुःखितस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, दुःखी का
दुःखिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी
दुःखिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी को
दुःखितो (दुःखितस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःख
दुःखेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, दुःख से
दुःसहो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जो कठिनता से सहा जा सके
दुर्गम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जहाँ कठिनता से जाया जा सके
दुर्धर्षाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जहाँ कठिनता से पहुँचा जा सके
दुष्करम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जिसका करना कठिन हो
दुष्कृतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बुरा काम
दुष्टम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुष्ट
दुष्टभावेन—कर्मधारय समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, दुष्ट भाव से
दुष्टासु—सप्तम्यन्त, बहु व०, स्त्री०, दुष्टाओं में
दुहितरम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पुत्री को
दुहिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पुत्री
दुहितुः (स्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, पुत्री का
दुहितृ—स्त्री०, पुत्री
दुहित्रर्थे—अव्यय, पुत्री के लिये

दूतः (दूतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सम्वाद ले जाने वाला
दूताश् (स्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सम्वाद ले जाने वाले
दूती—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सम्वाद ले जाने वाली
दूतीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सम्वाद ले जाने वाली को
दूतो (दूतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सम्वाद ले जाने वाला
दूरे—अव्यय, दूर, फ़ासले पर
दृढम्—अव्यय, अधिक, बहुत
दृढव्रतः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कठोर प्रतिज्ञा वाला
दृश्यन्—दृश् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, देखने योग्य
दृश्यते—दृश् धा०, वर्तमान, कर्म, प्रथम पु०, एक व०, वह देखा जाता है
दृश्यन्ते—दृश् धा०, वर्तमान, कर्म, प्रथम पु०, बहु व०, वे देखे जाते हैं
दृश्यसे—दृश् धा०, कर्म वाच्य, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू देखा जाता है
दृश्यैः—तृतीयान्त, बहु व०, दृश्यों से
दृष्टम्—दृश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, देखा हुआ
दृष्टः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखा हुआ
दृष्टपूर्वः (दृष्टपूर्वस्)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पहले देखा हुआ
दृष्टपूर्वा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पहले देखी हुयी
दृष्टवती—दृश् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देखा है
दृष्टवन्तो—भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देखा है
दृष्टवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखा है
दृष्टस्—दृश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखा हुआ
दृष्टा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देखी हुयी
दृष्टास्—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, देखी हुयी
दृष्टिर् (स्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, नज़र, दृष्टि
दृष्टो—देखिये दृष्टस्
दृष्ट्वा—दृश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देखकर
देदीप्यमानाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चमकती हुयी को
देयम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दी जाने वाली
देयो—दा धा०, भविष्यत्, कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दिया जाने वाला
देवः—पु०, प्रथमान्त, एक व०, देवता
देव—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे देव

देवम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, देवता को

देवगन्धर्वमानुषोरगराक्षसान्—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, देवता, गन्धर्व, मनुष्य, सर्प और राक्षसों को

देवता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देवी

देवताः—प्रथमान्त, द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, देवियाँ, देवता

देवतानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, देवताओं का

देवताभ्यर्चनपरो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देवताओं के पूजन में लगा हुआ

देवतायतनानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, देवताओं के घर

देवदुन्दुभयो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देवताओं की दुन्दुभियाँ (खंझड़ियाँ)

देवदूतम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु० देवताओं के दूत को

देवने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, खेल में, जुए में

देवनेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, खेल से, जुए से

देवपतिर् (स्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देवताओं का स्वामी (इन्द्र)

देवराजसमद्युतिः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देवराज (इन्द्र) के समान कान्ति वाला

देवराजस्य—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, देवताओं के राजा (इन्द्र) का

देवराड्( )—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देवताओं के राजा (इन्द्र)

देवरूपिणीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, देवताओं के समान स्वरूपवाली को

देवलिङ्गानि—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, देवताओं के चिह्नों को

देवसन्निधौ—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, देवताओं के समीप में

देवा (देवाः, देवास्, देवाश्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देवता

देवान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, देवताओं को

देवानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, देवताओं का

देवि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे देवी, हे रानी

देवी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देवी , रानी

देवीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, देवी को, रानी को

देवेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, देवता से

देवेभ्यः (देवेभ्यो, देवेभ्यस्)—चतुर्थ्यन्त, बहु व०, पु०, देवताओं के लिये
देवेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, देवताओं में
देवैः (र्, स्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, देवताओं से
देशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, देश को
देशकालज्ञा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, (उचित) देश और अवसर को जानने वाली
देशात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, देश से
देशातिथयो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देश के मेहमान
देशो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देश
देहम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, शरीर
देहस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, शरीर का
देहा (देहास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, शरीर
देहि—दा धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू दे
देहिनो (देहिनस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, शरीर का
देही—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आत्मा
देहे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, शरीर में
दैत्यदानवमर्दनम्—इन्द्र देवता का विशेषण, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दैत्य और दानव को मारने वाले को
दैवतपरः—प्रथमान्त, एक व०, देवताओं को पूजने वाला
दैवदोषाद्—तत्पु०, समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, भाग्य के दोष से
दैवमानुषम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, देवता व मनुष्य
दैवात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, भाग्य से
दैवेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, भाग्य से
दोला—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, झूला
दोषम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दोष, अपराध
दोषतः (स्)—अव्यय, अपराध से, दोष से
दोषश् (दोषो, दोषस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दोष, अपराध
दोषेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, अपराध से, दोष से
दोषैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, दोषों या अपराधों से
दौत्येन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सम्वाद से, दूत के कर्म से
द्युतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरता, चमक
द्यूतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, खेल, जुआ

द्यूते—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, खेल में, जुए में
द्रक्ष्यसि—दृश् धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू देखेगा
द्रक्ष्यसे—दृश् धा०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू देखेगा
द्रक्ष्यामि—दृश् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं देखूँगा
द्रविणम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, धन
द्रविणेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, धन से
द्रव्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, धन
द्रष्टा—दृश् धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह देखेगा या देखेगी
द्रष्टुम्—दृश् धा०, तुमुन् प्रत्यय, देखने के लिये
द्रुतम्—अव्यय, तेज़ी से
द्रुमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पेड़, वृक्ष
द्रुमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वृक्ष को, पेड़ को
द्रोणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, द्रोणाचार्य को
द्वयोर्—षष्ठ्यन्त व सप्तम्यन्त, दो में, दो का
द्वादशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बारहवाँ
द्वादशे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बारहवें में
द्वापरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, युग का तृतीय युग
द्वापरेण—तृतीयान्त, एक व०, देखिये द्वापरम्
द्वारि—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, द्वार पर, दरवाज़े पर
द्वाविंशतितमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बाईसवाँ
द्विजः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ब्राह्मण
द्विजनिषेविताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पक्षियों से बसा हुआ
द्विजसत्तमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ब्राह्मणों में श्रेष्ठ
द्विजसत्तमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ द्विज को
द्विजसत्तमाः—सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों
द्विजात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, ब्राह्मण से
द्विजातयः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, ब्राह्मण
द्विजातिजनवत्सलः—तत्पु० समास, ब्राह्मण जाति का मित्र या प्यारा
द्विजान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पक्षियों को, ब्राह्मणों को
द्विजोत्तमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ ब्राह्मण को
द्विजोत्तमाः—सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे श्रेष्ठ ब्राह्मणों
द्वितीयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दूसरे को

द्वितीयम्—अव्यय, दूसरी बार
द्वितीयो (द्वितीयः, द्वितीयस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दूसरा
द्विधा—अव्यय, दो भागों में, दो प्रकार से, दो दिशाओं से
द्विपदाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों का
द्विषताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, शत्रुओं का
द्वे—द्वितीयान्त, द्वि व०, स्त्री०, दो
द्वैरथेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, रथ में बैठकर द्वन्द्व युद्ध
द्वौ—प्रथमान्त, द्वि व०, दो

ध

धनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, धन, रुपया-पैसा
धनानि—द्वितीयान्त, बहु वचन, नपुं०, धन, रुपया-पैसा
धनुः (धनुस्)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, धनुष
धनेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, धन से, रुपये पैसे से
धन्विनाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु० धनुर्धारियों का
धरणीतले—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, पृथ्वी पर
धरिष्यन्ति—धृ धा०, भ्वादिगण, भविष्यत्, प्रथम पु०, बहु व०, वे रहेंगे, वे जारी रखेंगे
धर्मः (स्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कर्तव्य, धर्म
धर्मम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, गुण, न्याय
धर्मज्ञ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे धर्म को जानने वाले
धर्मज्ञः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धर्म को जानने वाला
धर्मज्ञस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, धर्म को जानने वाले का
धर्मज्ञाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, धर्म को जानने वाले
धर्मज्ञो—देखिये धर्मज्ञः
धर्मतः (स्)—अव्यय, न्याय से, धर्म से, उचित रूप से
धर्मभृताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, धर्म को धारण करने वालों का
धर्मवत्सल—सम्बोधन, हे धर्म से प्रेम करने वाले
धर्मविच् (धर्मवित्, धर्मविद्)—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे धर्म को जानने वाले
धर्मात्मा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धर्मप्राण, जिसकी आत्मा पवित्र है
धर्मात्मानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, धर्मात्मा को
धर्मान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, कर्तव्यों को

धर्मार्थदर्शिनः—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, धर्म और धन को देखने वालों का, धर्म के उद्देश्य को समझने वालों का

धर्मे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, नियम में, कर्तव्य में

धर्मेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, धर्म से

धर्मेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, धर्मों में

धर्म्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, धर्ममय, कर्तव्ययुक्त

धर्म्याद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, धर्ममय से

धर्षयितुम्—धृष् धा०, तुमुन् प्रत्यय, अपमानित करना, (कर्म वाच्य में) अपमानित किया जाना

धर्षिताः (धर्षितास्)—धृष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, कष्ट पाये हुये, हारे हुये

धात्रा—तृतीयान्त, एक व०, पु०, ब्रह्मा से

धात्रीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, धाय को

धारयति—धृ धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह सहायता करता है, धारण करता है

धारयतीम्—धृ धा०, चुरादिगण, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सहायता करती हुयी, धारण करती हुयी

धारयन्ति—धृ धा०, चुरादिगण, वर्तमान प्रथम पु०, बहु व०, वे सहायता करते हैं, धारण करते हैं

धारयामास—धृ धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने धारण किया था

धारयितुम्—धृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, धारण करने के लिये, सहायता करने के लिये

धावत—धाव् धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम लोग दौड़ो

धावति—धाव् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह दौड़ता है, दौड़ती है

धावन्तो—धाव् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, दौड़ते हुये

धास्यामि—धा धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं रखूँगा, बनाऊँगा

धीमतः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, बुद्धिमान् का

धीमान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बुद्धिमान्

धीरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बुद्धिमान् को, धैर्यवान् को, गम्भीर को

धीरस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बुद्धिमान्, धीर व्यक्ति

धूमजालेन—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, धुयें के जाल से

धूयमानो—धू धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पंखा किया जाता हुआ, हिलाया जाता हुआ

धृतम्—पकड़ा हुआ

धृतिर्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, धैर्य

धैर्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, धैर्य

ध्यात्वा—ध्यै धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सोचकर, ध्यान करके

ध्यानतत्पराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, ध्यान में लगी हुयी को

ध्यानपरा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ध्यान में लगी हुयी

ध्रियते—धृ धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह धारण किया जाता है, लगाया जाता है

ध्रियसे—धृ धा० (कर्मवाच्य), वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू रहता है, जीवित रहता है

ध्रुवम्—प्रथमान्त या द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, निश्चय

ध्रुवम्—अव्यय, निश्चय रूप से

ध्रुवाणि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, लगातार, निश्चय

ध्रुवो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निश्चय, अटल

न

न—अव्यय, नहीं, न तो

नः—द्वितीयान्त व चतुर्थ्यन्त, बहु व०, हमको, हमारे लिये

नक्तम्—अव्यय, रात को

नक्षत्राणि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, तारे

नगः—पु०, वृक्ष, पर्वत

नगरम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, नगर को

नगरसम्मितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, एक नगर के बराबर

नगराभ्यासे—नगर के निकट

नगरीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नगरी को

नगरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, नगर में

नगाः (नगास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, वृक्ष

नगाग्राद्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, पर्वत की चोटी से

नगान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, वृक्षों को

नग्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नंगे को

नचिराद्—अव्यय, तनिक देर में, शीघ्र ही
नदतो—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, शोर करते हुये का
नदी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री० नदी
नदीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नदी को
नदीः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, नदियों को
नद्धान्—नह् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, लगे हुओं को
नद्याः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, नदी का
ननु—अव्यय, क्या
नन्दने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, स्वर्ग में, इन्द्र के सुन्दर वन में
नभसि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, आकाश में
नभस्तलात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, आकाश से
नमस्—अभिवादन
नमस्कारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अभिवादन, प्रणाम
नमस्कृत्य—नमस्कार करके
नरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मनुष्य
नरकाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, नरक के लिये
नरके—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, नरक में
नरवरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ पुरुष
नरवरोत्तमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ पुरुषों में उत्तम
नरवाहिना—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, मनुष्यों द्वारा ले जाने वाले से
नरवीरस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, वीर का, वीर पुरुष का
नरव्याघ्र—कर्म धा० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे मनुष्यों में चीते के समान (साहसी)
नरशार्दूलो—कर्म धा० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सिंहवत् पराक्रमी मनुष्य
नरश्रेष्ठ—तत्पु० समास, हे मनुष्यों में श्रेष्ठ
नरस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, मनुष्य का
नराधिप—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे मनुष्यों के स्वामी
नराधिपः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा
नराधिपम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा को
नराधिपैः—तत्पु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, राजाओं से

नराणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों का
नरेन्द्रस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा का
नरेभ्यश्—पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों से
नरेश्वर—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्
नरेश्वरे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, राजा में
नरेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों में
नरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पुरुष
नरोत्तम—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे श्रेष्ठ पुरुष
नल—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजा नल
नलः (नलश्, नलस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नल
नलम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नल को
नलदर्शनकाङ्क्षया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, नल को देखने की इच्छा से
नलनामानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नल नामवाले को
नलपत्नी—तत्पु० समास, नल की स्त्री
नलमार्गणे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, नल की खोज में
नलवाजिषु—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, नल के घोड़ों में
नलशङ्कया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, नल के सन्देह से
नलशासनात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, नल की आज्ञा से
नलसन्निधौ—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, नल के समीप
नलसारथिः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, नल का रथवान्
नलसिद्धस्य—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, नल के लिए सिद्ध
नलामात्येषु—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, नल के मंत्रियों में
नलाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, नल के लिये
नलाश्वास्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नल के घोड़े
नले—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, नल में
नलो—देखिये नलः
नलोपाख्यानम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, नल की कथा
नलोपाख्याने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, नल की कथा में
नवमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नवाँ
नवाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नई को
नवानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, नये

नश्यते—नश् धा०, दिवादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह नष्ट होता है, खोता है

नष्टम्—नश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, खोया हुआ, नष्ट हुआ

नष्टरूपो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका रूप नष्ट हो गया है

नष्टसंज्ञा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बेहोश, जिसकी चेतनता नष्ट हो गयी हो

नष्ठा (नष्ठास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नष्ट हुये

नष्टात्मा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसकी आत्मा नष्ट हो गयी है

नष्ठे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, नष्ट हुये में

नागः—पु०, साँप, आधा देवता जिसका मुँह मनुष्य का और पूँछ साँप की होती है। इन जीवों का जन्म कश्यप की स्त्री कद्रू से हुआ है, पाताल में निवास करते हैं। उनमें से मुख्य सर्प है शेष या अनन्त और वासुकि। 'नाग' शब्द का अर्थ हाथी भी होता है

नागम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, साँप को

नागः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, साँप

नागराजम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, साँपों के राजा को

नागराजस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, साँपों के राजा का

नागराजानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, साँपों के राजा को

नागानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, हाथियों का

नागे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, साँप में

नागेन्द्रो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, साँपों का राजा

नागैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, साँपों से

नाथ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे स्वामी

नादम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शब्द को

नादयन्—नद् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शब्द कराते हुये

नादान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, शब्दों को

नानाधातुशतैर्—तत्पुरुष, तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, विभिन्न प्रकार की सैकड़ों धातुओं से

नानाधातुसमाकीर्णम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, विभिन्न प्रकार की धातुओं से भरा हुआ

नानापक्षिगणाकीर्णम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, विभिन्न प्रकार

के पक्षियों से भरा हुआ

नानापक्षिनिषेवितम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, विभिन्न प्रकार के पक्षियों से बसा हुआ

नानामृगगणैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, विभिन्न प्रकार के हरिणों (पशुओं) से

नाम—अव्यय, नाम से, निश्चय ही, वास्तव में

नामतः (स्)—अव्यय, नाम से

नामसु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, नामों में

नाम्यताम्—नम् धा० (प्रेरणार्थक), कर्मवाच्य, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह झुके

नारदः (नारदस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ब्रह्मा के द्वारा उत्पन्न किये हुये दस ऋषियों (प्रजापतियों) में थे। इन्हें ब्रह्मा का पुत्र माना जाता है। उन्हें कृष्ण का मित्र, प्रसिद्ध न्याय का जाननेवाला और वीणा का आविष्कारक बतलाया गया है। हिन्दू नाटकों में नारद प्रायः देवताओं के दूत का काम करते दिखलाये जाते हैं। वह सदैव अच्छी राय देते हैं। इन्हें कुछ लोग देवर्षि और कुछ ब्रह्मर्षि मानते हैं

नारदस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, नारद का

नारी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री

नारीणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, स्त्री०, स्त्रियों का

नारीरत्नम्—कर्म धा० समास, द्वितीयान्त, एक व०, श्रेष्ठ स्त्री

नारीवाक्यानि—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, स्त्रियों के वचन

नाशयिष्यति—नश् धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह नष्ट कर देगा

नाशयिष्यामि—नश् धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं नष्ट कर दूँगा

नाहुषः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नहुष का वंशज

नि—उपसर्ग, में, पर, ऊपर

निःशब्दस्तिमिते—बहु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, शब्द और गतिहीन हो जाने पर

निःश्वस्य—निर् पूर्वक श्वस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निःश्वास लेकर या लेते हुये

निःश्वासपरमा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, निरन्तर निःश्वास छोड़ने वाली

निःसंशयम्—अव्यय, निश्चय, निस्संदेह

निःसृतः—निर् पूर्वक सृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, निकला हुआ

निकुञ्जान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, कुञ्जों को, झाड़ियों को

निकृतस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दुःखी, पीड़ित

निकृता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देखिये निकृतस्

निकृतिप्रज्ञैर् (स्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बेईमानों के द्वारा, दुष्ट बुद्धिवालों से

निकृतो—देखिये निकृतस्

निक्षिप्य—नि पूर्वक क्षिप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सुरक्षित स्थान में रखकर, सौंपकर

निक्षेपो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धरोहर, रेहन

निगृहणीष्व—नि पूर्वक ग्रह् धा०, क्र्यादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू पकड़, तू रोक

निगृह्य—नि पूर्वक ग्रह् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रोक करके

नितम्बांश् (नितम्बान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पर्वत का उभरा हुआ भाग, चट्टान

नित्यम्—अव्यय, लगातार, निरन्तर, सदैव

नित्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्थिर

नित्यः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्थिर, शाश्वत्, सदैव रहने वाला

नित्यजातम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, निरन्तर जन्म लेने वाले को

नित्यशो (नित्यशस्)—अव्यय, सदैव, निरन्तर

नित्यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सदा रहने वाले का

निद्रया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, नींद से

निद्रान्धा (स्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नींद से अन्धे

निधनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मृत्यु

निन्दन्तस्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, निन्दा करते हुये

निपतिते—नि पूर्वक पत् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, गिरने पर

निपेतुर् (स्)—नि पूर्वक पत् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे नीचे उतरे

निबद्धाम्—नि पूर्वक बन्ध् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक वचन, स्त्री०, बंधी हुयी को, रोकी हुयी को

निबोध—नि पूर्वक बुध् धा०, भ्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जाने, तू समझे

निभृतो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, छिपा हुआ, गुप्त

निमित्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, चिह्न, कारण, शकुन

निमित्तानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, शकुन, किसी भावी कार्य का चिह्न

निमेषेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, एक क्षण से, पलक मारने से

नियतम्—अव्यय, अवश्य, निश्चय, निरन्तर

नियतैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, अपने आपसे रुके हुओं के द्वारा

नियोक्ष्ये—नि पूर्वक युज् धा०, आत्म०, भविष्यत्, उ०पु०, एक व०, मैं लगाऊँगा

नियोगाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, आदेश, आज्ञा से

निर्—उपसर्ग, बिना, बाहर, रहित

निरनुक्रोशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निर्दय, दयाहीन

निरपायो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बिना हानि के, हानि अथवा दोष से हीन

निरुद्विग्नमनाः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, निश्चल (अक्षुब्ध) मन वाली

निर्जने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, एकान्त में, सुनसान में

निर्जितः—निर् पूर्वक जि धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, हराया हुआ

निर्जितश्—देखिये निर्जित

निर्जितारिगणः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसने शत्रुओं के समूह को जीत लिया है

निर्जितो (निर्जितस्)—देखिये निर्जितः

निर्झरांश् (निर्झरान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, झरनों को

निर्नाथता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, बिना स्वामी के होना

निर्मलस्वादुसलिलम्—बहु० समास द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, स्वच्छ और स्वादिष्ट जल वाला

निर्विचेष्टम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बिना प्रयास के

निर्विशेषाकृतीन्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु० व०, पु० समान रूप वालों को

निर्वृता (निर्वृतास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्रसन्न, शान्त

निर्वृतिः—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आनन्द, प्रसन्नता

निवत्स्यति—नि पूर्वक वस् धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह रहेगा, निवास करेगा

निवर्तितुम्—नि पूर्वक वृत् धा०, तुमुन् प्रत्यय, लौटने के लिए

निवस्य—नि पूर्वक् वस् धा०, अदादि गण, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पहन कर

निवारणे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, बचाव में

निवारयितुम्—नि पूर्वक वृत् धा० (प्रेरणार्थक), तुमुन् प्रत्यय, रोकने के लिये

निवासयेः—नि पूर्वक वस् धा० (प्रेरणार्थक), विधि लिङ, म० पु०, एक व०, तुझे पहनना चाहिये, तू पहन

निवृत्तः—नि पूर्वक वृत् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, समाप्त, छुटकारा पाकर

निवृत्तहृदयः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शान्त हृदय

निवेदय—नि पूर्वक विद् (प्रेरणार्थक), अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू बता, तू सूचित कर

निवेद्यताम्—नि पूर्वक विद् धा० (प्रेरणार्थक), कर्मवाच्य, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, यह बताया जाय, घोषित किया जाये

निवेशनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, घर को, निवास स्थान को

निवेशने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, घर में, निवास स्थान में

निवेशाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, प्रवेश करने के लिए

निश्—देखिये निर्

निशम्य—नि पूर्वक शम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सुनकर, देखकर

निशश्वास—नि पूर्वक श्वस् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने आह भरी, निश्वास छोड़ा

निशाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रात को

निशाकरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चन्द्रमा

निशाकाले—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, रात के समय में

निशायाम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री, रात में

निशास्—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, रातों को

निश्चक्राम—निर् पूर्वक क्रम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह निकल गया

निश्चयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, निश्चय, संकल्प, विचार

निश्चितम्—अव्यय, अवश्य ही, निश्चय ही

निश्चिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, निश्चित

निश्चित्य—निर् पूर्वक चि धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निश्चय करके

निषधः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निषध भारत के दक्षिणपूर्वीय भाग का प्रदेश जहाँ नल राज्य करते थे

निषधवंशस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, निषध वंश का

निषधाधिपः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, निषध देश का राजा (नल)

निषधाधिपतिर् (**निषधाधिपतिस्**)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, निषध देश का राजा (नल)

निषधाधिपतेश् (**निषधाधिपतेर्, निषधाधिपतेस्**)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, निषध देश के राजा का

निषधाधिपे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, निषध देश के राजा में

निषधान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, निषध (लोगों) को

निषधेश्वर—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे निषध देश के राजा

निषधेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, निषध (लोगों) में

निषसाद—नि पूर्वक सद् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह बैठ गया, डूब गया

निहतोष्ट्राश्—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जिन्होंने ऊँटों को मार डाला है

निहत्य—नि पूर्वक हन् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, मारकर

नीतौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, ले गये हुये

नीलाभ्रसंवृताम्—तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नीले आकाश से छिपी हुयी

नु—अव्यय, क्या

नूनम्—अव्यय, निश्चय ही

नृपः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा

नृपम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा को

नृपतिः (**नृपतिस्, नृपतिश्**)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा

नृपतिशासनात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, राजा की आज्ञा से

नृपते—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्

नृपतेः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा का

नृपश्रेष्ठो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजाओं में श्रेष्ठ

नृपसुता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की कन्या

नृपस्नुषाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व० स्त्री०, राजा की बहू को

नृपाः (**स्**)—प्रथमान्त, बहु व०, पु० राजा

नृपात्मजा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की पुत्री

नृपैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, राजाओं के द्वारा

नृशंस—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे दुष्ट, कठोर हृदय
नृशंसम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दुष्ट को
नणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों का
नेता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नेता
नेता—नी धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह ले जायेगा
नेत्राभ्याम्—तृतीयान्त, पञ्चम्यन्त, द्वि व०, नपुं०, दोनों आँखों से
नेदुर्—नद् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने शब्द किया
नैकदुःखदाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहुत दुःखों को देने वाली को
नैकवर्णैर्—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बहुत रंगों से
नैकान् (नैकांश्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बहुतों को
नैकाश्—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री, बहुत, अनेकों
नैपुण्येषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, निपुणता के कामों में, निपुणता में
नैराश्यात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, निराशा से
नैषध—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजा नल
नैषधम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा नल को
नैषधस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा नल का
नैषधाः—प्रथमान्त, बहु व०, निषध देश के मनुष्य
नैषधाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, नल से
नैषधानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, निषध के मनुष्यों का
नैषधान्वेषणे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, राजा नल की खोज में
नैषधाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, नल के लिए
नैषधे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, नल में
नैषधेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, नल से
नो—द्वितीयान्त, चतुर्थ्यन्त व षष्ठ्यन्त, बहु व०, हमको , हमारे लिये, हमारा
नौ—हम दोनों को, हम दोनों के लिये, हम दोनों का
न्यग्रोधैश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बरगद (वट) के वृक्षों से
न्ययच्छत्—नि पूर्वक यम् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने रोका
न्यवर्तत—नि पूर्वक वृत् धा०, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, रह रहा था, घिरा हुआ था
न्यवसत् (द्)—नि पूर्वक वस् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह रहता था

न्यवेदयद् (त्)—नि पूर्वक विद् धा० (प्रेरणार्थक), अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने बताया, निवेदित किया

न्याय्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, उचित, न्यायपूर्ण

प

पक्षिन्—पु०, पक्षी (पंख रखने वाला)

पक्षिणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पक्षी को

पञ्च—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, पाँच

पञ्चदशः—प्रथमान्त, एक व०, पन्द्रहवाँ

पञ्चमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पाँचवाँ

पञ्चविंशतितमः—प्रथमान्त, एक व०, पच्चीसवाँ

पञ्चशीर्षा—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पाँच सिरों वाला

पञ्चाशद्भिर्—तृतीयान्त, पचास (से)

पञ्चोनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, पाँच कम

पटम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वस्त्र को

पटस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वस्त्र

पटे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वस्त्र में

पणः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बाज़ी

पणकालम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जुआ खेलने का समय

पणावः—पण् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उ० पु०, द्वि व०, हम दोनों खेलते हैं

पणावहे—पण् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, द्वि व०, हम दो बाज़ी लगाते हैं

पणितो—पण् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बाज़ी लगा हुआ

पणेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, बाज़ी से, जुए से

पण्डिताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, विद्वान्

पतताम्—पत् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, गिरने वालों का

पतताम्—पत् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह गिरे

पतति—पत् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह गिरता है

पतत्रिभिर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पक्षियों से

पतन्ति—पत् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे गिरते हैं

पताकाध्वजमालिनम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, ध्वज और पताका जिसकी माला है

पतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पति को

पतिता—पत् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, गिरी हुयी

पतिता (पतितास्)—देखिये पतिता, गिरे हुये

पतितानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, गिरे हुये

पतित्वे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, स्वामित्व में, विवाहित अवस्था में

पतिदर्शनलालसाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पति को देखने की इच्छा को

पतिना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, पति से

पतिर् (स्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पति

पतिराज्यविनाकृता—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्वामी के राज्य से हीन

पतिलालसा—तत्पुरुष, स्त्री०, पति की इच्छा

पतिव्रता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पति में भक्ति रखने वाली स्त्री

पतिव्रताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पतिव्रता को

पतिशोकाकुलाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, पति के शोक से व्याकुल

पत्नी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री

पत्राणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, नपुं०, पत्तों का

पत्राहारैस्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पत्रों को खाकर रहने वालों से

पथि—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, रास्ते में

पदम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पद, क़दम

पदातिजनसङ्कुलाः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पैदल चलने वालों से भरे हुए

पदातिभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पैदल (चलने वालों) से

पदाद् (त्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, पद से

पदानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, पैरों को

पदे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, पैर में

पद्भ्याम्—तृतीयान्त, द्वि व०, पु०, दोनों पैरों से

पद्मकामलकप्लक्षकदम्बोडुम्बरावृतम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०,

नपुं०, कमल, आंवला, अञ्जीर, कदम्ब, और गूलर से भरा हुआ

पद्मनिभेक्षणम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कमल तुल्य नेत्रों वाले को

पद्मनिभेक्षणा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कमल तुल्य नेत्रों वाली

पद्मसङ्काशो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कमल के समान

पद्मसौगन्धिकम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं० कमल की सुगन्धि को

पद्मिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कमलिनी को

पद्मिन्याः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, कमलिनी का

पन्थाः, पन्था (पन्थास्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रास्ता, सड़क

पन्थानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रास्ते को, सड़क को

पन्थानो—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सड़कें, रास्ते

पन्नगः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सर्प

पपात—पत् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह गिर पड़ा

पप्रच्छ—प्रच्छ् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पूछा

पप्रच्छुस्—प्रच्छ् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने पूछा

पयोष्णी—स्त्री०, पयोष्णी एक नदी है जो विन्ध्याचल से निकलती है। ब्रह्माण्ड पुराण में इसका वर्णन है

परः—पु०, बड़ा, अधिक, मुख्य, ऊँचा

परम्—देखिये परः

परकृतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दूसरे के द्वारा किया हुआ

परन्तप—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शत्रुओं को दुःख देने वाले

परन्तपः—देखिये परन्तप

परपुरञ्जयः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दूसरों के नगरों को जीतनेवाला

परमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बड़ा, ऊँचा

परमदारुणा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बहुत कठोर

परमदुःखितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त दुःखी

परममन्युमान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त क्रोधी, अत्यन्त पीड़ित

परमया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, अधिक (से)

परमशोभनाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त शोभा वाली को

परमशोभनम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त शोभा वाले को

परमसंहृष्टा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त प्रसन्न

परमा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, श्रेष्ठ, बड़ी, ऊँची

परमाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बड़ी को, ऊँची को

परमाङ्गनाः—कर्मधा० समास, प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, अत्यन्त सुन्दरी स्त्रियाँ

परया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, अधिक अथवा बड़ी से

परवीरहा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शत्रुओं के वीरों को मारने वाला

परव्यूहविनाशनम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शत्रुओं के व्यूह (मोर्चे) को नष्ट करने वाले

परस्परतः—अव्यय, आपस में

परस्परसुखैषिणौ—तत्पु० समास, प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, एक दूसरे के सुख की इच्छा करने वाले

परस्परहतास्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु० एक दूसरे से मारे हुये

परस्वम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दूसरे के धन को

परा—उपसर्ग, पीछे, ऊपर, पीछे की ओर

पराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सबसे ऊँची

पराजयः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, हार

पराजितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जीते हुये

परार्थम्—दूसरे के लिए

परार्थे—दूसरों के लिये

परासुर् (स्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मरा हुआ

परि—उपसर्ग, सम्पूर्ण रूप से, निकट, चारों ओर

परिगम्य—परि पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, चारों ओर जाकर

परिग्लानस्य—परि पूर्वक ग्लै धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, थके हुये का

परिघोपमाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, लोहे के गदा के समान

परिचर्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सेवा, आदर

परिचारकैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सेवकों के द्वारा

परिचारिकाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सेविका को

परिच्छिद्य—परि पूर्वक छिद् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, काट करके

परिच्युतो—परि पूर्वक च्यु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, नष्ट, खोया हुआ

परिणिष्ठा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पूर्ण निपुणता, अभ्यास

परित्यक्ता—परि पूर्वक त्यज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, छोड़ी हुयी

परित्यागो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, छोड़ना

परिदह्यते—परि पूर्वक दह् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, जलाया जाता है

परिदेवना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विलाप, रोना

परिदेवितम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शिकायत, रोना

परिधानेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, नीचे के वस्त्र से

परिधावन्न् (परिधावन्)—परि पूर्वक धाव् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दौड़ता हुआ, इधर उधर घूमता हुआ

परिध्वंसम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःख, नाश

परिपप्रच्छ—परि पूर्वक प्रच्छ् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पूछा

परिपालयन्—परि पूर्वक पाल् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, रक्षा करते हुये

परिप्रेप्सोः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पाने की इच्छा करने वाले का

परिप्लुप्ताः—परि पूर्वक प्लु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अभिभूत, हराया हुआ

परिभ्रष्ठसुखेन—बहु० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, जिसका सुख नष्ट हो गया है उससे

परिवत्सरान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, वर्षों को

परिवारिता—परि पूर्वक वृ धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, स्त्री०, घेरा हुआ

परिवृता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, घिरी हुई

परिशङ्कितुम्—परि पूर्वक शङ्क् धा०, तुमुन् प्रत्यय, सन्देह करने के लिये

परिशुष्यति—परि पूर्वक शुष् धा०, दिवादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह सूखता है

परिश्रान्ते—श्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, थके हुये में

परिषोडशैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पूरे सोलह से

परिष्वज्य—परि पूर्वक स्वञ्ज् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आलिङ्गन करके, चिपटा करके

परिसङ्घुष्टान्—परि और सम् पूर्वक घुष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सब ओर शब्द करते हुओं को

परिस्रवन् (परिस्रवत्)—परि पूर्वक स्रु धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, नीचे बहते हुये

परिहासो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, हँसी, उपहास

परिहीनस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, हीन, दीन

परीक्षाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, परीक्षा को

परीक्षितो—परि पूर्वक ईक्ष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, परीक्षा किया हुआ, जाँचा हुआ

परीता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्रभावित

परेण—तृतीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, बड़े से, ऊँचे से, दूसरे से

परेण—अव्यय, दूर, ऊपर

परो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सबसे बड़ा या ऊँचा

परोक्षम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अदृश्य, बहुत दूर, दृष्टि से परे

परोक्षता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अदृश्यता, न दिखाई देना

पर्णादम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पर्णाद नामक ब्राह्मण विशेष को

पर्णादवचनम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पर्णाद नामक ब्राह्मण के वचन को

पर्णादस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पर्णाद नामक ब्राह्मण का

पर्णादो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पर्णाद नामक ब्राह्मण

पर्णानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, पत्ते

पर्णाहारैस्—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पत्ते खाकर रहने वालों के द्वारा

पर्यचरत्—परि पूर्वक चर् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह चारों ओर गया

पर्यचिन्तयत्—परि पूर्वक चिन्त् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने विचार किया

पर्यदेवयत्—परि पूर्वक देव् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने विलाप किया, वह रोया

पर्यधावत—परि पूर्वक धाव् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह इधर उधर दौड़ा

पर्यपतन्—परि पूर्वक पत् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, बहु व०, वे गिरे या नीचे को झुके

पर्यपृच्छत्—परि पूर्वक प्रच्छ् धा०, तुदादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने पूछा

पर्याप्तः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, काफ़ी

पर्युपासच् (पर्युपासत्)—परि और उप पूर्वक आस् धा०, अदादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने सेवा की, उपासना की

पर्युषितम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सुस्त, लाभहीन, नीचा, चौड़ा

पर्वतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पर्वत को

पर्वतराड् (पर्वतराट्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पर्वतों का राजा

पर्वतश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पर्वत्, दस ऋषियों में एक जो नारद के मित्र और प्रतिद्वन्द्वी थे।

पर्वतश्रेष्ठ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे श्रेष्ठ पर्वत

पर्वतस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पर्वत का

पर्वतांश् (पर्वतान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पर्वतों को

पल्लवापीडितम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नये नये पत्तों से लदा हुआ

पल्वलानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, तालाबों को

पवनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वायु, समीरण

पश्चाद्—अव्यय, बाद में

पश्चिमाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पश्चिमी, सन्ध्या

पश्यतस्—दृश् धा०, वर्तमान कर्तृ कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, देखते हुये का

पश्यताम्—दृश् धा०, वर्तमान कर्तृ कृदन्त, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, देखते हुओं का

पश्यति—दृश् धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह देखता है

पश्यन्ति—दृश् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे देखते हैं

पश्यामस्—दृश् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उ० पु०, बहु व०, हम सब देखते हैं

पश्यामि—दृश् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं देखता हूँ, अनुभव करता हूँ

पश्येथास्—दृश् धा०, आत्म०, विधि लिङ, म० पु०, एक व०, तुझे देखना चाहिये

पश्येम—दृश् धा०, भ्वादिगण, विधि लिङ, उ० पु०, बहु व०, हम सबको देखना चाहिये

पश्येयम्—दृश् धा०, भ्वादिगण, विधि लिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे देखना चाहिये

पांशुगुण्ठितः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, धूल से ढका हुआ

पांशुध्वस्तशिरोरुहा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, धूल से सने हुये बालों वाली

पांशुभिश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, धूल से

पाटयामास—पट् धा०, (प्रेरणार्थक), लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, चिपका दिया

पाणिम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, हाथ को

पाणिभ्याम्—तृतीयान्त, द्वि व०, पु०, दोनों हाथों से

पाण्डुवर्णा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पीले रंगवाली

पातकम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पाप, अपराध

पादधावनम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पैरों का धोना

पादयोः—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, पु०, दोनों पैरों का

पादरजसा—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, पैरों की धूलि से

पादाव् (पादौ)—द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, दोनों पैर

पानीयार्थम्—पानी के लिये

पापम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पाप, अपराध

पापः (पापो, पापस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पापी, दुष्ट

पापकृतम्—कर्मधा० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दुष्कर्म, बुरा काम

पापबुद्धिना—बहु० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, पाप बुद्धि से

पापमतिः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पाप बुद्धिवाला

पापाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुष्टा, पापिनी

पापाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, पाप से

पारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उलटी ओर, दूसरा किनारा, सिरा

परिषदः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, परिषद् का सदस्य, सभासद

पार्थ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे अर्जुन (पार्थ अर्जुन का एक नाम है, उनका जन्म पृथा से हुआ था)

पार्थिवः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा

पार्थिवम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा को

पार्थिवनन्दिनी—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की पुत्री

पार्थिवर्षभ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे श्रेष्ठ राजन्

पार्थिवश्रेष्ठः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजाओं में श्रेष्ठ

पार्थिवसुताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की पुत्री को

पार्थिवाः (पार्थिवाश् पार्थिवास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, राजा

पार्थिवात्मजाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की लड़की को

पार्थिवानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, राजाओं का

पार्थिवेन्द्रेषु—कर्मधा० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, मुख्य राजाओं में

पावकः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आग

पाशवम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, पशुओं से सम्बन्ध रखने वाला

पार्श्वोपपार्श्वयोः—द्वन्द्व समास, सप्तम्यन्त, द्वि व०, पु०, अगल बगल का

पितरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पिता को

पितरः (पितरो, पितरस्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पिता

पिता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पिता

पितामहाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बाबा

पितामहान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बाबा

पितुः (पितर्, पितुस्)—पञ्चम्यन्त व षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पिता से, पिता का

पितॄन्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पितरों को

पित्रा—तृतीयान्त, एक व०, पु०, पिता से

पिप्लुम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, तिल को

पिप्लुना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, तिल से

पिप्लुप्रच्छादनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, तिल को ढके हुये

पिप्लुर् (पिप्लुस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, तिल

पिशाची—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पिशाचिनी

पिशाचोरगराक्षसान्—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पिशाच, साँप और राक्षसों को। पिशाच एक प्रकार की दुरात्मा है, जिसका वर्णन मनु ने कई स्थालों पर किया है। उनका वर्गीकरण राक्षसों और यक्षों के साथ किया गया है। ये लोग मांस और दूषित अन्न खाते हैं।

पीडा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःख, दर्द

पीड्यमानः (पीड्यमानस्)—पीड् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, पु०, दुःखी होकर, पीड़ित होते हुये

पीनश्रोणिपयोधराम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसके नितम्ब और स्तन स्थूल हैं उसको

पीना (पीनास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, स्थूल, मोटे

पुण्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पुण्य को, पवित्रता को

पुण्यकृत्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पवित्रता से काम करना

पुण्यजला—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पवित्र जल वाली

पुण्यश्लोकः (पुण्यश्लोकस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नल का एक नाम। इस नाम का अर्थ है कि गीतों से जो पवित्र किया गया है। युधिष्ठिर आदि अन्य राजाओं के लिये भी इस विशेषण का प्रयोग हुआ है

पुण्यश्लोकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नल को

पुण्यश्लोकदिदृक्षया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, नल को देखने की इच्छा से

पुण्यश्लोकपराङ्मुखान्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, नल से विमुख रहने वालों को

पुण्यश्लोकस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, नल का

पुण्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पवित्र, शुद्धा को

पुण्याहवाचने—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, पवित्र दिन की घोषणा होने पर

पुण्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, पवित्र या पुण्य में

पुत्रः—पु०, पुत्र

पुत्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पुत्र को

पुत्रनिवेशने—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, पुत्र के निवासस्थान में

पुत्रयोः—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, पु०, दो पुत्रों का

पुत्रवत्—अव्यय, पुत्र के समान

पुत्रस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पुत्र का

पुत्रान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पुत्रों को

पुत्रास्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पुत्र

पुत्रिणीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पुत्र को जन्म देने वाली को

पुत्रौ—द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, दो पुत्र

पुनः (पुनश्, पुनर्)—अव्यय, फिर

पुनः पुनः (पुनर् पुनर्)—अव्यय, बार बार

पुनरागमनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, फिर आना

पुनर्लाभान् (पुनर्लाभात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, फिर लाभ होने से

पुमांसम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मनुष्य को

पुमान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मनुष्य

पुरम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, नगर को

पुरराष्ट्राणि—द्वन्द्व समास, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, नगर और राष्ट्र

पुरवासिनः—तत्पुरुष, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नगरवासी
पुरा—अव्यय, पहले, प्राचीनकाल में
पुराणि—द्वितीयान्त, बहु०, नपुं०, नगरों को
पुराणो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्राचीन
पुरातनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पुराने को
पुराद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, नगर से
पुरीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नगरी को
पुरुषम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पुरुष को
पुरुषः (पुरुषो, पुरुषस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पुरुष
पुरुषर्षभ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे श्रेष्ठ पुरुष
पुरुषर्षभम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ पुरुष को
पुरुषव्याघ्र—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे श्रेष्ठ पुरुष
पुरुषव्याघ्रस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ पुरुष
पुरुषव्याघ्रे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ पुरुष में
पुरुषव्याघ्रैर्—कर्म धा०, समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, श्रेष्ठ पुरुषों से
पुरुषशार्दूलम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मनुष्यों में श्रेष्ठ
पुरुषाः (पुरुषास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पुरुष
पुरुषान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों को
पुरुषैर् (पुरुषैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों से
पुरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, नगर में
पुरोक्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पहले कही गयी
पुरोगमाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आगे चलने वाले
पुरोत्तमम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, उत्तम नगर को
पुलिनद्वीपशोभिताम्—द्वन्द्व और बहुव्रीहि, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जो तटवर्ती द्वीपों से शोभित हो रही है
पुष्करम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पुष्कर को, यह एक राजा था जो नल का भाई था
पुष्करस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पुष्कर का
पुष्कलम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अधिक
पुष्पभङ्गः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, फूलों की झालर
पुष्पवृष्टिः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, फूलों की वर्षा। हिन्दू महाकाव्यों में सौभाग्यवान् व्यक्तियों पर पुष्पवर्षा का प्रायः वर्णन मिलता है।

रघुवंश २।६० में दिलीप ने जैसे ही गऊ के लिये मरना स्वीकार किया वैसे ही उन पर पुष्पवर्षा हुयी। सीता की पवित्रता भी इसी प्रकार सूचित की गयी थी

पुष्पाणि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, फूल

पुष्पितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, खिले हुये को

पूजया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूजा से

पूजयामास—पूज् धा०, चुरादिगण, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पूजा की

पूजयित्वा—पूज् धा०, चुरादिगण, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आदर या पूजा करके

पूजयिष्यति—पूज् धा०, चुरादिगण, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह पूजा या आदर करेगा

पूजा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पूजा, आदर

पूजाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूजा को

पूजार्हाव् (पूजार्हौ)—द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, पूजा के योग्य

पूजितः (पूजितो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सम्मानित

पूजिताः—पूज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सम्मानित

पूरयन्तो—पृ धा०, चुरादिगण, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, भरते हुये

पूरयन्न् (पूरयन्)—पृ धा०, चुरादिगण, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, भरता हुआ

पूर्णचन्द्रनिभाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूर्ण चन्द्रमा के समान

पूर्णचन्द्रनिभाननाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूर्ण चन्द्रमा के समान मुख वाली को

पूर्णचन्द्रप्रभाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूर्ण चन्द्रमा के समान कान्तिवाली को

पूर्णाः (पूर्णास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, भरे हुये, पूर्ण

पूर्णेन्दुवदनो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पूर्ण चन्द्रमा के समान मुख-वाला

पूर्वम्—अव्यय, पहले

पूर्वदृष्टस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पहले देखा हुआ

पृच्छन्त्या (पृच्छन्त्यास्)—प्रच्छ् धा०, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त एक व०, स्त्री०, पूछती हुयी का

पृच्छामि—प्रच्छ् धा०, तुदादिगण, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं पूछता हूँ

पृच्छेथाः—प्रच्छ् धा०, तुदादिगण, आत्म०, विधि लिङ्, म० पु०, तुझे पूछना चाहिए

पृच्छ्यमाना—प्रच्छ् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पूछती हुई

पृथिवी—स्त्री०, भूमि

पृथिवीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी को

पृथिवीक्षितः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, राजा

पृथिवीपतिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पृथ्वी का स्वामी

पृथिवीपतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा को

पृथिवीपते—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्

पृथिवीपालः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पृथ्वी का पालन करने वाला, राजा

पृथिवीपालाः (पृथिवीपालास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पृथ्वी का पालन करने वाले

पृथिव्याम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी पर

पृथुचार्वञ्चितेक्षणः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसके नेत्र बड़े सुन्दर और कुटिल हैं

पृथुप्रोथान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जिसके नथुने बड़े हैं उनको

पृथुलोचन—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, बड़े नेत्रों वाला

पृथुश्रीर् (स्)—बहु० समास, जिसके पास बहुत धन है

पृष्टः—प्रच्छ् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पूछा हुआ

पृष्ट्वा—प्रच्छ् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पूछ कर

पृष्ठतो (पृष्ठतस्)—अव्यय, पीछे, पीछे से

पौर्णमासीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूर्णिमा के दिन

पौत्राः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पोते, पुत्र के पुत्र

पौत्रान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, पोतों को

पौरजनाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नागरिक

पौरजनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, नागरिक

पौरजानपदाश्—द्वन्द्व समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नगर के निवासी

पौराः (पौरास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नगरवासी

पौराणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, नगरवासियों का

पौरान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, नगरवासियों को

प्र—उपसर्ग, पहले, आगे, पर, ऊपर

प्रकल्पितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रखा हुआ, लगा हुआ

प्रकारैर् (स्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, ढंगों से

प्रकाशताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चमक को

प्रकुरुष्व—प्र पूर्वक कृ धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू लौट, तू कर

प्रकृतयः (प्रकृतयो, प्रकृतयस्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, मन्त्री और नागरिक, प्रजायें

प्रकृष्टम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, खींचे हुये को, बढ़े हुये को

प्रकोपाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, क्रोध से

प्रक्षालनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, धोना

प्रक्षालनार्थाय—धोने के लिए

प्रक्षाल्य—प्र पूर्वक क्षल् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, धोकर

प्रक्ष्यामि—प्रच्छ् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं पूछूँगा

प्रख्यायमानेन—प्र पूर्वक ख्या धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान कृदन्त, तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, प्रशंसा किये जाने वाले से

प्रचिनुहि—प्र पूर्वक चि धा०, स्वादिगण, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू चुने, इकट्ठा करे

प्रचुक्रुशुः—क्रुश् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे चिल्लाये

प्रच्छन्नाः (प्रच्छन्नास्, प्रच्छान्नाश्)—प्र पूर्वक छद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, छिपे हुए, वेष बदले हुए

प्रच्युतो—प्र पूर्वक च्यु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, निकाला हुआ, गिराया हुआ, अपमानित

प्रजज्वाल—प्र पूर्वक ज्वल् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह जला

प्रजाः (स्)—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, लोग, प्रजा

प्रजाकामः (प्रजाकामस्)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रजाओं या पुत्रों का इच्छुक

प्रजार्थे—पुत्रों के लिए

प्रज्वलितस्—प्र पूर्वक ज्वल् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जलता हुआ

प्रणमे—प्र पूर्वक नम् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं प्रणाम करता हूँ

प्रणम्य—प्र पूर्वक नम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, झुककर

प्रणयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रेम को

प्रणयस्व—प्र पूर्वक नी धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू प्रेम कर

प्रणश्यन्ति—प्र पूर्वक नश् धा०, दिवादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे नष्ट होते हैं, नष्ट किये जाते हैं

प्रणष्टम्—प्र पूर्वक नश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, नष्ट हुआ, खोया हुआ

प्रणेदुर्—प्र पूर्वक नद् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे चिल्लाये, उन्होंने पुकारा

प्रतस्थे—प्र पूर्वक स्था धा०, आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह रवाना हुआ, आगे बढ़ा

प्रति—अव्यय, तरफ़, को

प्रतिगह्य—प्रति पूर्वक ग्रह् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पाकर, ग्रहण करके

प्रतिजग्मुर्—प्रति पूर्वक गम् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे लौट गये

प्रतिजग्राह—प्रति पूर्वक ग्रह् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने पाया, पकड़ा

प्रतिजानामि—प्रति पूर्वक ज्ञा धा०, क्र्यादिगण, वर्तमान, उ० पु०, एक व० मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, मानता हूँ

प्रतिज्ञाय—प्रति पूर्वक ज्ञा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, प्रतिज्ञा करके

प्रतिपत्कलुषस्य—तत्पुरुष, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, प्रतिपदा की कालिमा का

प्रतिपत्स्यसे—प्रति पूर्वक पद् धा०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू ठीक होगा, पायेगा

प्रतिपद्यस्व—प्रति पूर्वक पद् धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू पाये, तू जीत

प्रतिपद्येत—प्रति पूर्वक पद् धा०, दिवादिगण, आत्म०, विधि लिङ, प्रथम पु०, एक व०, वह पाये, निश्चय करे

प्रतिपश्यामि—प्रति पूर्वक दृश् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं देखता हूँ

प्रतिपाणः (प्रतिपाणो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बाज़ी

प्रतिपाणाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, खेल या बाज़ी के लिये

प्रतिबन्धेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, रोक से

प्रतिब्रूयाद्—प्रति पूर्वक ब्रू धा०, अदादिगण, विधि लिङ, प्रथम पु०, एक व०, उसे

बोलना चाहिए, उत्तर देना चाहिए

प्रतिभयम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, भयानक

प्रतिभाषसे—प्रति पूर्वक भाष् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू बोलता है, उत्तर देता है

प्रतियोत्स्यामि—प्रति पूर्वक युध् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं युद्ध करूँगा

प्रतिवचस् (प्रतिवचः)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, उत्तर

प्रतिवाक्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, उत्तर

प्रतिवाक्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, उत्तर में

प्रतिश्रयः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निवासस्थान, घर

प्रतिश्रुत्य—प्रति पूर्वक श्रु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रतिज्ञा करके

प्रतिष्ठितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रसिद्ध

प्रतीक्षस्व—प्रति पूर्वक इक्ष् धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू प्रतीक्षा कर

प्रतीक्षे—प्रति पूर्वक ईक्ष् धा०, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं प्रतीक्षा करता हूँ, आशा करता हूँ

प्रत्यक्षम्—अव्यय, सामने, दृष्टि के सामने

प्रत्यक्षदर्शनम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, आमने सामने (यज्ञ में आये हुये देवता को) देखना

प्रत्यनन्दत—प्रति पूर्वक नन्द्, धा०, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने ध्यान दिया, वह उपस्थित हुआ, उसने अभिवादन किया

प्रत्यभाषत—प्रति पूर्वक भाष् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह बोला, उसने उत्तर दिया

प्रत्यवेदयत्—प्रतिपूर्वक विद् धा०, (प्रेरणार्थक), अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने घोषित किया, बताया

प्रत्यवेदयन्—उन्होंने घोषित किया

प्रत्याख्याताः (प्रत्याख्यातास्)—प्रति और आ पूर्वक ख्या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, इन्कार किया हुआ, मना किया हुआ

प्रत्याख्यासि—प्रति और आ पूर्वक ख्या धा०, अदादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू इन्कार करता है, मना करता है

प्रत्याह—प्रति पूर्वक अह् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने उत्तर दिया

प्रत्याहरन्ती—प्रति और आ पूर्वक हृ धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बोलती हुयी

प्रत्याहृत्य—प्रति और आ पूर्वक हृ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, वापस लेकर

प्रत्युवाच—प्रति पूर्वक वच् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने उत्तर दिया

प्रत्यूचुस्—प्रति पूर्वक वच् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने उत्तर दिया

प्रत्येत्य—प्रति और आ पूर्वक इ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, वापस होकर

प्रथमम्—अव्यय, पहले

प्रददौ—प्र पूर्वक दा धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने दिया

प्रदध्यौ—प्र पूर्वक ध्यै धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने सोचा

प्रदातव्यः—प्र पूर्वक दा धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, देने के योग्य

प्रदाय—प्र पूर्वक दा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देकर

प्रदिशन्तु—प्र पूर्वक दिश् धा०, तुदादिगण, अनुज्ञा, प्रथम पु०, बहु व०, वे दिखायें, बतायें

प्रदीप्ता—प्र पूर्वक दीप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जलती हुयी, चमकती हुयी

प्रदुद्रुवुः—द्रु धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, वे दौड़े, भागे

प्रदुष्यन्ति—प्र पूर्वक दुष् धा०, दिवादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे दूषित होते हैं

प्रदेशितो—प्र पूर्वक दिश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, दिखाया हुआ, बताया हुआ

प्रद्रुते—प्र पूर्वक द्रु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त एक व०, पु०, दौड़ने या भागने पर

प्रधर्षयितुम्—प्र पूर्वक धृष् धा०, चुरादिगण, तुमुन् प्रत्यय, धक्का देने के लिये, उल्लंघन करने के लिए

प्रधावथ—प्र पूर्वक धाव् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, म० पु०, बहु व०, तुम सब दौड़ते हो

प्रपन्नम्—प्र पूर्वक पद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शरणागत को, पहुँचे हुये को

प्रपन्ना—देखिये प्रपन्नम्, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शरण में आयी हुयी

प्रपन्नो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, गया हुआ, शरणागत

प्रपश्यद्भिर्—प्र पूर्वक दृश् धा०, वर्तमान कृदन्त, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, देखते हुओं के द्वारा

प्रपश्यन्ति—प्र पूर्वक दृश् धा०, वर्तमान प्रथम पु०, बहु व०, वे देखते हैं, खोजते हैं

प्रपश्यामि—प्र पूर्वक दृश् धा०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं देखता हूँ

प्रभया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, कान्ति से, सुन्दरता से

प्रभाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रकाश या कान्ति को

प्रभावेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, शक्ति से, प्रभाव से

प्रभाषितम्—प्र पूर्वक भाष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बोला हुआ

प्रभाषेयम्—प्र पूर्वक भाष् धा०, भ्वादिगण, विधि लिङ्, उ० पु०, एक व०, मुझे कहना चाहिये, मुझे बातचीत करना चाहिये

प्रभुः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्वामी

प्रभुम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वामी को

प्रभूतयवसेन्धनम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जहाँ हरी घास का इन्धन बहुत है

प्रभो—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे स्वामी

प्रमत्तस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, पागल का

प्रमदावने—तत्पु०, समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, रहस्यमय आमोदवन। यह शब्द उन उद्यानों के लिये प्रयुक्त होता है जो महिलाओं के लिए सुरक्षित रहते हैं

प्रमाणम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, प्रमाण, निर्णायक

प्रमाणात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, प्रमाण से

प्रमुखे—अव्यय, सामने

प्रमुञ्चन्तः—प्र पूर्वक मुच् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, कहते हुये, छोड़ते हुए

प्रमृष्टमणिकुण्डलाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, चमकदार मणि और कुण्डलवाले

प्रयतः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कर्तव्यशील, पवित्र, आत्मनियन्त्रित

प्रयतन्तु—प्र पूर्वक यत् धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, बहु व०, वे प्रयास करें

प्रयतव्यम्—प्र पूर्वक यत् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, प्रयत्न करने के लिये

प्रययौ—प्र पूर्वक या धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह रवाना हुआ, आगे बढ़ा, अलग हुआ

प्रयाणे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, घोड़े अथवा अन्य पशुओं के कूबड़ में

प्रयाते—प्र पूर्वक या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, आगे जाने पर, बढ़ने पर

प्रयुज्य—प्र पूर्वक युज् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, प्रयोग करके

प्रयोजनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, उद्देश्य, काम, अवसर

प्ररूरोद—प्र पूर्वक रुद् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह रोया, रो पड़ा

प्रलब्धव्याः (प्रलब्धव्यास्)—प्र पूर्वक लभ् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, धोका देने के लिये

प्रलब्धो—प्र पूर्वक लभ् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, धोखा दिया हुआ

प्रलापानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, विलाप

प्रवदस्व—प्र पूर्वक वद् धा०, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू बोल

प्रवर्तताम्—प्र पूर्वक वृत् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह आगे बढ़े

प्रवर्तसे—प्र पूर्वक वृत् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू करता है

प्रविवेश—प्र पूर्वक विश् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रवेश किया

प्रविशन्तम्—प्र पूर्वक विश् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रवेश करते हुये को

प्रविशन्तीम्—प्र पूर्वक विश् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रवेश करती हुयी को

प्रविशामि—प्र पूर्वक विश् धा०, तुदादिगण, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं प्रवेश करता हूँ

प्रविश्य—प्र पूर्वक विश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, प्रवेश करके

प्रविष्टः—प्र पूर्वक विश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रवेश किया हुआ, घुसा हुआ

प्रविष्टा—देखिये प्रविष्टः, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, घुसी हुयी, प्रवेश की हुयी

प्रविष्टो (प्रविष्टस्)—देखिये प्रविष्टः

प्रवेक्ष्यसि—प्र पूर्वक विश् धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू प्रवेश करेगा

प्रवेक्ष्यामि—प्र पूर्वक विश् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं प्रवेश करूँगा

प्रवेशयामास—प्र पूर्वक विश् धा०, (प्रेरणार्थक), लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रवेश किया

प्रवेश्यताम्—प्र पूर्वक विश् धा०, (प्रेरणार्थक), कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, उसे प्रवेश कराया जाय

प्रवेष्टुम्—प्र पूर्वक विश् धा०, तुमुन् प्रत्यय, प्रवेश करने के लिये

प्रशंसद्भिर्—प्र पूर्वक शंस् धा०, लिट् लकार, वर्तमान कर्म कृदन्त, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, प्रशंसा करते हुओं से

प्रशशंसुः (प्रशशंसुस्)—प्र पूर्वक शंस् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, बहु व०, उन्होंने प्रशंसा की

प्रशाखिकाः—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, छोटी शाखायें या टहनियाँ

प्रशान्ते—शम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, शान्त में, चुपचाप में

प्रशासतम्—प्र पूर्वक शास् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शासन करते हुये को

प्रशासिता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शासक, शासन करने वाला

प्रष्टव्यो—प्रच्छ् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पूछने के योग्य

प्रसङ्गो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, लगाव, आसक्ति, लगन

प्रसन्नसलिलाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्वच्छ जलवाली को

प्रसन्नो (प्रसन्नस्)—प्र पूर्वक सद् धा०, भूतकालिक कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रसन्न, आनन्दित

प्रसादम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कृपा, प्रसन्नता

प्रसीदतु—प्र पूर्वक सद् धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह प्रसन्न हो

प्रस्थापयामास—प्र पूर्वक स्था धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्रस्थान किया, भेजा

प्रस्थाप्य—प्र पूर्वक स्था धा०, (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, भेजकर

प्रस्थितम्—प्र पूर्वक स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आगे बढ़ते हुये को

प्रस्थिताः (प्रस्थिताः प्रस्थितास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, भेजे हुए, अलग हुए

प्रस्थितो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भेजा हुआ, अलग हुआ

प्रहसन्—प्र पूर्वक हस् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, हँसता हुआ

प्रहसन्ति—प्र पूर्वक हस् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे हँसते हैं

प्रहसन्—देखिये प्रहसन्

प्रहस्य—प्र पूर्वक हस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, हँसकर

प्रहास्यति—प्र पूर्वक हा धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह छोड़ेगा, अलग होगा, रुकेगा

प्रहृष्टः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रसन्न

प्रहृष्टमनसः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्रसन्न मन वाले

प्रहृष्टात्मा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आनन्दित आत्मा वाला

प्रहृष्टेन—प्र पूर्वक हृष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, तृतीयान्त, एक व०, पु०, आनन्दित या प्रसन्न से

प्राक्रोशद् (प्राक्रोशत्)—प्र पूर्वक क्रुश् धा०, भ्वादिगण, अनद्यतनभूत, प्रथम पु०, एक व०, वह चिल्लाया, उसने पुकारा

प्राज्ञः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बुद्धिमान्

प्राज्ञायत—प्र पूर्वक ज्ञा धा०, कर्म वाच्य, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह जाना गया था

प्राञ्जलयः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आदर पूर्वक जुड़े हुए हाथ

प्राञ्जलिर् (प्राञ्जलिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आदरपूर्वक जुड़ा हुआ हाथ

प्राणयात्राम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जीवन के सहारे को

प्राणयोश्—षष्ठ्यन्त व सप्तम्यन्त, द्वि व०, पु०, प्राणों का

प्राणाः (प्राणास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, श्वास, जीव

प्राणांश् (प्राणान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, प्राणों को

प्राणेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, प्राण से, श्वास से

प्राणेश्वरम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जीवन के स्वामी को

प्रातिष्ठत् (प्रातिष्ठद्)—प्र पूर्वक स्था धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने यात्रा की, वह आगे बढ़ा

प्रादात् (प्रादाद्)—प्र पूर्वक दा धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने दिया

प्राद्रवद् (प्राद्रवत्, प्राद्रवन्)—प्र पूर्वक द्रु धा०, भ्वादिगण, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह उस ओर दौड़ा या भागा

प्राप—प्र पूर्वक आप् धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्राप्त किया, पाया

प्राप्तम्—प्र पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, गये हुये को, पहुँचे हुये को, पाये हुए को

प्राप्तकालम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जिसका समय आ गया है

प्राप्तयौवनाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, युवावस्था को प्राप्त हुयी को

प्राप्तवती—प्र पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पायी हुयी को

प्राप्तव्यम्—प्र पूर्वक आप् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, पाने के लिये

प्राप्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पायी हुयी

प्राप्तास्—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, पायी हुयी

प्राप्तुम्—प्र पूर्वक आप् धा०, तुमुन् प्रत्यय, पाने के लिए

प्राप्ते—प्र पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, पाने पर

प्राप्तो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पाया हुआ

प्राप्नोति—प्र पूर्वक आप् धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, प्राप्त करता है, पाता है

प्राप्य—प्र पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, प्राप्त करके, पहुँच कर

प्राप्स्यति—प्र पूर्वक आप् धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह पायेगा

प्राप्स्यसि—तू पायेगा

प्रायाद्—प्र पूर्वक या धा०, अदादिगण, प्रथम पु०, एक व०, वह गया, वह आगे बढ़ा

प्रार्थयन्तो—प्र पूर्वक अर्थ् धा०, चुरादिगण, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्रार्थना करते हुए, खोजते हुये, माँगते हुए

प्रार्थयेद्—प्र पूर्वक अर्थ् धा०, चुरादिगण, विधि लिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे माँगना चाहिए

प्रार्थितम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अभिलषित, आवश्यक

प्रावर्तत—प्र पूर्वक वृत् धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह आगे बढ़ा

प्राविशद् (प्राविशत्)—उसने प्रवेश किया

प्रावृणोद्—प्र पूर्वक वृ धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने ढक दिया, पहन लिया

प्राश्य—प्र पूर्वक अश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, स्वाद लेकर

प्रासादगता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, महल में गयी हुयी

प्रासादतलम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, महल का निचला भाग

प्रासादस्था—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, महल के ऊपर खड़े होकर
प्रासादस्थाश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, महल के ऊपर खड़े हुये
प्रास्थापयद्—प्र पूर्वक स्था धा०, (प्रेरणार्थक), अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, उसने भेज दिया
प्रास्रवद्—प्र पूर्वक स्रु धा०, अनद्यतन भूत, प्रथम पु०, एक व०, वह बहा, टपका
प्रिय—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे प्रिय, हे प्यारे
प्रियम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, प्रिय
प्रियकारिणी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्रसन्नता का काम करने वाली
प्रियदर्शन—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे देखने में सुन्दर लगने वाले
प्रियविनाकृतम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, प्रिय से छोड़ा हुआ
प्रिया—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्यारी
प्रियाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्यारी को
प्रियालतालखर्जूरहरीतकीविभीतकैः—द्वन्द्व समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, प्रियाल, ताल, खजूर, हरीतकी और विभीतक वृक्षों के द्वारा
प्रियैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, प्यारों से
प्रीतः (प्रीतो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सन्तुष्ट, प्रसन्न
प्रीतिः (प्रीतिर्, प्रीतिस्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आनन्द
प्रीतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्यार या आनन्द को
प्रीतेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, सन्तुष्ट से, प्रसन्न से
प्रीतौ—प्री धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, सन्तुष्ट, प्रसन्न
प्रीत्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रीति से, प्यार से
प्रीयमाणः—प्री धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, पु०, प्रसन्न किया हुआ
प्रेक्षमाणायाः—प्र पूर्वक ईक्ष् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, देखती हुयी का
प्रेक्ष्य—प्र पूर्वक ईक्ष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, देखकर
प्रेषयामास—प्र पूर्वक इष् धा० (प्रेरणार्थक), लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने भेजा
प्रेषयितुम्—प्र पूर्वक इष् धा० (प्रेरणार्थक), तुमुन् प्रत्यय, भेजने के लिये
प्रेषितम्—प्र पूर्वक इष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं० भेजा हुआ
प्रेषितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भेजा हुआ
प्रेष्यताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दासता को

प्रेष्याः—प्रथमा त, बहु व०, पु०, दास, दूत

प्रोक्ता—प्र पूर्वक वच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कही हुयी

प्रोद्धुष्टाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रतिध्वनि करती हुयी को

फ

फलम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, फल, परिणाम

फलपुष्पोपशोभिताः—द्वन्द्व और तत्पुरुष, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, फल और फूलों से शोभायमान

फलमूलानि—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, फल और जड़ें

फलमूलाशनाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, फल और जड़ खाने वाली को

फलवन्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, फलवाले को

फलसहस्रे—प्रथमान्त, द्वि व०, नपुं०, दो हज़ार फल

फलानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, फल

ब

बणिजः (बणिजो, बणिजस्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बनियों को

बध्यताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मारने की योग्यता को, विनाश को

बध्यश्—बध् धा, भविष्यत्, कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मारने के योग्य

बन्धुजनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सम्बन्धी

बन्धुजनेन–तृतीयान्त, एक व०, पु०, सम्बन्धी से

बन्धुवर्गाश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सम्बन्धीगण

बन्धून्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सम्बन्धियों को

बभूव—भू धा०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह हुआ

बलम्—नपुं०, सेना

बलम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शक्ति को

बलवृत्रनिषूदन—द्वन्द्व और तत्पुरुष, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे बल और वृत्र को मारने वाले

बलवृत्रहा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बल और वृत्र नामक दैत्यों को मारने वाला अर्थात् इन्द्र

बलिन्—पु०, हे शक्तिशाली

बली—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शक्तिशाली

बलेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सेना से
बलैर्—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, सेनाओं से
बहवः (बहवो, बहवस्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बहुत
बहु—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अधिक
बहु—अव्यय, अधिकता से
बहुकल्याण—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे अति शोभनशील
बहुतिथे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, कई, बहुत
बहुधा—अव्यय, अधिक, बहुत तरीकों से
बहुपुष्पफलोपेतम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बहुत से फूल और फलों से भरे हुये को
बह्वबद्धप्रलापिनः—बहु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, बहुत मूर्खता की बात करने वाले का
बहुभिर् (बहुभिस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बहुतों से
बहुमता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अधिक प्यारे से
बहुमतो (बहुमतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अधिक प्यारा
बहुमूलफलान्विताः—तत्पुरुष, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बहुत सी जड़ों और फलों से भरे हुये
बहुला (बहुलाः, बहुलास्)—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, अधिक, कई
बहुविधैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बहुत तरीकों से
बहुव्यालनिषेविते—तत्पुरुष, सप्तम्यन्त एक व०, पु०, बहुत से साँपों से बसे हुये में
बहुश (बहुशस्, बहुशो, बहुशः)—अव्यय, बहुत अधिक, प्रायः, बहुत बार
बहून्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बहुतों को
बान्धवान्——द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सम्बन्धियों को
बालकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बालक को
बालकौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, दो बालक
बालभावे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बालक की अवस्था में
बाला—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लड़की
बालाः (बालास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बच्चे, बालक
बाल्याद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, बचपने से
बाहवः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, भुजायें
बाहोर्—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, पु०, दोनों भुजाओं का

बिभर्षि—भृ धा०, जुहोत्यादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तु पहनता है, रखता है, धारण करता है

बुद्धिः (बुद्धिर्, बुद्धिस्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बुद्धि

बुद्धिम्— द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बुद्धि को

बुद्धिपूर्वाणि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, पहले से निश्चय करके, जानबूझकर

बुद्धिसम्मितैः—तत्पु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बुद्धिमानों के द्वारा

बुद्ध्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, बुद्धि से

बुद्ध्वा—बुध् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जागकर, जगाकर

बुध्यसे—बुध् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, तू जानता है

बुध्येत—बुध् धा०, दिवादिगण, आत्म०, विधि लिङ्, प्रथम पु०, एक व०, उसे जानना चाहिये

बुध्यथास्—बुध् धा०, दिवादिगण, आत्म०, विधि लिङ म० पु०, एक व०, तुझे जानना चाहिए

बुबुधे—बुध् धा०, आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, वह जागा

ब्रवीमि—ब्रू धा०, अदादिगण, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं कहता हूँ, मैं बतलाता हूँ

ब्रह्मण्यः (ब्रह्मण्यो, ब्रह्मण्यस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धार्मिक, पवित्र

ब्रह्मर्षिभ्यश्—पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु०, ब्रह्मर्षियों से। विष्णु पुराण के मत से तीन प्रकार के ऋषि होते हैं—(१) ब्रह्मर्षि या वह साधु जो ब्रह्मा के पुत्र हैं और ब्रह्मलोक में ही रहते हैं; जैसे—मरीचि, अत्रि, वशिष्ठ आदि; (२) देवर्षि जो देवलोक में रहते हैं; (३) राजर्षि जैसे विश्वामित्र और अन्य ऋषि जो द्वितीय वर्ण के राजा होते हैं; किन्तु जिन्हें तपोबल से ऋषि का स्थान प्राप्त हो जाता है। अमरकोष में चार अन्य प्रकार के ऋषियों का वर्णन है—(१) महर्षि, (२) परमर्षि, (३) काण्डर्षि, जो वेद के एक काण्ड विशेष की शिक्षा देते हैं और (४) श्रुतर्षि

ब्रह्मर्षिर् (ब्रह्मर्षिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ब्रह्मर्षि

ब्राह्मणः (ब्राह्मणो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ब्राह्मण

ब्राह्मणा (ब्राह्मणाः, ब्राह्मणास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, ब्राह्मण

ब्राह्मणांश्— **(ब्राह्मणान्)**—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, ब्राह्मणों को

ब्राह्मणेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, ब्राह्मण से

ब्राह्मणैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बाह्मणों से

ब्रुवति—ब्रू धा०, वर्तमान कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, कहने पर, बोलने पर

ब्रुवतो—ब्रू धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, कहते हुओं को

ब्रुवन्—ब्रू धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कहता हुआ
ब्रुवन्तम्—ब्रू धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कहते हुये को
ब्रुवन्त्यास्—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, कहती हुयी का
ब्रुवाणस्—ब्रू धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कहता हुआ, बोलता हुआ
ब्रुवाणान्—ब्रू धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, कहते हुओं को
ब्रूयात्—ब्रू धा०, विधि लिङ, प्रथम पु०, एक व०, उसे बोलना चाहिए
ब्रूयाश्—(**ब्रूयास्**)—ब्रू धा०, अदादिगण, विधि लिङ, म० पु०, एक व०, तुझे बोलना चाहिये
ब्रूयास्त—ब्रू धा०, आशीर्लिङ, म०पु०, बहु व०, तुम बोलो
ब्रूहि—ब्रू धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू बोल

भ

भक्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भक्ति रखने वाली
भक्तिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भक्ति को
भक्षयति—भक्ष् धा०, चुरादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह खाता है
भक्ष्यो (**भक्ष्यस्**)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, खाने योग्य
भगवंस् (**भगवन्, भगवन्**)—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे भगवान्
भगवताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, ऐश्वर्यवालों का, भगवानों का
भगिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहन को
भगिन्याः (**भगिन्यास्**)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, बहन का
भजमानाम्—भज् धा०, भ्वादिगण, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रतीक्षा करती हुयी को, भजती हुयी को
भजसि—भज् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू आदर करता है, भजन करता है
भद्रम्—अव्यय, कल्याण, स्वास्थ्य
भद्रे—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दरि
भयम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, भय, भय का कारण
भयकर्तारम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भय उत्पन्न करने वाले को
भयंकरी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भय उत्पन्न करने वाली
भयविह्वला—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भय से व्याकुल

भयशोकसमाविष्टा—द्वन्द्व और तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भय और शोक से भरी हुयी

भयसन्त्रस्तमानसा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भय से डरे हुये मन वाली

भयात् (भयाद्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, भय से

भयाबाधम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भय से क्षुब्ध न होने वाले को

भयार्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भय से दुःखी को

भरतश्रेष्ठ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे भरतवंश में श्रेष्ठ

भरस्व—भृ धा०, भ्वादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू पालन कर, अपनी सेवा में ले

भर्तव्या—भृ धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पालन करने के योग्य

भर्ता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पति, स्वामी

भर्तारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वामी को, पति को

भर्तुः (भर्तुर्)—षष्ठ्यन्त व पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, पति का, पति से

भर्तृदर्शनकांक्षया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, पति को देखने की इच्छा से

भर्तृदर्शनलालसाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पति के दर्शनों की लालसा वाली को

भर्तृभिश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पतियों से

भर्तृराज्यापहरणम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, पति के राज्य को छीनने वाले को

भर्तृव्यसनपीडिता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पति के दुःख से दुःखी

भर्तृशोकपरा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्वामी या पति के दुःख में फँसी हुयी

भर्तृशोकपरीताङ्गी—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पति के शोक में क्षीण अङ्गवाली

भर्तृशोकाभिपीडिता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पति के दुःख से दुःखी

भर्तृहीनाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पति से छोड़ी हुयी को

भर्त्री—तृतीयान्त, एक व०, पु०, पति से

भव—भू धा०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू हो
भवतः—षष्ठ्यन्त, एक व०, आप का
भवताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, आप लोगों का
भवती—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आप
भवतु—भू धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह हो
भवत्सु—सप्तम्यन्त, बहु व०, आप लोगों में
भवद्भिर् (भवद्भिस्)—तृतीयान्त, बहु व०, आप लोगों से
भवनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, महल को, निवास को
भवन्तः (भवन्तस्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आप लोग
भवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आप
भवितव्यम्—भू धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, होने वाला
भविता—भू धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, होने वाली
भविष्यति—भू धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह होगा
भविष्यसि—भू धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू होगा
भविष्यामः—भू धा०, भविष्यत्, उ० पु०, बहु व०, हम होंगे
भविष्यामि—भू धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं हूँगी
भवेज् (भवेत्)—भू धा०, विधि लिङ, प्रथम पु०, एक व०, उसे होना चाहिये
भवेथाः (भवेथास्)—भू धा०, भ्वादिगण, आत्म०, विधि लिङ, म० पु०, एक व०, तुझे होना चाहिये
भवेद् (भवेत्, भवेन्)—उसे होना चाहिये
भवेयुर् (भवेयुस्)—भू धा०, विधिलिङ, प्रथम पु०, बहु व०, उन्हें होना चाहिए
भागधेयम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, भाग्य
भाङ्गासुरिम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भङ्गासुर के पुत्र को
भाङ्गासुरिनृपाज्ञया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, भाङ्गासुरि राजा की आज्ञा से
भाङ्गासुरिर् (भाङ्गासुरिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भाङ्गासुर का पुत्र
भाति—भा धा०, अदादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह चमकता है
भारत—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे भरत के वंशज! यह युधिष्ठिर का एक नाम है, जिनसे वृहदाश्व नल की कथा कहता है। भरत दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र थे। उनका साम्राज्य सम्पूर्ण भारत में फैला हुआ था, इसीलिये इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ गया
भारतीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, वाणी को

भार्यया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री से
भार्या—स्त्री०, स्त्री
भार्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री को
भार्यासमम्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, स्त्री के समान
भावम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अवस्था या धन को
भावः (भावो, भावस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, विचार, आत्मा, मन
भाविनि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दरि
भाविनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी
भाषसे—आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू बोलता है
भाष्यमाणो—भाष् धा०, (कर्मवाच्य), वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बोलता हुआ
भासि—भा धा०, अदादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू चमकता है
भिषजाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, वैद्यों का
भीतः (भीतो, भीतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, डरा हुआ
भीता—भी धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, डरी हुयी
भीताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, डरी हुयी को
भीताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, डरे हुये
भीमः (भीमो, भीमस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भीम
भीमनन्दिनीम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भीम की पुत्री को
भीमपराक्रमम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भीम के समान बलवान् को
भीमपुत्रिकाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भीम की कन्या को
भीमरूपांश् (भीमरूपान्)—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बड़ी आकृति वालों को
भीमवचनाद्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, भीम की आज्ञा से
भीमशासनात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, भीम की आज्ञा से
भीमसुता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भीम की पुत्री, दमयन्ती
भीमस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, भीम का
भीमान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, भयानकों को
भीमाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, भीम के लिये
भीमे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, भीम में
भीरु—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे डरपोक

भीष्मम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भीष्म को

भुंक्ष्व—भुज् धा०, रूधादिगण, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, एक व०, तू भोग कर, आनन्द ले

भुजगम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, साँप को

भुञ्जीय—भुज् धा०, रूधादिगण, आत्म०, विधि लिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे खाना चाहिए, भोगना चाहिए

भुञ्जीयाम्—भुज् धा०, रूधादिगण, विधि लिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे खाना चाहिए

भुवनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, संसार को

भुवि—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी पर

भूतग्रामाः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्राणियों का समूह

भूतले—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, पृथ्वी पर

भूतसाक्षी—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्राणियों की साक्षी

भूतस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, प्राणी का

भूतानि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, प्राणियों को

भूत्वा—भू धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, होकर

भूमाव् (भूमौ)—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी पर

भूमिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी को

भूमिप—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्

भूमिपते—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे पृथ्वी के स्वामिन्

भूमिष्ठो (भूमिष्ठस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पृथ्वी पर खड़ा हुआ

भूय (भूयः, भूयस्)—अव्यय, बार बार, पुनः पुनः

भूरिदक्षिणैः—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बहुत भेंटें रखने वालों से

भूषणम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, आभूषण

भूषणानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, आभूषण

भूषणैर् (भूषणैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, आभूषणों से

भृतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, किराया, मजदूरी

भृशम्—अव्यय, अधिक

भृशदारुणम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अत्यन्त भयानक को

भृशदुःखिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त दुःखी

भृशपीडितः—प्रथमान्त एक व०, पु०, अत्यन्त दुःखी

भेषजम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, औषधि

भैक्ष्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, भिक्षा
भैमि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे दमयन्ति
भैमी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भीम की पुत्री दमयन्ती
भैमीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती को
भैम्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती के द्वारा
भैर् (भैषीर्)—भी धा०, जुहोत्यादिगण, म० पु०, एक व०, मत डरो
भो भो—विस्मयादिबोधक, अरे अरे, रे रे
भोक्तुम्—भुज् धा०, तुमुन् प्रत्यय, भोगने के लिये, खाने के लिए
भोक्ष्यसे—भुज् धा०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, तू खायेगा, भोग करेगा।
भोगवतीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पाताल लोक में सर्पों की राजधानी को
भोगाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आनन्द
भोगान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, आनन्दों को
भोगैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, आनन्दों से
भोजनीयम्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भोजन
भोजने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, भोजन में
भ्रंशयिष्यामि—भ्रंश् धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं गिराऊँगा
भ्रमति—भ्रम् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान्, प्रथम पु०, एक व०, वह घूमता है
भ्रमन्ति—भ्रम् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे घूमते हैं
भ्रष्टम्—भ्रंश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, गिरे हुये को
भ्रष्टः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, गिरा हुआ
भ्रष्टराज्यम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राज्य से गिराये हुये को
भ्रष्टा—भ्रंश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, गिरी हुयी
भ्राजमान (भ्राजमानो, भ्राजमानस्)—भ्राज् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, चमकता हुआ
भ्राजमानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चमकते हुये को
भ्रातरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, भाई को
भ्रातरश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, भाई
भ्राता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भाई
भ्रातुर् (भ्रातुस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, भाई का
भ्रातॄन्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, भाइयों को
भ्रात्रा—तृतीयान्त, एक व०, पु०, भाई से
भ्रुवोर्—षष्ठ्यन्त, द्विव०, स्त्री०, दोनों भौहों का

म

मंस्यति—मन् धा०, दिवादिगण, भविष्यत् कृदन्त, प्रथम पु०, एक व०, वह विचार करेगा

मंस्यन्ते—मन् धा०, आत्म०, भविष्यत्, प्रथम पु०, बहु व०, वे मनन करेंगे, विचार करेंगे

मघवन्—सम्बोधन, एक व०, हे इन्द्र

मघवा—प्रथमान्त, एक व०, इन्द्र का एक नाम

मघवान्—प्रथमान्त, एक व०, इन्द्र का एक नाम

मङ्गलेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सौभाग्य से

मच्छरीरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, मेरे शरीर में

मज्जेद्—उसे डूबना चाहिए, उसे कूदना चाहिए

मणिभद्रः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मणिभद्र यक्षों का राजा था। वह यात्रियों और व्यापारियों का राजा था। कदाचित् यह धन के देवता कुबेर का ही अन्य नाम था

मणिभद्रो—देखिये मणिभद्रः

मण्डनार्हाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आभूषणों के योग्य को

मतम्—मन् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, माना हुआ

मतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राय को, निश्चय को

मतिः (मतिर्, मतिस्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्रयोजन, निश्चय

मतिभेदो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राय में भेद

मत्कृतात्—तत्पुरुष, पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, मेरे द्वारा किये हुये से

मत्कृते—मेरे लिये

मत्तवारणविक्रमः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मतवाले हाथी के समान पराक्रम वाला

मत्तो (मत्तस्)—अव्यय, मुझ से

मत्प्रसादान् (मत्प्रसादात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, मेरी कृपा से

मत्प्रसूतम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मेरे लिये उत्पन्न होने वाले को

मत्त्वा—मन् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, समझकर, मानकर

मत्सकाशे—मेरी उपस्थिति में, मेरे सामने

मत्समः (मत्समो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मेरे समान

मत्समक्षम्—मेरी उपस्थिति में, मेरे सामने

मदप्रस्रवणाविलाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मद के टपकने से भरी हुयी को

मदीयेन—तृतीयान्त, एक व०, मुझसे

मदोत्कटाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मद से पागल

मद्गृहे—सप्तम्यन्त, एक व०, मेरे घर में

मद्भक्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मेरी भक्त

मद्भाग्यसङ्क्षयात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, मेरे भाग्य के नष्ट होने से

मद्वचः—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मेरे वचनों को

मद्विहीना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मुझसे हीन

मधुरभाषिणीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मीठी वाणी बोलने वाली को

मधुराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मीठी को

मधुसूदनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मधु नामक दैत्य को मारने वाला, कृष्ण का एक नाम

मध्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बीच

मध्यमकक्षायाम्—कर्म धा० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, बीच की कक्षा में

मध्ये—अव्यय, बीच में

मनः (मनो, मनस्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मन

मनसस्—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, मन का

मनसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, मन से

मनांसि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, मन

मनुः—प्रथमान्त, एक व०, पु० पुराणों में वर्णित हिन्दुओं के पूर्वज। मनु सम्पूर्ण मानव जाति के क्षय होने पर भी जीवित रहते हैं और मनुष्यों के द्वितीय पूर्वज हैं। सर्वप्रथम मनु स्वयम्भुव या स्वायम्भुव थे, जिनकी उत्पत्ति ब्रह्मा से मानी जाती है। स्वायम्भुव मनु से छः मनुष्यों की और उत्पत्ति हुयी। इनमें से प्रत्येक ने अपनी-अपनी जाति को जन्म दिया

मनुजव्याघ्र—सम्बोधन, एक व०, मनुष्यों में श्रेष्ठ

मनुजा (मनुजाः, मनुजास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मनुष्य

मनुजात्मजे—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे पुत्रि

मनुजाधिप—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे मनुष्यों के राजन्

मनुजाधिपतेः—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा का

मनुजेन्द्राणाम्—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, राजाओं का

मनुष्याणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों को

मनुष्येन्द्र—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्
मनोजवान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मन की तरह वेगवान्
मनोभिः—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, मनों से
मनोविशुद्धिम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मन की शुद्धि को
मनोहरैः—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, सुन्दर
मनोहारि—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मन को हरनेवाली को
मन्त्रिणः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मन्त्रिगण
मन्त्रिभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, मन्त्रियों से
मन्द (मन्दो,मन्दस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धीमा, मूर्ख, नीच
मन्दम्—अव्यय, धीरे-धीरे
मन्दप्रज्ञस्य—बहु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, मन्द बुद्धि वाले (मनुष्य) का
मन्दप्रज्ञेन—बहु० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, मन्दबुद्धि वाले (व्यक्ति) से
मन्दभाग्याद्—कर्मधा० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, मन्दभाग्य से
मन्दस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, मन्द, दुष्ट, निकम्मा
मन्दात्मा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, दुष्ट आत्मा
मन्मथम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, कामदेव को
मन्मथस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, कामदेव का
मन्यते—मन् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, वह मानता है, कल्पना करता है
मन्यसे—मन् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान, उत्तम पु०, तू सोचता है, मानता है, कल्पना करता है
मन्युना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, दुःख से, क्रोध से
मन्युपरीतेन—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, क्रोध से भरे हुये के द्वारा
मन्ये—मन् धा०, दिवादिगण, आत्म०, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं मानता हूँ, कल्पना करता हूँ
मम—षष्ठ्यन्त, एक व०, मेरा
ममर्दुः—मृद् धा०, लिट् लकार, बहु व०, वर्तमान, उन्होंने कुचल डाला
ममृदे—मृद् धा०, आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने मल दिया
मरणम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मृत्यु
मरणाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, मृत्यु से

मर्त्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मरने वाले को, मनुष्य को
मर्त्यानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, मरने वालों का, मनुष्यों का
मर्त्यो (मर्त्यस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मरने वाला, मनुष्य
मया—तृतीयान्त, एक व०, मुझसे
मयि—सप्तम्यन्त, एक व०, मुझमें
मलम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, गन्दगी को
मलदिग्धाङ्गीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, गन्दगी से भरे शरीर वाली को
मलपङ्कानुलिप्ताङ्गीम्—द्वन्द्व और बहुव्रीहि, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, गन्दगी और कीचड़ से भरे हुये अङ्ग वाली को
मलपङ्किनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, गन्दगी से भरी हुयी
मलिनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, गन्दा
मलिना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, गन्दी
मलिनाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, गन्दी को
मलेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, गन्दगी से
महत् (महद्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बड़ा
महतः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, बड़े का
महता—तृतीयान्त, एक व०, पु०, बड़े से
महति—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बड़े में
महती—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बड़ी
महत्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, बड़ी से
महदध्वानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, लम्बी यात्रा, लम्बा मार्ग
महर्षिभिस्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, महर्षियों से
महर्षिर् (महर्षिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, महर्षि
महर्षीणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, महर्षियों का
महाकायः—कर्म धा० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़ा शरीर
महाघोरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, अत्यन्त भयानक में
महाजवान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, अत्यन्त वेगवाला
महातपाः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् तपस्या वाला
महातेजाः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् तेजस्वी
महात्मन्—हे महात्मा
महात्मनः (महात्मनश्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, महात्मा का

महात्मना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, महात्मा से
महात्मनाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, महात्माओं का
महात्मानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, महात्मा को
महात्मानौ—प्रथमान्त, द्वि० व०, पु०, दो महात्मा
महाद्युतिः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त कान्तिवाला
महाद्युते—सम्बोधन, एक व०, हे अत्यन्त तेजवान्
महान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान्, बड़ा
महानसाच् (महानसात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, रसोई से
महानुभावान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, महान् व्यक्तियों को
महान्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बड़े को
महाप्राज्ञौ—बहु० समास, प्रथमान्त, द्विव०, पु०, (दो) महान् बुद्धिमान्
महाबलः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त बलवान्
महाबाहुः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् (शक्तिशाली) भुजाओं-वाला
महाबाहो—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे बलशालिन्
महाबुद्धे—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे महाबुद्धि वाले
महाभागः—(**महाभागो, महाभागस्**)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भाग्यशाली, भाग्यवान्
महाभागा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भाग्यशालिनी
महाभागाः—सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे भाग्यवानों
महाभागे—सम्बोधन, एक व०, स्त्री, हे सौभाग्यवती
महाभागैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, भाग्यवानों से
महाभुज—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे महती भुजाओं वाले
महामते—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे महान् बुद्धिमान्
महामनाः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, उच्च विचारों वाला
महायशाः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् यशस्वी
महारण्ये—कर्मधा० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, बड़े वन में
महारथः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् बलशाली
महाराज—कर्म धा० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे महाराज
महाराजः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, महाराज
महाराजम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, महाराज को
महावने—सप्तम्यन्त, एक व०, बड़े वन में

महावीर—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे महान् पराक्रमी
महावीर्यस्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, महान् बलवाला
महाव्रतौ—बहु० समास, प्रथमान्त, द्विव०, पु०, (दो) अत्यन्त भक्त
महाशैल—कर्म धा० समास, सम्बोधन, एक व०, हे बड़े पर्वत
महाशैलः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़ा पर्वत
महासार्थम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बड़ा काफ़िला, सैन्यदल
महासार्थे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बड़े काफ़िले में, सैन्यदल में
महासिंहाः—कर्मधा० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बड़े सिंह
महास्वनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, घोर शब्द
महाहनुः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़ी ठोढ़ी वाला
महिषांश् (महिषान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, भैंसों को
महिषीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रानी को
महिष्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, रानी से
महीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भूमि को
महीकृते—अव्यय, भूमि के लिये
महीक्षितः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, राजा
महीक्षिताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, राजाओं का
महीतले—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, भूमि पर
महीधर—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे पर्वत
महीपतिः—**(महीपतिस्)**—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा
महीपते—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्
महीपतेः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा का
महीपाल—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे राजन्
महीपालम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा को
महीपालः (महीपालो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा
महीपालान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, राजाओं को
महीभृतः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा का
महीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भूमि को
महेन्द्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इन्द्र को
महेन्द्राद्याः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जिसमें इन्द्र का प्रथम स्थान है
महेश्वराः—कर्मधा० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बड़े राजा
महोत्सवे—कर्मधा० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बड़े उत्सव में

महौजसः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, महान् पराक्रम
मा—द्वितीयान्त, एक व०, मुझको
मा—अव्यय, नहीं, मत
मांसम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मांस को
माम्—द्वितीयान्त, एक व०, मुझको
माचिरम्—अव्यय, अविलम्ब
मातः (मातर्)—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे माता
मातरम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, माता को
मातलिर् (मातलिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, इन्द्र का सारथी मातिल
माता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, माता
मातुः (मातुर्, मातुस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, माता का
मातुलाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मामा
मातुलान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मामाओं को
मातृष्वसा—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मौसी (माता की बहन)
मामा—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, माता से
मानद—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, हे आदर प्रदान करने वाले
मानयसि—मन् धा०, चुरादिगण, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू मानता है
मानुष—पु०, मानव जाति
मानुषम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मनुष्य को, मानव जाति को
मानुषः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पुरुष
मानुषाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पुरुष
मानुषी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मानवजाति की स्त्री
मानुषीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मानव जाति वाली को, स्त्री को
मानुषेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, मनुष्यों या मानव जाति में
मानुष्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मानव जाति से सम्बन्ध रखने वाले को
माम्—द्वितीयान्त, एक व०, मुझको
मारिष—सम्बोधन, एक व०, पु०, आदरणीय या उत्तम व्यक्ति
मारुतः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वायु
मार्गम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रास्ते को
मार्गणे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, खोज में
मार्गमाणा—मार्ग् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, खोजती हुयी

मार्गा (मार्गाः, मार्गास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, रास्ते
मार्गाणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, रास्तों का
मार्गामि—मार्ग् धा०, भ्वादिगण, वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं खोजता हूँ
मासम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, महीने को
मासान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, महीनों को
मित्रम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मित्र
मित्रद्रोहे—तत्पुरुष, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, मित्र से वैर करने में
मिथुनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जोड़े को
मिथ्या—अव्यय, झूठ
मिष्ठकर्त्ता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मिठाई बनाने वाला
मुक्तः—मुच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छोड़ा हुआ, स्वतन्त्र
मुक्तकेशीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, खुले हुये बालों वाली को
मुखम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मुख, मुखको
मुखतः (मुखतस्)—अव्यय, सामने, मुख में, मुख से
मुखात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, मुख से
मुखानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, मुख
मुख्यशः—अव्यय, विशेषरूप से
मुख्यानि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, मुख्यों को
मुख्यैर् (मुख्यैः)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, मुख्यों से
मुञ्चतु—मुच् धा०, अनुज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह छोड़े, जाने दे, स्वतन्त्र कर दे
मुदम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, आनन्द
मुदा—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री, आनन्द से
मुदिताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु० व स्त्री०, आनन्दित
मुदितो—मुद् धा०, भूतकालिक कर्मकृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आनन्दित
मुदितौ—प्रथमान्त, द्विव०, पु०, (दो) आनन्दित
मुनिभिः—तृतीयान्त, बहुव०, पु०, ऋषियों से
मुमुदे—मुद्, आत्म०, लिट्, प्रथम पु०, एक व० वह आनन्दित हुआ था
मुष्टिभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, मट्ठियों से
मुष्णन्ती—मुष् धा०, क्र्यादि, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, चुराती हुयी

मुहुर् (मुहुस्, मुहुः)—अव्यय, बारबार
मुहूर्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, क्षण भर
मुह्यति—मुह् धा०, दिवादि, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, मुग्ध होता है
मूढ—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे मूर्ख
मूढेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, मूर्ख से
मूढो (मूढस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मूर्ख
मूत्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मूत्र को
मूर्तिमान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शरीरधारी
मूर्त्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, मूर्त्ति से
मूर्ध्नि—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सिर पर
मृगजीवनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शिकारी
मृगद्विजान्—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जंगली पशुओं और पक्षियों को
मृगपक्षिणः—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जंगली पशुओं और पक्षियों को
मृगपक्षिषु—द्वन्द्व समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, जंगली पशुओं और पक्षियों में
मृगयध्वम्—मृग् धा०, चुरादि, आत्म०, अनुज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम सब ढूंढो या शिकार करो
मृगयसे—वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू ढूंढता है, शिकार करता है
मृगयानेन—मृग् धा०, भ्वादि०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, तृतीयान्त, एक व०, पु०, ढूंढ़ते हुये से, शिकार करते हुये से।
मृगयितुम्—मृग् धा०, चुरादि, तुमुन् प्रत्यय, खोज करने के लिये
मृगयिष्यन्ति—मृग् धा०, चुरादि, भविष्यत्, प्रथम पु०, बहु व०, वे ढूंढ़ेंगे, शिकार करेंगे
मृगराट्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जंगली पशुओं का स्वामी
मृगव्याधो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जंगली पशुओं को मारने वाला
मृगव्यालनिषेविते—द्वन्द्व और बहुव्रीहि, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, जंगली पशु और साँप से भरे हुये
मृगशावाक्षि—सम्बोधन, एक व०, हे मृगनयनी
मृगश्रेष्ठ—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, जंगली पशुओं में श्रेष्ठ
मृगाणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, जंगली पशुओं का
मृगेन्द्र—सम्बोधन, हे जंगली पशुओं के राजन्
मृणालीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कमलनाल को

मृतम्—मृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मरे हुये को

मृतस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, मरे हुये का

मृत्युम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मृत्यु को

मृत्युर् (मृत्युस्)— प्रथमान्त, एक व०, पु०, मृत्यु

मृदिता—मृद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मसली हुयी, कुचली हुयी

मृदुपूर्वम्—अव्यय, नम्रता से

मृदुपूर्वया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, कोमलता से प्रारंभ करके

मृद्यमानानि—मृद् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं० कुचले हुये

मृधे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, युद्ध में

मृष्टसलिलाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, स्वच्छ जल वाली को

मे—चतुर्थ्यन्त व षष्ठ्यन्त, एक व०, मुझको, मेरा

मेघनाद (मेघनादे)—सप्तम्यन्त, एक व०, मेघ गर्जन होने पर

मेघनिर्घोषो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मेघ के समान गर्जन करने वाला

मेघस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, मेघ का

मेदिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी को

मेदिन्याम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी पर

मेने—मन् धा०, आत्म०, लिट् लकार, प्रथम पु०, एक व०, उसने सोचा

मोक्षयित्वा—मोक्ष् धा०, चुरादि, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़कर

मोचयित्वा—मुच् धा०, (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़कर, खोकर

मोदस्व—मुद् धा०, भ्वादि, आत्म०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू आनन्दित हो

मोहयन् (न्)—मुह् (प्रेरणार्थक) धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मोहकर

मोहितः—मुह् (प्रेरणार्थक) धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मोहित

मोहिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मोहित

म्रियते—मृ० धा०, तुदादि, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह मरता है, मरती है

म्लानस्रग्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मलिन मालावाली

म्लेच्छतस्करसेवितम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, म्लेच्छ और चोरों से बसे हुये को

य

य (यस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जो

यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० जिसको,

यक्षराट्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, यक्षों का राजा। यक्ष कुवेर का सेवक है जो कैलास स्थित उपवनादि की रक्षा करता है। यक्षों के निकट अप्सरायें प्रायः आया करती हैं, किन्तु उनकी अपनी भी स्त्रियाँ होती हैं। यह वर्णन 'मेघदूत' में मिलता है। यह नाम यक्ष् धातु से बना है, क्योंकि वे कुवेर की पूजा करते हैं या स्वयं उनकी पूजा की जाती है

यक्षाधिपः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, यक्षों का राजा

यक्षी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, यक्ष की स्त्री

यक्षेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, यक्षों में

यक्षो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, यक्ष

यच् (यत्)—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, क्या

यच्छतु—यम् धा०, भ्वादिगण, आज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह काटे, पथप्रदर्शन करे

यजमानश् (यजमानस्)—यज् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, यज्ञ करता हुआ

यज्ञे—सप्तम्यन्त, एक व० पु०, यज्ञ में

यज्ञेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, यज्ञों में

यज्ञैर् (यज्ञैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, यज्ञों से

यत्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जो

यत् (यन्)—अव्यय, क्योंकि, चूंकि कि

यत—यत् धा० भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू प्रयत्न कर

यतः (यतस्)—चूंकि, क्योंकि

यतध्वम्—यत् धा०, भ्वादि, आत्म०, आज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम लोग प्रयत्न करो

यतिष्ये—यत् धा०, आत्म०, उ० पु०, भविष्यत्, मैं प्रयत्न करूँगा

यत्कृते—अव्यय, जिसके लिये, जिसके कारण

यत्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रयत्न

यत्र—अव्यय, जहाँ, जहाँ कहीं, क्योंकि, चूंकि

यत्रसायम्प्रतिश्रयाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जहाँ शाम हो जाये वहीं पर रहकर

यथा—अव्यय, जैसे

यथाकामम्—अव्यय, इच्छानुसार

यथागतम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, जैसे वे आये

यथातत्त्वम्—अव्यय, सत्यता (तत्व) के अनुसार

यथातथम्—अव्यय, सत्यता से, ऐसे प्रयोजन के लिये

यथातथम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वर्णन

यथातथा—अव्यय, किसी न किसी तरह

यथान्यायम्—सत्यता या न्याय के अनुसार

यथार्हम्—अव्यय, यथायोग्य, उचित रूप से

यथावच् (यथावन्, यथावत्)—अव्यय, ठीक ठीक

यथाविधि—अव्यय, नियमानुसार

यथावृत्तम्—अव्यय, वृत्तानुसार, जैसा घटित हुआ

यथाश्रद्धम्—अव्यय, श्रद्धानुसार, श्रद्धापूर्वक

यथासङ्गम्—अव्यय, मिलन के समय, पहुँचने के समय

यथासत्यम्—अव्यय, सत्यता के अनुसार, सत्यता से

यथासुखम्—अव्यय, आनन्दपूर्वक, सुख से

यथोक्तम्—जैसा कहा गया है, बोला गया है

यथोक्तानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, जैसे कहे गये हैं

यथोत्साहम्—अव्यय, उत्साह के अनुसार

यद्—अव्यय, वह, क्योंकि

यदि—अव्यय, अगर

यदि वा—अव्यय, या कि

यदृच्छया—अव्यय, इच्छा से, स्वभावतः

यद्यपि—अव्यय, यद्यपि

यन्ता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सारथी, हाँकने वाला

यमः (यमो, यमस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, यम। न्याय का स्वामी जो प्रत्येक नरक के ऊपर अधिकार रखता है। सूर्य-पुत्र, दक्षिण की ओर निम्न संसार में वास करता है। यह यूनानी देवता या प्लूटो माइनोस के समान ही मृतात्माओं का न्याय करता है। इसके निवास को यमपुर कहते हैं। हाथ में पाश और दण्ड रखता है

यया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिससे
ययातिर् (ययातिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सूर्यवंशीय पञ्चम राजा ययाति
ययुः (ययुर्, ययुस्)—या धा०, लिट्, प्रथम पु०, बहु व०, वे गये
ययौ—या धा०, लिट्, प्रथम पु०, एक व०, वह गया
यश् (यस्)—प्रथमान्त, एक व०, जो
यशः (यशस्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, यश, यश को
यशसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, यश से
यशस्विनि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री, हे यशस्वनी स्त्री
यशस्विनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, यशवाली
यष्ठा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, यज्ञ करने वाला
यस्मिन्—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, जिसमें
यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु० जिसका
या—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जो
याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसको
याचते—याच् धा०, वर्तमान कृदन्त, चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, माँगते हुये
यातम्—या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु, जाते हुये को
याति—या धा०, अदादि, प्रथम पु०, एक व०, वह जाता है, जाती है
यातु—या धा०, अदादि, आज्ञा, प्रथम पु०, एक व०, वह जाये
यातुम्—या धा०, तुमुन् प्रत्यय, जाने के लिये
याते—या धा०, भूतकालिक कर्मकृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, जाने पर
यातो—या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, गया हुआ
यात्वा—या धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जा कर
यान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जिन को
यानम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, रथ को
यानयुग्यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, जुते हुये रथ का
यानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, जो
यानेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं० रथ से
यान्तो—या धा०, अदादि, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे जाते हैं
यान्तो— या धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जाते हुये
याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जिसको
यावच् (यावत्)—अव्यय, जब तक
याश् (यास्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, जो

यास्यति—या धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह जायेगा, जायेगी

यास्यसि—या धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू जायेगा

यास्यामि—या धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं जाऊँगा

याहि—या धा०, अदादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जा

युक्तम्—प्रथमान्तव, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, उचित, योग्य, लगा हुआ

युक्तः (युक्तस्)—यूज्, धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व० पु०, युक्त, चतुर, अभ्यस्त

युक्ताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, युक्त, लगे हुये

युज्यस्व—यूज् धा० आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू तैयार हो, लग जा

युतम्—यु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, युक्त, भरा हुआ

युता—यु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, युक्त भरी हुयी

युद्धम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, युद्ध को

युद्धद्यूतम्—तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, युद्ध का खेल, द्वन्द्व युद्ध

युद्धाच् (युद्धात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, युद्ध से

युद्धाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, नपुं०, युद्ध के लिये

युद्धे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, युद्ध में

युधिष्ठिर—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे युधिष्ठिर

युध्यस्व—युध् धा०, दिवादि, आत्म०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू युद्ध कर

युयुत्सुम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, युद्ध की इच्छा रखने वाले को

युवस्थविरबालाश्—द्वन्द्व समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, युवक, वृद्ध और बालक

युष्मत्—सर्वनाम, तू

यूथभ्रष्टाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, समूह से अलग हो जाने वाली को

यूथशो (यूथशस्)—अव्यय, झुण्डों में

यूयम्—प्रथमान्त, बहु व०, तुम सब

ये—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, जो

येन—तृतीयान्त, एक व० पु०, जिससे

येन केन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, जिस किससे

येषाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, जिनका

योक्ष्यसे—युज् धा०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू मिलाया जायेगा, तू युक्त हो जायेगा

योक्ष्ये—युज् धा०, आत्म०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं मिलूँगा, मैं युक्त हूँगा।

योगम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, व्यवसाय, काम

योजनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, योजन, नौ मील की दूरी

योजनशतम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सौ योजन

योजय—युज् धा०, (प्रेरणार्थक), आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जोते

योजयामास—युज् धा० (प्रेरणार्थक), लिट्, प्रथम पु०, एक व०, उसने जोता

योजयामि—युज् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं जोतता हूँ

योजयित्वा—युज् धा०, चुरादि, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जोत कर

योत्स्य (योत्स्ये)—युध् धा०, आत्म०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं युद्ध करूँगा

योद्धा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, योद्धा

योषिद्रत्नम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, स्त्रीरत्न, स्त्रियों में श्रेष्ठ

यौवनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, युवावस्था

र

रंस्यते—रम् धा०, आत्म०, भविष्यत्, प्रथम पु०, एक व०, वह रमण करेगा, आनन्द प्राप्त करेगा

रंस्यसे—रम् धा०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू रमण करेगा, आनन्द प्राप्त करेगा

रक्तान्ताभ्याम्—पंचम्यन्त, द्वि व०, नपुं०, लाल कोरों से

रक्ष—रक्ष् धा०, भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, रक्षा कर

रक्षणीया—रक्ष् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रक्षा के योग्य

रक्षन्तु—रक्ष् धा०, भ्वादि, आज्ञा, प्र० पु०, बहु व०, वे रक्षा करें

रक्षिणश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, रक्षा करने वाले

रक्षिता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रक्षा करने वाला

रक्ष्यमाणा—रक्ष् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री० रक्षा की हुयी

रङ्गम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अखाड़ा, मञ्च

रजःस्वेदसमन्वितः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, धूलि और पसीने से सना हुआ

रजनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रात को

रज्जुम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रस्सी को

रणविशारदम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, युद्ध में प्रवीण को

रणात् (रणाद्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, रण से

रणे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, युद्ध में

रतम्—रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आनन्दित, भक्त, लगे हुये को

रतिम्—द्वितीयान्त, एक व०, आनन्द को, प्रेम को

रतिम—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री, (कामदेव की पत्नी) रति को

रत्नम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, रत्न को

रत्नकोषनिचयैः—द्वन्द्व और तत्पुरुष, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, रत्नों को खज़ानों के ढेरों से

रत्नगर्भगृहोचितान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री० रत्नों से भरे हुये घरों के योग्य को

रत्नभूताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रत्न के समान

रत्नराशिर् (रात्नराशिस्)—तत्पु०, प्रथमान्त, एक व०, पु०, रत्न की राशि

रथम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रथ को

रथघोषम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रथ के शब्द को

रथघोषेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, रथ के शब्द से

रथनिर्घोषम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रथ के शब्द को

रथनिर्घोषः—(रथनिर्घोषो, रथनिर्घोषस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रथ का शब्द

रथनिस्वनः—तत्पु०, प्रथमान्त, एक व०, पु०, रथ का शब्द

रथवरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ रथ को

रथवाहकः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सारथी, रथ हाँकने वाला

रथशालाम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रथशाला को

रथात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, रथ से

रथिनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सारथी या रथ के हाँकने वाले को

रथे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, रथ में

रथेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, रथ से

रथोत्तमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ रथ को

रथोत्तमात्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ रथ से

रथोपस्थ (रथोपस्थे)—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सारथी के स्थान के ऊपर
रथोपस्थाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, सारथी के स्थान से
रमणीयेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु० सुन्दर, मनोहर
रम्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, मनोहर को
रम्या—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर
रम्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर
रम्यान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सुन्दर
ररक्ष—रक्ष् धा०, लिट्, प्रथम पु०, एक व०, रक्षा की
रराज—राज् धा०, लिट्, प्रथ पु०, एक व०, वह चमकी
रविम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सूर्य को
रविसोमसमप्रभः—द्वन्द्व और बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सूर्य और चन्द्रमा के समान कान्तिवाला
रश्मिभिश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, लगामों से
रश्मीन्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, लगामों को
रहिता (रहितास्)—रह् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, विहीन
रहो (रहस्)—अव्यय, एकान्त में
राक्षसी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, राक्षसी
रागम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रेम को
रागो (रागस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रेम
राजंस् (राजन्न्, राजन्)—सम्बोधन, एक व०, हे राजन्
राजते—राज् धा०, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, शोभित होता है, चमकता है
राजपुत्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजकुमार को
राजपुत्राश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, राजा के पुत्र
राजपुत्रीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राजकुमारी को
राजप्रेष्यैर्—तत्पु०, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, राजदूतों से
राजभक्तिपुरस्कृतः—तत्पु० समास, जिसके आगे राजभक्ति है
राजभार्याम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की स्त्री को
राजमाता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, राजा की माता
राजमातुर्—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, राजमाता का
राजमार्गाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सरकारी मार्ग

राजर्षभस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ राजा का
राजवेश्मनः—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, राजा के घर का
राजवेश्मनि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, राजा के घर में
राजशार्दूल—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे वीर राजन्
राजसमितिम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राज-सभा को
राजसु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, राजाओं में
राजसूयाश्वमेधानाम्—द्वन्द्व समास, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, राजसूय और अश्वमेध (यज्ञों) का
राजा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजा
राजानम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, राजा को
राजानः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, राजा
राजापसद—सम्बोधन, एक व०, हे नीच राजन्
राजेन्द्रो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, राजाओं में श्रेष्ठ
राज्ञः (राज्ञो, राज्ञश्, राज्ञस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, राजा का
राज्ञा—तृतीयान्त, एक व०, पु०, राजा से
राज्ञाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, राजाओं का
राज्ञि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे रानी
राज्ञी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रानी
राज्ञे—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, राजा के लिये
राज्यम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, राज्य
राज्यपरिभ्रष्टः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, राज्य से गिरा हुआ
राज्यान् (राज्यात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, राज्य से
राज्यापहरणम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, राज्य की चोरी
राज्येन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, राज्य से
रात्रिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री० रात को
रात्रिर्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रात
राहुग्रस्तनिशाकराम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, राहु द्वारा ग्रसित चन्द्रमा को। राहु के साथ सूर्य और चन्द्रमा का जो चिरवैमनस्य है। उसका कारण यह है—समुद्रमन्थन के अवसर पर जो अमृत निकला उसे पीने के लिये राहु भी वहीं पर देवता का रूप धारण करके बैठ गया। सूर्य और चन्द्रमा ने इस रहस्य को जान लिया और उसका उद्घाटन कर दिया। विष्णु ने उसके सिर को काट दिया, किन्तु अमृतपान कर चुकने के कारण वह अमर

हो चुका था। अतएव उसके सिर और धड़ अलग होकर जीवित हो गये। सिर से राहु हुआ और धड़ केतु के रूप में प्रसिद्ध हो गया

रिपुनिपातिनम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शत्रु को मारने वाले को

रुचिरानना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर मुखवाली

रुचिरापाङ्गीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर नेत्रों की कोरों वाली को

रुदती—रूद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी

रुदतीम्—रूद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी को

रुदन्तीम्—रूद् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी को

रुदन्त्याः—रूद् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी का

रुदन्त्यौ—प्रथमान्त, द्विव०, स्त्री०, रोती हुयी

रुदिते—रूद् धा०, अदादि, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह रोता है, रोती है

रुदित्वा—रूद् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रोकर

रुद्रा (रुद्रास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, रूद्र। इनकी संख्या आठ है। ये शिव के अवतार हैं, किन्तु पूर्व पौराणिक युग में ये वायु की पूजा से सम्बद्ध हैं। विष्णु-पुराण में रूद्रों का वर्णन इस प्रकार है—रूद्र, भव, सर्व, ईशान, पशुपति, भीम, उग्र और महादेव। इनमें से अधिक तो शिव के ही नाम हैं। ब्रह्मा ने उन्हें सूर्य, जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि, आकाश, ब्राह्मण और चन्द्रमा का स्थान प्रदान किया। इस संसार में यही रूद्र के प्रतिनिधि हैं

रुरोद—रूद् धा०, लिट्, प्रथम पु०, एक व०, वह रोया या रोयी

रुषान्विता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, क्रोध से भरी हुयी

रूपम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, रूप को

रूपतस् (रूपतः)—अव्यय, रूप से

रूपमात्रवियोजितः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, केवल रूप से हीन हो जाने वाला

रूपवती—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी

रूपवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुन्दर
रूपसम्पदा—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, रूप के ऐश्वर्य से
रूपसम्पन्ना—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रूपवती
रूपे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, रूप में
रूपेण—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, रूप से
रूपौदार्यगुणोपेताम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रूप और उदारता के गुणों से युक्त
रेमे—रम् धा०, आत्म०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने रमण किया
रोदिति—रुद् धा०, परस्मैपद, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह रोता है, रोती है
रोदिमि—वर्तमान, उत्तम पु०, एक व०, मैं रोता हूँ
रोमहर्षश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रोमाञ्च
रोषताम्राक्षस्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्रोध से लाल नेत्रों वाला
रोहिणी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, चन्द्रमा की प्यारी स्त्री। पुराणों में चन्द्रमा को सदैव पुल्लिंग माना जाता है
रौद्रो (रौद्रस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भयानक

ल

लक्षणैर् (लक्षणैस्, लक्षणैश्)—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, लक्षणों से
लक्षय—लक्ष् धा०, चुरादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू ध्यान से देख
लक्षयन्ती—लक्ष् धा०, चुरादि, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देखती हुयी
लक्षयित्वा—लक्ष् धा०, चुरादि, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देखकर
लक्षये—लक्ष् धा०, चुरादि, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं देखता हूँ
लक्षितम्—लक्ष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, देखा हुआ
लक्षितः (लक्षितो, लक्षितस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, देखा हुआ
लक्षिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देखी हुयी
लक्ष्म्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, लक्ष्मी से
लक्ष्यते—लक्ष् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह देखा जाता है
लघुश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, छोटा
लज्जाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, लज्जा को
लज्जावत्यो—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, लज्जाशीला

लब्धवान्—लभ् धा०, भूतकालिक कर्तृ कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उसने पाया

लब्ध्वा—लभ् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पाकर

लभन्ते—लभ् धा०, आत्म०, वर्तमान, प्रथम पु०, बहु व०, वे पाते हैं

ललाटे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, मस्तक में

लाघवम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शीघ्रता, छोटापन, हलकापन

लाभाय—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, लाभ के लिए

लिङ्गधारणे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, चिह्न धारण करने पर

लिङ्गानि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, चिह्न, विशेषतायें

लुब्धको—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बहेलिया

लेखा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रेखा, चन्द्रकिरण

लेभे—लभ् धा०, आत्म०, लिट्, प्रथम पु०, एक व०, उसने प्राप्त किया

लोकः—पु०, संसार, जनता

लोककान्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, संसार की प्यारी को

लोककृताम्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, संसार के बनाने वालों का

लोकपालः—पु०, संसार की रक्षा करने वाला। लोकपालों की संख्या आठ है जो ब्रह्मा, विष्णु और महेश से निम्न कोटि के माने जाते हैं। ये हैं—इन्द्र, अग्नि, सूर्य, चन्द्र, पवन, यम, वरुण और कुबेर। नल में केवल चार का ही परिचय मिलता है–इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम

लोकपालसमे—बहु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, लोकपालों के समान

लोकपालाः (लोकपालाश्, लोकपालास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, लोकपाल

लोकपालानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, लोकपालों का

लोकपालेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, लोकपालों में

लोकस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, संसार का

लोकान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, संसारों को

लोके—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, संसार में

लोकेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, संसारों में

लोको (लोकस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, संसार

लोचने—प्रथमान्त, द्विव०, नपुं०, दोनों नेत्र

लोभाच् (लोभात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, लोभ से

लोभोपहतचेतसः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, लालच से भ्रष्ट बुद्धि वाले

लोष्टभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, कंकड़ों से, ढेलों से

व

वः (वस्)—द्वितीयान्त व षष्ठ्यन्त, बहु व०, तुमको, तुम्हारा

वंशभोज्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, पैतृक, वंशपरम्परा से अधिकार में रहने वाला

वक्तव्यम्—वच् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, कहने योग्य

वक्तुम्—वच् धा०, तुमुन् प्रत्यय, कहने के लिए

वक्त्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मुख को

वक्षसि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, हृदय पर

वक्ष्यन्ति—वह् धा०, भविष्यत्, प्रथम पु०, बहु व०, वे ले जायेंगे, वहन करेंगे

वक्ष्यसि—वच् धा० भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू कहेगा

वचनम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शब्द, कथन

वचनाद् (वचनात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, आज्ञा से

वचने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वचन में

वचः (वचो, वचस्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शब्द या कथन, शब्द या कथन को

वत—विस्मयादिबोधक, अरे, अह, दुःख है

वत्स्यसि—वस् धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू रहेगा

वत्स्यामि—वस् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं रहूँगा

वद—वद् धा०, भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू कह, बोल

वदति—वद् धा०, वर्तमान, प्रथम पु०, एक व०, वह बोलता है, कहता है

वदरीबिल्वसञ्छन्नम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बेर और बेल से भरे हुये को

वदस्व—वद् धा०, भ्वादि, आत्म०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू बोल

वदिष्यन्ति—वद् धा०, भविष्यत्, प्र० पु०, बहु व०, वे कहेंगे, बोलेंगे

वदेद् (वदेत्)—वद् धा०, भ्वादि, विधिलिङ, प्र० पु०, एक व०, उसे बोलना चाहिये

वन (वने)—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वन में

वनम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वन, वन को

वनगजान्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जंगली हाथियों को

वनगुल्मांश् (वनगुल्मान्)—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जंगली झाड़ियों को

वनपन्नगान्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, जंगल के सर्पों को
वनस्थया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, वन में रहने वाली के द्वारा
वनानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, जंगलों को
वनान्तरे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वन के बीच में
वने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वन में
वनेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, वनों में
वनोद्भवैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वन में उत्पन्न होने वालों से
वपुः—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शरीर
वपुर्मलसमाचितम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, गन्दगी से भरा हुआ शरीर
वपुषा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, शरीर से
वयम्—प्रथमान्त, बहु व०, हम सब
वयःप्रमाणम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अवस्था की नाप या अवस्था का प्रमाण
वयस्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, अवस्था
वयसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, अवस्था से
वयसि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, अवस्था में
वरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० वरदान को
वरः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वरदान
वरनारीणाम्—कर्मधा० समास, षष्ठ्यन्त, बहु व०, स्त्री०, श्रेष्ठ स्त्रियों का
वरय—वृ धा० (प्रेरणार्थक), आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू चुन
वरयस्व—वृ धा० (प्रेरणार्थक), आत्म०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू चुन
वरयामास—वृ धा०, चुरादि, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने चुन लिया
वरयिष्यति—वृ धा०, चुरादि, भविष्यत्, प्र० पु०, एक व०, वह चुनेगा, चुनेगी
वरयिष्यामि—वृ धा०, चुरादि, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं चुनूँगा
वरयिष्ये—वृ धा०, चुरादि, आत्म०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं चुनूँगा
वरयेत् (वरयेद्)—वृ धा०, चुरादि, विधिलिङ, उसे चुनना चाहिये
वरवर्णिनि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दरी
वरवर्णिनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी
वरवर्णिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी को
वरस्त्रियः—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, सुन्दरियाँ
वराङ्गना—कर्मधा० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी स्त्री

वराङ्गनाः—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, सुन्दरी स्त्रियाँ

वरान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, वरदानों को

वरारोहा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी स्त्री

वरारोहाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी स्त्री को

वराहांश् (वराहान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सुअरों को

वरिष्यति—वृ धा०, भविष्यत्, प्र० पु०, एक व०, वह चुनेगा, चुनेगी

वरुणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वरुण को

वरुणो (वरुणस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जल के देवता वरुण। यह पश्चिम के स्वामी और दण्ड के देने वाले हैं। यम की भाँति यह भी नागपाश रखते हैं जिससे जल के नीचे अपराध करने वालों को बाँध लेते हैं। मकर इनका वाहन है

वर्चस्विनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, तेजस्विनी

वर्जितम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, छोड़ा हुआ, हीन, दीन,

वर्जिताँल् (वर्जितान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, छोड़े हुओं को, हीनों को, दीनों को

वर्ण्यमानेषु—वर्ण् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, बहु व०, वर्णित किये जाने वालों में

वर्तताम्—वृत् धा०, आत्म०, आज्ञा, प्र० पु०, एक व०, वह रहे

वर्तते—वृत् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह है, रहता है

वर्तमाने—वृत् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, रहने पर, होने पर

वर्तयन्—वृत् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, रहते हुये

वर्तयामास—वृत् (प्रेरणार्थक), लिट्, प्र० पु०, एक व०, वह रहता था, दिन काटता था

वर्धयसि—वृध् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू बढ़ाता है

वर्षायुतम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दस हजार वर्षों तक

वर्षे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वर्ष में

वल्कलाजिनसंवीतैर्—द्वन्द्व और बहुव्रीहि समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, छाल और चर्म को पहनने वालों से

ववन्दे—वन्द् धा०, आत्म०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने प्रणाम किया

ववृधे—वृध् धा०,आत्म०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, वह बढ़ा

ववौ—वा धा०, लिट्, प्रथम पु०, एक व०, उसने फूँका

वशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शक्ति, प्रभाव

वशवर्तिनः—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, वश में रहने वाले

वशिष्ठभृग्वत्रिसमैस्—द्वन्द्व और बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वशिष्ठ, भृगु और अत्रि के समान वालों से। ये तीनों ऋषि प्रजापति अथवा ब्रह्मादिक कहे जाते हैं। ये सर्वोच्च श्रेणी के ऋषि हैं जिन्हें ब्रह्मर्षि भी कहते हैं। इनकी संख्या सात, नौ, दस और इक्कीस तक बतलाई गई है

वस—वस् धा०, भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू निवास कर

वसतस् (वसतो)—वस् धा०, वर्तमान, प्र० पु०, द्विव०, वे दोनों रहते हैं

वसति—वस् धा०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह रहता है

वसती—वस् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रहती हुयी

वसवो—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, (आठ) वसु जो कि प्रकृति के विभिन्न कार्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं। विष्णु पुराण में इनके नाम ये हैं—आप, ध्रुव, सोम, दाव, अनिल, अनल या पावक, प्रत्यूष और प्रभास। ये सदैव अग्नि के सेवक के रूप में बताये गये हैं। सूर्य और चन्द्रमा से भी इनका सम्बन्ध बतलाया जाता है। अत एव अनुमान किया जाता है कि ये वैदिक युग के देवता हैं

वसस्व—वस् धा०, भ्वादि, आत्म०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू निवास कर

वसु—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, धन

वसुधाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी को

वसुधाधिप—सम्बोधन, हे पृथ्वी के स्वामी

वसुधाधिपम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पृथ्वी के स्वामी को

वसुधाधिपः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पृथ्वी का स्वामी

वसुन्धरा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी

वसुन्धराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पृथ्वी को

वसुसम्पूर्णाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, धन से भरी हुयी को

वसूनि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, धन को

वसेताम् (अवसेताम्)—वस् धा०, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, द्विव०, वे दोनों रहें

वस्तुम्—वस् धा०, तुमुन् प्रत्यय, रहने के लिये

वस्त्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वस्त्र को

वस्त्रान्ते—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वस्त्र के छोर पर

वस्त्रार्द्धम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वस्त्र के आधे को

वस्त्रार्द्धप्रावृताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आधे वस्त्र से ढकी हुयी को

वस्त्रार्द्धसंवीता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आधे वस्त्र से ढकी हुयी

वस्त्रार्द्धसंवृता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आधे वस्त्र से ढकी हुयी

वस्त्रार्द्धस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, आधे वस्त्र का

वस्त्रार्द्धेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, आधे वस्त्र से

वस्त्रावकर्तेन—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, पु०, वस्त्र के कटे हुये भाग से

वहति—वह् धा०, भ्वादि, वर्तमान , प्र० पु०, एक व०, वह ले जाता है

वहतो—वह् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, ले जाते हुओं को

वा—अव्यय, अथवा

वाक्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वाक्य

वाक्यानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, वाक्य

वाक्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वाक्य में

वाग्भिर्—तृतीयान्त, बहु व०, स्त्री०, वचनों से

वाग्मी—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बोलने में चतुर

वाच्—स्त्री०, शब्द, वचन, कथन

वाचम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शब्द को, वचन को

वाचा—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, वाणी से, वचन से

वाचो (वाचस्)—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, वचनों को।

वाजिनाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, घोड़ों का

वाञ्छति—वाञ्छ् धा०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह इच्छा करता है

वाञ्छसि—वाञ्छ् धा०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू इच्छा करता है

वाढम्—अव्यय, बहुत अच्छा

वातजवैर्—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वायु के समान तीव्र गति वालों से

वातरहंसः—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, वायु के समान वेग वाले

वापीश्—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, बावलियों को

वामलोचना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर नेत्रों वाली

वायुना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वायु से

वायुभक्षैश् (वायुभक्षैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वायु का भक्षण करने वालों से

वायुर् (वायुस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वायु

वायौ—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वायु में

वारणाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, हाथी

वारयित्वा—वृ धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, हटाकर, मना करके

वारि—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जल, अश्रु

वारिणा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, जल से, अश्रु से

वार्ष्णेय—सम्बोधन, हे वार्ष्णेय। नल के सारथी और कृष्ण का नाम

वार्ष्णेयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नल के सारथी वार्ष्णेय को

वार्ष्णेयजीवलौ—द्वन्द्व समास, प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, वार्ष्णेय और जीवल

वार्ष्णेयश् (वार्ष्णेयो, वार्ष्णेयस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वार्ष्णेय

वार्ष्णेयसहिते—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वार्ष्णेय के साथ होने पर

वार्ष्णेयसारथिः—बहु० समास, वार्ष्णेय जिसका सारथि है।

वार्ष्णेये—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वार्ष्णेय में

वार्ष्णेयेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वार्ष्णेय से

वाशतीम्—वाश् धा०, भ्वादि, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, चिल्लाती हुयी को

वाष्पम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अश्रु को

वाष्पकलया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, अश्रुओं के कारण धीमे स्वर वाली से

वाष्पसन्दिग्धया—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, अश्रुओं के कारण अस्पष्ट

वाष्पाकुलाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अश्रुओं से भरी हुयी को

वाष्पेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, अश्रु से

वासश् (वासो, वासस्)—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वस्त्र को

वाससा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, वस्त्र से

वाससाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, नपुं०, वस्त्रों का

वाससो (वाससस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, वस्त्र का

वासांसि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, वस्त्रों को

वासो (वासस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निवासस्थान

वासोयुगम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वस्त्रों के जोड़े को

वाहने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सवारी पर

वाहिना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, रथ से, सवारी से

वाहुक—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे वाहुक (एक सारथी का नाम)

वाहुकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वाहुक को

वाहुकच्छद्मिनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वाहुक के वेष में रहने वाले को

वाहुकरूपिणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वाहुक का रूप रखने वाले को

वाहुकस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, वाहुक का

वाहुके—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वाहुक में

वाहुकेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वाहुक से

वाहुकस् (वाहुको)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वाहुक

वाह्यतस् (वाह्यतः)—अव्यय, बाहर, बाहर से

वि—उपसर्ग, विहीन, विशेष

विंशतितमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बीसवाँ

विकम्पितुम्—वि पूर्वक कम्प् धा०, तुमुन् प्रत्यय, हिलने के लिये, झिझकने के लिये

विकर्तेयम्—वि पूर्वक कृत् धा०, विधिलिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे काटना चाहिये

विकारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विकार को, भाव को

विकृतम्—वि पूर्वक कृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु० दूषित, कुरूप

विकृताकारा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दूषित रूप वाली

विकृतः (विकृतो, विकृतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कुरूप

विकोषम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, म्यानरहित, आवरण विहीन को

विक्रान्तः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीर, पराक्रमी

विख्याताम्—वि पूर्वक ख्या धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रसिद्ध (को)

विख्यातः (विख्यातो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रसिद्ध

विगणयन्—वि पूर्वक गण् धा०, चुरादि, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, विचार करता हुआ, सोचता हुआ, तोलता हुआ।

विगतज्वरम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, नष्टज्वर वाले को, नष्ट दुःखवाले को

विगतसङ्कल्पा (विगतसङ्कल्पास्)—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, नष्ट निश्चय वाले, नष्ट उद्देश्य वाले

विघ्नम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वाधा को

विघ्नकर्तॄणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, वाधा डालने वालों का

विचरताम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, विचरण करने वालों का

विचरति—वि पूर्वक चर् धा०, भ्वादि वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह विचरण करता है

विचरन्—वि पूर्वक चर् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घूमता हुआ

विचरामि—वि पूर्वक चर् धा०, भ्वादि, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं विचरण करता हूँ

विचरितम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, घूमते हुये को

विचलितुम्—वि पूर्वक चल् धा०, तुमुन् प्रत्यय, चलने के लिये

विचारणा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सन्देह, हिचक,

विचार्य—वि पूर्वक चर् धा० भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सोच करके

विचित्रमाल्याभरणैर् (विचित्रमाल्याभरणैस्)—कर्मधारय और द्वन्द्व, तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, विचित्र मालाओं और आभूषणों से

विचिन्त्य—वि पूर्वक चिन्त् धा०, चुरादि, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सोच करके

विचिन्वानो (विचिन्वानस्)—वि पूर्वक चि धा०, स्वादि, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, खोजता हुआ, चुनता हुआ

विचेष्टितम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, चेष्ठा, कार्य

विच्युतिः—प्रथमान्त, एक व० स्त्री०, अलगाव

विजने—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सुनसान में

विजने—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, एकान्त में

विजयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विजय

विजहार—वि पूर्वक हृ धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व० वह घूमता था, विहार करता था

विजाननीत—वि० पूर्वक ज्ञा धा०, क्र्यादि, आज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम जानो

विजानीहि—वि पूर्वक ज्ञा धा०, क्र्यादि, आज्ञा, म० पु०, एक व० तू जान

विजितः—वि० पूर्वक जि धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जीता हुआ

विज्ञाते—वि पूर्वक ज्ञा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, जानने पर

विज्ञाय—वि पूर्वक ज्ञा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जान कर, निश्चित कर

विज्ञेयौ—वि पूर्वक ज्ञा धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, जानने योग्य

वितरसि—वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू स्वीकार करता है

वितरामि—वि पूर्वक तृ धा०, भ्वादि, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं वितरित करता हूँ

वितिमिराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अन्धकार से हीन को

वित्तम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं० धन

वित्तवन्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, धनवान् को

वित्रासितविहङ्गमाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भयभीत पक्षी को

विदर्भ—बंगाल के दक्षिण पश्चिम की ओर एक नगर, जिसे कुण्डिन भी कहते हैं। इसे आधुनिक बरार या नागपुर कहा जाता है। कुछ लोग विदर्भ तो देश का नाम बतलाते हैं और कुण्डिन को उसकी राजधानी मानते हैं। प्रो० विल्सन के मत से कुण्डिन आधुनिक कोण्डवीर का ही प्रदेश है

विदर्भतनया—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विदर्भ की पुत्री

विदर्भनगरीम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, विदर्भ की नगरी को

विदर्भपतये—चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, विदर्भराज के लिये

विदर्भराजतनयाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, विदर्भराज की पुत्री को

विदर्भराजस् (विदर्भराजो)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, विदर्भ का राजा

विदर्भराज्ञो—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, विदर्भ के राजा का

विदर्भराड्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, विदर्भ का राजा

विदर्भसरसस्—तत्पु० समास, पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, विदर्भ की झील से

विदर्भस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, विदर्भ का

विदर्भाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, विदर्भ नगरी को

विदर्भांस् (विदर्भान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, विदर्भ को

विदर्भाणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, विदर्भों का

विदर्भाधिपतिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, विदर्भराज

विदर्भाधिपतेर् (विदर्भाधिपतेस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, विदर्भराज का

विदर्भाधिपनन्दिनी—तत्पु० समास, विदर्भ राज की पुत्री

विदर्भाभिमुखो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, विदर्भ की ओर मुख किये हुए

विदर्भेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, विदर्भों में

विदितम्—विद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जाना हुआ

विदिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, जानी हुयी

विदित्वा—विद् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जानकर

विद्धि—विद् धा०, अदादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जान

विद्मः—विद् धा०, अदादि, वर्तमान, उ० पु०, बहु व०, हम जानते हैं

विद्यते—विद् धा०, तुदादि, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह है, विद्यमान् है

विद्या—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ज्ञान

विद्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, ज्ञान को

विद्याम्—विद् धा०, अदादि, विधिलिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे जानना चाहिए

विद्युत् (विद्युद्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विजली

विद्युर् (विद्युस्)—विद् धा०, अदादि, विधिलिङ, प्र० पु०, बहु व०, उन्हें जानना चाहिए

विद्योतयति—वि पूर्वक द्युत् धा० (प्रेरणार्थक), वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, चमकाता है, प्रकाशित करता है

विद्रवन्ति—वि पूर्वक द्रु धा०, भ्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, वे भागते हैं, उड़ते हैं

विद्वान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, विद्वान्

विद्वेषणेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, शत्रु से

विधत्स्व—वि पूर्वक धा धा०, जुहोत्यादि, आत्म०, आज्ञा, म० पु०, एक व० तू धारणकर, कर

विधिदृष्टेन—तत्पु० समास, तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, भाग्य द्वारा देखे हुये से

विधिना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, विधि से

विधिर्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भाग्य, नियम, ढंग

विधिवच् (विधिवत्, विधिवद्)—अव्यय, नियमानुसार

विधीयताम्—वि पूर्वक धा धा०, कर्मवाच्य, आज्ञा, प्र० पु०, एक व०, किया जाना चाहिये, ठीक होना चाहिये

विधेः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, भाग्य का

विनंक्ष्यामि—वि पूर्वक नश् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं नष्ट हो जाऊँगा

विनमते—वि पूर्वक नम् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह झुकता है

विनयावनता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विनय से झुकी हुयी

विनशेद् (विनश्येद्)—नश् धा०, भ्वादि, विधिलिङ्, प्र० पु०, एक व०, उसे नष्ट होना चाहिये

विनष्टा—नश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, नष्ट हुयी

विना—अव्यय, हीन रहित

विनाशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० विनाश को

विनिःश्वस्य—वि और निर् पूर्वक श्वस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, श्वास लेकर

विनिःसृतः—वि और निर् पूर्वक सृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, निकला हुआ

विनिक्षिप्य—वि और नि पूर्वक क्षिप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, फेंककर, रख कर

विनिर्दिष्टम्—वि और निर् पूर्वक भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दिखाया हुआ, बताया हुआ

विनिर्मितः—वि और निर् पूर्वक मा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बना हुआ

विनिर्मुक्ताः—वि और निर् पूर्वक मुच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, छुटे हुये, स्वतंत्र

विनिष्क्रम्य—वि और निर् पूर्वक क्रम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकलकर

विनिश्चित्य—वि और निर् पूर्वक चि धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सोचकर, निश्चय करके

विनिहितम्—वि और नि पूर्वक हन् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मारा हुआ, नष्ट किया हुआ

विनीतैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, नम्रों से

विन्दति—विद् धा०, तुदादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह पाता है, देखता है, मिलता है

विन्दामि—विद् धा०, तुदादि, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं पाता हूँ

विन्दे—विद् धा०, तुदादि, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं पाता हूँ

विन्देत—विद् धा०, तुदादि, आत्म०, विधिलिङ्, प्र० पु०, एक व०, उसे पाना चाहिए

विन्ध्यो (विन्ध्यस्)--प्रथमान्त, एक व०, पु०, विन्ध्य पर्वत श्रेणी जो भारत को दक्षिण से पृथक् करती है

विन्यस्य--वि और नि पूर्वक अस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रखकर, डालकर

विपरीतम्--प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, उलटा

विपरीतानि--द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, उलटों को

विपरीतास्--प्रथमान्त, बहु व०, पु०, उलटे

विपर्ययः (विपर्ययश्)--प्रथमान्त, एक व०, पु०, उलटा अन्तर

विपिने--सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, वन में

विपुलश्रोणि--बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे स्थूल नितम्बों वाली

विपुले--सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, बड़े में

विप्र--सम्बोधन, एक व०, पु०, हे ब्राह्मण

विप्रयुक्तः--वि और प्र पूर्वक युज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, भिन्न, पृथक्

विप्रसमागमम्--तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, ब्राह्मणों के आगमन को

विप्रा (विप्रास्)--प्रथमान्त, बहु व० पु०, ब्राह्मणलोग

विप्रा (विप्रास्)--सम्बोधन, बहु व०, पु० हे ब्राह्मणो

विप्रियम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अपराध को, अप्रिय को

विबुधा (विबुधास्)--सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे देवताओ

विबुधान्--द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, देवताओं को

विबुधेश्वराः--तत्पु० समास, सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे देवताओं के स्वामिओं

विब्रुवन्तु--वि पूर्वक ब्रू धा०, आज्ञा, प्र० पु०, बहु व०, वे कहें

विभावसोः--षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सूर्य का

विभीतकम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विभीतक (वृक्ष) को

विभीतकश्--प्रथमान्त, एक व०, पु०, विभीतक (बहेड़े का वृक्ष)

विभुः (विभुस्)--प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्वामी

विभूत्यर्थम्--अव्यय, कल्याण के लिये

विभो--सम्बोधन, एक व०, पु०, हे प्रभु

विभ्रमन्--वि पूर्वक भ्रम् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घूमता हुआ

विमनास्--प्रथमान्त, एक व०, पु०, चेतनाहीन

विमानानि--द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, विमानों को

विमुक्तम्--वि पूर्वक मुच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, स्वतन्त्र को, छुटे हुये को

विमुक्तः--प्रथमान्त, एक व०, पु०, छुटा हुआ, स्वतंत्र

विमुच्य--वि पूर्वक मुच् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़कर, स्वतन्त्र करके

विमुञ्चन्तो (विमुञ्चन्तस्)--वि पूर्वक मुच् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, वहु व०, पु०, छोड़ते हुये, बोलते हुये

विमृश्य--वि पूर्वक मृश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, विचार करके

विमोक्ष्यति--वि पूर्वक मुच् धा०, भविष्यत्, प्र० पु०, एक व०, वह छोड़ेगा

विमोचनात्--पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, छोड़ने से

विमोचय--वि पूर्वक मुच् धा०, चुरादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू छोड़

वियोगम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विरह को

वियोगश् (वियोगस्)--प्रथमान्त, एक व०, पु०, विरह

विरजांसि--द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, धूलि विहीनों को

विरहिता--वि पूर्वक रह् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री० अलग, हीन

विराजद्भिर्--वि पूर्वक राज् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, चमकनेवालों से, शोभित होने वालों से

विराजितम्--द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शोभित होने वाले को

विरूपो--प्रथमान्त, एक व०, पु०, कुरूप

विलज्जमाना--वि पूर्वक लज्ज् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लज्जाशीला

विलपन्ती--प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी, विलाप करती हुयी

विलपन्तीम्--वि पूर्वक लप् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी को, विलाप करती हुयी को

विलपमाना--वि० पूर्वक लप् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रोती हुयी

विलपितम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, रोना, विलाप

विलप्य--वि पूर्वक लप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रोकर, विलाप करके

विलम्बितुम्--वि पूर्वक लम्ब् धा०, भ्वादि, तुमुन् प्रत्यय, देर करने के लिए

विललाप--वि पूर्वक लप् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने विलाप किया, वह रोया

विवरो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, फैलाव, चौड़ाई

विवर्णवदना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, फीके या पीले मुखवाली

विवर्णा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, फीकी, पीली

विवर्णाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, फीकी या पीली को

विवस्त्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वस्त्रहीन को

विवाससम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वस्त्रहीन को

विवासाद्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, घर से निकलने से

विवाहम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विवाह को

विविधांश् (विविधान्)—द्वितीयान्त, बहुव०, पु०, अनेक प्रकारों को

विविधेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, अनेक प्रकारों में

विविधैः (विविधैर्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, अनेक प्रकारों से

विविधोपलभूषितम्—कर्मधारय और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अनेकों मणियों से विभूषित को

विविशाते—वि पूर्वक विश् धा०, आत्म०, लिट्, प्र० पु०, द्वि व०, उन दोनों ने प्रवेश किया

विविशुर् (विविशुस्)—वि पूर्वक विश् धा०, आत्म०, प्र० पु०, बहु व०, उन्होंने प्रवेश किया था

विवेश—वि पूर्वक विश् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व० उसने प्रवेश किया

विशङ्काम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शक को

विशस्य—वि पूर्वक शस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, दो करके, खोल करके

विशाम्पतिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वैश्यों का राजा

विशाम्पते—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व० पु०, हे राजन्

विशारदम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चतुर को

विशालाक्षः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़े नेत्रों वाला

विशालाक्षीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बड़े नेत्रों वाली को

विशितेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, तेज़ से

विशिष्टः—विशेष, श्रेष्ठ

विशिष्टायाः (विशिष्ठायास्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, श्रेष्ठ, (स्त्री) का

विशिष्टेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, विशेष से

विशीर्णो (विशीर्णस्)—वि पूर्वक श्रृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कुचला हुआ, दलित, टूटा हुआ

विशेषतः (विशेषतो, विशेषतश्, विशेषतस्)—अव्यय, विशेष रूप से

विशेषेण—तृतीयान्त, एक व०, विशेष से

विशोका—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोकहीना

विशोकाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शोकहीन को

विश्रब्धम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, गुप्त, विश्वस्त, रहस्य को

विश्रान्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आराम किये हुये को

विश्रान्ता—वि पूर्वक श्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आराम की हुयी

विश्राम्यताम्—वि पूर्वक श्रम् धा०, कर्मवाच्य, आज्ञा, प्र० पु०, एक व०, वह आराम करे

विश्रुतः—वि पूर्वक श्रु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रसिद्ध

विश्रुता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्रसिद्ध

विश्रुताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रसिद्ध को

विषम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, विष को

विषनिमित्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विष से बनी हुयी

विषमस्थः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कष्ट में पड़ा हुआ

विषमस्थस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, कष्ट में पड़े हुये का

विषमस्थेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, कष्ट में पड़े हुये से

विषमे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, कष्ट या दुःख में

विषमेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, कष्टों या दुःखों में

विषविमुक्तात्मा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, विष से मुक्त आत्मा वाला

विषीदन्—वि० पूर्वक सद् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःख करता हुआ

विषीदन्तम्—वि पूर्वक सद् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःख करते हुये को

विषेण—तृतीयान्त, एक व०, नपुं० विष से

विष्टभ्य—वि पूर्वक स्तम्भ् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रुक कर, खड़ा करके

विष्टितम्—वि० पूर्वक स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, खड़े हुये को

विसर्जने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, विदा से

विससृपुः—वि पूर्वक सृप् धा०, लिट्, प्र० पु०, बहु व०, वे इधर उधर उड़े, रेंगे

विसृज्य—वि पूर्वक सृज् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़कर, गिराकर विदा करके

विस्तरेण—अव्यय, विस्तार से

विस्तीर्णाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, फैली हुयी को

विस्पष्टाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्पष्ट को

विस्मयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आश्चर्य को

विस्मयान्विताः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री, आश्चर्य से भरी हुयी

विस्मयाविष्टो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आश्चर्य से भरा हुआ

विस्मयः (विस्मयस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आश्चर्य

विस्मितस्—वि पूर्वक स्मि धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आश्चर्यचकित

विस्मिता (विस्मिताश्, विस्मितास्)—वि पूर्वक स्मि धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री० आश्चर्यचकित

विस्मिताननः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आश्चर्यचकित मुख वाला

विस्मितैर्—वि पूर्वक स्मि धा०, भूतकालिक कर्मकृदन्त, तृतीयान्त, बहु० व०, पु०, आश्चर्यचकितों से

बिहगैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पक्षियों से

विहङ्गैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पक्षियों से

विहरंश् (विहरन्)—वि पूर्वक हृ धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घूमता हुआ, बिहार करता हुआ, खेलता हुआ

विहातुम्—वि पूर्वक हा धा०, तुमुन् प्रत्यय, छोड़ने के लिये

विहाय—वि पूर्वक हा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़कर

विहायसा—अव्यय, आकाश में ऊँचे

विहितश् (विहितो, विहितस)—वि पूर्वक धा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, पु०, बनाया हुआ

विहिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बनी या की हुयी

विहीनौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, रहित, अलग

विह्वलम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, व्याकुल को

विह्वला—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, व्याकुल, दुःखी

विह्वलाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दुःखी या व्याकुल को
वीक्षितुम्—वि० पूर्वक ईक्ष् धा०, तुमुन् प्रत्यय, देखने के लिए
वीतशोक—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शोकहीन
वीर—सम्बोधन, एकव०, पु०, हे वीर
वीरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वीर को
वीरः (वीरो, वीरश्, वीरस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीर
वीरप्रजायिनि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे वीरों को जन्म देने वाली
वीरबाहोर् (वीरबाहोस्)—षष्ठयन्त, एक व०, पु०, वीरबाहु नामक राजकुमार का
वीरसेनः (वीरसेनस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीरसेन
वीरसेनसुतप्रिया—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, वीरसेन के पुत्र की प्यारी
वीरसेनसुतो—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीरसेन का पुत्र
वीरस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, वीर का
वीराः (वीरास्)—सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे वीरो
वीरे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वीर में
वीरेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वीर से
वीर्यसत्त्ववतो—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, वीरता और साहस से सम्पन्न
वीर्यसम्पन्नः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीर
वृक्षमूलेषु—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, नपु०, वृक्षों की जड़ों में
वृक्षे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, वृक्ष पर
वृक्षेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, वृक्षों पर
वृणीते—वृ धा०, क्र्यादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह चुनता है
वृणे—वृ धा०, क्र्यादि, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं चुनता हूँ
वृतम्—वृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, घिरे हुये को
वृतः (वृतो, वृतस्)—वृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घिरा हुआ
वृताम्—वृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, घिरी हुयी को
वृते—वृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, चुने जाने पर
वृत्तान्तम्—द्वितियान्त, एक व०, पु०, वृत्तान्त को, समाचार को
वृद्धानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, बूढ़ों का

वृद्धानुशासनम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, वृद्धों के आदेश को
वृषेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, बैल या साँड से
वृषो (वृषस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, साँड, बैल
वृहत्सेनाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बड़ी सेना को
वृहत्सेने—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे बड़ी सेने
वृहदश्व (वृहदश्वः)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वृहदश्व ऋषि जिसने युधिष्ठिर को नलोपाख्यान सुनाया था
वेगः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वेग, गति, तेज़ी
वेगतः—अव्यय, वेग से, तेज़ी से
वेगेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, वेग से, तेज़ी से
वेतनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, वेतन
वेतसैर् (वेतसैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वेतों से
वेत्ति—विद् धा०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह जानता है
वेत्थ—विद् धा०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू जानता है
वेत्स्यामि—विद् धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं जानूँगा
वेद—विद् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, वह जानता है
वेदपारगैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वेदों का अच्छा ज्ञान रखने वालों से
वेदविच् (वेदविद्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वेदों का ज्ञाता
वेदवेदाङ्गपारगः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वेद और वेदांगों का अच्छा ज्ञान रखने वाला
वेदाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, वेद
वेदान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, वेदों को
वेदितुम्—विद् धा०, तुमुन् प्रत्यय, जानने के लिये
वेपथुश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कम्पन, हलचल
वेपमानः (वेपमानो, वेपमानस्)—वेप् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कांपता हुआ
वेपमाना—वेप् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कांपती हुयी
वेपमानाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कांपती हुयी को
वेलाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, समय को
वेश्म—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, घर
वेश्मनि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, घर में

वेश्मानि--द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, घरों को

वै--अव्यय, वास्तव में ।

वैक्लव्यम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, विकलता

वैदर्भि--सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे वैदर्भि, दमयन्ती

वैदर्भी--प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विदर्भराज की पुत्री दमयन्ती

वैदर्भीम्--द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती को

वैदर्भिजननी--प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती की माता

वैदर्भ्या--तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती से

वैदर्भ्याम्--सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती में

वैदर्भ्याः--षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, दमयन्ती का

वैशसम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, वध या नाश को

वैश्रवणः--प्रथमान्त, एक व०, पु०, कुवेर का दूसरा नाम

वैषम्यम्--द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दुःख, कठिनता या दुर्भाग्य को

वो (वस्)--द्वितीयान्त, चतुर्थ्यन्त अथवा षष्ठ्यन्त, बहु व०, तुमको, तुम्हारे लिये, तुम्हारा

व्यक्तम्--अव्यय, स्पष्ट, निश्चित

व्यथते--व्यथ् धा०, भ्वादि, आत्म० वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह पीड़ित होता है, कष्ट पाता है

व्यथयन्ति--व्यथ् धा०, चुरादि, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, वे दुःख या कष्ट पाते हैं

व्यथितम्--व्यथ् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, व्याकुल परेशान

व्यथिता--प्रथमान्त, बहु व०, पु०, परेशान, दुःखी

व्यदीर्यत--वि पूर्वक दृ धा०, कर्मवाच्य, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, फाड़ डाला

व्यपनीय--वि और अप् पूर्वक नी धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, हटाकर, अलग करके

व्यपाकर्षद्--वि और अप पूर्वक कृष् धा०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने हटाया

व्यभ्रे--सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, बादलों से हीन में

व्ययुज्यत--वि पूर्वक युज् धा०, कर्मवाच्य, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, अलग कर दिया गया

व्यरोचत—वि पूर्वक रुच् धा०, भ्वादि, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, वह चमका

व्यवर्धत—वि पूर्वक वृध् धा०, भ्वादि, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, बढ़ा, दृढ़ हो गया

व्यवसायेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, काम, उपाय या परिश्रम से

व्यवसिता (व्यवसितास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, निश्चय किये हुये, दृढ़ निश्चय करने वाले

व्यसनम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, दुःख, दुर्भाग्य

व्यसनान्विताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री० दुःख में फंसी हुयी को

व्यसनाप्लुतम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःख में फंसे हुये को

व्यसनिनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःखी को, दुःख में पड़े हुये को

व्यसनेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, दुःख से

व्यसर्जयत्—वि पूर्वक सृज् धा० (प्रेरणार्थक), अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, छोड़ दिया, बिदा कर दिया

व्यसुः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्राणहीन

व्याकुलाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, व्याकुल

व्याघ्रैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, चीतों से

व्याजहार—वि और आ पूर्वक हृ धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने कहा, वह बोला

व्यात्तास्यो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, खुले मुँह वाला

व्याधः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बहेलिया

व्याहरसे—वि और आ पूर्वक हृ धा०, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू हँसी से बात करता है

व्याहरिष्यसि—वि और आ पूर्वक हृ धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू हँसी करेगा

व्याहर्तुम्—वि और आ पूर्वक हृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, कहने के लिये

व्युषितो (व्युषितस्)—वि पूर्वक वस् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, रहता हुआ

व्युष्टा—वि पूर्वक वस् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रहती हुयी, रहकर

व्यूढोरस्क—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे विशाल वक्षस्थल वाले

व्योम्नि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, आकाश में

व्रज—व्रज् धा०, भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जा

व्रजामि—व्रज् धा०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं जाता हूँ

व्रजेत् (व्रजेद्)—व्रज् धा०, भ्वादि, विधिलिङ, प्र० पु०, एक व०, उसे जाना चाहिये

व्रतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, प्रतिज्ञा

व्रीडिताः (व्रीडितास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, लज्जित

श

शंश—शंस् धा०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू कह

शंसत—शंस् धा०, भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम सब कहो

शंसति—शंस् धा०, भ्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह कहता है, घोषित करता है, वर्णन करता है

शंससि—शंस् धा०, भ्वादि, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू कहता है

शकुनाः (शकुनास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पक्षी

शकुनानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, नपुं०, पक्षियों का

शकुनैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, पक्षियों से

शक्तो (शक्तस्)—शक् धा०, स्वादि, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, समर्थ, योग्य

शक्नुवन्ति—शक् धा०, स्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, वे योग्य या समर्थ हैं

शक्नोमि—शक् धा०, स्वादि, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं योग्य या समर्थ हूँ

शक्यते—शक् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह योग्य है

शक्यसे—शक् धा०, दिवादि, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू योग्य है

शक्या—शक् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, योग्या

शक्याव् (शक्यौ)—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, योग्य

शक्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इन्द्र को

शक्रः (शक्रो, शक्रस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, इन्द्र का नाम

शक्रेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, इन्द्र से

शङ्कमाना—शङ्क् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शङ्का करती हुयी, डरती हुयी

शङ्कसे—शङ्क् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू शङ्का करता है, डरता है

शङ्का—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भय, शङ्का

शङ्के—शङ्क् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं शङ्का करता हूँ, सोचता हूँ

शङ्केत्—शङ्क धा०, भ्वादि, आत्म०, विधिलिङ, प्र० पु०, एक व०, उसे शङ्का करना चाहिये

शचीपतिः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शची का पति इन्द्र

शच्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, इन्द्र की पत्नी शची से

शत—नपुं०, सौ

शतम्—प्रथमान्त, व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सौ।

शतक्रतुम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, इन्द्र को।

शतपत्रायतेक्षणाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कमल के समान बड़े नेत्रों वाली को

शतयोजनयायिभिः— बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सौ योजन तक चलने वालों से

शतशो (शतशस्)—अव्यय, सैकड़ों बार

शताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सैकड़ों

शत्रुघ्न—सम्बोधन, एक व०, हे शत्रुओं को मारने वाले

शत्रुतः (शत्रुतस्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, शत्रु से

शनकैः (शनकैस्, शनकैर्)—अव्यय, धीरे धीरे

शनैः (शनैस्)—अव्यय, धीरे धीरे

शपेन् (शपेत्)—शप् धा०, भ्वादि, विधिलिङ, प्र० पु०, एक व०, उसे शाप देना चाहिये

शप्तुम्—शप् धा०, तुमुन् प्रत्यय, शाप देने के लिये

शप्तो (शप्तस्)—शप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शाप पाया हुआ

शप्स्यसे—शप् धा०, आत्म०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू शाप देगा

शब्दम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शब्द को

शब्दः (शब्दो, शब्दस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शब्द

शमः (शमस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शान्ति

शयानम्—शी धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सोते हुये को

शय्यासनभोगेषु—द्वन्द्व समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, बिस्तर, आसन और भोजनों में

शरणम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, आश्रय, शरण को

शरणार्थिनः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, शरणार्थी

शरणार्थिनी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शरण चाहने वाली

शरण्य—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शरण देने वाले

शरदः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, वर्षों को, शरदों को

शरदाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, स्त्री० शरद् ऋतुओं का

शरीराणि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, शरीरों को

शरीरान् (शरीरात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, शरीर से

शरीरान्तकरो (शरीरान्तकरस्)—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शरीर को नष्ट करने वाला

शरीरिणः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, शरीरधारियों का

शरीरे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, शरीर में

शशाप—शप् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने शाप दिया

शशास—शास् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने शासन किया, आज्ञा दी

शशिनः (शशिनो, शशिनस्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, चन्द्रमा का

शश्वज् (शश्वत्)—अव्यय, सदैव, अमर

शस्त्रम्—नपुं०, शस्त्र

शस्त्रपाणयः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, हाथ में शस्त्र रखने वाले

शस्त्राणि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, शस्त्र

शस्त्रेण—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, शस्त्र से

शाखयोः—सप्तम्यन्त, द्वि व०, स्त्री०, दोनों शाखाओं पर

शाखामृगगणायुतम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बन्दरों के समूहों से भरे हुये को

शाखायाः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, शाखा का

शाखे—द्वितीयान्त, द्विव०, स्त्री०, दोनों शाखाओं को

शातयिष्ये—शद् धा० (प्रेरणार्थक), आत्म०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं काटूँगा, फाड़ूँगा

शातयित्वा—शद् धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, काटकर, फाड़कर

शातयामास—शद् धा० (प्रेरणार्थक), लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने काट डाला, फाड़ डाला

शान्तज्वरा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शान्तज्वर वाली

शान्तिस्—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शान्ति

शापाग्निः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शाप की अग्नि
शापात् (शापाद्, शापात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, शाप से
शापेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, शाप से
शारदी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शरद् ऋतु की
शार्दूलमृगसेवितम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, चीते और हरिण से बसे हुये को
शार्दूलो (शार्दूलस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, चीता
शालवेणुधवाश्वत्थतिन्दुकेङ्गुदीकिंशुकैः—द्वन्द्व समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, शाल, बांस, धव, पीपल, तिन्दुक, इङ्गुद और पलाश के वृक्षों से
शालास्थाश्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, अस्तबल में खड़े हुये
शालिहोत्रो (शालिहोत्रस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शालिहोत्र, घोड़ों का ज्ञाता
शाश्वताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, अमर, सदैव रहने वाले
शाश्वतो (शाश्वतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अमर
शासनम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, आज्ञा, राज्य
शासनात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, नपुं०, आज्ञा से
शास्त्रतः (शास्त्रतस्)—अव्यय, शास्त्रानुसार
शिखरैश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, चोटियों से
शिखिनः (शिखिनस्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मोर
शिरस्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सिर
शिलातलम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, चट्टान की सतह को
शिलोच्चयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पर्वत को
शिल्पानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, शिल्प, कला
शिवः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, कल्याणकारी, सुरक्षित
शिष्टा—शिष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बची हुयी
शिष्यस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शिष्य
शीघ्रम्—अव्यय, शीघ्रता से
शीघ्रयाने—कर्मधा० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, शीघ्रगामी सवारी में
शीघ्रयानेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, शीघ्रगामी सवारियों में
शीघ्रा (शीघ्रास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, शीघ्र
शीतांशुना—तृतीयान्त, एक व०, पु०, चन्द्रमा से

शीर्णानाम्—शृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, टूटे हुओं का

शीलनिधिः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शील का सागर

शीलवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शीलवान्

शुचः (अशुचः)—शुच् धा०, लिट्, म० पु०, एक व०, तू ने शोक किया

शुचिर् (शुचिस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सेना के अधिकारी का नाम (शुचि)

शुचिस्मिता—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर मुस्कान वाली

शुचिस्मिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर मुस्कान वाली को

शुचिस्मिते—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दर मुस्कान वाली

शुच्युपचारो—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पवित्र आचरण वाला

शुद्धान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, शुद्धों को

शुध्यते—शुध् धा०, वर्तमान, कर्म०, प्र० पु०, एक व०, शुद्ध किया जाता है

शुभ—पु०, सुन्दर, अच्छा, प्रसन्न

शुभा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी, अच्छी

शुभाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अच्छी या सुन्दरी को

शुभानना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर मुख वाली

शुभे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, अच्छे या शुभ में

शुभे—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दरी

शुभेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, सुन्दर से

शुश्राव—श्रु धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने सुना

शुश्रुवुः (शुश्रुवुस्)—श्रु धा०, लिट्, प्र० पु०, बहु व०, उन्होंने सुना

शुष्कस्रोताम्—बहु० समास, द्वितीयान्त,एक व०, स्त्री०, शुष्कस्त्रोत वाली (नदी) को

शून्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शून्य या खाली को

शून्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, शून्य में

शूरः (शूरस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वीर

शूरा (शूरास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, वीर

शृङ्गशतैर्—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, सैकड़ों चोटियों से

शृङ्गाणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, नपुं०, चोटियों का

शृङ्गैर् (शृङ्गैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, चोटियों से

शृणु—श्रु धा०, स्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, सुन

शृणुत—श्रु धा०, स्वादि, आज्ञा, म० पु०, बहु व०, तुम सब सुनो

शृणोति—श्रु धा०, स्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह सुनता है

शृण्वतोः—श्रु धा०, स्वादि, वर्तमान कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, द्वि व०, दो सुनते हुओं का
शेते—शी धा०, अदादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, सोता है, सोती है
शेषे—अव्यय, बचे हुये में, बचने पर
शोकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, दुःख को
शोककर्षिता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दुःख के कारण दुर्बल
शोकजम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, दुःख से उत्पन्न
शोकजेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, दुःख से उत्पन्न होने वाले से
शोकदुःखसमन्विता— द्वन्द्व और तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोक और दुःख से भरी हुयी
शोकदुःखाभ्याम्—द्वन्द्व समास, तृतीयान्त, द्वि व०, नपुं०, शोक और दुःख से
शोकनाशन—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शोक को नष्ट करने वाले
शोकनाशनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, शोक नष्ट करने वाले को
शोकपरायणा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोक में पड़ी हुई
शोकपरिप्लुतः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शोक से भरा हुआ
शोकविनाशिनीम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शोक को नष्ट करने वाली को
शोकविवर्धन—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे शोक को बढ़ाने वाले
शोकविवर्धनः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शोक को बढ़ाने वाला
शोकसंविग्नमानसः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शोक से व्याकुल मन वाला
शोकसन्तप्ता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोक से पीडित
शोकात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, शोक से
शोकार्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोक से दुःखी
शोकार्ताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, शोक से दुःखी को
शोकार्तो—प्रथमान्त, द्विव०, पु०, (दो) शोक से पीड़ित
शोके—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, शोक में
शोकेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, शोक से
शोकोन्मथितचित्तात्मा— बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शोक से व्याकुल आत्मा वाला
शोकोपहतचेतना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोक से प्रभावित मन वाली
शोचति—शुच् धा०, भ्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह शोक करता है, करती है

शोचन्—शुच् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, शोक करता हुआ

शोचन्तीम्—शुच् धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सोचती हुयी को

शोचन्ते—शुच् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, वे शोक करते हैं

शोचन्त्या—शुच् धा०, वर्तमान कृदन्त, तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, शोक करती हुयी से

शोचसे—शुच् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, म० पु०, एक व०, तू शोक करता है।

शोचामि—शुच् धा०, भ्वादि, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं शोक करता हूँ।

शोचितुम्—शुच् धा०, तुमुन् प्रत्यय, शोक करने के लिए।

शोधयामास—शुध् धा० (प्रेरणार्थक), लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने शुद्ध कर लिया

शोभते—शुभ् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, शोभित होता है

शोभने—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे शोभित होने वाली

शोभन्ते—शुभ् धा०, भ्वादि, आत्म०, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, शोभित होते हैं

शोभमाना—शुभ् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, शोभित होती हुई

शोषयति—शुष् धा०, (प्रेरणार्थक), वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, सुखाता है, सुखाती है

शौचम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, पवित्रता, स्वच्छता

श्यामः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, काला

श्यामा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, काली

श्यामाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, काली को

श्यामायाः—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, काली का

श्यालाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, साले

श्रमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, परिश्रम को

श्रमकर्षितः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, परिश्रम या थकावट से व्याकुल

श्रममोहिताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, थकावट या परिश्रम से चेतनाहीन को

श्रान्तः—श्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, थका हुआ
श्रान्तस्य—श्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, थके हुये का
श्रान्ता—श्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, थकी हुयी
श्रावयाञ्चक्रिरे—श्रु धा० (प्रेरणार्थक), आत्म०, लिट्, प्र० पु०, बहु व०, उन्होंने सुनाया
श्रावितश्—श्रु धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुनाया हुआ
श्रियम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, लक्ष्मी को
श्रिया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, लक्ष्मी से
श्री—स्त्री०, शोभा, लक्ष्मी
श्रीमतीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, धनवती को, शोभावती को
श्रीमन्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, धनवान् को
श्रीमांश् (श्रीमान्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धनवान्, शोभावान्
श्रीर् (श्रीस्)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लक्ष्मी
श्रुतम्—श्रु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, नपुं०, सुना हुआ
श्रुतः (श्रुतो, श्रुतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुना हुआ
श्रुता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुनी हुयी
श्रुतानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, सुने हुओं को
श्रुत्वा—श्रु धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सुनकर
श्रेयः (श्रेयो, श्रेयस्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, श्रेय, श्रेयको, बड़ाई को
श्रेयसा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, बड़ाई से, श्रेय से
श्रेष्ठम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्रेष्ठ, उत्तम को
श्रेष्ठस् (श्रेष्ठो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, उत्तम, श्रेष्ठ
श्रोतुम्—श्रु धा०, तुमुन् प्रत्यय, सुनने के लिये
श्रोष्यामि—श्रु धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं सुनूँगा
श्लक्ष्णया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, चिकने या कोमल से
श्लोकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, श्लोक को
श्व (श्वस्)—अव्यय, कल (आने वाला)
श्वशुराः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, श्वसुर

श्वशुरान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, श्वसुरों को

श्वशुरः (श्वसुरो, श्वसुरस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, श्वसुर

श्वापदसेविते—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, हिंसक पशुओं के निवास में

श्वापदाचरिते—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, हिंसक पशु के समान आचरण करने पर

श्वोभूते—सप्तम्यन्त, एक व०, कल होने पर, कल प्रातः

ष

षट्शतैश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, छः सौ से

षष्ठः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, छठा

षोडशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सोलहवाँ

स

स—उपसर्ग, सहित, साथ

सः (सस्)—सर्वनाम, प्रथमान्त, एक व०, पु०, वह

सम्—उपसर्ग, साथ साथ

सयंच्छ—सम् पूर्वक यम् धा०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू रोक

संयताहारैर्—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, भोजन छोड़ देने वालों से

संयतेन्द्रियः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, इन्द्रियों को वश में करने वाला, रोकने वाला

संयतेन्द्रियैः—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, इन्द्रियों को रोकने वालों से

संरब्धाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, क्षुब्ध

संरम्भो (संरम्भस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, क्रोध

संरुध्य—सम् पूर्वक रुध् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, रोक कर

संविग्ना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, व्याकुल, क्षुब्ध

संविधीयतास्—सम् और वि पूर्वक धा धा०, आज्ञा, प्र० पु०, एक व०, वह करे, ठीक करे

संवीता—सम् पूर्वक व्ये धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ढकी हुयी

संवृता—सम् पूर्वक वृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, ढकी हुयी

संवृताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, ढकी हुयी को

संवृतो (संवृतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ढका हुआ

संवृतैर् (संवृतैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, भरे हुओं से, ढके हुओं से

संवृत्तः—सम् पूर्वक वृत् धा०, भूतकालिक कर्मकृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, हुआ, हो गया

संवेद्यो (संवेद्यस्)—सम् पूर्वक विद् धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु० अनुभव करने योग्य

संशयः (स्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सन्देह, संशय

संश्रुत्य—सम् पूर्वक श्रु धा०, भूतकालिक अविभक्ति कृदन्त, सुनकर, प्रतिज्ञा करके

संसक्तवदनाश्वासा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मुख की श्वास में लगा हुआ

संसुप्तम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सोये हुये को, गहरी नींद सोये हुए को

संस्पृश्य—सम् पूर्वक स्पृश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़ कर

संस्मर्तव्यस्—सम् पूर्वक स्मृ धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, स्मरण करने योग्य, विचारणीय

संस्मृत्य—सम् पूर्वक स्मृ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, स्मरण करके

संहर्त्तुम्—सम् पूर्वक हृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, रोकने के लिए

सकातराः—सम्बोधन, बहु व०, पु०, हे कायरो

सकाशम्—अव्यय, सामने, निकट

सक्ता—सञ्ज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लगी हुयी

सखा—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मित्र

सखायम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मित्र को

सखी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सखी

सखींस् (सखीन्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मित्रों को

सखीगणसमावृताम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, मित्रमण्डली से घिरी हुयी को

सखीगणावृता—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, मित्रमण्डली से घिरी हुयी

सखीजनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सखियों के समूह को

सखीजनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सखियों का समूह

सखीनाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, स्त्री०, सखियों का

सखीमध्ये—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सखियों के बीच में

सखीभिः—तृतीयान्त, बहु व०, स्त्री०, सखियों से

सख्यस् (सख्यश्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, सखियाँ

सगणाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सेवकों के सहित

सङ्कटे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सङ्कट में

सङ्करो (सङ्करस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, जातियों की मिलावट

सङ्कल्पम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, निश्चय को, योजना को

सङ्कीर्त्यमानेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, घोषित किये जाने पर, मनाये जाने पर

संक्षिप्य—सम् पूर्वक क्षिप् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, संक्षिप्त करके

संख्यातुम्—सम् पूर्वक ख्या धा०, तुमुन् प्रत्यय, गिनने के लिये, हिसाब लगाने के लिए

संख्याने—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, गिनने पर, हिसाब में।

संख्याय—सम् पूर्वक ख्या धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, गिनकर

संख्यास्यामि—सम् पूर्वक ख्या धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं गिनूँगा

संख्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, युद्ध में

सङ्गच्छ—सम् पूर्वक गम् धा०, भ्वादि, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू संगठित हो, साथ साथ चल

सङ्गत्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, संयोग से, शायद

सङ्गमो (सङ्गमस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मिलन, संगठन

सङ्गम्य—सम् पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, साथ आकर, संगठित होकर

सङ्गृहीतेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, पकड़े हुओं में, काटे हुओं में

सङ्ग्रामम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, युद्ध को

सङ्ग्रामजिद्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, युद्ध को जीतने वाला

सङ्ग्रामेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, पु०, युद्धों में

सञ्चारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चाल, मार्ग या प्रवेशद्वार को

सञ्चिन्तयन्ती—सम् पूर्वक चिन्त् धा०, चुरादि, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, विचार करती हुयी।

सञ्चेष्ठमानस्य—सम् पूर्वक चेष्ठ् धा०, आत्म०, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, कार्य करते हुए का

संचोदयामास—सम् पूर्वक चुद्, चुरादि, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने प्रेरित किया

सञ्जय—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे सञ्जय (धृतराष्ट्र का सारथी)
सञ्जीव—सम् पूर्वक जीव् धा०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू जीवित रह
सतः (सतस्)—अस् धा०, वर्तमान कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, होते हुये का, रहते हुये का
सती—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, साध्वी स्त्री
सती—अस् धा०, अदादि, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, होती हुयी
सत्कारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सत्कार को
सत्कारार्हो (सत्कारार्हस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्कार के योग्य
सत्कारेण—तृतीयान्त, एक व०, पु०, सत्कार से
सत्कृतः (सत्कृतो, सत्कृतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सम्मानित।
सत्कृता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सम्मानित
सत्कृत्य—भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, सत्कार करके, सम्मान करके
सत्यम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सत्य को
सत्यदर्शिनः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सत्य को देखने वाले का
सत्यधर्मपरायणः—द्वन्द्व और तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्य और धर्म में लगा हुआ
सत्यनामा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्यनाम वाला।
सत्यपराक्रमः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्य पराक्रम वाला
सत्यवाग्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्य बोलने वाला।
सत्यवादी—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सच बोलने वाला
सत्यवान्—प्रथमान्त, एक व०, पु० सच्चा
सत्यविक्रमम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सत्य पराक्रम वाले को
सत्यविक्रमो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्य पराक्रम वाला
सत्यव्रतो (सत्यव्रतस्)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्य प्रतिज्ञा वाला
सत्यसन्धः (सत्यसन्धो)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, कार्यों में सत्य व्यवहार करने वाला
सत्याः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, सच्ची
सत्येन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सत्य से
सत्यो (सत्यस्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, साध्वी स्त्रियाँ
सदश्वांश् (सदश्वान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, अच्छे घोड़ों को
सदा—अव्यय, सदैव

सदागतिः—पु० वायु

सदारो (सदारस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्त्री के साथ

सदृशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, समान को

सदृशी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, समान

सदृशो (सदृशः, सदृशस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, समान

सनातनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पुराना, सदैव रहने वाला

सनातनाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, पुराने, सदैव रहने वाले

सन्त्रस्ता—सम् पूर्वक त्रस् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भयभीत

सन्दिदेश—सम् पूर्वक दिश् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने आज्ञा दी

सन्दिश्य—सम् पूर्वक दिश् धा०, भूतकालिक अविभवितक कृदन्त, आज्ञा देकर, संकेत करके

सन्देहाद् (सन्देहात्)—पञ्चम्यन्त, एक व०, सन्देह से

सन्ध्याम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सन्ध्या को

सन्निधौ—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, निकट, उपस्थिति में

सन्निपातिताः—सम् और नि पूर्वक पत् धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, एकत्रित हुये

सन्निमन्त्रयामास—सम् और नि पूर्वक मन्त्र् धा०, चुरादि लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने आमंत्रित किया, बुलाया

सन्न्यासस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, दाँव, धरोहर

सपत्नानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, शत्रुओं का

सपरीवारो (सपरीवारस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, परिवार के साथ

सपुत्रायाम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, बच्चों के साथ में

सप्तदशः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सत्रहवाँ

सप्तमः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सातवाँ

सफलम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सफल को

सभाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सभा को, घर को, झोपड़ी को

सभामध्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सभा के बीच में

सभार्याय—बहु० समास, चतुर्थ्यन्त, एक व०, पु०, स्त्री के सहित वाले के लिए

सभार्ये—बहु समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, स्त्री के साथ वाले में

सभोद्देशे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सभा या आश्रम के समीप में

सम्––उपसर्ग, साथ, सहित, साथ साथ

सभ––पु०, नपुं०, समान

समङ्गलैः––तृतीयान्त, बहु व०, पु०, कल्याणकारियों में

समचिन्तयत्––सम् पूर्वक चिन्त् धा०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने विचार किया

समतिक्रम्य––सम् और अति पूर्वक क्रम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, पार करके

समतिक्रान्ता––सम् और अति पूर्वक क्रम् धा०, भूतकालिक कृदन्त, पार की हुयी, आगे बढ़ी हुयी

समतिक्रान्ते––सम् और अतिपूर्वक क्रम धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, पार करने पर

समतिक्रान्तो (समतिक्रान्तस्)––सम् और अति पूर्वक क्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, पार किया हुआ, आगे बढ़ा हुआ

समधिश्रित्य––सम् और अधि पूर्वक श्रि धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, आगे जाकर, आगे बढ़कर

समनुज्ञाते––सम् और अनु पूर्वक ज्ञा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, आज्ञा पाने पर

समनुज्ञातो (समनुज्ञातस्)––प्रथमान्त, एक व०, पु०, आज्ञा प्राप्त किया हुआ

समनुप्राप्तो (समनुप्राप्तस्)––सम्, अनु और प्र पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, पाया हुआ

समनुव्रताम्––द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, भलीभाँति व्रत में लगी हुयी को

समनुशास्ति––सम् और अनु पूर्वक शास् धा०, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह शासन करता है

समन्ताद् (समन्तात्)––अव्यय, चारों ओर

समपूजयत्––सम् पूर्वक पूज् धा०, चुरादि, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने आदर किया

समभिक्रम्य––सम् और अभि पूर्वक क्रम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकट जाकर

समभिज्ञाय––सम् और अभि पूर्वक ज्ञा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, जान या पहचान कर

समयम्––द्वितीयान्त, एक व०, पु०, समय या प्रतिज्ञा को

समयेन––तृतीयान्त, एक व०, पु०, समय, प्रतिज्ञा से

समरुद्गणौ—बहु० समास, प्रथमान्त, द्विव०, पु०, मरूतों के साथ। मरुत् वायु का ही नाम है। उनकी संख्या उनचास बतलाई गयी है। विष्णु पुराण में यह वर्णन मिलता है कि कश्यप द्वारा उत्पन्न अदिति का एक पुत्र था। इन्द्र ने उसके उनचास भाग कर दिये और उससे कहा 'मा रोदिहि' मत रोओ। इसी से मरूद् (त्) नाम पड़ गया

समर्थान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, शक्तिशालियों को

समर्थो (समर्थस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, योग्य, शक्तिशाली।

समलङ्कृतम्—सम् और अलम् पूर्वक कृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, सुशोभित

समलङ्कृता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री, सुशोभित।

समवाप्तकामा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पूर्ण इच्छा वाली

समवेताम्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, एकत्रित हुओं को

समस्तलोकस्य—कर्मधा० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सम्पूर्ण संसार का

समाकुलम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, भरे हुये को

समागतम्—सम् और आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, आये हुये को

समागताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आये हुये

समागतान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु० आये हुओं को

समागमम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, एकत्रित हुये को, सभा को

समागमात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, मिलन से

समागम्य—सम् और आ पूर्वक गम् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकट आकर, मिलकर

समादधत्—सम् और आ पूर्वक धा धा०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने धारण किया

समादाय—सम् और आ पूर्वक दा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, लेकर

समादिष्टम्—सम् और आ पूर्वक दिश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त एक व०, पु०, बताये हुये को

समादिष्टा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बतायी हुयी, आज्ञा प्राप्त की हुयी

समाद्रवन्त—सम् और आ पूर्वक द्रु धा०, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, बहु व०, वे आक्रमण करने के लिये दौड़े

समानीता—सम् और आ पूर्वक नी धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लायी हुयी

समानेतुम्—सम् और आ पूर्वक नी धा०, तुमुन् प्रत्यय, लाने के लिये, ले जाने के लिये

समाप्लुताभ्याम्—सम् और आ पूर्वक प्लु धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, तृतीयान्त द्वि व०, नपुं०, गीले, नमी से भरे हुओं को

समायान्ति—सम् और आ पूर्वक या धा०, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, आते हैं, पहुँचते हैं

समायुक्तम्—सम् और आ पूर्वक युज् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मिले हुये को, जुड़े हुये को

समारोहत्—सम् और आ पूर्वक रुह् धा०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, वह चढ़ा

समाविशत्—सम् और आ पूर्वक विश् धा०, तुदादि, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने प्रवेश किया

समाविश्य—सम् और आ पूर्वक विश् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, प्रवेश करके।

समावृणोत्—सम् और आ पूर्वक वृ धा०, स्वादि, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने ढँक दिया

समावृता—सम् और आ पूर्वक वृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, रक्षिता

समाश्वसत्—सम् और आ पूर्वक श्वस् धा०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने श्वास ली, साहस किया, पुनः जीवित हुआ

समाश्वसिहि—सम् और आ पूर्वक श्वस् धा०, आज्ञा, म० पु०, एक व०, तू धैर्य धारण कर, साहस कर

समाश्वासयत—सम् और आ पूर्वक श्वस् धा० (प्रेरणार्थक), आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, एक व०, उसने ढाँढस दिया, धीर बँधाया

समाश्वासयितुम्—सम् और आ पूर्वक श्वस् धा० (प्रेरणार्थक), तुमुन् प्रत्यय, धैर्य देने के लिए

समाश्वास्य—सम् और आ पूर्वक श्वस् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, धैर्य या साहस बँधाकर

समास्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, समान, बराबर

समासाद्य—सम् और आ पूर्वक सद् धा० (प्रेरणार्थक), भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, मिलकर, पाकर

समास्थितः—सम् और आ पूर्वक स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, अभ्यास किया हुआ, अपनाया हुआ

समाहितम्—सम् और आ पूर्वक धा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बना हुआ, रखा हुआ, डाला हुआ।

समाहितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, निश्चय करके, निश्चित

समाहिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बनी हुयी, रखी हुयी

समाहृष्यन्त—सम् और आ पूर्वक हृष् धा०, दिवादि, आत्म०, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, बहु व०, वे प्रसन्न हुये

समाह्वानम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, चुनौती को।

समीक्ष्य—सम् पूर्वक ईक्ष् धा०, अविभक्तिक कृदन्त, देख करके, ध्यान दे कर के

समीपम्—अव्यय, सामने, निकट

समीपस्था—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, समीप खड़ी हुई

समीपे—अव्यय, समीप में

समुत्पत्य—सम् और उत् पूर्वक पत् धा०, अविभक्तिक कृदन्त, ऊपर उड़कर, उड़ जा कर।

समुत्पन्नः—सम् और उत् पूर्वक पद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उत्पन्न हुआ, उत्साहित किया हुआ

समुत्पेतुर् (समुत्पेतुस्)—सम् और उत् पूर्वक पत् धा०, लिट्, प्र० पु०, बहु व०, वे उछल पड़े, कूद पड़े

समुद्यम्य—सम् और उत् पूर्वक यम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, रोककर, काटकर

समुद्रगा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, समुद्र की ओर जाने वाली

समुपदिश्यते—सम् और उप पूर्वक दिश् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, संकेत किया जाता है, दिखाया जाता है

समुपस्थितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, इकट्ठा हुये को, समीप खड़े हुये को

समुपस्थिताः—सम् और उप पूर्वक स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, उपस्थित हैं, साथ साथ पहुँचे हैं।

समुपाजग्मुर—सम्, उप और आ पूर्वक गम् धा०, लिट्, प्र० पु०, बहु व०, वे साथ आये, साथ साथ एकत्र हुये

समुपाद्रवन्—सम् और उप पूर्वक द्रु धा, अनद्यतन भूत, प्र० पु०, बहु व०, उन्होंने पीछा किया, वे पीछे दौड़े।

समुपाधावद्—सम् और उप पूर्वक धाव् धा०, अनद्यतन भूत, प्र०पु०, एक व०, दौड़ा या पीछा किया।

समुपेतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, निकट आये हुये को, पहुँचे हुये को

समृद्धम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, धनवान्, सम्पन्न

समृद्धः (समृद्धो, समृद्धस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धनवान्, सम्पन्न

समे—द्वितीयान्त, द्विव०, नपुं०, बराबर, समान।

समेतो (समेतस्)—सम् और आ पूर्वक इ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, मिला हुआ, साथ आया हुआ

समेत्य—सम् और आ पूर्वक इ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, साथ साथ आकर, मिलकर

समेष्यसि—सम् पूर्वक इ धा०, भविष्यत्, म० पु०, एक व०, तू मिलेगा, संगठित होगा

समेष्यामि—सम् पूर्वक इ धा०, भविष्यत्, उ० पु०, एक व०, मैं मिलूँगा

सम्पतन्तीम्—सम् पूर्वक पत् धा०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, आगे पीछे जाती हुयी को

सम्पतन् (सम्पतन्)—सम् पूर्वक पत् धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, उतरता हुआ, पहुँचता हुआ

सम्पन्ने—सम् पूर्वक पद् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, पाये जाने पर, पूर्ण होने पर

सम्पूर्णाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पूरी को

सम्प्रणष्टे—सम् और प्र पूर्वक नश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, नष्ट होने पर, विलीन होने पर

सम्प्रवृत्ते—सम् और प्र पूर्वक वृत् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, जाने पर, होने पर

सम्प्रहृष्टतनूरुहाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, खड़े हुये शरीर के रोम वाले, रोमांचित शरीर वाले

सम्प्रहृष्टस्य—सम् और प्र पूर्वक हृष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, आनन्दित का, प्रसन्न का

सम्प्राप्तम्—सम् और प्र पूर्वक आप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पाये हुये को, पहुँचे हुये को

सम्प्राप्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पायी हुयी, पहुँची हुयी

सम्प्राप्ते—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, पाने या पहुँचने पर

सम्प्राप्तो (सम्प्राप्तस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पाया हुआ, पहुँचा हुआ

सम्प्रेक्ष्य—सम् और प्र पूर्वक ईक्ष् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, देखकर, ध्यान से देखकर

सम्बन्धिनस् (सम्बन्धिनः)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सम्बन्धी

सम्भारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, धन, सामान को

सम्भावनीयस्—सम् पूर्वक भू धा० (प्रेरणार्थक), भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त एक व०, पु०, किसी की उपस्थिति से सम्मानित होना

सम्भावितस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सम्मानित या सम्मान योग्य का

सम्भ्रान्ताः—सम् पूर्वक भ्रम् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु० या स्त्री०, क्षुब्ध, भ्रम में पड़े हुये

सम्मते—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, राय में, सहमति में, स्वीकृति में

सम्यक् (सम्यग्)—अव्यय, पूर्णरूप से, उचित रूप से, वास्तव में

सम्यक्कर्तुम्—सम्यक् पूर्वक कृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, ठीक करने के लिए

सम्यग्गोप्ता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, ठीक से गुप्त रखने वाला, उचित ढंग से रक्षा करने वाला

सम्यग्वृत्तः—भलीभाँति विश्वस्त, भलीभाँति किया हुआ

सरांसि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, झीलों या तालाबों को

सराष्ट्राणि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, राष्ट्रों के साथ

सरितस् (सरितो)—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, नदियों को

सरिद्भिः—तृतीयान्त, बहु व०, स्त्री०, नदियों से

सर्गः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अध्याय, भाग

सर्वम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सब या सबको

सर्वः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सब

सर्वकामैः—कर्मधा० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सभी इच्छाओं से

सर्वगतम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सर्वव्यापी, सर्वत्र पहुँचने वाला

सर्वगतः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सर्वव्यापी, सर्वत्र पहुँचने वाला

सर्वगात्रेभ्यो—कर्मधा० समास, पञ्चम्यन्त, बहु व०, नपुं०, सभी अंगों से

सर्वगुणैर् (सर्वगुणैस्)—कर्म धा० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सब गुणों से

सर्वगुणोपेतम्—कर्मधा० और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सर्वगुणसम्पन्न को

सर्वज्ञो (सर्वज्ञस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सब कुछ जानने वाला

सर्वतः (सर्वतो, सर्वतस्)—अव्यय, सब ओर

सर्वतोदिशम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्रत्येक दिशा को

सर्वतोदिशः—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, सभी दिशाओं को

सर्वतोभद्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सर्वत्र शुभ रहने वाले को

सर्वत्र—अव्यय, सब जगह।

सर्वथा—अव्यय, हर प्रकार से, बिल्कुल।

सर्वदुःखेषु—कर्मधा० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, सभी दुःखों में

सर्वदेवानाम्—कर्मधा० समास, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, सभी देवताओं का

सर्वपापेभ्यः—कर्मधा० समास, पञ्चम्यन्त, बहु व०, नपुं०, सभी पापों से

सर्वभूतानाम्—कर्मधा० समास, षष्ठ्यन्त, बहु व०, नपुं०, सभी प्राणियों का

सर्वयोषितः—कर्मधा० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, सभी स्त्रियों को

सर्वरत्नसमन्वितम्—कर्मधा० और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सभी रत्नों से भरे हुये को

सर्वराष्ट्रेषु—कर्मधा० समास, सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, सभी राष्ट्रों में

सर्वलोकभयङ्करम्—कर्मधा० और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सभी संसार को भयभीत करने वाले को

सर्वशः (सर्वशस्)—अव्यय, बिल्कुल, पूर्णरूप से, सभी ओर

सर्वसम्भारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सभी सामान को

सर्वा (सर्वाः, सर्वास्)—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, सभी या सभी को

सर्वाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सभी को

सर्वाणि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, सभी, सभी को

सर्वान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सभी को

सर्वानवद्याङ्गि—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सभी अनिन्दनीय अंगों वाली

सर्वाभरणभूषिता—कर्मधा० और तत्पुरुष, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सभी आभूषणों से सुशोभित

सर्वार्थकुशलाम्—कर्मधा० और तत्पुरुष, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सभी कामों में कुशल को

सर्वे—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सब

सर्वेभ्यः—चतुर्थ्यन्त व पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु० व नपुं०, सबके लिए, सब से।

सर्वेषाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, सब का

सर्वैः (सर्वैर्, सर्वैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सब से

सलिलेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, जल से

सवाससि—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, कपड़े पहने हुये में

सवितुस्—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सूर्य का

सविदिशो (सविदिशस्)—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, बीच की दिशाओं के साथ

सविस्तराः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, विस्तार से

सविहङ्गाभिः—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, स्त्री०, पक्षियों के साथ से

सशरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वाण सहित को

सशाल्मलैः—बहु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, शाल्मली (सेमल) के वृक्षों से

सस्वजे—स्वञ्ज् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने आलिङ्गन किया।

सह—अव्यय, साथ

सहजः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, साथ उत्पन्न हुआ, स्वाभाविक

सहवार्ष्णेयजीवलः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, वार्ष्णेय और जीवल के साथ

सहवार्ष्णेयबाहुकम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, वार्ष्णेय और बाहुक के साथ वाले को

सहवार्ष्णेयसारथिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सारथी वार्ष्णेय के साथ

सहवाहनाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सवारियों के साथ वाले

सहसा—अव्यय, शीघ्रता से, यकायक

सहस्रम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, हज़ार को

सहायेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, साथी से

सहितः (सहितो, सहितस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सहित

सहिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, साथ वाली को

सहिताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सहित

सहिताव् (सहितौ)—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, सहित

सा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, वह

साक्षाद् (साक्षात्)—अव्यय, सामने

साक्षिणो (साक्षिणस्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, गवाह

साक्षिवत्—अव्यय, साक्षी के समान

सागरङ्गमाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सागर को जाने वाली को

साग्निकाः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, अग्नि के साथ वाले

साग्निहोत्राश्रमास्—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, अग्नि होत्र और आश्रम के साथ वाले

साङ्गोपाङ्गः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, अङ्ग और उपांगों के साथ। वेदाङ्ग छः हैं—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष् और निरुक्त

साधु—विस्मयादिबोधक, अच्छा, शाबास,

साधुवृत्तश्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सद् आचरण वाला
साध्वी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अच्छी, सद् आचरण वाली
सानुक्रोशो (सानुक्रोशस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, भावुक, दयावान्
सान्त्वयन्—सान्त्व् धा०, चुरादि, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, धैर्य बँधाता हुआ, समझाता हुआ।
सान्त्वयामास्—सान्त्व् धा०, चुरादि, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने धैर्य बँधाया, समझाया
सान्त्वयित्वा—सान्त्व् धा०, चुरादि, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, धैर्य बँधाकर
सान्त्वितो (सान्त्वितस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, धैर्य धारण किया हुआ, समझाया हुआ
सापत्या—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सन्तान वाली
साभिकामाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, प्यारी को
सामर्थ्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, शक्ति को
सामात्यप्रमुखा (सामात्यप्रमुखास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मुख्यमंत्रियों के साथ
सामान्यम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, सामान्य, साधारण को
सायम्—अव्यय, शाम को
सायाह्ने—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, शाम (के समय) में
सारथिः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, रथ हाँकने वाला
सारथे—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे रथ हाँकने वाले
सारथ्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सारथी के काम में
सारथ्येन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं० सारथी के काम से
सार्थम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, काफिले को, सैन्यदल को
सार्थः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, काफिला
सार्थघ्नीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, काफिले को मारने वाली को
सार्थजान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, काफिले में उत्पन्न होने वालों को
सार्थमण्डलम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, काफ़िले का समूह
सार्थवाहम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, काफ़िले के नेता को
सार्थवाहः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, काफ़िले का नेता
सार्थवाहवचस्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, काफ़िले के नेता के वचन को
सार्थवाहस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, काफ़िले के नेता का
सार्थस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु० काफ़िले का
सार्थात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, काफ़िले से

सार्थिकाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, व्यापारी
सार्थे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, काफ़िले में
सार्थेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, काफ़िले से
सार्द्धम्—अव्यय, साथ
साहाय्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सहायता
सिंहद्वीपिरुरुव्याघ्रमहिषर्क्षगणैर्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सिंह, तेंदुआ, हरिण विशेष, चीता, भैंसा और रीछ के समूहों से
सिंहविक्रान्तो—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सिंह के समान बलवान्
सिंहव्याघ्रनिषेविते—द्वन्द्व और तत्पुरुष, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सिंह और व्याघ्र से बसे हुए में
सिंहशार्दूलमातङ्गवराहर्क्षमृगायुतम्—द्वन्द्व और तत्पुरुष, सिंह, चीता, हाथी, सुअर और हरिणों से भरे हुए को
सिक्ताः—सिच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सींचे हुये
सिन्धुजान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सिन्धु (देश) में उत्पन्न होने वालों को
सीदति—सद् धा०, भ्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, बैठता है, कष्ट पाता है
सीदन्ति—सद् धा०, वर्तमान, प्र० पु०, बहु व०, वे बैठते हैं, कष्ट पाते हैं
सु—उपसर्ग, अच्छा, सुन्दर, अधिक
सुकुचा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर स्तनों वाली
सुकुमारतनुत्वचम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कोमल शरीर और खाल वाली को
सुकुमराङ्गीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कोमल अङ्गों वाली को
सुकुमारानवद्याङ्गीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कोमल और अनिन्दनीय अङ्गों वाली को
सुकुमारी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, कोमलाङ्गी
सुकुमारीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, कोमलाङ्गी को
सुकेशान्तानि—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, सुन्दर केशों वाले
सुकेशी—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर केशों वाली
सुखम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, सुख को
सुखम्—अव्यय, आनन्द या सुख से
सुखतरो (सुखतरस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अधिक आनन्ददायक
सुखदुःखे—द्वन्द्व समास, द्वितीयान्त, द्वि व०, नपुं०, सुख और दुःख को
सुखात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, सुख से

सुखानि—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, सुख, सुखों को
सुखार्हाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुख के योग्य
सुखस्पर्शम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, छूने में आनन्द देने वाले को
सुखिनः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सुखी
सुखी—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुखी
सुखोपविष्टः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुख से बैठा हुआ
सुखोषितम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सुख से रहने वाले को
सुगन्धीनि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, सुगन्धियाँ
सुचिरम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बहुत देर
सुचिरम्—अव्यय, बहुत समय तक
सुजाताङ्गीम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर अंगों वाली को
सुतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, पुत्र को
सुताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, पुत्री को
सुते—प्रथमान्त, द्वि व०, स्त्री०, दो पुत्रियाँ
सुतो (सुतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, पुत्र
सुतौ—द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, दोनों पुत्रों को
सुदाम्नश्—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सुदामा का
सुदारूणम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अत्यन्त कठोर को
सुदुःखम्—अव्यय, बहुत दुःख से
सुदुःखिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त दुःखी
सुदुर्बुद्धे—सम्बोधन, एक व०, पु०, रे बड़े मूर्ख
सुदुष्करम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, करने में बहुत कठिन
सुदेवः (सुदेवो, सुदेवस्)—सम्बोधन, एक व०, पु०, एक ब्राह्मण का नाम
सुदेवस्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सुदेव को
सुदेवस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, सुदेव का
सुदेवेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, सुदेव से
सुद्विजानना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर दाँतों के मुखवाली
सुनन्दा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुनन्दा नामक स्त्री
सुनन्दाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुनन्दा नामक स्त्री को
सुनन्दासाहिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुनन्दा के साथ वाली को
सुनन्दे—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुनन्दा

सुनासाक्षिभ्रुवाणि—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, सुन्दर नासिका, नेत्र और भौहों वाली

सुन्दरी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दरी

सुपरिश्रान्तवाहास्—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बहुत थके घोड़े या वहन करने वाले

सुपुष्पैर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सुन्दर पुष्पों से

सुपूजितौ—प्रथमान्त, द्वि व०, पु०, अत्यन्त सम्मानित

सुप्ताम्—स्वप् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एकव०, स्त्री०, सोयी हुयी को

सुप्तायाम्—सप्तम्यन्त, एक व०, स्त्री०, सोयी हुई में, सो जाने पर

सुप्ते—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सोये हुये में, सोने पर

सुप्रतिष्ठा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त प्रतिष्ठित

सुप्रीता (सुप्रीतास्)—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, अत्यन्त प्रसन्न

सुबहून्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, बहुतों को

सुबाहोः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, (चेदिराज) सुबाहु का

सुभाषिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अच्छा बोलने वाली को

सुभ्रूः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर भौहों वाली

सुमध्यमा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर कटिवाली

सुमध्यमे—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दर कटिवाली

सुमहत्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, बहुत बड़े को

सुमहाकक्षम्—कर्मधा० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, बहुत बड़े कमरे, आँगन या द्वार को

सुमहांश् (सुमहान्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बहुत बड़ा

सुमहामनाः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बहुत उच्च मनवाला

सुमृष्टपुष्पाढ्यास्—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बहुत सुन्दर (धुले हुए) पुष्पों से भरे हुए

सुरः—पु०, देवता

सुरक्षितम्—सु पूर्वक रक्ष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, सुरक्षित

सुरक्षितः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सुरक्षित

सुरक्षितानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, सुरक्षित रहने वालों को

सुरभिस्रग्धराः—बहु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सुगन्धित मालाओं को पहनने वाले

सुरसत्तमैः—तत्पु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, श्रेष्ठ देवताओं से
सुरसुतोपमौ—बहु० समास, द्वितीयान्त, द्वि व०, पु०, देवताओं के पुत्रों के समान
सुराः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, देवता
सुराङ्गना—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, देवताओं की स्त्री
सुराणाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, देवताओं का
सुरोत्तमा—तत्पु० समास, सम्बोधन, बहु व०, पु० हे देवताओं में श्रेष्ठ
सुरोत्तमान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, श्रेष्ठ देवताओं को
सुलोचनाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर नेत्रों वाली को
सवर्चसम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त प्रकाशमान को, तेजवान् को
सुवर्णस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, सोने का
सुविपुलाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहुत बड़ी को
सुविहिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, भली भाँति की हुयी
सुविहितैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, भली भाँति किए हुओं से
सुशान्ततोयाम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अत्यन्त शान्त जलवाली को
सुशीतलम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं० अत्यन्त ठण्ढ को
सुश्रोणि—सम्बोधन, एक व०, स्त्री०, हे सुन्दर नितम्बों वाली
सुश्रोणी—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, सुन्दर नितम्बों वाली
सुश्लक्ष्णाः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, अति कोमल
सुष्वाप—स्वप् धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, वह सोया
सुसंरब्धस्—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अत्यन्त क्षुब्ध, क्रुद्ध
सुसदृशम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, बहुत समान
सुसमाहितः—सु, सम् और आ पूर्वक धा धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बिल्कुल निश्चित, किसी विषय पर मन लगाया हुआ
सुसिद्धार्थो (सुसिद्धार्थस्)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, जिसका उद्देश्य पूरा हो चुका है, सफलमनोरथ
सुस्निग्धगम्भीराम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहुत कोमल और गम्भीर को
सुस्वरम्—अव्यय, उच्च और मीठे स्वर में
सुहृच्छोकविवर्धनः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मित्र के शोक को बढ़ाने वाला
सुहृत्त्यागम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मित्र के त्याग को

सुहृत्स्वजनवाक्यानि—द्वन्द्व और तत्पुरुष, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, मित्र और कुटुम्बियों के वाक्य

सुहृदः (सुहृदश्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मित्रों को

सुहृदाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, स्त्रियों का

सुहृद्वाक्यम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मित्रों के वाक्य को

सूचितः—सूच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बताया हुआ

सूचिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बतायी हुयी

सूतः (सूतस्, सूतो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सारथी।

सूत—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे सारथि,

सूतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सारथी को

सूतत्वे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सूत के कार्य में

सूतपुत्रम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सारथी के पुत्र को

सूर्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सूर्य को

सूर्योदये—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सूर्योदय होने पर

सृत्वा—सृ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकट जाकर

सेनया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, सेना से

सेनयोर्—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, स्त्री, दोनों सेनाओं का

सैरन्ध्री (सैरिन्ध्री)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दासी, काम करने वाली स्त्री, सीने वाली स्त्री

सोढुम्—सह् धा०, तुमुन् प्रत्यय, सहन करने के लिये

सोमपो (सोमपस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सोमपान करनेवाला।

सौदामिनी—स्त्री०, बिजली

सौभाग्येन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सौभाग्य से

सौहार्दम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मित्रता

सौहृदेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, प्रेम या मित्रता से

स्कन्धदेशे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, कन्धे पर

स्तब्धलोचनान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, रुके हुये नेत्रों वालों को। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार देवगण पलक नहीं मारते हैं। इसीलिये उन्हें 'अनिमिष' भी कहते हैं। अन्य भी लक्षण हैं जिनसे देवताओं और मनुष्यों में अन्तर किया जा सकता है। देवताओं की छाया नहीं दिखाई पड़ती है, उनके पसीना नहीं आता है, धूलि से वह गन्दे नहीं होते हैं, पृथ्वी पर चलने

में उनके पैर भूमि पर नहीं पड़ते है, उनके हार सीधे रहते हैं और पुष्प भी कभी कुम्हलाते नहीं है

स्त्रियम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री को

स्त्रीमन्त्रम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्त्री की राय को

स्त्रीषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, स्त्री, स्त्रियों में

स्त्रीस्वभावश्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्त्रियों का स्वभाव

स्थविरेभ्यः—पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु०, वृद्धों से

स्थविरैर् (स्थविरैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वृद्धों के द्वारा

स्थाणुर् (स्थाणुस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मज़बूत, ठूँठ

स्थापयामास—स्था (प्रेरणार्थक) धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने स्थापित किया

स्थापयित्वा—स्था (प्रेरणार्थक) धा०, भूतकालिक अविभक्ति कृदन्त, स्थापित करके

स्थावरः (स्थावरस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्थायी रहने वाला, अचल

स्थितम्—स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, खड़े हुये को

स्थिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, खड़ी हुयी

स्थिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, खड़ी हुयी को

स्थिताः—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, खड़ी हुयी

स्थितान्—स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, खड़े हुओं को

स्थितिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्थिति को

स्थित्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्थिति से

स्नुषाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहू को

स्पृशेयम्—स्पृश् धा०, तुदादि, विधिलिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे छूना चाहिए

स्पृष्टस्—स्पृश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छुआ हुआ

स्फीतो (स्फीतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़ा, मोटा

स्म—अव्यय, जो वर्तमान को भूत का अर्थ प्रदान करता है

स्म (स्मस्)—अस् धा०, वर्तमान, उ० पु०, बहु व०, हम हैं

स्मयन्—स्मि धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मुस्काता हुआ

स्मयमानम्—स्मि धा० आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मुस्काते हुये को

सुहृत्स्वजनवाक्यानि—द्वन्द्व और तत्पुरुष, प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, मित्र और कुटुम्बियों के वाक्य

सुहृदः (सुहृदश्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, मित्रों को

सुहृदाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, स्त्रियों का

सुहृद्वाक्यम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, मित्रों के वाक्य को

सूचितः—सूच् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बताया हुआ

सूचिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, बतायी हुयी

सूतः (सूतस्, सूतो)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सारथी।

सूत—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे सारथि,

सूतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सारथी को

सूतत्वे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, सूत के कार्य में

सूतपुत्रम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सारथी के पुत्र को

सूर्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सूर्य को

सूर्योदये—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, सूर्योदय होने पर

सृत्वा—सृ धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, निकट जाकर

सेनया—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, सेना से

सेनयोर्—षष्ठ्यन्त, द्वि व०, स्त्री, दोनों सेनाओं का

सैरन्ध्री (सैरिन्ध्री)—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, दासी, काम करने वाली स्त्री, सीने वाली स्त्री

सोढुम्—सह् धा०, तुमुन् प्रत्यय, सहन करने के लिये

सोमपो (सोमपस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, सोमपान करनेवाला।

सौदामिनी—स्त्री०, बिजली

सौभाग्येन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, सौभाग्य से

सौहार्दम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, मित्रता

सौहृदेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, प्रेम या मित्रता से

स्कन्धदेशे—तत्पु० समास, सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, कन्धे पर

स्तब्धलोचनान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, रुके हुये नेत्रों वालों को। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार देवगण पलक नहीं मारते हैं। इसीलिये उन्हें 'अनिमिष' भी कहते हैं। अन्य भी लक्षण हैं जिनसे देवताओं और मनुष्यों में अन्तर किया जा सकता है। देवताओं की छाया नहीं दिखाई पड़ती है, उनके पसीना नहीं आता है, धूलि से वह गन्दे नहीं होते हैं, पृथ्वी पर चलने

में उनके पैर भूमि पर नहीं पड़ते है, उनके हार सीधे रहते हैं और पुष्प भी कभी कुम्हलाते नहीं है

स्त्रियम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्त्री को

स्त्रीमन्त्रम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्त्री की राय को

स्त्रीषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, स्त्री, स्त्रियों में

स्त्रीस्वभावश्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्त्रियों का स्वभाव

स्थविरेभ्यः—पञ्चम्यन्त, बहु व०, पु०, वृद्धों से

स्थविरैर् (स्थविरैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वृद्धों के द्वारा

स्थाणुर् (स्थाणुस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मज़बूत, ठूँठ

स्थापयामास—स्था (प्रेरणार्थक) धा०, लिट्, प्र० पु०, एक व०, उसने स्थापित किया

स्थापयित्वा—स्था (प्रेरणार्थक) धा०, भूतकालिक अविभक्ति कृदन्त, स्थापित करके

स्थावरः (स्थावरस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्थायी रहने वाला, अचल

स्थितम्—स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, खड़े हुये को

स्थिता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, खड़ी हुयी

स्थिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, खड़ी हुयी को

स्थिताः—प्रथमान्त, बहु व०, स्त्री०, खड़ी हुयी

स्थितान्—स्था धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, खड़े हुओं को

स्थितिम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्थिति को

स्थित्या—तृतीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्थिति से

स्नुषाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, बहू को

स्पृशेयम्—स्पृश् धा०, तुदादि, विधिलिङ, उ० पु०, एक व०, मुझे छूना चाहिए

स्पृष्टस्—स्पृश् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छुआ हुआ

स्फीतो (स्फीतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बड़ा, मोटा

स्म—अव्यय, जो वर्तमान को भूत का अर्थ प्रदान करता है

स्म (स्मस्)—अस् धा०, वर्तमान, उ० पु०, बहु व०, हम हैं

स्मयन्—स्मि धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, मुस्काता हुआ

स्मयमानम्—स्मि धा० आत्म०, वर्तमान कृदन्त, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मुस्काते हुये को

स्मरंस् (स्मरन्)—स्मृ धा०, वर्तमान कृदन्त, स्मरण करता हुआ

स्मरन्ती—स्मृ धा०, वर्तमान कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्मरण करती हुयी

स्मरन्त्याः (स्मरन्त्यास्)—षष्ठ्यन्त, एक व०, स्त्री०, स्मरण करती हुयी का

स्मरामि—स्मृ धा०, भ्वादि, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं स्मरण करता हूँ

स्मर्तुम्—स्मृ धा०, तुमुन् प्रत्यय, स्मरण करने के लिये

स्मितपूर्वा—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, पहले मुस्काती हुयी

स्यन्दताम्—स्यन्द्, धा०, वर्तमान कर्म कृदन्त, षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, चलते हुओं का, भागते हुओं का

स्यन्दनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, रथ को

स्यन्दनैश्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, रथों से, स्यन्दन नामक वृक्षों से

स्याज् (स्यात्, स्याद्, स्यान्)—अस् धा०, विधिलिङ, प्र० पु०, एक व०, उसे होना चाहिये

स्याम—अस् धा०, विधिलिङ, उ० पु०, एक व०, हमें करना चाहिये

स्रंसते—स्रंस् धा०, भ्वादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह गिरता है, फिसलता है

स्रजश् (स्रजस्)—द्वितीयान्त, बहु व०, स्त्री०, मालाओं को

स्वम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, अपने को

स्वकम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु० व नपुं०, अपने को

स्वकाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अपनी को

स्वकान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, अपनों को

स्वगृहे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, अपने घर में

स्वजनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, सम्बन्धी, कुटुम्बी को

स्वजनाच् (स्वजनात्)— पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, सम्बन्धी या कुटुम्बी से

स्वजनावृतः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अपने सम्बन्धियों या कुटुम्बियों से घिरा हुआ

स्वधर्मम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अपने धर्म को

स्वधर्माचरणेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, अपने धर्म के आचरणों में

स्वधीता (स्वधीतास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, भली भाँति पढ़े हुये

स्वनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, शब्द

स्वपामि—स्वप् धा०, वर्तमान, उ० पु०, एक व०, मैं सोता हूँ

स्वपुरम्—तत्पु०, द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अपने नगर को

स्वप्नो (स्वप्नस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, स्वप्न
स्वबान्धवान्—द्वितीयान्त, बहु ब०, पु०, अपने सम्बन्धियों को
स्वयम्—अव्यय, स्वयम्
स्वयम्वरम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वयम्वर को
स्वयम्वरकथाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, स्वयम्बर की कथा को
स्वयम्वरकृते—अव्यय, स्वयम्वर के लिए
स्वयम्वरे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, स्वयम्वर में
स्वरूपम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, अपने रूप को
स्वरूपधारिणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वरूप धारण करने वाले को
स्वरूपिणम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वरूप धारण करनेवाले को
स्वर्गम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, स्वर्ग
स्वर्गमार्गविदृक्षुभिः—तत्पु० समास, तृतीयान्त, बहु व०, पु०, स्वर्ग के मार्ग को देखने की इच्छावालों से
स्वलङ्कृतः—सु और अलम् पूर्वक कृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, विभूषित
स्वलङ्कृताः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, सुशोभित
स्वलङ्कृतैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, सुशोभितों से
स्वसुतौ—द्वितीयान्त, द्वि० व०, पु०, अपने दो बच्चों को
स्वस्ति—अव्यय, कुशलता, आशीर्वाद
स्वस्था—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, स्वस्थ
स्वाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अपनी को
स्वागतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, स्वागत
स्वानि—द्वितीयान्त, बहु व०, नपुं०, अपनों को
स्वामिन्—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे स्वामी
स्वार्थम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अपने काम को, स्वार्थ को
स्वेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, अपने से
स्वैर् (स्वैस्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, अपनों से
स्वैरवृत्ता—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, अपने स्वभाव का अनुकरण करने वाली
स्वैरेषु—सप्तम्यन्त, बहु व०, नपुं०, स्वतन्त्रों में
स्वोरसि—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, अपने वक्ष पर

ह

ह—अव्यय, वास्तव में

हंसम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, हंस को

हंसस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, हंस का

हंसा (हंसाः, हंसास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, हंस

हंसान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, हंसों को

हंसानाम्—षष्ठ्यन्त, बहु व०, पु०, हंसों का

हंसेन—तृतीयान्त, एक व०, पु०, हंस से

हंसैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, हंसों से

हतम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, मारे हुये को

हतकण्टकम्—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, जिसका काँटा नष्ट हो गया है उसको

हतशिष्टजनास्—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, बध करने से बचे हुये मनुष्य

हतशिष्टा (हतशिष्टास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, वध से बचे हुये

हतशिष्टैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, वध से बचे हुओं से

हतशेषैः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, बध से बचे हुओं से

हता (हताः, हतास्)—हन् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, मारे हुये

हतो (हतस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, मारा हुआ

हत्वा—हन् धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, मारकर

हन्तव्यो (हन्तव्यस्)—हन् धा०, भविष्यत् कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, पु०, बध किये जाने योग्य

हन्ता—प्रथमान्त, एक व०, पु०, बध करने वाला

हन्ति—हन् धा०, अदादि, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, वह बध करता है

हन्तुम्—हन् धा०, तुमुन् प्रत्यय, बध करने के लिये

हन्यते—हन् धा०, कर्मवाच्य, वर्तमान, प्र० पु०, एक व०, उसका वध किया जाता है

हन्याद्—हन् धा०, विधिलिङ, प्र० पु०, एक व०, उसे वध करना चाहिये

हन्याम—हन् धा०, अदादि, विधिलिङ, उ० पु०, बहु व०, हमें वध करना चाहिये

हन्युस्—हन् धा०, अदादि, विधिलिङ, प्र० पु०, बहु व० उन्हें वध करना चाहिये

हयकोविद—सम्बोधन, एक व०, पु०, हे अश्वों के ज्ञाता

हयज्ञतःम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, घोड़ों के ज्ञान को
हयज्ञस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, घोड़ों को जानने वाले की
हयज्ञानम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, घोड़ों के ज्ञान को
हयज्ञानस्य—तत्पु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं० घोड़ों के ज्ञान का
हयतत्त्वज्ञ—तत्पु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे घोड़ों के स्वभाव को जानने वाले
हयतत्वज्ञः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, घोड़ों के स्वभाव को जानने वाला
हयनिर्घोषम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, घोड़ों के शब्द को
हयसङ्ग्रहणम्—तत्पु० समास, नपुं०, घोड़ों को रोकना
हयसङ्ग्रहणे—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, घोड़ों के रोकने पर
हया (हयाश्, हयाः, हयास्)—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, घोड़े
हयांस् (हयान्)—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, घोड़ों को
हयैः (हयैस्, हयैर्, हयैश्)—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, घोड़ों से
हयोत्तमा—प्रथमान्त, बहु व०, पुं०, श्रेष्ठ घोड़े
हयोत्तमान्—द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, श्रेष्ठ घोड़ों को
हरिणीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, हरिणी को
हर्षजः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आनन्द से उत्पन्न
हर्षविवर्धनः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, आनन्द को बढ़ाने वाला
हर्षविवृद्धसत्त्वा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आनन्द को बढ़ानेवाली शक्ति
हव्यवाहनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अग्नि
हस्तात्—पञ्चम्यन्त, एक व०, पु०, हाथ से
हस्ताभ्याम्—तृतीयान्त, द्विव०, पु०, दोनों हाथों से
हस्तिभिः—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, हाथियों से
हस्तियूथम्—तत्पु० समास, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, हाथियों के समूह को
हस्तियूथेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं, हाथियों के समूह से
हस्तिहस्तपरामृष्टाम्—तत्पु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री० हाथी की सूँड से छुई गयी, मसली गयी
हस्त्यश्वरथघोषेण—द्वन्द्व और तत्पुरुष, तृतीयान्त, एक व०, पु०, हाथी, घोड़े और रथ के शब्द से
हस्त्यश्वरथसङ्कुलम्—द्वन्द्व और द्वितीयान्त, एक व०, पु०, तत्पुरुष, हाथी, घोड़े और रथ से भरे हुये को
हा—विस्मयादिबोधक, अरे, दुःख है, हाय

हाहाकारम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, विलाप को

हाहाभूतम्—प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, हाहाकार या विलाप

हि—अव्यय, क्योंकि

हितम्—द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, भलाई को

हिताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, अच्छाई चाहने वाली को

हित्वा—हा धा०, भूतकालिक अविभक्तिक कृदन्त, छोड़ कर

हिरण्यस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, सोने का

हीनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, हीन, तुच्छ को

हीनाम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, हीना, तुच्छ को

हीनैः—तृतीयान्त, बहु व०, नपुं०, हीनों से

हीनो (हीनस्)—प्रथमान्त, एक व०, पु०, हीन, तुच्छ

हुताशम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अग्नि को

हुताशनम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, अग्नि को

हुताशनः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, अग्नि

हृच्छयम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, प्रेम को

हृच्छयः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, प्रेम

हृच्छयपीडिताः—तत्पु० समास, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, प्रेम से पीड़ित

हृच्छयवर्धनः—बहु० समास, सम्बोधन, एक व०, पु०, हे प्रेम को बढ़ाने वाले

हृच्छयाविष्टचेतना—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, प्रेम से भरे हुये मन वाली

हृतम्—हृ धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, एक व०, नपुं०, चुराये हुये को

हृतद्रव्यम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चुराये हुये धन को।

हृतराज्यम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, चुराये हुये राज्य को

हृतराज्ये—सप्तम्यन्त, एक व०, पु० व नपुं०, चुराये हुए राज्य में

हृतराज्यो (हृतराज्यस्)—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, राज्यविहीन

हृतवाससः—बहु० समास, षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, जिसका वस्त्र चुरा लिया गया है वह

हृतसर्वस्वम्—बहु० समास, द्वितीयान्त, एक व०, पु०, जिसका सब कुछ चुरा-लिया गया है उसको

हृताम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, जीती हुयी, ली गयी हुयी को

हृद्—नपुं०, हृदय

हृदयम्—प्रथमान्त व द्वितीयान्त, एक व०, नपुं०, हृदय को

हृदयस्य—षष्ठ्यन्त, एक व०, नपुं०, हृदय का
हृदये—सप्तम्यन्त, एक व०, नपुं०, हृदय में
हृदयेन—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, हृदय से
हृदा—तृतीयान्त, एक व०, नपुं०, हृदय से
हृदि—सप्तम्यन्त एक व०, नपुं०, हृदय में
हृद्यम्—द्वितीयान्त, एक व०, आनन्ददायक, चित्ताकर्षक को
हृद्याः—प्रथमान्त, बहु व०, पु०, चित्ताकर्षक, आनन्द देने वाले
हृषितस्रग्रजोहीनान्—बहु० समास, द्वितीयान्त, बहु व०, पु०, सीधे खड़े हुये हार और धूलि से विहीन रहने वालों को
हृषितानि—प्रथमान्त, बहु व०, नपुं०, सीधे खड़े हुये और अम्लान
हृष्टः—प्रथमान्त, एक व०, पु०, आनन्दित
हृष्टसङ्कल्पौ—बहु० समास, प्रथमान्त, द्वि व०, पु० आनन्दित मनवाले (दो)
हृष्टा—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, आनन्दित।
हृष्टास् (हृष्टा)—हृष् धा०, भूतकालिक कर्म कृदन्त, प्रथमान्त, बहु व०, पु०, आनन्दित
हृष्टे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, आनन्दित होने पर
हृष्ट्वा—हृष् धा०, तुमुन् प्रत्यय, आनन्दित होकर
हेतुभिर्—तृतीयान्त, बहु व०, पु०, कारणों से
हेतोः—अव्यय, कारण से
हेतोः—षष्ठ्यन्त, एक व०, पु०, कारण का
ह्रदिनीम्—द्वितीयान्त, एक व०, स्त्री०, नदी को
ह्रदे—सप्तम्यन्त, एक व०, पु०, तालाब या झील में
ह्रस्वम्—द्वितीयान्त, एक व०, पु०, छोटे को
ह्रस्वबाहुकः—बहु० समास, प्रथमान्त, एक व०, पु०, छोटी भुजाओं वाला
ह्रीताः—प्रथमान्त, एक व०, स्त्री०, लज्जिता